

**Centre for Distance & Online Education
(CDOE)**

**Bachelor of Arts
(B.A.) SEM. VI**

POLS-303

POLITICAL SCIENCE

(Comparative Constitutions of UK & USA (Optional-I))



**Guru Jambheshwar University of Science &
Technology, HISAR-125001**



विषय सूची

No.	Title	Author	Page
1.	तुलनात्मक राजनीति के अध्ययन के लिए दृष्टिकोण	Dr. Parveen Sharma	5
2	संविधान और संविधानवाद	Dr. Parveen Sharma	43
3	संवैधानिक संरचना- विधायिका	Dr. Parveen Sharma	86
4	संविधानिक ढांचा – कार्यपालिका	Dr. Parveen Sharma	117
5	संवैधानिक संरचना– न्यायपालिका	Dr. Parveen Sharma	155
6	राजनीतिक दल और दल–प्रणालियां	Dr. Parveen Sharma	183
7	हित समूह व दबाव समूह	Dr. Parveen Sharma	223
8	राजनीतिक संस्कृति व राजनीतिक समाजीकरण	Dr. Parveen Sharma	254
9	राजनीतिक आधुनिकीकरण और राजनीतिक भूमण्डलीकरण	Dr. Parveen Sharma	288
10	राजनीतिक संचार	Dr. Parveen Sharma	324
11	चुनाव प्रक्रिया-यू.के. और यू.एस.ए. (Electoral process - UK and USA)	Dr. Parveen Sharma	334
12	ब्रिटेन और अमेरिका में नौकरशाही (Bureaucracy in UK and USA)	Dr. Parveen Sharma	356

Composed and Edited by-Dr. Shakuntla Devi

Edited By: Dr. Shakuntla Devi (Programme Coordinator BA)

NOTE --*Syllabus Copy-Must be read by the student (Given as below)



--*Syllabus Copy

GURU JAMBHESHWAR UNIVERSITY OF SCIENCE & TECHNOLOGY, HISAR

POLITICAL SCIENCE

B.A. IIIrd Year 6th Semester

PAPER-A (THEORY) POLS 303 : Comparative Constitutions of UK & USA (Optional-I)

Maximum Marks : 100

External Marks : 80

Time : 3 hours

Internal Assessment : 20

Note:- 1. The question paper will consist of *nine* questions. The candidate shall attempt *five* questions in all. The Question No. 1 will be *compulsory*. The Candidate shall attempt *four* more questions selecting at least *one* from each Unit. The paper will carry 100 marks out of which 20 marks will be earmarked for internal assessment.

2. The Compulsory Question No.1 will be short answer type questions containing *ten* questions of equal marks (i.e., 2 marks each) spread over the whole syllabus. Other questions will carry the 15 marks each.

Unit-I

Evolution, Conventions, Legacies and Basic features of Constitutions of UK & USA; Socio-Economic basis of Constitutions of UK & USA.

Unit-II

Comparative Study of Executive, Legislation and Judiciary System of UK & USA.

Unit-III

Comparative studies of Structures, Functions and roles of political parties and pressure groups of UK & USA.

Unit-IV

Electoral Processes, Voting Behaviour, Bureaucracy and Recent Trends of the working of the systems of UK & USA.

Readings

1. G. Almond et al., *Comparative Politics Today : A World View*, 7th edn., New York, London, Harper/Collins, 2000.
2. W. Bagehot, *The English Constitution*, London, Fontana, 1963.
3. A.H. Birch, *British System of Government*, 4th edn., London, George Alen and Unwin, 1980.



4. J. Blondel, *An Introduction to Comparative Government*, London, Weidenfeld and Nicolson, 1969.
5. J. Blondel, *Comparative Legislatures*, Englewood Cliffs NJ, Prentice Hall, 1973.
6. J. Bryce, *Modern Democracies*, Vol. 2, New York, Macmillan, 1921.
7. H. Finer, *Theory and Practice of Modern Government*, London, Methuen, 1969.
8. S.E. Finer, *Comparative Government*, Harmondsworth, Penguin, 1974.
9. E.S. Griffith, *The American System of Government*, 6th edn., London, Methuen, 1983.
10. D. Kavangh, *British Politics: Continuity and Change*, Oxford, Oxford University Press, 1985.
11. H.J. Laski, *American Democracy : A Commentary and An Interpretation*, London, Unwin, 1948.
12. A.Lijphart, *Electoral Systems and Party System*, New Haven CT, Yale University Press, 1994.
13. A.Lijphart,(ed.), *Parliamentary versus Presidential Government*, Oxford and New York, Oxford University Press, 1992.
14. A.Lijphart, *Democracies : Patterns of Majoritarian and Consensual Government in Twenty One Countries*, New Haven CT, and London, Yale University Press, 1992.
15. R. Maddex, *Constitutions of the World*, 2nd edn., Washington DC and London, CQ Press, 2000.
16. P Mair, *The West European Party System*, Oxford, Oxford University Press, 1990.
17. T. Munro, *The Governments of Europe*, New York, Macmillan, 1963.
18. D. Olson, *Legislative Institutions: A Comparative View*, Armonk NY, M.E. Sharpe, 1994.
19. M. Rhodes, P. Heywood and V. Wright, *Developments in West European Politics*, Basingstoke, Macmillan, 1997.
20. K. C. Wheare, *Federal Government*, 4th edn., Oxford and New York, Oxford University Press, 1963.
21. J. Wilson, *American Government*, 4th edn., Boston Massachusetts, Houghton Mifflin, 1997.



Subject : Political Science (Comparative Constitutions of UK & USA (Optional-I))	
Course Code : POLS-303	Autor : Dr. Parveen Sharma
Lesson No. 1	Editor-Dr. Shakuntla Devi
तुलनात्मक राजनीति के अध्ययन के लिए दृष्टिकोण Approaches to the Study of Comparative Politics	

अध्ययन की संरचना

1.1 अधिगम उद्देश्य (Learning Objectives)

1.2 प्रस्तावना (Introduction)

1.3 अध्ययन के मुख्य बिन्दु (Main Points of Text)

- 1.3.1 तुलनात्मक राजनीति का अर्थ व परिभाषाएं (Meaning and definitions of comparative politics)
- 1.3.2 तुलनात्मक राजनीति का स्वरूप और क्षेत्र (Nature and Scope of Comparative Politics)
- 1.3.3 तुलनात्मक राजनीति का विकास (Development of comparative politics)
- 1.3.4 तुलनात्मक राजनीति व तुलनात्मक सरकार (Comparative politics and comparative government)
- 1.3.5 तुलनात्मक पद्धति और तुलनात्मक राजनीति (Comparative method and comparative politics)
- 1.3.6 तुलनात्मक पद्धति की उपयोगिता (Unility of Comparative Method)
- 1.3.7 तुलनात्मक राजनीति अध्ययन की कठिनाइयाँ (Difficulties of comparative politics studies)
- 1.3.8 तुलनात्मक राजनीति का महत्व (Importance of comparative politics)



1.4 पाठ के आगे का मुख्य भाग (Further main body of the text)

1.4.1 तुलनात्मक राजनीति के अध्ययन के लिए दृष्टिकोण (Approach to the study of comparative politics)

(i) परम्परागत दृष्टिकोण या उपागम (Traditional Approaches)

(ii) आधुनिक उपागम या दृष्टिकोण (Modern Approaches)

1.5 अपनी प्रगति जांचें (Check your progress)

1.6 सारांश (Summary)

1.7 सूचक शब्द (Key Words)

1.8 स्वयं मूल्यांकन हेतु प्रश्न (Self -Assessment Questions)

1.9 अपनो प्रगति की जांच करने के लिए उत्तर (Answers to check your progress)

1.10 सन्दर्भ ग्रन्थ/निर्देशित पुस्तकें (References / Suggested Readings)

1.1 अधिगम उद्देश्य (Learning Objectives)

इस अध्याय को पढ़ने के बाद हम निम्नलिखित विषयों को समझ पाएंगे :-

1. तुलनात्मक राजनीति का अर्थ तथा परिभाषाएँ के बारे में समझ सकेंगे ।
2. तुलनात्मक राजनीति की प्रकृति के बारे में समझ सकेंगे ।
3. तुलनात्मक राजनीति के विषय-क्षेत्र के बारे में जान सकेंगे ।
4. तुलनात्मक राजनीति के अध्ययन के लिए दृष्टिकोणों के बारे में जान सकेंगे ।

1.2 प्रस्तावना (Introduction)

द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद तृतीय विश्व के अभ्युदय ने तुलनात्मक राजनीति को व्यापक आधार प्रदान किया है। अब इसका सम्बन्ध पश्चिम के देशों व संस्थागत राजनीतिक संरचनाओं से न होकर गैर-राजनीतिक संरचनाओं व इन्हें प्रभावित करने वाले गैर-राजनीतिक व्यवहार तथा तृतीय विश्व के देशों की राजनीति से भी है। आज राजनीति विज्ञान में सदियों से प्रचलित राज्य, सरकार, संस्था, शक्तियों व जनमत के स्थान पर नई अवधारणाएं राजनीतिक संस्कृति, राजनीतिक समाजीकरण, राजनीतिक संचार, राजनीतिक आधुनिकीकरण, राजनीतिक विकास, राजनीतिक



व्यवस्था आदि प्रमुख अवधारणाएं मानी जाती है, क्योंकि अन्य सभी अवधारणाएं इन्हीं के इर्द-गिर्द घूमती हैं। आज नई तकनीक, पद्धति व दृष्टिकोणों ने तुलनात्मक अध्ययन को वैज्ञानिक व व्यवहारिक बना दिया है। आज इसमें समाजशास्त्र, अर्थशास्त्र, मनोविज्ञान आदि का भी अध्ययन शामिल होने के कारण यह एक अन्तर-अनुशासीय विषय के रूप में स्थान पा चुकी है। आज तुलनात्मक राजनीति का अर्थ किन्हीं दो देशों की सरकारों या संविधानों का तुलनात्मक अध्ययन से नहीं है। आज इसमें सम्पूर्ण विश्व की राजनीतिक व गैर-राजनीतिक संस्थाओं, उनका व्यवहार तथा व्यवहार को प्रभावित करने वाले तत्वों का अध्ययन भी शामिल है।

1.3 अध्ययन के मुख्य बिन्दु (Main Points of Text)

1.3.1 तुलनात्मक राजनीति का अर्थ व परिभाषाएं (Meaning and definitions of comparative politics)

तुलनात्मक राजनीति, राजनीति विज्ञान की एक शाखा एवं विधि है जो तुलनात्मक अध्ययन पर आधारित है। तुलनात्मक राजनीति में दो या अधिक देशों की राजनीति की तुलना की जाती है या एक ही देश की अलग-अलग समय की राजनीति की तुलना की जाती है और देखा जाता है कि इनमें समानता क्या है और अन्तर क्या है।

तुलनात्मक राजनीति के बारे में विभिन्न परिभाषाएं दी गई हैं :-

- (1). ब्रायबन्ती (Braibanti) ने लिखा है—“तुलनात्मक राजनीति सामाजिक व्यवस्था में उन तत्वों की पहचान और व्याख्या है जो राजनीतिक कार्यों तथा उनके संस्थागत प्रकाशन को प्रभावित करते हैं।”
 - (2). एडवर्ड ए० फ्रीमैन (Edward A- Freeman) ने तुलनात्मक राजनीति के बारे में लिखा है—“तुलनात्मक राजनीति राजनीतिक संस्थाओं तथा सरकारों के विविध प्रकारों का एक तुलनात्मक विवेचन व विश्लेषण है।”
 - (3). राय सी० मैक्रिडीस (Roy C- Macridi) के अनुसार—“हैरोडोटस तथा अरस्तु के समय से ही राजनीतिक मूल्यों, विश्वासों, संस्थाओं, सरकारों और राजनीतिक व्यवस्थाओं में विविधताएं जीवन्त रही हैं और इन विविधताओं में समान तत्वों की छानबीन करने के प्रयासको तुलनात्मक राजनीतिक विश्लेषण कहा जाना चाहिए।”
 - (4). एम० कर्टिस (M- Curti) के अनुसार—“तुलनात्मक राजनीति, राजनीतिक संस्थाओं और राजनीतिक व्यवहार की कार्य-प्रणाली में महत्वपूर्ण नियमितताओं, समानताओं और असमानताओं में तुलनात्मक अध्ययन से सम्बन्धित है।”
- इस प्रकार कहा जा सकता है कि तुलनात्मक राजनीति तुलनात्मक सरकारों, गैर-शासकीय राजनीतिक संस्थाओं, कबीलों, समुदायों व उनकी प्रक्रियाओं व व्यवहारों का अध्ययन है।

1.3.2 तुलनात्मक राजनीति की प्रकृति और क्षेत्र (Nature and Scope of Comparative Politics)

(अ) तुलनात्मक राजनीति की प्रकृति (Nature of Comparative Politics)



आज तुलनात्मक राजनीति एक स्वतंत्र विषय के रूप में अपना स्थान प्राप्त कर चुकी है। प्राचीन काल में तुलनात्मक राजनीति का सम्बन्ध केवल विभिन्न सरकारों की तुलना मात्र से ही माना जाता था। अरस्तु ने वैज्ञानिक पद्धति का आरम्भ करके तुलनात्मक अध्ययन को नई दिशा देने का प्रयास किया। उसके बाद हैरोडोटस ने भी तुलनात्मक राजनीति का विकास किया। लेकिन उनका अध्ययन केवल राजनीतिक संस्थाओं, उनके ढांचे, सरकारों तक ही सीमित रहा। द्वितीय विश्व युद्ध के बाद तुलनात्मक राजनीति का प्रकृति में काफी बदलाव आया। अब इसमें राजनीतिक संस्थाओं के ढांचे व कार्यों के साथ साथ गैर राजनीतिक समुदायों, तथा निजी संस्थाओं व उनके व्यवहार का भी अध्ययन आवश्यक हो गया। इसलिए आज तुलनात्मक राजनीति में केवल शासन के ढांचों का ही अध्ययन न करके, बल्कि सभी राजनीतिक सिद्धान्तों, आदर्शों तथा व्यवहारों का अध्ययन किया जाता है। इसलिए आज तुलनात्मक राजनीति की प्रकृति भी बदल चुकी है। इसलिए आज तुलनात्मक राजनीति की प्रकृति को लेकर विद्वानों में मतभेदों का उभरना भी स्वाभाविक ही है। तुलनात्मक राजनीति की प्रकृति सम्बन्धी दो मत प्रचलित हैं :-

(1). तुलनात्मक राजनीति एक लम्बात्मक या अनुलम्बात्मक तुलनात्मक अध्ययन है (Comparative Politics is a Vertical Comparative Study)

(2). तुलनात्मक राजनीति एक अनुप्रस्थ या क्षैतिज तुलनात्मक अध्ययन है (Comparative Politics is a Horizontal Comparative Study)

(1) लम्बात्मक तुलनात्मक अध्ययन के रूप में (Comparative Politics is a Vertical Comparative Study)

इस धारणा के समर्थकों का मानना है कि तुलनात्मक राजनीति एक ही देश में विभिन्न स्तरों पर स्थापित सरकारों (राष्ट्रीय एवं स्थानीय) और इनको प्रभावित करने वाले राजनीतिक व्यवहारों का तुलनात्मक विश्लेषण का अध्ययन है। इस विचारधारा को मानने वालों का कहना है कि चूंकि क्षेत्रीय सरकारें अनेक होती हैं, इसलिए राष्ट्रीय सरकारों की उनसे राजनीतिक प्रक्रियाओं तथा संस्थाओं के सन्दर्भ में तुलना करके उपयोगी निष्कर्ष निकाले जा सकते हैं। इस धारणा के समर्थकों का कहना है कि तुलनात्मक राजनीति एक ही देश की विभिन्न सरकारों की अनुलम्ब तुलना है, इसलिए वे एक ही देश की विभिन्न सरकारों की तुलना विभिन्न स्तरों पर करने पर जोर देते हैं। लेकिन गहराई से देखा जाए तो उनकी यह तुलना सतही स्तर पर ही ठीक प्रतीत होती है। अधिक व्यापक अध्ययन व विश्लेषण से राष्ट्रीय व प्रादेशिक सरकारों में समानताओं की बजाय असमानताएं अधिक दिखाई देती हैं। तुलना करने पर इनमें आर्थिक साधनों, नियमों व शक्ति की समानता ही प्रतीत होती है, लेकिन व्यवहार में राष्ट्रीय सरकार के पास आर्थिक साधन अधिक होते हैं। इसलिए आर्थिक साधनों की समानता मात्रात्मक होती है, गुणात्मक नहीं। इसी तरह नियमों में भी समानता की अपेक्षा असमानता ही अधिक होती है, क्योंकि राष्ट्रीय सरकार के नियमों के पीछे शक्ति का तत्व प्रभावी रहता है। राष्ट्रीय सरकार सम्प्रभु होने के नाते स्थानीय सरकार से अधिक शक्तिशाली



होती है। इसलिए राष्ट्रीय सरकार व स्थानीय सरकार के नियमों में समानता की बजाय असमानता ही अधिक होती है। इसी प्रकार शक्ति के कारण राष्ट्रीय सरकार के पास उत्पीड़न का तत्व होने के कारण, वह स्थानीय सरकार से अधिक प्रभावशाली होती है। इस प्रकार इन तीनों समानताओं की अपेक्षा असमानताएं ही अधिक हैं। राष्ट्रीय व स्थानीय सरकारों में पाई जाने वाली समानताएं सतही हैं। इनकी सहायता से इनकी प्रकृति तो समझी जा सकती है, लेकिन कोई सामान्यीकरण नहीं निकाला जा सकता। यह लम्बात्मक तुलना संस्थाओं के औपचारिक अध्ययन के लिए तो सहायक हो सकती है, लेकिन राजनीतिक व्यवहार की वास्तविकता का ज्ञान इससे नहीं हो सकता। अतः लम्बात्मक तुलना से तुलनात्मक राजनीति की प्रकृति को वास्तविक रूप में समझना असम्भव है। इसलिए लम्बात्मक तुलना की धारणा आज मान्य नहीं हो सकती।

(2) अनुप्रस्थ या क्षैतिज तुलनात्मक अध्ययन के रूप में (Comparative Politics is a Vertical Comparative Study)

इस धारणा के समर्थकों का कहना है कि तुलनात्मक राजनीति तो राष्ट्रीय सरकारों की क्षैतिज तुलना है। ऐसी तुलना ही वास्तविक अध्ययन की आधार है और राजनीतिक व्यवहार को समझने में सहायक सिद्ध होती है। इस प्रकार की तुलना एक देश की राष्ट्रीय सरकारों में भी हो सकती है और दूसरे देश की राष्ट्रीय सरकारों के साथ भी। यह तुलना समय और भौगोलिक सीमाओं से परे है। इसके द्वारा एक देश की राजनीतिक व्यवस्था का राजनीतिक व्यवहार भी समझा जा सकता है और दूसरे देशों को राजनीतिक व्यवस्था के राजनीतिक व्यवहार से उसकी तुलना भी की जा सकती है। यही धारणा तुलनात्मक राजनीति की वास्तविक प्रकृति को समझने में मददगार साबित होती है। इसमें तुलना एक राष्ट्र की केन्द्रीय सरकारों के बीच ऐतिहासिक आधार पर भी हो सकती है और समसामयिक आधार पर एक देश की राष्ट्रीय सरकार की तुलना दूसरे देशों की राष्ट्रीय सरकारों के साथ भी हो सकती है। ऐतिहासिक आधार पर एक देश की राष्ट्रीय सरकार की इसी देश की भूतकालीन राष्ट्रीय सरकारों के साथ तुलना की जा सकती इस प्रकार की तुलना वर्तमान राजनीतिक व्यवहार की प्रकृति को समझने में सहायक होती है। प्रत्येक देश की राजनीतिक व्यवस्था के राजनीतिक व्यवहार की जड़ें भूतकाल में होती हैं। उदाहरण के लिए भारत की राजनीतिक व्यवस्था तथा राजनीतिक व्यवहार की जड़ें प्राचीन, मध्य व ब्रिटिश शासन के अन्तर्गत ढूँढी जा सकती है। भारतीय राजनीति व्यवस्था में आज भी ब्रिटिश शासनकाल के अनेक तत्व मौजूद हैं, जो वर्तमान में राजनीतिक व्यवस्था और राजनीतिक व्यवहार के महत्वपूर्ण अंग हैं। इस प्रकार की तुलना समान संस्कृति व सभ्यता वाले राज्यों की शासन व्यवस्था व राजनीतिक व्यवहार को समझने में तो ठीक है, लेकिन अलग प्रकार की सभ्यता व संस्कृति वाले राज्यों की शासन व्यवस्था व राजनीतिक व्यवहार को समझने में परेशानी पैदा करती है। इसलिए इस प्रकार की तुलना का सीमित महत्व है। समसामयिक आधार पर एक देश की राष्ट्रीय सरकार की दूसरे देशों की राष्ट्रीय सरकारों से तुलना करना बहुत उपयोगी व प्रामाणिक होता है। ब्लैंडेल ने इसे तुलनात्मक अध्ययन



में सबसे उपयोगी व प्रामाणिक माना है। उसने लिखा है—“हमारे पास तुलनात्मक सरकारों के अध्ययन का केवल एक ही दृष्टिकोण शेष रहता है और वह है—समकालीन विश्व की राजनीतिक व्यवस्थाओं से सम्बन्धित राष्ट्रीय सरकारों का राष्ट्रीय सीमाओं से आर-पार अध्ययन करना।” इस प्रकार की तुलनाएं सामान्यीकरण का आधार होती हैं। इसके द्वारा राजनीतिक व्यवहार के सामान्य सिद्धान्तों का निर्माण भी किया जा सकता है। इससे राजनीतिक संस्थाओं और उनके राजनीतिक व्यवहार को सरलता से समझा जा सकता है। इस प्रकार की तुलनाएं ही सर्वश्रेष्ठ व प्रामाणिक होती हैं।

इस प्रकार तुलनात्मक राजनीति की प्रकृति सम्बन्धी अध्ययन से स्पष्ट हो जाता है कि ये एक दूसरे की पूरक हैं और राजनीतिक व्यवस्थाओं की कार्यप्रणाली व उनके व्यवहार को समझने में सहायक हैं। इनके द्वारा राजनीतिक व्यवहार में समानताएं व असमानताओं को समझकर तुलनात्मक राजनीति के बारे में सामान्य सिद्धान्तों का निर्माण किया जा सकता है। यही राजनीतिक विश्लेषण की वैज्ञानिकता व विश्वसनीयता का आधार है। आज सीमाओं के आर-पार तुलनात्मक अध्ययन से तुलनात्मक राजनीति एक स्वतंत्र अनुशासन का स्थान प्राप्त कर चुकी है। यह राजनीति विज्ञान की महत्वपूर्ण शाखा होने के बावजूद भी राजनीतिक संस्थाओं के साथ-साथ गैर-राजनीतिक संस्थाओं व उनके राजनीतिक व्यवहार को प्रभावित करने वाले तत्वों का भी अध्ययन किया जाता है। यही तुलनात्मक राजनीति की वास्तविक प्रकृति है।

(ब) तुलनात्मक राजनीति का क्षेत्र (Scope of Comparative Politics)

तुलनात्मक राजनीति का क्षेत्र आज एक विवादास्पद विषय है। आज तुलनात्मक राजनीति संक्रमणकालीन दौर में है। हैरी एकसटीन ने इसी बात की पुष्टि करते हुए लिखा है—“तुलनात्मक राजनीति के बारे में महत्वपूर्ण व विवादास्पद बात यह है कि वह संक्रमण की स्थिति में है—एक प्रकार की विश्लेषण शैली, दूसरे प्रकार की विश्लेषण शैली की ओर प्रस्थान कर रही है।” आज तुलनात्मक राजनीति की सीमा व मानकों तथा व्यवहारों के पारस्परिक सम्बन्धों के बारे में काफी विवाद है। तुलनात्मक राजनीति की सीमाओं के बारे में परम्पराओं तथा आधुनिक राजनीतिक विश्लेषक एकमत नहीं हैं। आज तुलनात्मक राजनीति के सामने यह समस्या है कि इसमें क्या शामिल किया जाए या क्या नहीं तथा शामिल करने या न करने का आधार क्या हो ? सीमा सम्बन्धी विवाद के बारे में सभी राजनीतिशास्त्री इस बात से तो सहमत हैं कि तुलनात्मक राजनीति का सम्बन्ध राष्ट्रीय सरकारों से है और इसमें सरकारी ढांचे के साथ-साथ सरकारों की कार्यप्रणाली तथा गैर-राजनीतिक संस्थाओं के राजनीतिक कार्य व व्यवहार शामिल हैं। लेकिन उनमें राजनीतिक क्रियाकलापों का सरकार की क्रिया-कलापों की व्याख्या को लेकर मतभेद हैं। इस बारे में उनके दो दृष्टिकोण हैं—कानूनी या संस्थागत दृष्टिकोण तथा व्यवहारवादी दृष्टिकोण। इन दृष्टिकोणों की उपयोगिता को लेकर भी राजनीति शास्त्रियों में परस्पर विवाद हैं। कानूनी या संस्थागत दृष्टिकोण के समर्थकों का कहना है कि तुलनात्मक राजनीति में केवल संविधान द्वारा निर्धारित राजनीतिक व्यवहार तथा सरकारी



ढांचे व संरचनाओं का ही अध्ययन किया जाए। इसके विपरीत किसी अन्य आधार पर राजनीतिक व्यवहार का अध्ययन करना बेईमानी होगी। इसलिए इस दृष्टिकोण के समर्थक राजनीतिक संस्थाओं व राजनीतिक व्यवहार के औपचारिक अध्ययन पर ही बल देते हैं। लेकिन कानूनी दृष्टिकोण के आलोचकों का कहना है कि इस प्रकार का अध्ययन सतही व दिखावटी होगा। इससे राजनीतिक प्रक्रियाओं व व्यवहार की वास्तविकता का ज्ञान प्राप्त नहीं हो सकता। चीन और रूस की संवैधानिक विधि से वहां की राजनीतिक व्यवस्था व उसके व्यवहार का सच्चा ज्ञान प्राप्त नहीं हो सकता। इसी तरह ब्रिटेन व भारत में भी संविधान के ढांचे के आधार पर राजनीतिक व्यवस्था के व्यवहार का सही आंकलन नहीं किया जा सकता। भारत में लम्बे समय से केन्द्र व राज्यों में कांग्रेस पार्टी के शासन ने संविधान का संघात्मक रूप एकात्मक बनाकर रख दिया। इसी तरह ब्रिटेन में संवैधानिक राजनीतिक तन्त्र के स्थान पर निरंकुश राजतन्त्र का होना संविधान के आधार पर राजनीतिक व्यवहार को समझने की चुनौती देता है। इसलिए व्यवहारवादी विचारक तुलनात्मक राजनीति को कानूनी सीमाओं के पाश से मुक्त करके व्यवहारवादी अध्ययन पर जोर देते हैं ताकि राजनीतिक व्यवस्था की गत्यात्मकता को समझा जा सके। उनका कहना है कि संस्थागत अध्ययन की बजाय अनौपचारिक तत्वों को भी तुलनात्मक राजनीति में स्थान मिलना चाहिए। व्यवहारवादी दृष्टिकोण के समर्थक तुलनात्मक राजनीति में राजनीति की व्यावहारिकता पर भी बल देते हैं। उनका कहना है कि तुलनात्मक राजनीति में केवल कानूनी व्यवस्था का औपचारिक अध्ययन व तुलना ही पर्याप्त नहीं है, बल्कि राजनीतिक व्यवस्था किस प्रकार व्यावहारिक बनती है तथा राजनीतिक संस्थाओं का वास्तविक व्यवहार कैसा है, इस बात पर भी ध्यान देना आवश्यक है। इसलिए तुलनात्मक राजनीति में राष्ट्रीय संस्थाओं व गैर-राजनीतिक संस्थाओं के राजनीतिक व्यवहार से सम्बन्धित तथ्यों को भी शामिल करना चाहिए। व्यवहारवादियों का मानना है कि हर राजनीतिक समाज में राजनीतिक गतिविधि हर तरह से शासन तन्त्र के आस-पास ही चक्कर काटती रहती है और इसी से हर राजनीतिक व्यवहार का ज्ञान प्राप्त किया जा सकता है। जीन ब्लौडेल ने लिखा है—“तुलनात्मक सरकार या तुलनात्मक राजनीति के अध्ययन में उन तरीकों का, जो समाज में मूल्यों का अधिकृत विवरण होते हैं, परीक्षण किया जाता है।” यह परीक्षण मूल्यों के नियमन, रूपान्तरण तथा क्रियान्वयन से सम्बन्धित होता है। इस प्रकार तुलनात्मक राजनीति में मूल्यों की त्रिमुखी प्रक्रिया का अध्ययन किया जाता है। इस तरह व्यवहारवादी विचारक तुलनात्मक राजनीति का क्षेत्र मूल्यों के नियमन, रूपान्तरण तथा कार्यान्वयन तक ही सीमित मानते हैं। तुलनात्मक राजनीति के क्षेत्र से सम्बन्धित दूसरा विवाद मानकों तथा व्यवहारों का विवाद है। मानकों का आधार कानून व नियम होते हैं। यह आवश्यक नहीं है कि राजनीतिक व्यवहार कानूनों व नियमों के अनुकूल ही हों। इसकी प्रतिकूलता तुलनात्मक अध्ययन में कठिनाईयां उत्पन्न करती हैं। यदि मानकों के अनुसार ही राजनीतिक व्यवहार रहे तो तुलना करना आसान होता है। बाह्यकारी शक्ति के प्रयोग से कानून व नियमों पर आधारित मानक अशुद्ध होते हैं। इसलिए राजनीतिक व्यवहार के बारे में यह देखना भी आवश्यक होता है कि वह मानकों के अनुकूल है या प्रतिकूल। यद्यपि राजनीतिक व्यवहार व मानकों की प्रकृति परिवर्तनशील होती है। ये दोनों गत्यात्मक



हैं। जो मानक व व्यवहार आज हैं, आगे भी उनका वैसा ही होना अधिक सम्भव नहीं है। इसलिए इन दोनों में साम्य व गतिरोध का होना स्वाभाविक ही है। मानको यछवतउेद्ध में परिवर्तन व्यवहार में परिवर्तन का कारण बन सकता है और व्यवहार भी नए मानकों की स्थापना का कारण हो सकता है। इसलिए राजनीतिक व्यवहार व मानकों के राजनीतिक पहलुओं का अध्ययन भी तुलनात्मक राजनीति में महत्वपूर्ण होता है। यदि इनकी उपेक्षा की जाएगी तो राजनीतिक व्यवस्था के वास्तविक व्यवहार के अध्ययन से हम दूर हो जायेंगे, क्योंकि मानक व व्यवहार सरकार की जीवित संरचना का महत्वपूर्ण अंग है। तुलनात्मक राजनीति का विषय क्षेत्र इस प्रकार है:—

1. **राजनीतिक समाजीकरण का अध्ययन:**—राजनीतिक समाजीकरण तुलनात्मक राजनीति का एक महत्वपूर्ण अध्ययन विषय है। राजनीतिक समाजीकरण एक ऐसी प्रक्रिया है जिसके द्वारा राजनीतिक मूल्यों तथा दृष्टिकोणों के विषय में जानकारी प्राप्त होती है। राजनीतिक समाजीकरण एक दीर्घकालीन प्रक्रिया है। यह व्यक्ति के जीवन से प्रारम्भ होकर उसकी मृत्यु तक चलती रहती है। व्यक्ति अपने बचपन से ही विभिन्न राजनीतिक विषयों में रुचि लेने लगता है और जीवन पर्यन्त वह इससे जुड़ा रहता है। राजनीतिक समाजीकरण को तुलनात्मक राजनीति में इसलिए शामिल किया जाता है क्योंकि राजनीतिक समाजीकरण पर ही किसी राजनीतिक प्रणाली की सफलता या असफलता निर्भर करती है। प्रायः विकसित देशों में राजनीतिक समाजीकरण की प्रक्रिया तीव्र होती है। इसके विपरीत पिछड़े व विकासशील देशों में यह प्रक्रिया बहुत धीमी होती है।
2. **राजनीतिक संस्कृति का अध्ययन:**— राजनीतिक संस्कृति से अभिप्राय एक राजनीतिक व्यवस्था के नागरिकों के उस व्यवस्था के प्रति दृष्टिकोण, विश्वास, भावनाओं तथा मूल्यों से है। प्रत्येक राजनीतिक व्यवस्था की अपनीविशिष्ट राजनीतिक संस्कृति होती है। राजनीतिक संस्कृति ही यह स्पष्ट करती है कि लोग राजनीतिक व्यवस्था को कितना महत्व देते हैं। वास्तव में किसी राजनीतिक व्यवस्था की सफलता या असफलता राजनीतिक संस्कृति पर ही निर्भर करती है। अतः तुलनात्मक राजनीतिक अध्ययनों में राजनीतिक संस्कृति का अध्ययन किया जाता है।
3. **विभिन्न राज्यों का संस्थागत व्यापक विवरण:**— तुलनात्मक राजनीति के परम्परागत विद्वानों ने विधान मंडल, कार्यपालिका, न्यायपालिका तथा नौकरशाही को ही राजनीतिक विषय क्षेत्र माना। यद्यपि आजकल संस्थाओं के स्थान पर कार्यदृष्टि और व्यावहारिक पक्ष पर अधिक बल दिया जाता है, तथापि राजनीतिक संरचना को बिल्कुल छोड़ा नहीं जा सकता। साधारणतया यह माना जाता है कि अन्तिम निर्णय लेने की संसद की शक्ति दिनदृष्टिदिन कम होती जा रही है और यह शक्ति कार्यपालिका के हाथों में आ गई है। इस सरकार के निष्कर्षों पर पहुँचने के लिए यह आवश्यक है कि हम अधिक से अधिक देशों की कार्यपालिका और विधानमंडलों का अध्ययन करें।



4. **राजनीतिक विशिष्टजन, राजनीतिक हिंसा और राजनीतिक भ्रष्टाचार:**— तुलनात्मक राजनीति के विद्वान् इस बात का भी अध्ययन करते हैं कि वे व्यक्ति जो राजसत्ता का प्रयोग करते हैं, समाज के किन वर्गों से सम्बन्धित हैं और उनकी सत्ता का क्या आधार है। प्रत्येक राज्य में शासन की शक्ति कुछ विशिष्ट लोगों या एक विशिष्ट वर्ग के हाथों में होती है। जिन देशों में स्वस्थ दलीय प्रणाली है, वही शासकों की भर्ती का मुख्य स्रोत राजनीतिक दल होते हैं। आर्थिक असमानता और राजनीतिक शासकों की भर्ती के ढंग का राजनीतिक हिंसा और आन्तरिक कलह से गहरा सम्बन्ध है। क्रीसिस तथा वार्ड के शब्दों में, “जिन देशों में यत्नपूर्वक समाज में किन्हीं विशेष वर्गों को ‘राजनीतिक सत्ता’ से वंचित रखा जाता है, वहाँ ये वर्ग हिंसक साधनों से सत्ता हथियाने का प्रयास करते हैं।”
5. **विश्लेषणात्मक तथा आनुभाविक खोज:**— तुलनात्मक राजनीति में आनुभाविक अध्ययन पर अधिक बल दिया गया है। इसके अन्तर्गत राजनीतिक संस्थाओं, उनकी संरचनाओं की अपेक्षा इसके क्रियाशील कार्यकर्त्ताओं अथवा तत्वों के व्यवहार का अध्ययन होता है।
6. **राजनीतिक दल तथा हित समूह:**— आधुनिक युग लोकतन्त्र का युग है और लोकतंत्र में दलों का अनिवार्य है। प्रायः सभी देशों में राजनीतिक दल पाये जाते हैं। अमरीका, ग्रेट ब्रिटेन, आस्ट्रेलिया व जर्मनी में द्विदलीय प्रणाली पायी जाती है, जबकि फ्रांस, इटली, नार्वे, भारत इत्यादि देशों में बहुदलीय पद्धति पायी जाती है। साम्यवादी चीन, क्यूबा, उत्तरी कोरिया, वियतनाम आदि में एकदलीय पद्धति विद्यमान है। तुलनात्मक राजनीति का विद्यार्थी राजनीतिक दलों के संगठन, कार्यक्रम तथा कार्यों का अध्ययन करता है। राजनीति दल ही नहीं, बल्कि हितदृसमूह भी राजनीतिक सक्रियता के महत्वपूर्ण पहलू हैं। हितसमूह (इन्टरेस्ट ग्रुप्स) दलों और सरकार की नीतियों को निर्धारित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। मजदूर संघ, रेलवे यूनियनों, व्यापारियों के संघ, व्यावसायिक संघ इत्यादि सभी दबाव गुटों की श्रेणी में आते हैं अमरीका, ब्रिटेन, फ्रांस, इत्यादि लोकतंत्रीय राज्यों में दबाव समूह सरकारी निर्णयों को काफी प्रभावित करते हैं, जबकि चीन, इत्यादि साम्यवादी देशों में इनका महत्व बहुत कम है।
7. **राजनीतिक आधुनिकीकरण और नगरीकरण की समस्याएँ:**— तुलनात्मक राजनीति के विद्वान इन प्रश्नों पर भी विचार करते हैं कि — शिक्षा के प्रसार का नागरिकों के राजनीतिक आचरण और उनकी राजनीतिक संस्थाओं पर क्या प्रभाव पड़ता है, एक ही समाज के अन्तर्गत रहने वाले विभिन्न जातियों और धार्मिक निष्ठाओं में क्या परिवर्तन आ जाते हैं? क्या आर्थिक विकास द्वारा यह संभव है कि एशिया और अफ्रीका के नागरिकों को अपने परिवार, कुल, गांव, कबीले, धर्म और जाति के प्रति जो निष्ठाएँ हैं, धीरे-धीरे समाप्त हो जाएँ और उनके स्थान पर उनमें राष्ट्रीयता की भावना विकसित हो सके?



8. **विकासशील समाजों का अध्ययन:**— तुलनात्मक राजनीति में न केवल विकसित पश्चिमी देशों की शासन प्रणालियों का अध्ययन किया जाता है, बल्कि इसमें एशिया और अफ्रीका के पिछड़े और विकासशील देशों की शासन प्रणालियों का भी अध्ययन किया जाता है।
9. **राजनीतिक सहभागिता:**— राजनीतिक सहभागिता से अभिप्राय नागरिकों की राजनीतिक गतिविधियों में भाग लेने से है। सभी राजनीतिक प्रणालियों में राजनीतिक सहभागिता का स्तर एक समान नहीं होता। उदार लोकतांत्रिक राजनीतिक व्यवस्थाओं में नागरिक राजनीतिक गतिविधियों में अधिक भाग लेते हैं जबकि पिछड़ी हुई तथा सर्वसत्तावादी राजनीतिक व्यवस्था को राजनीतिक भागीदारी के अधिक अवसर नहीं मिलते। वास्तव में राजनीतिक भागीदारी ही किसी व्यवस्था के औचित्य की कसौटी मानी जाती है। तुलनात्मक राजनीति में भागीदारी का महत्व है।
10. **राजनीति प्रक्रियाएँ** :—प्रत्येक राजनीति प्रणाली में अनेक राजनीतिक प्रक्रियाएँ चलती रहती हैं। प्रत्येक राजनीतिक व्यवस्था में निर्णय निर्माण की प्रक्रिया, न्यायिक प्रक्रिया इत्यादि अनेक प्रक्रियाएँ अनवरत रूप में चलती रहती हैं। इन राजनीतिक प्रक्रियाओं का राजनीतिक व्यवस्था पर प्रभाव पड़ता है। इसलिए तुलनात्मक राजनीति में राजनीतिक प्रक्रियाओं का अध्ययन किया जाता है।
11. **प्रतियोगी राज्यों के बीच शक्ति सन्तुलन:**—तुलनात्मक राजनीति में 'युद्ध और शान्ति' तथा शक्ति सन्तुलन की समस्याओं पर विचार किया जाता है।
12. **अन्तः अनुशासनात्मक दृष्टिकोण:**—आधुनिक युग में तुलनात्मक राजनीति का विषय क्षेत्र केवल मात्र राजनीति शास्त्र के अध्ययन तक ही सीमित नहीं है, बल्कि इसमें राजनीतिक व्यवस्था के व्यावहारिक राजनीतिक प्रक्रियाओं का अध्ययन होने के कारण इसके विषय क्षेत्र में काफी वृद्धि हुई है। इसी कारण तुलनात्मक राजनीति एक अन्तःअनुशासनात्मक दृष्टिकोण बन गया है। अब तुलनात्मक राजनीति में राजनीतिक शास्त्र के अलावा अन्य सामाजिक विज्ञानों जैसे कि समाजशास्त्र, मनोविज्ञान, अर्थशास्त्र, इतिहास, विज्ञान, रसायन विज्ञान इत्यादि का भी अध्याय किया जाता है। आधुनिक विद्वानों की मान्यता है कि राजनीतिक व्यवस्थाओं की जटिलताओं को सामाजिक और आर्थिक संदर्भों में ही भली प्रकार से समझा जा सकता है।

इस प्रकार तुलनात्मक राजनीति का क्षेत्र बहुत कुछ स्पष्ट, सुनिश्चित और निर्धारित हो गया है। जी. के. रॉबर्ट्स का कथन सही लगता है कि, इस प्रकार यह बात कि तुलनात्मक राजनीति 'कुछ भी नहीं है' गलत साबित हो गया है और इसका प्रतिपक्षी दावा कि यह 'सब कुछ है' संशोधित हो गया है। अर्थात् तुलनात्मक राजनीति का अपना स्वयं का विषय क्षेत्र बन गया है। परन्तु इसका अभिप्राय नहीं है कि तुलनात्मक राजनीति का एक ऐसा स्वतन्त्र शास्त्र बन गया है जिसका राजनीति से कोई सम्बन्ध नहीं है।



उपरोक्त विवेचन के बाद यह कहा जा सकता है कि तुलनात्मक राजनीति में न केवल विभिन्न राजनीतिक संस्थाओं, उनके कार्यों का ही अध्ययन शामिल नहीं है, बल्कि इसमें गैर-राजकीय संस्थाओं के राजनीतिक कार्य व व्यवहार भी शामिल हैं। आज तुलनात्मक राजनीति में शासन प्रणाली व उसके राजनीतिक व्यवहार के समान व असमान दोनों तत्व ही शामिल हैं। मुनरो, हर्सन फाइनर, लास्की जैसे विद्वानों के प्रयासों ने अरस्तु के तुलनात्मक अध्ययन को बहुत व्यापक बना दिया है। आज तुलनात्मक राजनीति का क्षेत्र पश्चिमी देशों की सरकारों या राजनीतिक संस्थाओं व उनके व्यवहार तक ही सीमित नहीं है, बल्कि इसका प्रसार तृतीय विश्व तक हो चुका है। अब राज्य से सम्बन्धित संस्थाओं व संगठनों की बजाय गैर-राजनीतिक संस्थाओं व उनके व्यवहार को अधिक महत्व दिया जाने लगा है। आज तुलनात्मक राजनीति अन्धकार में भटकने की बजाय निश्चित कारणों को प्राप्त करने के लिए राजनीतिक संस्थाओं व राजनीतिक व्यवहार की महत्वपूर्ण नियमितताओं, समानताओं व असमानताओं पर अधिक ध्यान दे रही है। आज तुलनात्मक राजनीति में सजग तुलनाओं का विशेष महत्व है। आज राजनीतिक विद्वान तुलनात्मक अध्ययन को निरर्थक व बोझिल बनाना नहीं चाहते। आज तुलनात्मक राजनीति में नए-नए विषयों व नई-नई तकनीकों को महत्व दिया जा रहा है तथा तुलनात्मक राजनीति अन्य सामाजिक शास्त्रों से भी काफी कुछ ग्रहण कर रही है। इसलिए तुलनात्मक राजनीतिक अध्ययन कानून-निर्माण, कानून प्रयोग, विभिन्न राजनीतिक व्यवस्थाओं के अंगों से सम्बन्धित निर्णयों, राजनीतिक दलों, दबाव समूहों के अध्ययन तक ही सीमित नहीं हैं, बल्कि इसमें समस्त व्यक्तियों, संस्थाओं और समुदायों के सामाजिक व्यवहारों का अध्ययन भी शामिल है। आज तुलनात्मक राजनीति में राज्यों की संस्थागत संरचनाएं, राजनीतिक समाजीकरण, राजनीतिक संस्कृति, राजनीतिक दल व दबाव समूह, राजनीतिक अभिजन, राजनीतिक हिंसा व राजनीतिक भ्रष्टाचार, राजनीतिक विकास, राजनीतिक आधुनिकीकरण, प्रतियोगी राज्यों के बीच शक्ति सम्बन्ध, जनमत, तुलनात्मक विश्लेषण आदि का अध्ययन शामिल है। लेकिन तुलनात्मक राजनीति अभी पूर्णता को प्राप्त नहीं कर चुकी है, बल्कि यह संक्रमणकाल के दौर से गुजर रही है। राजनीतिक विद्वान अभी भी इस अनिश्चय की स्थिति में हैं कि तुलनात्मक राजनीति का क्षेत्र क्या हो ?

1.3.3 तुलनात्मक राजनीति का विकास (Development of comparative politics)

राजनीति विज्ञान में तुलनात्मक अध्ययन क्रान्तिकारी और नया नहीं है। राजनीति में प्रारम्भ से ही तुलनात्मक अध्ययन का प्रयोग किया जाता रहा है। इसीलिए ब्लॉडेल ने कहा है कि “तुलनात्मक सरकारों का अध्ययन प्राचीनतम, अत्यन्त कठिन और अत्यधिक महत्वपूर्ण है तथा शुरू से ही मनुष्य के ध्यान के आकर्षण का केन्द्र रहा है।” किन्तु तुलनात्मक राजनीतिक के व्यवस्थित अध्ययन का श्रेय अरस्तू को है। अरस्तू ने ही सबसे पहले तत्कालीन राजनीतिक की व्यवस्थाओं में उपस्थित निरंकुश तंत्रों, श्रेणी तंत्रों और प्रजातंत्र की विशेषताओं और अन्तरों का तुलनात्मक दृष्टि से विशद विवेचन किया था। अरस्तू से लेकर आधुनिक राजनीतिशास्त्र के विद्वानों तक



ने राजनीतिक व्यवहार को समझने के लिए राजनीतिक व्यवस्थाओं का अध्ययन, विश्लेषण और वर्गीकरण किया है और नयेदृनये शोध उपकरणों के माध्यम से नये दृष्टिकोणों की व्याख्या की है।

राजनीति और शासन के तुलनात्मक अध्ययन की परम्परा हम अरस्तू और उसके पहले भी पाते हैं। बाद में मेकियावेली, मॉन्टेस्क्यू, ब्राड्स, लास्की, फाइनर आदि विचारकों ने इस पद्धति को अपनाया। दूसरे महायुद्ध के पहले तक इसका विकास छोटे स्तर पर ही होता रहा। लेकिन, उसके बाद तुलनात्मक राजनीति के क्षेत्र में क्रान्तिकारी विकास हुए और इसे एक नये अनुशासन के रूप में विकसित किया जाने लगा। आज सैद्धान्तिक दृष्टिकोण से राजनीतिशास्त्र का यह एक महत्वपूर्ण अंग बन गया है और इसके अन्तर्गत अनेकों सिद्धांतों व अवधारणाओं को जन्म दिया गया है। पुराने विचारों में अरस्तू पहला राजनीतिक दार्शनिक था जिसने राजनीति को विज्ञान का दर्जा देना चाहा। उसने इस प्रकार की समस्याओं का चिन्तन तथा ऐसी विधियों का प्रयोग किया जो आज भी राजनीतिक के अध्ययन के क्षेत्र में बहुत कुछ मान्य हैं। उसने 158 संविधानों का तुलनात्मक अध्ययन कर वैज्ञानिक विधि का प्रयोग किया। अरस्तू ने ही पहली बार राजनीतिशास्त्र में आगमनात्मक पद्धति को अपनाया।

तुलनात्मक राजनीति के विकास का दूसरा चिन्ह मैकियावेली और पुनर्जागरण के युग में मिलता है। राज्य की उत्पत्ति, राजनीतिक व्यवस्था शासन कला के विषय में निगमनात्मक पद्धति का परित्याग कर दिया गया तथा मैकियावेली जैसे विचारकों ने वैज्ञानिक तटस्थता की नीति को अपनाते हुए उन दिनों की परिस्थितियों का गंभीरता से अध्ययन किया। अपने युग की समस्याओं को समझा और फिर निष्कर्ष पर पहुंचे। इस तरह उन्होंने अपनी अध्ययन पद्धति में अनुभववाद और इतिहासवाद का समन्वय किया। उसने राजनीति के अध्ययन में इतिहास और तर्क का सहारा लिया। मॉन्टेस्क्यू और इतिहासवादी युग के कुछ लेखकों में हम राजनीति के तुलनात्मक अध्ययन का उदय होते देखते हैं। हेरी एक्सटीन का तो निष्कर्ष है कि आधुनिक तुलनात्मक राजनीति से सम्बन्धित कोई भी पाठक सरलता से अनुमान लगा सकता है कि मॉन्टेस्क्यू द्वारा विचार किये गये विषय उसके अध्ययन क्षेत्र में आते हैं। मॉन्टेस्क्यू के विचारों में राजनीतिशास्त्र का सम्पूर्ण मानवीय संबंधों के साथ अध्ययन किया जाना चाहिए जिसमें धर्मशास्त्र, भूगोल, इतिहास, मनोविज्ञान, मानवशास्त्र आदि सभी विषय का अध्ययन शामिल है।

इतिहासवादी विचारकों के कई प्रमुख उदाहरण हमारे सामने हैं, जैसे विवेक और प्रजातन्त्र के साथ-साथ विकास में विश्वास करने वाला काण्ट, विवेक और स्वतन्त्रता को बुनियादी मानते वाला हीगेल, वैज्ञानिक प्रवृत्ति को बुनियादी मानने वाला काम्ते और वर्गदुर्घर्ष के माध्यम से स्वतन्त्रता की प्राप्ति में विश्वास करने वाला मार्क्स। इन इतिहासवादियों की सबसे बड़ी देन यह थी कि उन्होंने सामाजिक गतिशीलता में, खास कर विकासवादी सिद्धान्त में, राजनीतिक इतिहासकारों की रुचि जाग्रत की, जिसके कारण राजनीति के विस्तृत सिद्धान्तों का जन्म हुआ। उन्होंने उन समस्याओं की ओर भी ध्यान दिया जो राजनीति और आर्थिक विकास, राजनीति और शिक्षा, सामाजिक संस्कृति और राजनीति के बीच सम्बंध जैसी समस्याओं से सम्बन्धित हैं। दूसरे महायुद्ध के बाद तुलनात्मक राजनीतिक के



क्षेत्र में सही दिशा का विकास हुआ। पहले तो मंथर गति से विकास हुआ, फिर तेजी से नयी प्रवृत्तियाँ उभरने लगीं। पहले तुलनात्मक अध्ययन के महत्व को समझते हुए नये तकनीक की खोज की, फिर नई अवधारणाओं जैसे राजनीतिक विश्लेषण, राजनीतिक समाजशास्त्र आदि का विकास हुआ। पिछले दो दशकों में राजनीति के क्षेत्र में तुलनात्मक अध्ययन का विकास विशेष रूप से और बड़ी तेजी से हुआ। ईस्टन. आमंड, कार्ल डॉ० एच., कोलमन आदि ने व्यवस्था सिद्धान्त के अन्तर्गत तुलनात्मक विश्लेषण को नयी दिशा दी। व्यवस्था के सिद्धान्त बहुत ही महत्वपूर्ण और उपयोगी सिद्ध हुए। सिद्धान्त के द्वारा राज्य और राज्य से परे सभी प्रकार की सामाजिक व्यवस्थाओं की तुलना संभव हुई। लगभग सभी विद्वानों ने अपनी अपनी विशेष शब्दावली और भाषा का विकास किया। 'इनपुट', 'आउटपुट', 'फीडबैक', 'साईबरनेटिक्स', आदि इसका उदाहरण है। तुलनात्मक राजनीति के शोध के लिए कई नयी पद्धतियाँ अपनायी गयीं, जैसे 'बोटिंग स्टडी', 'स्केलिंग टेकनीक', 'कन्टेन्ट एनालायसिस' आदि। तुलनात्मक राजनीति के विकास में हाल के वर्षों में डेल, एक्टर रोस्टो, लुसियन पाई, सिडनी वर्बा, मायरन विनर आदि के योगदान अपना विशेष महत्व रखते हैं। उन्होंने केवल पश्चिमी देशों का ही अध्ययन नहीं किया, बल्कि नवोदित राष्ट्रों और तीसरे विश्व के अध्ययन को ही विशेष महत्व दिया।

दूसरे महायुद्ध के बाद तुलनात्मक राजनीति के क्षेत्र में जिन नयी प्रवृत्तियों का समावेश हुआ वे निम्नलिखित हैं :

1. तुलनात्मक राजनीति का क्षेत्र बहुत अधिक बढ़ गया है। उसमें न केवल पश्चिमी देशों का बल्कि अपाश्चात्य व्यवस्थाओं का गहन अध्ययन किया जाने लगा है।
2. राज्य व शासन की संस्थाओं से अधिक सामाजिक समूहों के राजनीतिक कार्यों तथा सामाजिक संस्थाओं के राजनीतिक मूल्यों को ढालने में अदा की गयी भूमिका के अध्ययन पर अधिक से अधिक बल दिया जा रहा है।
3. तुलनात्मक विश्लेषण के लिए दूसरे विषयों से नयी अवधारणात्मक योजनाएँ ली जा रही हैं और नये प्रतिमानों का निर्माण किया जा रहा है। संरचनात्मक दृष्टिकोण, आधुनिकीकरण तथा राजनीतिक विकास के ढांचे और राजनीतिक संस्कृति का दृष्टिकोण विशेष रूप से उल्लेखनीय है।
4. राजनीति के क्षेत्र को अधिक से अधिक वैज्ञानिक बनाने का प्रयास जाने लगा।

1.3.4 तुलनात्मक राजनीति व तुलनात्मक सरकार (Comparative politics and comparative government)

तुलनात्मक सरकार का कार्यक्षेत्र तुलनात्मक राजनीति की तुलना में काफी संकुचित है। प्रायः इन दोनों को समानार्थी माना जाता है। लेकिन इनमें मौलिक व आधारभूत अन्तर है। इनके अन्तर को स्पष्ट करते हुए जी० के० राबर्ट्स (G-K- Robert) ने लिखा है—“तुलनात्मक सरकार या शासन का प्रयोग राज्यों, उनकी संस्थाओं और उनके कार्यों से सम्बन्धित कुछ समूहों जैसे—राजनीतिक दल, दबाव समूह आदि के अध्ययन के लिए उपयुक्त लगता है,



लेकिन तुलनात्मक राजनीति का क्षेत्र व्यापक है, जिसमें तुलनात्मक शासन तथा गैर राज्यीय राजनीति जैसे कबीले, निजी संस्थाएं आदि का भी अध्ययन किया जाता है।" तुलनात्मक सरकार के बारे में जीन ब्लॉडेल ने लिखा है—“तुलनात्मक सरकार विश्व की राष्ट्रीय सरकारों के विभिन्न प्रतिमानों का अध्ययन है।” इससे स्पष्ट हो जाता है कि तुलनात्मक राजनीति तुलनात्मक शासन का विकसित रूप है। तुलनात्मक शासन या सरकार का प्रयोग द्वितीय विश्वयुद्ध से पहले तो ठीक लगता था, आज नहीं। आज तुलनात्मक राजनीति का सम्बन्ध राजनीतिक व्यवहार की सम्पूर्ण कार्यप्रणाली से जुड़ गया है। नवोदित राष्ट्रों के रूप में तृतीय विश्व की अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों में भूमिका के कारण तुलनात्मक अध्ययन अपनी परम्परागत सीमाएं छोड़कर तृतीय विश्व की ओर प्रस्थान कर चुका है। अर्थशास्त्र, मनोविज्ञान आदि के क्षेत्र में आए व्यापक परिवर्तनों ने राजनीति विज्ञान को नए सिरे से सोचने पर मजबूर कर दिया है। 1979 के बाद उत्तर-व्यवहारवादी क्रान्ति ने राजनीति विज्ञान को व्यक्ति की राजनीतिक व गैर-राजनीतिक गतिविधियों का विश्लेषण करने के लिए बाध्य कर दिया है। सिडनी वर्बा ने केवल पश्चिमी देशों का अध्ययन न करके, एशिया, अफ्रीका एवं लेटिन अमेरिका के नए राष्ट्रों का अध्ययन करने पर जोर दिया है। इससे स्पष्ट संकेत मिलता है कि तुलनात्मक राजनीति का कार्यक्षेत्र व्यापक हो चुका है। यह अपना परम्परागत रूप छोड़कर आधुनिकता की तरफ अग्रसर हो रही है। इसलिए तुलनात्मक सरकार से यह न केवल भिन्न है, बल्कि तुलनात्मक सरकारों को भी अपने में समेट लेती है। जहां तुलनात्मक सरकार राजनीतिक संस्थाओं व उनके कार्यों से सम्बन्धित है, वहीं तुलनात्मक राजनीति संस्थाओं व कार्यों के साथ साथ गैर-राजनीतिक संस्थाओं, कार्यों व उनके व्यवहार को भी समेट लेती है। अतः तुलनात्मक राजनीति का अध्ययन क्षेत्र तुलनात्मक सरकार से व्यापक है और तुलनात्मक सरकार का अध्ययन भी तुलनात्मक राजनीति के अन्तर्गत आता है।

1.3.5 तुलनात्मक पद्धति और तुलनात्मक राजनीति (Comparative Method and Comparative Politics)

अब तुलनात्मक पद्धति, किसी राजनीतिक व्यवस्था को किसी अन्य राजनीतिक व्यवस्था से यान्त्रिकी तुलना (mechanical comparision) मात्र नहीं मानी जाती है। अब इसका प्रयोग सर्जनात्मक प्रक्रिया (creative process) के रूप में इस प्रकसा सक होता है जिसकी तुलनाएँ अधिक अर्थपूर्ण बनाई जा सकें। सामाजिक विज्ञानों में यान्त्रिकी तुलनाएँ किसी अर्थपूर्ण निष्कर्ष तक नहीं पहुंच सकती हैं। जैसे भारत के प्रधानमंत्री की, भारत के किसी गांव की पंचायत के सरपंच से तुलना की जाए तो यह तुलना केवल यान्त्रिकी ही हो सकती है और ऐसी तुलना से न तो प्रधानमंत्री के बारे में और न ही सरपंच के बारे में कोई अर्थपूर्ण निष्कर्ष निकाला जा सकता है। अब तुलनात्मक पद्धति के प्रयोग विशेष अर्थों में होने लगा है। यह एक सृजनात्मक प्रक्रिया के रूप में देखी जाने लगी है। पर इस नये अर्थ में इसका प्रयोग बहुत कठिन बन गया है। क्योंकि सामाजिक विज्ञानों में तुल्य घटनाओं की अपेक्षा इच्छा व 'मानस



होता है। यही कारण है कि सामाजिक विज्ञानों में इस पद्धति का उपयोग अधिक प्रेरक, चुनौती वाला पर साथ ही फलदायक बन गया है।

अरेण्ड लिजफार्ट ने इस पद्धति की परिभाषा करते हुए लिखा है कि तुलनात्मक पद्धति, अन्य सभी परिवर्त्यों को स्थिर रखते हुए, दो या अधिक परिवर्त्यों के बीच सामान्य आनुभविक सम्बन्ध की स्थापना करने की विधि है अर्थात् तुलनात्मक पद्धति सामान्य आनुभविक प्रस्थापनाएँ स्थापित करने की आधारभूत पद्धतियों में से एक हैं। आर्थर एल. कालबर्ग के इस पद्धति की संक्षिप्त परिभाषा की है। वह तुलनात्मक पद्धतिको मापन के एक रूप (form of measurement) मात्र मानता है। लासवेल और आमण्ड ने तुलनात्मक पद्धति को वैज्ञानिक पद्धति कहकर परिभाषा किया है। लासवेल के अनुसार तुलनात्मक पद्धति वैज्ञानिक पद्धति से भिन्न हो ही नहीं सकती है। उनकी मान्यता है कि राजनीतिक घटनाओं पर वैज्ञानिक दृष्टिकोण रखने वाले किसी भी व्यक्ति के लिए एक स्वतन्त्र व पृथक तुलनात्मक पद्धति अनावश्यक है। अतः इसके अनुसार तुलनात्मक पद्धति, वैज्ञानिक पद्धति की तरह ही सामान्य नियमों की खोज के लक्ष्य की प्राप्ति की विधि है।

कालबर्ग, लासवेल व आमण्ड द्वारा किया गया तुलनात्मक पद्धति का अर्थ, इस पद्धति की प्रकृति का सही चित्रण नहीं करता है। यह मापन का एक रूप मात्र नहीं कहा जा सकता है। मापन से ही तुलनाएँ नहीं हो जाती हैं। यद्यपि यह सही है कि मापन में तुलना अन्तर्निहित है, पर मापन एक घटना के बारे में सामान्य निष्कर्ष से आगे नहीं ले जा सकता है। उदाहरण के लिए, यह मापक का निष्कर्ष कि किसी देश में संसदीय लोकतन्त्र सफल है, अवश्य ही किसी अन्य संसदीय लोकतन्त्र के आगे में सामान्यीकरण नहीं निकाले जा सकते हैं। इससे यह तो बताया जा सकता है कि संसदीय लोकतन्त्र ऐसा है पर इसके बारे में यह स्पष्ट नहीं किया जा सकता कि ऐसा क्यों है इसलिए कालबर्ग की परिभाषा, कि तुलनात्मक पद्धति मापन का एक रूप है, सही नहीं माना जा सकता है।

लासवेल व आमण्ड द्वारा इसे वैज्ञानिक पद्धति मान लेना भी ठीक नहीं है। वैज्ञानिक पद्धति तो एक मनोवृत्ति है। यह व्यवस्थित पर्यवेक्षण, वर्गीकरण और आंकड़ों की व्यवस्था है जिसकी तुलना भी होती हो यह आवश्यक नहीं है। जैसा, किसी देश की व्यवस्थापिका का वैज्ञानिक पद्धति से अध्ययन सम्भव नहीं है। इस पद्धति के द्वारा अध्ययन तभी होगा जब किसी अन्य देश की व्यवस्थापिका से इसकी तुलना की जाए। अतः तुलनात्मक पद्धति व वैज्ञानिक पद्धति को एक ही नहीं माना जा सकता है।

निष्कर्ष में यही कहा जा सकता है कि तुलनात्मक पद्धति किसी राजनीतिक व्यवस्था, संस्था, प्रक्रिया व राजनीतिक व्यवहार से सम्बन्धित दो या अधिक परिवर्त्यों में परस्पर आनुभविक सम्बन्ध स्थापित करने की ऐसी विधि है जिसमें तुलना की सभी इकाइयों से सम्बन्धित अन्य सभी परिवर्त्यों को स्थिर रखा जाता है। तुलनात्मक पद्धति की निम्नलिखित विशेषताएँ होती हैं:-

(1) वह निश्चित रूप एक पद्धति है।



(2) यह वैज्ञानिक पद्धतियों में एक है, स्वयं वैज्ञानिक पद्धति नहीं है।

(3) यह परिवर्त्यों के बीच आनुभविक सम्बन्ध-सूत्रता की खोज करने की विधि है।

(4) यह तुलनात्मक विश्लेषण की विधि है, प्रविधि प्रक्रिया या तुलना का दृष्टिकोण नहीं है।

तुलनात्मक पद्धति किसी भी एक वस्तु की किसी अन्य वस्तु से तुलना करना नहीं है। यह सर्जनात्मक प्रक्रिया है। इसका तुलनाओं में प्रयोग तभी किया जा सकता है जबकि तुलना की इकाइयों में कुछ लक्षण अनिवार्यतः विद्यमान हों अर्थात् तुलनात्मक पद्धति की तुलना करने की कुछ पूर्व शर्तें संक्षेप में यह पूर्व शर्तें इस प्रकार हैं:-

(क) तुलना की इकाई चयन के कारण के रूप में प्रत्ययी ढांचा या विचारबन्ध (Conceptual framework as a factor in unit selection):- तुलनात्मक पद्धति के प्रयोग में तुलना की इकाइयों का प्रत्ययी ढांचा एक-सा होना आवश्यक है। एक-से प्रत्ययी ढांचे से यहां यह तात्पर्य है कि सभी इकाइयाँ एक ही प्रत्यय से सम्बन्धित हों। उदाहरण के लिए, भारत की संसद की तुलना, ब्रिटेन की संसद से करने पर, तुलना की दोनों इकाइयाँ-भारत व ब्रिटेन की संसदें समान प्रत्ययी ढांचे वाली इकाइयाँ कही जाएंगी। दोनों ही राष्ट्रीय संसद हैं, पर अगर राजस्थान की विधान सभा की अमेरिका की कांग्रेस (व्यवस्थापिका) से तुलना की जाए तो दोनों इकाइयों का प्रत्ययी ढांचा अलग-अलग हो जाएगा तो तुलना तो की जा सकेगी, प यह सर्जनात्मक नहीं हो सकेगी।

(ख) अन्वेषण के केन्द्र के रूप में तुल्य प्रत्ययी विषय (Comparable conceptual issue as focus of enquiry) :- अन्वेषण के केन्द्र के रूप में तुलना योग्य व समान प्रत्ययों के विषय की तुलनात्मक अध्ययनों के लिए चुने जाएँ अन्यथा अध्ययन के सम्बन्ध में परिकल्पना करना ही कठिन हो जाएगा।

(ग) तुलना की प्रत्ययी इकाइयों की परिभाषितता (Definitional conceptual units of comparison):- तुलनात्मक पद्धति के प्रयोग में केवल ऐसी ही प्रत्ययी इकाइयों का चयन करना चाहिए जिनकी परिभाषा की जा सके। उनके सम्बन्धित प्रत्यय समय, स्थान और सांस्कृतिक के बन्धनों से मुक्त हों तथा अवस्थाओं व परिस्थितियों में लागू होने वाले हों।

(घ) भाषा के केन्द्र की सुनिश्चितता (Definiteness of the focus of enquiry):- तुलनात्मक विश्लेषणों में तुलनात्मक पद्धति के प्रयोग उपयोगी बनाने के लिए अध्ययन का सुनिश्चित ध्येय या मन्तव्य होना चाहिए।

(च) प्रत्ययी इकाई के कम से कम उदाहरणों की अनिवार्यता (Necessity of atleast two cases of conceptual units):- तुलना करने का तात्पर्य ही यह है कि कम से कम दो उदाहरण तो उपलब्ध हों। अगर दो या दो से अधिक उदाहरण नहीं होंगे तो तुलना सम्भव ही नहीं होगी। जहाँ केवल एक ही घटना या उदाहरण है वहां तुलनात्मक पद्धति का प्रयोग नहीं किया जा सकता है।

सामान्यता इस पद्धति के प्रयोग के निम्नलिखित चरणों का पालन होने पर ही यह पद्धति क्रियात्मक रूप ले सकती है।



(क) प्रत्ययी ढांचे के आधार पर तुलना की इकाइयों का चयन (**Selection of units of comparison on the basis of conceptual framework**)

(ख) तुलना की इकाइयों का वर्गीकरण (**Classification of the units of comparison**):—तुलना के लिए चुनी गई प्रत्ययी इकाइयों का वर्गीकरण करके ही तुलनात्मकता की अवस्था में पहुँचा जा सकता है। वर्गीकरण से तुलना का क्षेत्र व इकाइयों के वर्ग का सीमांकन हो जाता है। इससे तुलना का क्षेत्र सुनिश्चित व सुस्पष्ट हो जाता है।

(ग) तुलना की सभी इकाइयों के सम्बन्ध में परिकल्पनात्मक प्रस्थापनाओं की स्थापना (**Formulation of hypothetical propositions about all the units under comparison**) :— परिकल्पनात्मक प्रस्थापनाओं की स्थापना परिकल्पना बिना आधार के नहीं की जा सकती है। इकाई का चयन पहले होना चाहिए। इकाइयों के चयन के बाद प्रस्थापनाओं की स्थापना में अधिक छूट मिल जाती है। चुनी गई इकाइयों को लेकर हर सम्भव परिकल्पना की जा सकती है और उनमें से एक या कुछ या सभी की तुलनात्मक ढंग से परख की जा सकती है।

(घ) तुलना ही हर इकाई को लेकर परिकल्पनात्मक प्रस्थापना की वैधता की परख (**Testing the validity of hypothetical proposition about each instance of comparison**):— परिकल्पनात्मक प्रस्थापनाओं की वैधता की परख इकाइयों के सम्बन्धित आंकड़ों के संकलन के द्वारा की जाती है।

(ङ) परिणामों के अनुसा प्रस्थापना का सत्यापन त्याग अथवा परिमार्जन—संशोधन करना (**Confirming abandoning or refining the proposition according to results**) :— प्रस्थापनाओं को आंकड़ों द्वारा परख करके सत्यापन, त्याग या परिमार्जन किया जाता है। अगर संकलित आंकड़े प्रस्थापना की दृष्टि करते हों तो प्रस्थापना स्थापित हो जाती है। विपरीत आंकड़े होने पर इसका त्याग या परिमार्जन करके उसको आंकड़ों के अनुसार संशोधित कर लिया जाता है।

(च) अमूर्तीकरण या सिद्धान्त निर्माण (**Abstraction or theory building**):— जब एक अध्ययन के सामान्य निष्कर्ष प्राप्त हो जाते हैं तो उनकी तुलना अन्य अध्ययनों के निष्कर्षों से की जाती है और अगर अनेक उदाहरणों में एक ही प्रकार के निष्कर्ष निकलते हैं तो इस आधार पर सामान्यीकरण किए जा सकते हैं। इन सामान्यीकरणों के द्वारा सिद्धान्त निर्माण में सहायता मिलती है।

1.3.6 तुलनात्मक पद्धति की उपयोगिता (**Unility of Comparative Method**)

राजनीतिक अध्ययनों व विशेषकर तुलनात्मक राजनीति में तुलनात्मक पद्धति की बहुत उपयोगिता है।

- (1) राजनीतिक व्यवस्था को समझने में सहायक है।
- (2) राजनीति को वैज्ञानिक अध्ययन बनाने में सहायक है।
- (3) राजनीति में सिद्धान्त निर्माण करने में सहायक है।
- (4) प्रचलित राजनीतिक सिद्धान्तों की पुनः प्रामाणिकता सिद्ध करने में सहायक है।



ले एक महत्वपूर्ण उपागम है।

1.3.7 तुलनात्मक अध्ययन की कठिनाइयाँ (Difficulties of comparative politics studies)

- तुलनात्मक पद्धति अभी 'प्रवाह की स्थिति' में है। यह निर्णायक या अंतिम स्थिति में नहीं पहुंच पाया है। अतएव, इसके रास्ते में अनेक कठिनाइयाँ पायी जाती है। तुलना करने के लिए अनेक बातों की आवश्यकता पड़ती है।
- दूसरी समस्या की ओर संकेत करते हुए सरटोरी ने लिखा है कि जब तक वृहत स्तर पर कुछ ऐसे प्रत्ययों का निर्माण नहीं हो जिनके बारे में अधिक से अधिक जानकारी हो और जो तुलनीय हो, तब तक राजनीति में तुलनात्मकता संभव नहीं है। इसके लिए तुलना के विषयों में समानता का कुछ न कुछ अंश आवश्यक है और उनके बारे में अध्ययनकर्ता को पूरी जानकारी होनी चाहिए।
- तीसरी समस्या विभिन्न राष्ट्रों की संस्कृतियों के अध्ययन और विदेशी भाषाओं के प्रयोग के सम्बन्ध में पैदा होता है। तुलनात्मक अध्ययन के लिए विभिन्न राष्ट्रों की संस्कृतियों और विदेशी भाषाओं की जानकारी जरूरी है। किसी भी शोधकर्ता के लिए सभी भाषाओं की जानकारी प्राप्त करना संभव नहीं है और ना तो विभिन्न देशों की संस्कृति के बारे में सही और पूरी जानकारी प्राप्त कर लेना ही संभव है।
- चौथी कठिनाई आँकड़े जमा करने और राजीतिशास्त्र में वैज्ञानिक विधियों के प्रयोग से सम्बन्धित है। मनुष्य का स्वभाव उसका व्यवहार, उसके क्रियाकलाप और उसकी संस्थाओं की प्रकृति इतनी जटिल, व्यापक परिवर्तनशील है कि उसके बारे में पूरे आँकड़े जमा कर लेना आसान नहीं है।

इन कठिनाइयों के बावजूद राजनीतिशास्त्र का तुलनात्मक अध्ययन काफी लोकप्रिय हो गया है। दिन-प्रतिदिन इसकी कमियों को दूर किया जा रहा है और इसे अधिक से अधिक पूर्ण बनाने की कोशिश की जा रही है।

1.3.7 तुलनात्मक राजनीति का महत्व

तुलनात्मक राजनीति, राजनीति विज्ञान का नया तत्व नहीं है। इसका अध्ययन भी उस समय से होता आ रहा है, जब से राजनीति व राजनीतिक व्यवहार का अध्ययन आरम्भ हुआ। तुलनात्मक अध्ययन प्रारम्भ से ही मानव के ध्यान का केन्द्र रहा है। अरस्तु से लेकर आज तक तुलनात्मक अध्ययन का काफी प्रचलन बढ़ा है। आज राजनीतिक व्यवहार को तुलनात्मक आधार पर समझने के लिए नए नए दृष्टिकोण का उपागम विकसित हो रहे हैं। तुलनात्मक अध्ययन या राजनीति का महत्व इन बातों से दृष्टिगोचर होता है :-

➤ राजनीतिक व्यवहार को समझना

तुलनात्मक राजनीति का अध्ययन देश-विदेश की राजनीति व राजनीतिक व्यवहार को समझने में सहायक होता है। तुलनात्मक राजनीति के अध्ययन द्वारा विभिन्न राजनीतिक प्रक्रियाओं की समानताओं व असमानताओं का ज्ञान



कराता है। इससे राजनीतिक घटनाचक्रों का भी ज्ञान होता है। तुलनात्मक अध्ययन राजनीतिक अभिजनों को भी महत्वपूर्ण जानकारी देता है। इसी के आधार पर वे राजनीतिक व्यवहारों व दृष्टिकोणों की जाँच-परख करके उनकी प्रासंगिकता जांचते हैं। तुलनात्मक अध्ययन राजनेताओं के लिए मार्गदर्शक का कार्य करता है। इसके द्वारा वे जनता के लिए योग्य सुझाव प्रस्तुत करते हैं और बदलते राजनीतिक व्यवहार के मानकों की जानकारी भी ग्रहण करते हैं। उदाहरण के लिए—राजनेता मतदान व्यवहार के विभिन्न तत्वों का अध्ययन करके यह निष्कर्ष तुलनात्मक आधार पर ही निकाल सकते हैं कि मतदान व्यवहार को प्रभावित करने में सबसे अधिक भूमिका किस तत्व की है। तुलनात्मक राजनीति का महत्व विद्यार्थी, शिक्षक व नागरिकों के साथ-साथ जनसाधारण के लिए भी होता है। इससे हम यह भली-भाँति जान सकते हैं कि विभिन्न राजनीतिक समाज के लोगों का राजनीतिक व्यवहार परस्पर अलग क्यों होता है, उसके मूल्य और विधियाँ कौन सी हैं, जो वे एक दूसरे को समझने के लिए प्रयोग करते हैं। इसके द्वारा राजनीतिक व्यवहार की जटिलताओं को सरलता से समझा जा सकता है।

मैक्रीडिस तथा वार्ड के अनुसार, तुलनात्मक राजनीति एक ऐसा मार्गदर्शक है जो घर बैठे-बिठाए ही देश-विदेश की सैर करा देता है। इस द्वारा इस बात का पता आसानी से लगाया जा सकता है कि एक ही प्रकार की राजनीतिक व्यवस्था एक समाज में सफल तथा दूसरे में असफल क्यों होती है? लोकतन्त्र का सफल संचालन भारत में क्यों हो रहा है, पाकिस्तान में क्यों नहीं। चीन में साम्यवाद सफल है—रूस में असफल क्यों हुआ। इस प्रकार के राजनीतिक प्रश्नों का हल तलाश करने के लिए तुलनात्मक अध्ययन ही उपयोगी रहता है। राजनीतिक व्यवहार की जटिलताओं को समझे बिना इस प्रकार के प्रश्नों के उत्तर नहीं दिए जा सकते।

➤ राजनीति को वैज्ञानिक स्वरूप प्रदान करना

अरस्तु के समय से ही तुलनात्मक अध्ययन द्वारा राजनीति के अध्ययन को वैज्ञानिक बनाने के प्रयास किए जा रहे हैं। 1955 के बाद व्यवहारवादी क्रान्ति ने राजनीति को तुलनात्मक आधार पर एक विज्ञान का रूप देने का प्रयास किया है। व्यवहारवादियों ने राजनीतिक व्यवहार की निरन्तरताओं या नियमितताओं का पता लगाकर सामान्यीकरण के आधार पर सिद्धान्त विकसित करने के प्रयास किए हैं, क्योंकि यहीं सामान्यीकरण वैज्ञानिकता का आधार है। तुलनात्मक अध्ययन द्वारा ही राजनीतिक व्यवहार की नियमितताओं का पता लगाकर उनके कारणों का भी पता लगाया जा सकता है। इस तरह व्यवहारवादियों के प्रयासों से ही आज राजनीति विज्ञान राजनीति का विज्ञान बनने की ओर अग्रसर है।

➤ राजनीति में सिद्धान्त निर्माण

तुलनात्मक अध्ययन द्वारा राजनीतिक व्यवहार की नियमितताओं का पता चलने से सिद्धान्त निर्माण करना आसान हो जाता है। राजनीति शास्त्र में ऐसे सिद्धान्तों की तलाश की जा रही है जो सम्पूर्ण विश्व के राजनीतिक व्यवहार को समझने में सहायक हों। तुलनात्मक राजनीति आनुमाविक सिद्धान्तों तक पहुँचने में सहायता करती है। ये



आनुभाविक सिद्धान्त ही राजनीतिक व्यवहार के वास्तविक तथ्यों को समझने में मदद करते हैं। इसमें राजनीति शास्त्री स्वयं तथ्यों का संकलन करने के लिए राजनीतिक व्यवहार के क्षेत्र में जाकर राजनीतिक व्यवहार का अवलोकन करता है। आदर्श सिद्धान्त की कल्पना पर आधारित होने के कारण सिद्धान्त निर्माण ठोस तथ्यों के अभाव में नहीं हो सकता। इसलिए आनुभाविक सिद्धान्त ही राजनीतिक वास्तविकताओं से सीधा सम्बन्ध रखता है। इसी कारण से तुलनात्मक राजनीति आदर्श सिद्धान्तों की बजाय आनुभाविक सिद्धान्तों के अधिक समीप होती है। यथार्थ राजनीतिक व्यवहार की तुलना करना ही आनुभाविक सिद्धान्तों का निर्माण करना है। इस तरह तुलनात्मक राजनीति के अध्ययन का महत्व राजनीतिक व्यवहार के सम्बन्ध में सिद्धान्त निर्माण में है।

➤ प्रचलित राजनीतिक सिद्धान्तों की प्रामाणिकता परखना

तुलनात्मक अध्ययन द्वारा राजनीतिक सिद्धान्तों का पुनः परीक्षण करके, उनकी प्रामाणिकता की जांच की जा सकती है। प्रचलित सिद्धान्तों या अतीत में स्थापित सिद्धान्तों की समसामयिक प्रासंगिकता की जाँच तुलनात्मक अध्ययन द्वारा ही की जा सकती है। तुलनात्मक राजनीति राजनीतिक सिद्धान्तों की जांच-परख के लिए नवीन उपकरण व तकनीक उपलब्ध कराती है। किसी भी शास्त्र में परम सिद्धान्त नहीं हो सकते, इसलिए राजनीतिक सिद्धान्त भी परम सिद्धान्त नहीं हो सकते। मानव व्यवहार एक परिवर्तनशील वस्तु है। इसलिए मानव व्यवहार पर आधारिक राजनीतिक सिद्धान्तों की बदलती परिस्थितियों में जांच करना आवश्यक हो जाता है। इस कार्य में तुलनात्मक राजनीति ही सहायक होती है। तुलनात्मक अध्ययन द्वारा ही यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि प्रचलित राजनीतिक सिद्धान्त वर्तमान सन्दर्भ में कितने प्रासंगिक हैं या कितने अप्रासंगिक।

इस प्रकार कहा जा सकता है कि तुलनात्मक अध्ययन से हम अपने देश की संस्थाओं को अधिक गहराई से समझकर उपस्थित समस्याओं का निराकरण कर सकते हैं। तुलनात्मक अध्ययन द्वारा छात्रों, शिक्षकों, राजनीतिक विद्वानों सभी को उपयोगी जानकारी प्राप्त होती है। इसके द्वारा हम अपने देश की शासन पद्धति का दूसरे देशों की शासन-पद्धतियों से तुलनात्मक अध्ययन करके उपयोगी निष्कर्ष निकाल सकते हैं। इससे राजनीतिक व्यवहार को समझने, राजनीति-शास्त्र को विज्ञान बनाने, आनुभाविक अध्ययनों के आधार पर सिद्धान्त निर्माण करने तथा प्रचलित सिद्धान्तों की औचित्यता व प्रामाणिकता जांचने में सहायता मिलती है। आज की लोक कल्याणकारी राजनीतिक व्यवस्थाओं में राजनीतिक व्यवहार के बारे में सामान्य नियमों का निर्धारण करना बहुत आवश्यक हो गया है ताकि सामान्य राजनीतिक सिद्धान्तों का निर्माण किया जा सके और राजनीतिक व्यवस्था को स्थायित्व का गुण प्रदान किया जा सके।

1.4 पाठ के आगे का मुख्य भाग (Further main body of the text)



1.4.1 तुलनात्मक राजनीति के अध्ययन के लिए दृष्टिकोण (Approaches to the study of comparative politics)

जैसे-जैसे राजनीतिक व्यवस्थाएं जटिल बनती गई, वैसे-वैसे तुलनात्मक राजनीति के अध्ययन के सामने नई चुनौतियां उभरने लगी तथा समयानुसार अध्ययन के तरीकों व तुलना के उपकरणों में परिवर्तन आता गया। द्वितीय विश्व युद्ध तक तुलनात्मक राजनीति का अध्ययन परम्परागत तरीकों पर आधारित रहा और उसके बाद यह व्यवहारवादी क्रान्ति का आगमन के साथ ही आधुनिक बन गया। इसी आधार पर तुलनात्मक राजनीति में परम्परागत व आधुनिक उपागमों का आविष्कार हुआ। जहाँ परम्परागत उपागम हमें तुलनात्मक राजनीति के ऐतिहासिक, कानूनी और संस्थात्मक पक्षों को गहराई से समझने की मदद करता है।

(i) –परम्परागत उपागम

(ii) –आधुनिक उपागम

(i) –परम्परागत दृष्टिकोण या उपागम (Traditional Approaches)

व्यवहारवादी क्रान्ति से पूर्व सरकार तथा राजनीति के तुलनात्मक अध्ययन को ही परम्परागत अध्ययन कहा जाता है। प्रायः अरस्तु को ही परम्परागत दृष्टिकोण का जनक मान लिया जाता है।

(अ) परम्परागत उपागम की विशेषताएं (Features of Traditional Approaches) परम्परागत उपागम की प्रमुख विशेषताएं निम्नलिखित हैं :-

1. अतुलनात्मक :- तुलनात्मक अध्ययन के परम्परागत दृष्टिकोण में अनेक देशों की संविधानिक व्यवस्थाओं की व्याख्या की गई है। एक देश की राजनीतिक संस्था को आधार मानकर दूसरे देशों में अध्ययन करना किसी भी दृष्टिकोण से तुलनात्मक अध्ययन नहीं हो सकता। परम्परागत दृष्टिकोण के समर्थक किसी भी लेखक ने विभिन्न राजनीतिक प्रणालियों में चुनाव करने और उनमें सम्बन्ध स्थापित करने की चेष्टा नहीं की। इस दृष्टिकोण के द्वारा राज्य के ढांचे का विश्लेषण, प्रभुसत्ता निवास, चुनाव प्रणाली आदि का अतुलनात्मक अध्ययन ही किया जा सकता है। अतः परम्परागत दृष्टिकोण प्रमुखतः अतुलनात्मक ही है, तुलनात्मक नहीं।

2. वर्णनात्मक (Essentially Descriptive) :- परम्परागत दृष्टिकोण के लेखकों द्वारा लिखित रचनाएं केवल राजनीतिक संस्थाओं के वर्णन तथा व्याख्या तक ही सीमित हैं। इस दृष्टिकोण में लेखकों ने विभिन्न राज्यों के संविधानों की विस्तृत व्याख्या तो की है लेकिन उनमें समानताओं अथवा असमानताओं के लिए उत्तरदायी तत्वों व परिस्थितियों का अध्ययन नहीं किया। इस विद्वानों ने ऐतिहासिक और कानूनी पद्धति का प्रयोग करके राजनीतिक संस्थाओं की उत्पत्ति तथा विकास की परिस्थितियों का गहन अध्ययन नहीं करके केवल शासन के संगठन तथा



कार्यों के वर्णन पर ही अधिक ध्यान दिया। इस दृष्टिकोण में न तो वैज्ञानिकता न ही सामान्यीकरण के कोई प्रयास किए गए हैं। अतः परम्परागत दृष्टिकोण मुख्यतः वर्णनात्मक या व्याख्यात्मक है, विश्लेषणात्मक नहीं।

3.सीमित या संकुचित दृष्टिकोण (Essentially Parochial Approach) :- इस उपागम से सम्बन्धित लेखकों ने विदेशी सरकारों का अध्ययन केवल यूरोप और अमेरिका तक ही सीमित रखा। अधिकांश विद्वानों ने अपने मन में यह धारणा बनाए रखी कि प्रजातन्त्र तो केवल यूरोप में ही सम्भव है। इसी गलत धारणा के कारण ये विचारक कोई सामान्य सिद्धान्त विकसित नहीं कर पाए। अतः प्रजातन्त्र तो केवल यूरोप में ही सम्भव है। इसी गलत धारणा के कारण ये विचारक कोई सामान्य सिद्धान्त विकसित नहीं कर पाए। अतः प्रजातन्त्र के प्रति पूर्वाग्रह की भावना के कारण इन विद्वानों ने अपशिष्ट, औपनिवेशिक, अविकसित तथा अप्रजातान्त्रिक व्यवस्थाओं की उपेक्षा की ओर परम्परागत दृष्टिकोण सीमित या संकुचित ही रखा।

4.प्रबन्धात्मक (Essential Monographic) :- तुलनात्मक शासन व राजनीति पर लिखे गये अधिकतर रचनाएं परम्परागत उपागम के दौरान निबन्ध रूप में ही लिखी गई है। ये रचनाएं किसी राजनीतिक व्यवस्था की सरंजाओं या संस्था वि'षय तक ही सीमित रही। इसलिए प्रबन्धात्मक होने के कारण ये अध्ययन किसी राजनीतिक व्यवस्था के अराजनीतिक तत्वों को नहीं देख सके।

5.स्थिर या गतिहीन (Essentially Static) :- परम्परागत दृष्टिकोण में राजनीतिक संस्थाओं का कानूनों व ऐतिहासिक दृष्टि से ही अध्ययन करने के प्रयास हुए हैं। इसने राजनीतिक संस्थाओं की कार्यप्रणाली और राजनीतिक व्यवहार को प्रभावित करने वाले तत्वों – दबाव समूहों, चुनाव, जनमत आदि की उपेक्षा की है। वास्तव में राजनीतिक व्यवहार के गैर-राजनीतिक तत्व ही तुलनात्मक विश्लेषण का उपयोगी आधार होते हैं। इनके बिना किसी भी उपयोगी निष्कर्ष व सामान्यकरण तक पहुंचना कठिन कार्य है। गतिशील कारकों का अध्ययन किए बिना राजनीतिक संस्थाओं की उत्पत्ति और विकास को समझना असम्भव है। इससे स्पष्ट है कि परिवर्तनशील परिस्थितियों को समझे बिना सिद्धान्त निर्माण का काम कभी भी फलदायी नहीं हो सकता। अतः परम्परागत दृष्टिकोण मुख्यतः स्थिर व गतिहीन ही रहा।

6.मुख्यतः औपचारिक-संस्थागत अध्ययन (Primarily Legalistic Institutional Study):- परम्परागत दृष्टिकोण का सम्बन्ध मुख्य रूप से औपचारिक संस्थाओं तक ही रहा। इस दृष्टिकोण के अन्तर्गत यह जानने का किसी भी विद्वान ने प्रयास नहीं किया कि राजनीतिक संस्थाओं का वास्तविक व्यवहार कैसा है।

7.मुख्यतः अवैज्ञानिक अध्ययन (Primarily Unscientific Study) :- परम्परागत सिद्धान्त व दृष्टिकोण के विचारकों ने पद्धति विज्ञान की आवश्यकताओं तथा सत्यापनीयता को ध्यान में रखकर नहीं लिखा है। न उसमें तथ्य संग्रह तथा उनकी तकनीक ध्यान दिया गया है और न प्राक्कल्पनाओं के निर्माण एवं परीक्षण पर। अतः परम्परागत दृष्टिकोण अवैज्ञानिक है।



8. मुख्यतः आदर्श या मानकीय अध्ययन (Primarily Normative Study) :- परम्परागत विश्लेषण के विद्वानों ने शासन के सर्वश्रेष्ठ प्रकार की स्थापना के प्रयास किए हैं। इन विद्वानों ने अपनी मान्यताओं व पूर्व धारणाओं के आधार पर ही राजनीतिक संस्थाओं का वर्णन किया है और इन्हीं मान्यताओं व पूर्वधारणाओं की कसौटी पर राजनीतिक व्यवस्थाओं को परखा है।

9. विशेष समस्या पर आधारित अध्ययन (Study based on Specific Problem) :- इस दृष्टिकोण के विचारकों व विद्वानों ने अपनी रचनाओं में देश-विशेष की विशेष समस्या या समस्याओं पर ही अपना ध्यान केन्द्रित किया है।

10. परम्परागत दृष्टिकोण का महत्व (Importance of Traditional Approaches) इस दृष्टिकोण ने लम्बे समय तक राजनीतिक संस्थाओं का कानूनी-औपचारिक अध्ययन करके राजनीति के अध्ययन को नई दिशा प्रदान की है। जब तुलनात्मक अध्ययन अपनी प्रारम्भिक अवस्था में था और उसका कानूनी और ऐतिहासिक पद्धति के अलावा अध्ययन करने का कोई अन्य विकल्प नहीं था तो इस दृष्टिकोण ने अपना उत्तरदायित्व बखूबी निभाया है। आज तुलनात्मक अध्ययन जिस उसमें परम्परागत दृष्टिकोण का महत्वपूर्ण योगदान रहा है। आधुनिक दृष्टिकोण में जिन तथ्यों का प्रयोग होता है, वे परम्परागत दृष्टिकोण के रास्ते से होकर ही यहां तक पहुंचे हैं। राजनीतिक व्यवहार की जटिलताओं का प्रारम्भिक हल परम्परागत दृष्टिकोण के सैद्धान्तिक प्रयासों में ही ढूंढा जा सकता है। परम्परागत दृष्टिकोण ने राजनीति-विज्ञान के क्षेत्र में जिन प्रवृत्तियों का विकास किया था, आज वे ही तुलनात्मक अध्ययन का आधार बनी हुई है। अतः परम्परागत दृष्टिकोण ने ही आधुनिक दृष्टिकोण को महत्वपूर्ण तथ्य सामग्री व सैद्धान्तिक आधार प्रदान किया है।

(ब) प्रमुख परम्परागत दृष्टिकोण या उपागम (The Major Traditional Approaches):- तुलनात्मक अध्ययन के परम्परागत उपागमों में 1. ऐतिहासिक, 2. कानूनी-औपचारिक, 3. संरचनात्मक को ही प्रमुख माना है।

(1) ऐतिहासिक दृष्टिकोण (Historical Approach) :- राजनीति-विज्ञान में ऐतिहासिक उपागम एक अत्यन्त प्राचीन, मान्य व महत्वपूर्ण उपागम माना जाता है। इस उपागम के अन्तर्गत राज्यों की शासन प्रणालियों का ऐतिहासिक आधार पर तुलनात्मक अध्ययन किया जाता है। इस उपागम का प्रयोग अरस्तु, मैकियावेली, मॉन्टेस्क्यू, हीगल, मार्क्स, मैक्स वेबर, वाल्टर बेजहॉट तथा सर हेनरी जेन आदि राजनीतिक विचारकों व दार्शनिकों ने किया है। किसी भी देश की राजनीतिक संस्कृति की जड़ें इतिहास के गर्भ में पोषित होती हैं। उसका वर्तमान स्वरूप ही उसके अतीत का सुन्दर इतिहास समेटे हुए होता है। इसलिए उनके वर्तमान स्वरूप को समझने के लिए उनके अस्तित्व में आने तथा विकास सम्बन्धी कारणों, उनका दूसरों पर तथा उन पर दूसरों के पड़ने वाले प्रभाव को जानना अपरिहार्य है। उन्हीं के भूतकालीन स्वरूप से ही न्यूनाधिक रूप से आधुनिक राजनीति प्रभावित रहती है। इसी कारण इतिहास को राजनीति की जड़ और राजनीति को इतिहास का फल कहा जाता है। इस तरह राजनीति को इतिहास द्वारा अथवा अतीत के सन्दर्भ में समझना ही इतिहासवादी या ऐतिहासिक उपागम कहलाता है।



ऐतिहासिक उपागम के अन्तर्गत भूतकाल में घटित महत्वपूर्ण तथ्यों और घटनाओं का वि”लेषण किया जाता है। यह उपागम मूल्य निरपेक्ष रहकर विभिन्न संस्थाओं, ऐतिहासिक चरित्रों, सभाओं, प्रक्रियाओं और मूल्यों का चित्रण करता है। समकालीन सन्दर्भ में अनुभवमूलक पद्धति का प्रयोग करके तुलनात्मक राजनीति के अन्तर्गत जो निष्कर्ष निकाले जाते हैं, उनकी पुष्टि के लिये यह उपागम काफी सहायक सिद्ध होता है। गिलक्राइस्ट ने कहा है – “ इतिहास न केवल संस्थाओं की व्याख्या करता है, बल्कि यह भविष्य के पथ–प्रदर्शन हेतु निष्कर्ष प्राप्त करने में भी सहायक होता है। यह वह धुरी है, जिसके चारों ओर राजनीति–विज्ञान की आगमनात्मक और निगमनात्मक दोनों ही प्रक्रियाएं कार्य करती हैं।” इसी कारण आधुनिक समय में तुलनात्मक अध्ययन के लिए इसको काफी महत्व दिया जाता है।

(अ) ऐतिहासिक उपागम की आलोचना (Criticisms of Historical Approach) :- विद्वानों का मानना है कि इतिहासवादिता के साथ नाता रखने के कारण ही राजनीतिक सिद्धान्त युगानुकूल एवं भविष्यदर्शी मूल्यों के पुनर्निर्माण में असफल रहा और उसका पतन हो गया। यह उपागम मूल्य–निरपेक्ष होने की दुहाई देता है, लेकिन किसी न किसी रूप में इतिहासवेत्ता के व्यक्तिनिष्ठ परिप्रेक्ष्य से प्रभावित भी होता रहता है। इसलिए ऐतिहासिक उपागम का मूल्य–निरपेक्षता का दावा बिल्कुल गलत है।

(2). कानूनी–औपचारिक उपागम (Legal-Formal Approach) :- इस उपागम के अन्तर्गत राजनीति के अध्ययन को किसी देश में प्रचलित संविधान के आधार पर वहां की शासन–प्रणालियों के संगठनात्मक ढांचे, शासन के अंगों की कानूनी शक्तियों और उनके परस्पर सम्बन्धों के आधार पर ही समझा जाता है। यह उपागम राजनीति–विज्ञान को संविधान, कानूनी संहिता व विधि के रूप में ही देखता है। इसके अन्तर्गत कानूनी आधार पर ही संस्थाओं का पृथक्करण किया जाता है। इस उपागम का प्रयोग करते समय राजनीतिक–वैज्ञानिकों को यह स्वतन्त्रता रहती है कि कानूनी व्यवस्था का वि”लेषण करने के साथ–साथ किसी घटना या राजनीतिक संस्था का भी कानूनी अध्ययन कर सकते हैं। इस उपागम के अन्तर्गत न्यायिक संस्थाओं के संगठन, अधिकारक्षेत्र और स्वतन्त्रता जैसे विषय आवश्यक तौर पर राजनीतिक सिद्धान्त”शास्त्रियों की चिन्ता का विषय बन जाते हैं।

(अ) कानूनी औपचारिक उपागम का महत्व (Importance of Legal-Formal Approach) :- विधि का शासन, न्यायपालिका की सर्वोच्चता आदि के अध्ययन के रूप में यह उपागम बराबर महत्व देता रहा है। किसी देश का संविधान ही वहां की राजनीति का औपचारिक ढांचा पेश करता है। इसलिए संविधानों के निर्माण, संशोधन और व्याख्या के क्षेत्र में यह उपागम बहुत महत्व रखता है। सरकार के तीनों अंगों की शक्तियां, उनके पारम्परिक सम्बन्ध आदि सभी बातें कानून का ही विषय है। अतः सार रूप में कहा जा सकता है कि किसी देश की राजनीति का कानूनी तरीके से अध्ययन इसी दृष्टिकोण की मदद से ही सम्भव है क्योंकि संविधान ही किसी देश का सर्वोच्च कानून होता है और इसी बात को यह उपागम प्रमुखता देता है।



(ब)- कानूनी-औपचारिक उपागम की आलोचना (Criticisms of Legal-Formal Approach) :- इसका परिप्रेक्ष्य अत्यन्त संकीर्ण है, क्योंकि यह दृष्टिकोण लोगों को जीवन के केवल कानूनी पहलू का ही अध्ययन करता है, राजनीतिक जीवन के समस्त व्यवहार का नहीं। यह दृष्टिकोण राजनीतिक व्यवस्था को कानूनी दृष्टि से ही देखकर एक पक्षीय विचार का पोषण करता है।

(3)-संस्थागत उपागम (Institutional Approach)

इस उपागम का मुख्य गुण यह है कि समान शासन प्रणाली वाले देशों के शासकीय अंगों की तुलना करके उपयोगी निष्कर्ष प्राप्त करने में यह उपागम काफी महत्वपूर्ण रहता है। इस उपागम की मदद से वर्तमान संस्थाओं के मार्ग में आने वाली बाधाओं को दूर किया जा सकता है। यद्यपि इस उपागम के प्रयोग करने में कुछ जटिलताएं अवश्य आती हैं, लेकिन यदि उन समस्याओं पर ध्यान केन्द्रित कर दिया जाये तो यह उपागम राजनीतिक संस्थाओं के मार्ग में आने वाली बाधाओं को दूर कर सकता है।

(अ) संस्थागत उपागम की आलोचना (Criticisms of Institutional Approach) :- आलोचकों का कहना है कि यह दृष्टिकोण किसी देश की राजनीतिक मनोदशा का सही चित्रण नहीं कर सकता। यह उपागम मुक्त समाजों के लिए तो ठीक हो सकता है, लेकिन कठोर राजनीतिक नियन्त्रण वाले समाजों में नहीं। जहां जनसहभागिता का सीमित दायरा दो और नागरिक स्वतन्त्रताओं और अधिकारों को कर्तव्यों के रूप में देखा जाता हो, वहां यह दृष्टिकोण काम नहीं कर सकता। राजनीतिक अस्थिरता वाले देशों की राजनीतिक संस्थाओं का अध्ययन भी इसकी मदद से कारगर सिद्ध नहीं हो सकता। अन्य उपागमों की तरह इस उपागम की भी यह आलोचना की जाती है कि यह बहुत संकीर्ण है। यह व्यक्तियों की अनदेखी कर देता है जो राजनीतिक व्यवस्था की औपचारिक और अनौपचारिक संस्थाओं व उप-संस्थाओं का निर्माण एवं उनका संचालन करते हैं। लेकिन आधुनिक समय में इस उपागम ने अनौपचारिक संस्थाओं को भी अपने अध्ययन की परिधि में लाकर अपने को उन दोनों से मुक्त करने का प्रयास किया है जो इस पर लगते आ रहे थे। आज इस उपागम में सरकार के तीनों अंगों व अन्य औपचारिक राजनीतिक संस्थाओं के साथ-साथ राजनीतिक दलों, दबाव व हित समूहों, सम्प्रान्त वर्ग आदि का भी अध्ययन किया जाता है। अतः संस्थागत उपागम दिन-प्रतिदिन तुलनात्मक राजनीति व राजनीति विज्ञान दोनों के लिए महत्वपूर्ण बनता जा रहा है लेकिन फिर भी इसे आधुनिक उपागम की संज्ञा नहीं दी जा सकती।

(ii) आधुनिक उपागम या दृष्टिकोण (Modern Approaches)

ऑमण्ड व पावेल ने द्वितीय विश्व युद्ध के बाद उत्पन्न जटिल राजनीतिक व्यवहार के घटनाक्रम का विश्लेषण किया और उसने बताया कि आधुनिक उपागमों को अपनाए जाने के पीछे तीन प्रमुख कारण हैं :- (i) एशिया, अफ्रीका तथा मध्यपूर्व में नए प्रभुसत्तासम्पन्न राष्ट्रों का उदय (ii) अटलांटिक समुदाय के राष्ट्रों का अन्त और अन्तर्राष्ट्रीय



शक्ति व प्रभाव का उपनिवेशों व अर्द्ध-उपनिवेशी क्षेत्रों में प्रसार व विस्तार तथा (iii) साम्यवाद का राष्ट्रीय राजनीति व्यवस्था की संरचना व अन्तर्राष्ट्रीय व्यवस्था को बदलने के संघर्ष में एक शक्तिशाली प्रतियोगी के रूप में उभरना। इन बदली हुई परिस्थितियों को समझने में परम्परागत दृष्टिकोण अधिक उपयोगी नहीं रहा और तुलनात्मक राजनीति के अध्ययन को अधिक वास्तविक स्वरूप प्रदान करने के लिए नवीन उपागमों की आवश्यकता अनुभव हुई। विश्व में सैनिक शासनों, साम्यवादी व पूंजीवादी विचारधाराओं ने परम्परागत दृष्टिकोण को चुनौती देकर उसे अनावश्यक बना दिया। अब तुलनात्मक अध्ययन के लिए गैर-राजनीतिक तत्वों- हित व दबाव समूहों, मतदान व्यवहार, लोकमत आदि तथा गैर-लोकतन्त्रीय राजनीतिक व्यवस्थाओं और गैर-पाश्चात्य देशों की राज-व्यवस्थाओं को भी आवश्यक समझा जाने लगा। इसी प्रवृत्ति के चलते आधुनिक उपागमों का विकास हुआ।

(अ) आधुनिक उपागम या दृष्टिकोण की विशेषताएं (Features of Modern Approaches)

आधुनिक उपागम की विशेषताएं निम्नलिखित हैं :-

- **विश्लेषणात्मक एवं व्याख्यात्मक (Analytical and Explanatory) :-** आधुनिक दृष्टिकोण परम्परागत दृष्टिकोण की तरह वर्णनात्मक न होकर व्याख्यात्मक है। इन विचारकों ने औपचारिक संस्थाओं की बजाय राजनीतिक प्रक्रियाओं तथा मनुष्यों के राजनीतिक व्यवहार के विश्लेषण पर ही अधिक जोर दिया है। इन विद्वानों ने जो अवधारणाएं प्रस्तुत की हैं उनके आधार पर ही कुछ परिकल्पनाओं का निर्माण करके उनको सत्य सिद्ध करने के लिए परीक्षण किए जाते हैं, आंकड़े एकत्रित किए जाते हैं और उनका विश्लेषण करके सामान्यीकरण किए जाते हैं।
- **अनुभववादी (Empirical) :-** आधुनिक उपागम के अन्तर्गत राजनीतिक विद्वानों ने कुछ ऐसी अवधारणाएं विकसित की हैं कि उनके आधार पर राजनीतिक व्यवहार का अनुभवात्मक विश्लेषण किया जा सकता है।
- **वैज्ञानिक व व्यवस्थित अध्ययन (Scientific and Systematic Study) :-** आधुनिक उपागम के अन्तर्गत प्रत्येक राजनीतिक घटना के कारणों पर व्यापकता से विचार विमर्श किया जा सकता है। इसमें इस बात पर जोर दिया जाता है कि राजनीतिक व्यवहार ऐसा क्यों होता है। इसलिए इसमें कार्य-कारण और क्रिया-प्रक्रिया का सम्बन्ध स्थापित करने के प्रयास किए जाते हैं। इसमें सामान्यीकरण की तह तक पहुंचने के लिए परिकल्पनाओं का निर्माण करके, उनकी सत्यता जांचने के लिए तथ्यों व आंकड़ों का संग्रह किया जाता है और उनका विश्लेषण करके सामान्यीकरण के लिए तुलनात्मक अध्ययन किया जाता है। इसके लिए व्यवस्थित रूप में आधुनिक वैज्ञानिक विधियों का प्रयोग किया जाता है।
- **आधुनिक दृष्टिकोण का क्षेत्र व्यापक है (Scope of Modern Approach is Extensive) :-** आधुनिक दृष्टिकोण के अन्तर्गत राज्य व सरकार के औपचारिक संगठनों के साथ-साथ उन सभी अनौपचारिक तत्वों



व अनौपचारिक संगठनों का भी अध्ययन किया जाता है जो राजनीतिक संस्थाओं व उनके व्यवहार को प्रभावित करते हैं।

- **अन्तर्विषेयक अध्ययन (Inter-Disciplinary Study) :-** राजनीतिक क्रियाओं पर सामाजिक, आर्थिक व सांस्कृतिक तत्वों व परिस्थितियों का प्रभाव अवश्य पड़ता है। इसी कारण आधुनिक उपयोग के विद्वानों ने समाजशास्त्र, अर्थशास्त्र, मनोविज्ञान आदि समाज विद्वानों से काफी कुछ ग्रहण किया है। आज तुलनात्मक अध्ययन के लिए अन्य सामाजिक विद्वानों की पद्धतियों का खुला प्रयोग हो रहा है। इसी कारण तुलनात्मक राजनीति अन्तर-अनुशासनात्मक अध्ययन पद्धति की तरफ अग्रसर है।
- **व्यवस्थामूलक अध्ययन (System-Oriented Study) :-** आधुनिक दृष्टिकोण संविधानतन्त्र की अपेक्षा सम्पूर्ण राजनीतिक व्यवस्था को ही अपने अध्ययन का केन्द्र बनाता है। इसमें व्यवस्था को ही आधार मानकर राजनीतिक प्रक्रियाओं और संस्थाओं का तुलनात्मक अध्ययन किया जाता है। इस दृष्टिकोण के विद्वान राजनीतिक व्यवस्था के मूल में राज्य सत्ता, शक्ति का एकाधिकार तथा शक्ति-तन्त्र को ही व्यवस्था की शक्ति मानते हैं। इन्हीं शक्तियों के आधार पर ही कोई भी राजनैतिक व्यवस्था अन्य व्यवस्थाओं से भिन्न होती है और इसी से राजनीतिक व्यवस्था की वैधता की परीक्षा होती है। इसी आधार पर ही राज-व्यवस्थाओं का वर्गीकरण किया जाता है जो राजनीतिक व्यवस्थाओं की समानताओं व असमानताओं को समझने में मदद करता है। इसी से तुलनात्मक अध्ययन को गति व दिशा मिलती है।
- **संरचनात्मक कार्यात्मक अध्ययन पर जोर (Emphasis on Structural Functional Study) :-** आधुनिक दृष्टिकोण के अन्तर्गत किसी भी राजनीतिक व्यवस्था का अध्ययन उसकी संरचना व प्रकार्यों के सन्दर्भ में ही किया जाता है। इसमें गहरा सम्बन्ध होता है। लोकतान्त्रिक व्यवस्थाएं निरंकुश व सर्वसत्ताधिकारवादी व्यवस्थाओं से संरचना में ही भिन्न होती है। इसी कारण उनके द्वारा सम्पादित किए जाने वाले कार्यों की प्रकृति में भी अन्तर आ जाता है। इसलिए आधुनिक दृष्टिकोण में राजनीतिक संस्थाओं व उनके व्यवहार की वास्तविक प्रकृति को जानने के लिए संरचनात्मक-प्रकार्यात्मक अध्ययन पर जोर दिया जाता है।
- **सामाजिक सन्दर्भी अनुष्ठित अध्ययन पर जोर (Emphasis on Social Context-Oriented Study):-** आधुनिक दृष्टिकोण राजनीतिक समस्याओं के साथ-साथ सामाजिक समस्याओं के प्रति भी संवेदनशील है। इसलिए यह राजनीतिक प्रक्रियाओं का अध्ययन सामाजिक शक्तियों की अन्तर्क्रिया के साथ मिलाकर ही करता है। इस दृष्टिकोण की मान्यता है कि राजनीतिक व्यवहार सामाजिक क्रियाओं, रीति-रिवाजों और परम्पराओं पर ही आधारित होता है। राजनीतिक संस्थाओं का कार्य संचालन भी सामाजिक शक्तियों से अवश्य प्रभावित होता है। इसी कारण तुलनात्मक राजनीति



अन्तर-अनुशासनात्मक दिशा में आगे बढ़ रही है और सामाजिक सन्दर्भी अनुष्ठित अध्ययन को बल मिल रहा है।

आधुनिक उपागम ने तुलनात्मक अध्ययन को जो व्यवस्थित व वैज्ञानिक आधार प्रदान किया है, वह उसका महत्वपूर्ण योगदान है। इसी उपागम ने राजनीतिक व्यवहार के निर्धारक गैर-राजनीतिक तत्वों को भी तुलनात्मक अध्ययन में शामिल करके सामान्य सिद्धान्त निर्माण की दिशा में उन्नति की है। इस दृष्टिकोण द्वारा प्रयुक्त नवीन अध्ययन विधियों व अवधारणाओं ने तुलनात्मक राजनीति को व्यापक आधार प्रदान किया है। इस उपागम के आगमन से तुलनात्मक राजनीति को परम्परागत उपागम की कमियों से छुटकारा मिला है।

(ब) प्रमुख आधुनिक उपागम (The Major Modern Approaches)

तुलनात्मक राजनीति के प्रमुख आधुनिक उपागम निम्नलिखित हैं :-

- i. व्यवस्था विश्लेषण दृष्टिकोण (System Analysis Approach)
- ii. संरचनात्मक कार्यात्मक दृष्टिकोण (Structural-Functional Approach)
- iii. मार्क्सवादी-लेनिनवादी दृष्टिकोण (Marxist-Leninist Approach)

(i) व्यवस्था विश्लेषण दृष्टिकोण (System Analysis Approach)

राजनीति विज्ञान में इस सिद्धान्त का सर्वप्रथम प्रयोग डेविड ईस्टन ने किया। ईस्टन ने अपने इस सिद्धान्त को जिस पुस्तक में प्रतिपादित किया है। ईस्टन ने अपने इस सिद्धान्त को 'व्यवस्था' की अवधारणा पर आधारित किया और बाद में इसी आधार पर आगत-निर्गत उपागम का विकास किया। इस सिद्धान्त के आगमन से तुलनात्मक राजनीति को न केवल वैज्ञानिक बनाने में सहायता मिली बल्कि राजनीतिक व्यवहार के बारे में मध्य-स्तरीय सिद्धान्तों के निर्माण का मार्ग अवश्य प्रशस्त हुआ। राजनीतिक व्यवस्था विश्लेषण राजनीतिक व्यवस्था की धारणा पर आधारित है। कुछ विद्वानों ने 'व्यवस्था' शब्द के स्थान पर पद्धति या प्रणाली शब्दों का भी प्रयोग किया है। राजनीतिक व्यवस्था विश्लेषण के आगमन से पहले राजनीतिक व्यवस्था का सीमित अर्थों में ही प्रयोग होता था। इसके लिए राष्ट्र, सरकार या राज्य जैसे शब्दों का प्रचलन था। लेकिन इस सिद्धान्त के आगमन से अब शासन की संरचनाओं, राजनीतिक प्रक्रियाओं, गैर-राजनीतिक तत्वों – राजनीतिक दलों, लोकमत, दबाव व हित समूह आदि का अलग-अलग अध्ययन न करके सम्पूर्ण राजनीतिक व्यवस्था के सन्दर्भ में अध्ययन किया जाता है।

(अ) राजनीतिक व्यवस्था का अर्थ (Meaning of Political System)

राजनीतिक व्यवस्था की अवधारणा सामान्य व्यवस्था सिद्धान्त की संकल्पना से सम्बन्धित है। सामान्य व्यवस्था सिद्धान्त विभिन्न व्यवस्थाओं में कुछ मौलिक समानताएं तलाश कर अपना आधार कायम करता है। यद्यपि कई बार सामान्य व्यवस्था सिद्धान्त और व्यवस्था विश्लेषण को एक ही मान लिया जाता है, लेकिन दोनों में परस्पर सम्बन्ध



होते हुए भी अन्तर है। सामान्य व्यवस्था सिद्धान्त से निकलने के बाद भी यह सामाजिक विज्ञानों के लिए बहुत विस्तृत व महत्वपूर्ण सिद्धान्त है। इसमें प्रयुक्त 'व्यवस्था' शब्द विशिष्टता का बोध कराता है और एक राजनीतिक व्यवस्था को दूसरे से पृथक् करता है। यहां 'व्यवस्था' उस अवस्था का बोध कराती है जिसमें अलग-अलग प्रकार की अन्तःक्रियाएं घटित होती हैं। राजनीतिक व्यवस्था को सर्वप्रथम डेविड ईस्टन ने ही परिभाषित करने का प्रयास किया है। राजनीतिक व्यवस्था स्वयं में परिपूर्ण सत्ता है जो इस वातावरण या परिवेश, जिसमें यह घिरी हुई होती है और जिसके अन्तर्गत यह परिचालित होती है, स्पष्ट तौर पर अलग रहती है। ऑमण्ड व पॉविल ने राजनीतिक व्यवस्था को परिभाषित करते हुए लिखा है – "राजनीतिक व्यवस्था से इसके अंगों की अन्तर्निर्भरता और इसके पर्यावरण में किसी न किसी प्रकार की सीमा का बोध होता है।"

राजनीतिक व्यवस्था के बारे में दी गई परिभाषाओं से निष्कर्ष निकलता है कि राजनीतिक व्यवस्था का सम्बन्ध न्यायसंगत शारीरिक उत्पीड़न से है। ऑमण्ड व पावेल के अनुसार राजनीतिक व्यवस्था को केवल सरकार के तीनों अंगों का ही बोध नहीं कराती बल्कि इसमें समस्त प्रकार की संरचनाएं शामिल होती हैं। ऑमण्ड व पावेल की दृष्टि में न्यायसंगत शक्ति ही वह डोर है जो राजनीतिक व्यवस्था को सम्पूर्ण ताने बाने में बांधे रहती है। राजनीतिक व्यवस्था को एक ऐसी उपव्यवस्था माना जा सकता है जिसके सारे भाग आपस में एक माला की तरह गुंथे हुए हैं। यह पर्यावरण से प्रभावित भी होती है, लेकिन फिर भी उसकी दास नहीं होती। यह प्रत्येक स्वतन्त्र समाज के कार्यों की वह व्यवस्था है जो शक्ति के न्यायसंगत प्रयोग द्वारा समाज में कानून व्यवस्था बनाए रखने तथा समाज को बदलने की शक्ति रखती है।

(ब) राजनीतिक व्यवस्था की विशेषताएं (Features of Political Systems)

- (1) **राजनीतिक स्रोतों का असमान वितरण (Uneven Control of Political Resources) :-** राजनीतिक स्रोत वह साधन है जिसके द्वारा एक व्यक्ति दूसरे व्यक्ति के व्यवहार को प्रभावित करता है। धन, भोजन, शक्ति की धमकी, सामाजिक स्तर, विधि-निर्माण के अधिकार, मताधिकार आदि ऐसे ही स्रोत हैं। इन सभी स्रोतों का प्रत्येक राजनीतिक समाज में असमान वितरण होता है।
- (2) **राजनीतिक प्रभाव की खोज (The Quest for Political Influence) :-** प्रत्येक व्यक्ति की सदैव यह इच्छा रहती है कि उसका समाज में राजनीतिक प्रभाव बड़े। इसलिए वह अपनीस्वार्थपूर्ति के लिए सरकारी नीतियों, नियमों और निर्णयों को प्रभावित करने के प्रयास करता रहता है।
- (3) **राजनीतिक प्रभाव का असमान वितरण (Uneven Distribution of Political Influence):-** लोगों के पास राजनीतिक संसाधनों की मात्रा भिन्न होने के कारण राजनीतिक प्रभाव का वितरण भी असमान हो जाता है। जिस व्यक्ति की राजनीति के प्रति रुचि अधिक होती है और उसके पास पर्याप्त आर्थिक साधन होते हैं तो उसका राजनीतिक प्रभाव अवश्य ही अन्य से अधिक होता है।



- (4) **संघर्षपूर्ण उद्देश्यों का हल (Resolution of Conflicting Aims) :-** प्रत्येक राजनीतिक व्यवस्था अपने लोगों के उद्देश्यों व हितों में संतुलन कायम रखने का प्रयास करती है ताकि वह स्वयं को संघर्ष तथा अराजकता की स्थिति से बचा सके। इसके लिये वह समाज की मांगों में अधिकाधिक संतुलन पैदा करने के लिए न्यायपूर्ण वितरण व्यवस्था कायम करती है और यदि आवश्यकता पड़े तो बाध्यकारी शक्ति का प्रयोग भी करती है।
- (5) **औचित्यपूर्णता की प्राप्ति (The Acquisition of Legitimacy):-** प्रत्येक राजनीतिक व्यवस्था अपनी नीतियों व निर्णयों को वैधता प्रदान करने के लिए परस्पर विरोधी हितों में सामंजस्य पैदा करती है और आवश्यकता पड़ने पर शक्ति का न्यायपूर्ण प्रयोग भी करती है। दण्ड-शक्ति का भय या कर्तव्य पालन ही औचित्यपूर्णता का आधार होता है।
- (6) **विचारधारा का विकास (The Development of Ideology :-** प्रत्येक राजनीतिक व्यवस्था अपने कार्यों के प्रति जनता का विश्वास प्राप्त करने तथा जनता में विश्वास पैदा करने के लिये अपने विचारधारा रूपी शस्त्र का प्रयोग करते हैं। यह विचारधारा ही वह विचारधारा है जो राजनीतिक व्यवस्था को सम्पूर्ण रूप में बांधे रखता है। कोई भी देश और कोई भी समाज आज एक दूसरे से अपरिचित और अप्रभावित नहीं है। आज अन्तर्राष्ट्रवाद की भावना का विकास होना एक आम बात है। प्रत्येक राजनीतिक व्यवस्था दूसरी व्यवस्थाओं से प्रभावित भी होती है और उन्हें प्रभावित भी करती है।

(ii) संरचनात्मक कार्यात्मक दृष्टिकोण (Structural-Functional Approach)

व्यवस्था विश्लेषण की कमियों पर विचार करके आमण्ड ने अपना संरचनात्मक प्रकार्यात्मक मॉडल तैयार किया। इसे विकसित करने में पारसनस, मर्टन तथा लेदी ने भी अपना योगदान दिया है। राजनीति विज्ञान में इसका सर्वप्रथम बार प्रयोग आमण्ड एवं कालमैन ने विकासशील देशों की राजनीति का अध्ययन करने के लिए किया। आमण्ड का यह उपागम असमान विशेषताओं वाली राजनीतिक व्यवस्थाओं की तुलना करने में भी सहायक है। इस उपागम में आमण्ड ने उन कृत्यों की पहचान की है जो समाज-व्यवस्था को कायम रखने में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करते हैं। इस दृष्टिकोण के आगमन से तुलनात्मक राजनीति में राजनीतिक व्यवस्था को अधिक स्पष्ट रूप से समझना आसान हो गया और राजनीतिक व्यवस्था की अन्तर्वस्तु ने उनके कार्यात्मक पक्ष को अलग करके देखा जाने लगा। इस उपागम ने समाज को सम्पूर्ण रूप में देखकर सामान्य सिद्धान्त का निर्माण करने की दिशा में अपना महत्वपूर्ण योगदान दिया है और तुलनात्मक राजनीति की नई दिशा मिली है।

(अ) संरचनात्मक-प्रकार्यात्मक (Structural-Functional)



संरचनात्मक-प्रकार्यात्मक दृष्टिकोण के अन्तर्गत दो प्रत्यय या संकल्पनाएं निहित हैं। इसमें एक संकल्पना संरचना की है और दूसरी प्रकार्य को। किसी भी राजनीतिक व्यवस्था में प्रकार्यों को सम्पादित करने वाली व्यवस्था ही संरचना कहलाती है। संरचना को प्रकार्यों के आधार पर ही परिभाषित किया जा सकता है। ऑमण्ड ने स्पष्ट किया है कि प्रत्येक संगठन संरचना नहीं हो सकता। जो संगठन नियमित रूप से प्रकार्यों को सम्पादित करता है, वही संरचना हो सकता है। ऑमण्ड के रूप से प्रकार्यों को सम्पादित करता है, वही संरचना हो सकता है। किसी भी राजनीतिक व्यवस्था को बनाए रखने व उसे विकसित करने के लिए प्रकार्य का होना अनिवार्य है। तुलनात्मक राजनीति में प्रकार्य उसी क्रिया प्रतिमान को ही कहा जाता है जो राजनीतिक व्यवस्था का अनुरक्षक हो, उसे विकसित करने वाला हो तथा नियमितता का गुण भी रखता है।

(ब) संरचनात्मक-प्रकार्यात्मक दृष्टिकोण की व्याख्या (Explanation of Structural-Functional Approach)

ऑमण्ड तथा कोलमैन ने इस उपागम की विस्तृत व्याख्या करते समय सबसे पहले व्यवस्था की धारणा को स्पष्ट किया है। व्यवस्था से उनका अर्थ है— सीमाओं के साथ अन्योन्याश्रय तथा व्यापकता के लक्षणों से युक्त अन्तर्क्रियाओं का विनैष सेट। ऑमण्ड तथा कोलमैन ने कहा है कि राजनीतिक व्यवस्था अनेक संरचनाओं से मिलकर बनती है और वह भिन्न-भिन्न कार्य करती है। राजनीतिक व्यवस्था न्यूनाधिक रूप से समाज के अन्तर्गत एक औचित्यपूर्ण, सुव्यवस्था सन्धारक या रूपान्तरकारी व्यवस्था होती है जो अपना कार्य औचित्यपूर्ण भौतिक दबावों के माध्यम से करती है। प्रत्येक राजनीतिक व्यवस्था में राजनीतिक गतिविधियों के संचालन के लिए एक अलग ढांचा होता है। यह ढांचा या संरचना एक गतिशील मशीन की तरह कार्य करता है। इस ढांचे के अनेक अंग-प्रत्यंग होते हैं जो अपने-अपने कार्यों का निष्पादन करके व्यवस्था रूपी मशीन को गतिशील बनाए रखते हैं। जिस तरह शरीर रूपी मशीन को संचालित करने में शरीर के अंग अपना योगदान देते हैं, उसी तरह सामूहिक अन्तर्निर्भरता के आधार पर भी कार्य करके संरचनात्मक ढांचे को गति प्रदान करते हैं। यह संगठनात्मक, मशीन की अपने अलग-अलग अंगों को आगत सम्बन्धी कार्य सौंपकर उन्हें निर्गतों के रूप में पूरा करती है।

(स) संरचनात्मक-प्रकार्यात्मक दृष्टिकोण की विशेषताएं (Features of Structural Functional Approach)

राजनीतिक व्यवस्था का संरचनात्मक-प्रकार्यात्मक आधार पर समझा जाए तो इस उपागम की निम्नलिखित विशेषताएं दृष्टिगोचर होती हैं—

विश्लेषण की इकाई के रूप में यह दृष्टिकोण सम्पूर्ण राजनीतिक व्यवस्था पर अपना ध्यान केन्द्रित करता है।

यह दृष्टिकोण राजनीतिक व्यवस्था के अनुरक्षण (Maintenance) के लिए व्यवस्था की संरचनाओं द्वारा कुछ कार्यों व विकायों का होना अनिवार्य मानता है।



इस दृष्टिकोण के अनुसार सभी राजनीतिक व्यवस्थाओं की विभिन्न संरचनाओं के कार्यों में अन्तर्निर्भरता पाई जाती है। इसलिए यह संरचनाओं को प्रकार्यों के सन्दर्भ में ही परिभाषित करता है।

इस दृष्टिकोण में संरचनात्मक स्थानापन्नता को स्वीकार किया जाता है। ऑमण्ड का मानना है कि राजनीतिक व्यवस्था में सांस्कृतिक विभिन्नताएं पाई जाती हैं। इसलिए एक समान कार्यों के निष्पादन के लिए समान संरचनाओं का होना आवश्यक नहीं है।

यह दृष्टिकोण विकार्य को भी प्रकार्यों के समान ही महत्व देता है। ऑमण्ड का मानना है कि विशेष परिस्थितियों में निकाय प्रकार्य की जगह लेकर व्यवस्था का अनुरक्षण कर सकता है।

(iii) मार्क्सवादी-लेनिनवादी दृष्टिकोण (Marxist-Leninist Approach)

पाश्चात्य विचारकों द्वारा प्रस्तुत संरचनात्मक-प्रकार्यात्मक मॉडल तथा व्यवस्था विश्लेषण दृष्टिकोण साम्यवादी राजनीतिक व्यवस्थाओं वाले देशों की राजनीति का तुलनात्मक अध्ययन नहीं कर सकते। विश्व में साम्यवाद के बढ़ते दौर से राजनीतिक विशेषकों के सामने सबसे प्रमुख समस्या यही रही है कि साम्यवादी व्यवस्थाओं के अध्ययन के लिए कौन सा उपागम अपनाया जाए क्योंकि इन देशों में राजनीतिक नेताओं, राजनीतिक दलों और समूहों द्वारा निभाई जाने वाली भूमिकाएं पाश्चात्य राजनीतिक व्यवस्थाओं से भिन्न हैं। इसी समस्या से निजात पाने के लिए मार्क्सवादी-लेनिनवादी उपागम का जन्म हुआ। स्टीफेन तथा कलार्कसन ने मार्क्स व लेनिन के सिद्धान्तों को ही आधार बनाकर इस उपागम का विकास किया।

(अ) मार्क्सवादी-लेनिनवादी धारणा का अर्थ (Meaning of Concept of Marxist-Leninist) :-

मार्क्सवादी-लेनिनवादी धारणा मार्क्स और लेनिन के विचारों पर आधारित है। दोनों के विचार द्वन्द्ववाद पर आधारित हैं। दोनों का मानना है कि समाज के विकास में द्वन्द्ववादी शक्तियों की प्रमुख भूमिका होती है। इनका मानना है कि प्रत्येक युग की व्यवस्था के निर्माण में उत्पादन शक्तियों का विशेष हाथ रहा है। वर्ग-संघर्ष का प्रत्यय एक स्थाई प्रत्यय है। इसके आधार पर किसी भी युग की कैसी भी व्यवस्था का विश्लेषण किया जा सकता है। मार्क्स का विचार था कि समस्त ऐतिहासिक घटनाओं पर आर्थिक घटनाओं का ही प्रभाव पड़ता है। समस्त सामाजिक ढांचा आर्थिक ढांचे के अनुसार ही बदलता रहता है। समस्त ऐतिहासिक घटनाएं भौतिकवादी परिस्थितियों के ही निष्कर्ष हैं। समाज में हर युग में दो विरोधी वर्ग रहे हैं। कभी ये वर्ग दास और स्वामी, कभी अमीर-गरीब, कभी शोषक-पोषित, कभी पूंजीपति और श्रमिक के रूप आर्थिक सम्बन्धों के नियामक रहे हैं। जिस वर्ग के पास आर्थिक शक्ति रही है, उसने सदैव दूसरे का शोषण किया है इस व्यवस्था में राज्य भी एक वर्ग है जो पूंजीपतियों या साधन सम्पन्न व्यक्तियों के हितों का पोषक है। राज्य कोई स्थायी संस्था नहीं है। मार्क्सवादी क्रान्ति के सफल हो जाने पर वर्ग विहीन समाज की स्थापना के बाद राज्य समाप्त हो जाएगा। इसका अस्तित्व संक्रमणकालीन दौर में ही रहेगा। जब पूंजीवादी वर्ग का सर्वहारा वर्ग नाश कर देगा और उत्पादन के साधनों पर अपना वर्चस्व कायम कर



लेगा तो राज्य अनावश्यक हो जाएगा। उस समय राज्य का स्थान ऐसे समुदाय ले लेंगे जो व्यक्तियों द्वारा स्वतन्त्रता और स्वेच्छा से बनाए जायेंगे। ऐसी व्यवस्था प्रत्येक पूंजीवादी देश में स्थापित हो जाएगी। लेनिन ने भी मार्क्स के विचारों से सहमति दिखाते हुए अपने साम्यवादी सिद्धान्तों के अन्त में वर्ग-संघर्ष द्वारा समाजवाद की स्थापना की बात स्वीकार की है। उसने कहा है कि राज्य का स्वरूप चाहे कैसा भी हो, वह वर्ह संघर्ष का अस्तित्व ही प्रकट करता है।

(ब) मार्क्सवादी-लेनिनवादी दृष्टिकोण की व्याख्या (Explanation of Marxist-Leninist Approach)

यह दृष्टिकोण ऐतिहासिक गभ्यात्मकता तथा सामाजिक प्रासंगिकता में विश्वास रखता है। इस दृष्टिकोण की मान्यता है कि औपचारिक संरचनाओं व संस्थाओं के द्वारा राजनीतिक प्रक्रियाओं को आधार मिलता है कि सामाजिक विज्ञानों का अन्तःशास्त्रीय दृष्टिकोण से अध्ययन करना चाहिए ताकि तुलनात्मक अध्ययन को उपयोगी बनाया जा सके। समर्थकों का दावा है कि राज्यशक्ति, वर्ग, उद्योगों आदि की धारणाएं आज भी वहीं हैं जो सैंकड़ों वर्ष पहले थी। इन धारणाओं का विकासशील देशों की धारणाओं से भी साम्य है। आज मार्क्सवादी-लेनिनवादी दृष्टिकोण में जो प्रत्यय व अवधारणाएं प्रयुक्त होती हैं, वे विकासशील देशों की राजनीतिक व्यवस्थाओं की व्याख्या करने में सक्षम हैं। मार्क्सवादी विचारक राजनीति को कोई स्वतन्त्र गतिविधि न मानकर उसे आर्थिक गतिविधियों से जुड़ी हुई मानते हैं। इस दृष्टिकोण का मानना है कि समाज के सभी सदस्य अपने हित साधन के उद्देश्य से ही नागरिक समाज का गठन करते हैं। नागरिक समाज उनके स्वार्थों को पूरा कर सकता है। नागरिक समाज की उत्पादन शक्तियां ही राजनीतिक जीवन की नियामक होती हैं। इसी कारण सभी समाजों की राजनीति में मौलिक अन्तर आ जाता है और अलग-अलग संरचनाएं व उप-संरचनाएं जन्म लेने लगी हैं। इसलिए राज्य की औपचारिक संस्थाओं और संरचनाओं का अध्ययन ही उपयुक्त रहता है। इसलिए अलग-अलग प्रकार की राजनीतिक व्यवस्थाओं व संरचनाओं के राजनीतिक व्यवहार को समझने के लिए समग्रवादी दृष्टिकोण ही अपनाया जाना चाहिए। ऐसा दृष्टिकोण मार्क्सवादी-लेनिनवादी दृष्टिकोण ही है, क्योंकि इसकी अवधारणाएं, मान्यताएं, प्रविवियाएं व प्रत्यय स्थाई हैं। इस दृष्टिकोण द्वारा किसी भी युग की किसी भी प्रकार की व्यवस्था का समयवादी अध्ययन किया जा सकता है। इस अध्ययन में शक्ति के आर्थिक पहलू को ही प्रमुख स्थान मिलना चाहिए क्योंकि यही राजनीतिक गतिविधियों के संचालन का आधार है

(स) मार्क्सवादी-लेनिनवादी दृष्टिकोण की विशेषताएं (Characteristics of Marxist-Leninist Approach)

यह दृष्टिकोण तुलनात्मक राजनीति के अध्ययन में बहुत महत्वपूर्ण है। इसकी प्रमुख विशेषताएं निम्नलिखित हैं :-

(1) प्रत्ययी स्थायित्व (The Conceptual Stability) :- इस दृष्टिकोण द्वारा प्रयुक्त प्रत्यय व अवधारणाएं शाश्वत महत्व की हैं। इस दृष्टिकोण द्वारा प्रयुक्त राज्य, सरकार, वर्ग-संघर्ष आदि प्रत्ययों का आज भी वही अर्थ



जो सैकड़ों वर्ष पहले था। इस प्रत्ययी स्थायित्व के कारण राजनीतिक व्यवस्थाओं की ऐतिहासिक व सामसामयिक दोनों आधारों पर तुलना करना आसान हो जाता है और प्रत्ययों को पुनः परिभाषित करने की आवश्यकता नहीं पड़ती। इससे शोध के सामान्य व विशिष्ट लक्ष्यों को प्राप्त करने में आसानी रहती है। इससे अध्ययन में सरलता का गुण पैदा हो जाता है।

(2) संघटित या समग्रवादी पद्धति (Integrated or Wholistic Methodology) :- इस दृष्टिकोण में समग्रवादी पद्धति का प्रयोग किया जाता है। इसमें निष्कर्षों तक पहुंचने के लिए सभी परिवादों और तत्वों का ध्यान रखना व उनको शामिल करना आवश्यक है।

(3) ऐतिहासिक गत्यात्मकता पर आधारित (Based on Historical Dynamicism) :- इस दृष्टिकोण में ऐतिहासिक विकास की प्रेरक शक्तियों को विशेष महत्व दिया है। इस दृष्टिकोण में मार्क्स के ऐतिहासिक भौतिकवाद, वर्ग संघर्ष की अवधारणा द्वारा समाजों की गत्यात्मकता को समझने पर बल दिया है। अतः यह उपागम ऐतिहासिक दृष्टि से गत्यात्मकता पर आधारित है।

(4) सामाजिक दृष्टि से प्रासंगिक दृष्टिकोण (Socially relevant Approach) :- यह दृष्टिकोण आदर्शवादिता से दूर रहकर ठोस सामाजिक समस्याओं पर ही अपना ध्यान केन्द्रित करता है। इस दृष्टिकोण के समर्थकों का ध्येय केवल सिद्धान्त निर्माण करना ही नहीं था, बल्कि उन्होंने एक ऐसा दृष्टिकोण विकसित करने का प्रयास किया है जो सामाजिक उपयोगिता रखता हो। इस दृष्टिकोण का सामाजिक समस्याओं से गहरा सम्बन्ध है। समाज में विद्यमान आर्थिक असमानता पर दृष्टि डालना इसका प्रमुख लक्ष्य है।

इस प्रकार कहा जा सकता है कि मार्क्सवादी-लेनिनवादी दृष्टिकोण एक विहंगम दृष्टिकोण है। यह अध्ययन के यथार्थवादी रूप पर जोर देता है। इसका प्रमुख जोर व्यवहारिक ज्ञान पर है और यह विकासशील देशों की राज-व्यवस्थाओं का अस्थायित्व के दौर में भी विश्लेषण करने में सक्षम है।

(द) मार्क्सवादी-लेनिनवादी दृष्टिकोण का महत्व (Importance of Marxist-Leninist Approach)

इस दृष्टिकोण का महत्व निम्न कारणों से है :-

इस दृष्टिकोण द्वारा राजनीतिक व्यवस्था की गत्यात्मक शक्तियों को समझना आसान है। प्रत्ययी स्थायित्व के कारण यह दृष्टिकोण किसी भी प्रकार की राजनीतिक व्यवस्था को समझने में सक्षम है। प्रत्ययी स्थायित्व के कारण संकल्पनाओं की जटिलता व अर्थ-विभिन्नता की समस्या स्वतः ही दूर हो जाती है। यह दृष्टिकोण समग्रवादी अध्ययन पर जोर देता है। राजनीतिक व्यवस्था के सभी पहलुओं पर एक साथ दृष्टि रखने में यह दृष्टिकोण समर्थ है। विकासशील देशों की परिवर्तनशील राजनीतिक व्यवस्थाओं का विश्लेषण करने में इस दृष्टिकोण की विहंगम दृष्टिकोण बहुत लाभदायक है। यह दृष्टिकोण इतिहास की दृष्टि से एक गत्यात्मक दृष्टिकोण है। यह इतिहास की



व्याख्या द्वारा अतीत के साथ साथ भावी विकास की अवस्था को समझने में भी सक्षम है। अन्तः शास्त्रीय अध्ययनों पर बल देने के कारण यह दृष्टिकोण अध्ययन को यथार्थवादी और व्यावहारिक बनाने में मदद करता है। यह उपागम आदर्शी सिद्धान्तों के निर्माण की बजाय ठोस सामाजिक समस्याओं को समझने व स्पष्ट करने में मदद करता है।

(ध) मार्क्सवादी लेनिनवादी दृष्टिकोण की आलोचना (Criticisms of Marxist Leninist Approach)

इसकी आलोचना के प्रमुख आधार निम्नलिखित हैं :-

- यह सब राजनीतिक घटनाओं को समान समझने की भारी भूल करके तुलनात्मक अध्ययन को अनुपयोगी ही बनाता है। यह दृष्टिकोण सभी प्रकार की समस्याओं के लिए एक जैसी प्रविधियों के प्रयोग की अनुमति देता है। जबकि अलग समस्या के लिए अलग प्रविधि की ही आवश्यकता पड़ती है।
- यह दृष्टिकोण राजनीतिक प्रक्रियाओं और संरचनाओं को एक साथ मिलाकर अध्ययन पर जोर देता है। लेकिन वास्तव में राजनीतिक प्रक्रियाएं और सामाजिक संरचनाएं परस्पर इतनी उलझी हुई होती हैं कि समष्टि स्तर के अध्ययन सार्थक नहीं हो सकते।
- यह दृष्टिकोण सिद्धान्त निर्माण की तो चिन्ता करता है, लेकिन उसकी परिशुद्धता का ध्यान नहीं रखता।
- इस दृष्टिकोण में प्रयुक्त वर्ग की अवधारणा को परिभाषित करना कठिन कार्य है। वर्ग की अवधारणा बहुत व्यापक है
- यह दृष्टिकोण विकसित देशों की राजनीतिक व्यवस्थाओं की बजाय विकासशील देशों की राजनीतिक व्यवस्थाओं पर अधिक ध्यान केन्द्रित करता है जबकि विकासशील देशों की राजनीतिक व्यवस्थाएं विकसित देशों की राजनीतिक व्यवस्थाओं की तुलना में अधिक जटिल व उलझी हुई होती हैं। इनका अध्ययन करना एक कठिन कार्य है।
- यह दृष्टिकोण पद्धतियों की अपेक्षा उद्देश्यों को अधिक महत्व देता है। जबकि पद्धतियों का राजनीतिक विश्लेषण में सख्ती से पालन किए बिना संकलित तथ्यों की विश्वसनीयता की कोई गारन्टी नहीं हो सकती।
- इस दृष्टिकोण में विरोधाभास के लक्षण हैं। एक तरफ तो यह वर्ग संघर्ष को शाश्वत तत्व मानता है जबकि दूसरी तरफ वर्ग-विहीन समाज की स्थाना की बात भी करता है।

उपरोक्त विवेचन के बाद कहा जा सकता है कि मार्क्सवादी-लेनिनवादी उपागम एकपक्षीय व एकांगी है। लेकिन इसका अर्थ यह कदापि नहीं लेना चाहिए कि इस उपागम का कोई महत्व नहीं है। इस विश्लेषण के आगमन से अधिकतर समाजों व राज्यों में हो रहे सामाजिक, आर्थिक व राजनीतिक परिवर्तनों को समझना सरल



हुआ है। राजनीतिक व्यवस्था के सभी पहलुओं पर ध्यान देने के कारण इसमें अन्तःशास्त्रीय अध्ययन को बढ़ावा दिया है। इतने ऐतिहासिक दृष्टि रखते हुए समाज के भावी रूप के विकास पर भी ध्यान केन्द्रित किया है। इस दृष्टिकोण ने राजनीति शास्त्र को तुलनात्मक अध्ययन की दिशा में व्यवस्थित व वैज्ञानिक आधार प्रदान किया है। इस उपागम ने अस्थिर राजनीतिक वातावरण में भी कार्य करके कोई अपनी उपादेयता सिद्ध की है। अतः मार्क्सवादी-लेनिनवादी दृष्टिकोण तुलनात्मक अध्ययन के

1.5 अपनी प्रगति जाँचें (Check your progress)

1. राजनीति के अध्ययन के लिए सबसे पुराना उपागम----- ।
2. ----- इस धारणा पर ताल है कि राजनीतिक सिद्धांत का भण्डार, सामाजिक – आर्थिक परिस्थितियों और उनके द्वारा महान चिन्तकों के मनों पर छोड़ी गई फसलों में से आता है।
3. ----- लेखकों कई अमेरिकी और अंग्रेजों की रचनाओं में देखा जा सकता है।
4. राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति के अध्ययन पर----- लागू किया जाता है।
5. राज्य को प्रमुख रूप से कानून बनाने और उसे लागू करने वाला संगठन में----- कहा गया ।

1.6 सारांश (Summary)

इस प्रकार कहा जा सकता है कि तुलनात्मक राजनीति तुलनात्मक सरकारों, गैर-शासकीय राजनीतिक संस्थाओं, कबीलों, समुदायों व उनकी प्रक्रियाओं व व्यवहारों का अध्ययन है। तुलनात्मक अध्ययन से तुलनात्मक राजनीति एक स्वतंत्र अनुशासन का स्थान प्राप्त कर चुकी है। यह राजनीति विज्ञान की महत्वपूर्ण शाखा होने के बावजूद भी राजनीतिक संस्थाओं के साथ-साथ गैर-राजनीतिक संस्थाओं व उनके राजनीतिक व्यवहार को प्रभावित करने वाले तत्वों का भी अध्ययन किया जाता है। यही तुलनात्मक राजनीति की वास्तविक प्रकृति है। तुलनात्मक राजनीति में न केवल विभिन्न राजनीतिक संस्थाओं, उनके कार्यों का ही अध्ययन शामिल नहीं है, बल्कि इसमें गैर-राजकीय संस्थाओं के राजनीतिक कार्य व व्यवहार भी शामिल हैं। आज तुलनात्मक राजनीति में शासन प्रणाली व उसके राजनीतिक व्यवहार के समान व असमान दोनों तत्व ही शामिल हैं। तुलनात्मक अध्ययन से हम अपने देश की संस्थाओं को अधिक गहराई से समझकर उपस्थित समस्याओं का निराकरण कर सकते हैं। तुलनात्मक अध्ययन द्वारा छात्रों, शिक्षकों, राजनीतिक विद्वानों सभी को उपयोगी जानकारी प्राप्त होती है। इसके द्वारा हम अपने देश की शासन पद्धति का दूसरे देशों की शासन-पद्धतियों से तुलनात्मक अध्ययन करके उपयोगी निष्कर्ष निकाल सकते हैं। इससे राजनीतिक व्यवहार को समझने, राजनीति-शास्त्र को विज्ञान बनाने, आनुभाविक अध्ययनों के आधार पर



सिद्धान्त निर्माण करने तथा प्रचलित सिद्धान्तों की औचित्यता व प्रामाणिकता जांचने में सहायता मिलती है। आज की लोक कल्याणकारी राजनीतिक व्यवस्थाओं में राजनीतिक व्यवहार के बारे में सामान्य नियमों का निर्धारण करना बहुत आवश्यक हो गया है ताकि सामान्य राजनीतिक सिद्धान्तों का निर्माण किया जा सके और राजनीतिक व्यवस्था को स्थायित्व का गुण प्रदान किया जा सके। जैसे-जैसे राजनीतिक व्यवस्थाएं जटिल बनती गईं, वैसे-वैसे तुलनात्मक राजनीति के अध्ययन के सामने नई चुनौतियां उभरने लगीं तथा समयानुसार अध्ययन के तरीकों व तुलना के उपकरणों में परिवर्तन आता गया। द्वितीय विश्व युद्ध तक तुलनात्मक राजनीति का अध्ययन परम्परागत तरीकों पर आधारित रहा और उसके बाद यह व्यवहारवादी क्रान्ति का आगमन के साथ ही आधुनिक बन गया। इसी आधार पर तुलनात्मक राजनीति में परम्परागत व आधुनिक उपागमों का आविष्कार हुआ। जहाँ परम्परागत उपागम हमें तुलनात्मक राजनीति के ऐतिहासिक, कानूनी और संस्थात्मक पक्षों को गहराई से समझने की मदद करता है।

1.7 सूचक शब्द (Key Words)

1. **सुव्यक्त**— सरलता से व्यक्त करने वाला ।
2. **अव्यक्त** —जिसको व्यक्त न किया जा सके ।
3. **विकृत**— जिसका मूल स्वरूप बिगड़ कर खराब हो गया है ।
4. **तुलनात्मक** —कई वस्तुओं के गुणों की समानता और असमानता दिखानेवाला ।
5. **राजनीतिक समाजीकरण**— एक ऐसी प्रक्रिया है जिसके द्वारा राजनीतिक मूल्यों तथा दृष्टिकोणों के विषय में जानकारी प्राप्त होती है ।
6. **उपागम** —किसी के कहीं से आकर पहुँचने की क्रिया या भाव ।
7. **अंतःविषय** — अंतःविषय एक विशेषण है जो बताता है कि दो या दो से अधिक विषयों या ज्ञान की अन्य शाखाओं के लिए क्या सामान्य है । यह विषयों को जोड़ने की प्रक्रिया है ।

1.8 स्वयं मूल्यांकन हेतु प्रश्न (Self Assessment Questions)

1. तुलनात्मक पद्धति और राजनीति के पारस्परिक सम्बंधों का विवेचन कीजिए ।
2. तुलनात्मक राजनीति के अध्ययन के परम्परागत उपागमों का विश्लेषणात्मक विवेचन कीजिए ।
3. तुलनात्मक पद्धति की प्रकृति की व्याख्या कीजिए ।

1.9 अपनी प्रगति की जांच करने के लिए उत्तर (Answers to check your progress)

1. दार्शनिक उपागम	2. ऐतिहासिक उपागम
3. कानूनी उपागम	4. संस्थानिक उपागम



5. कानूनी उपागम

1.10 सन्दर्भ ग्रन्थ/निर्देशित पुस्तकें (References / Suggested Readings)

1. तुलनात्मक राजनीति की रूपरेखा— ओम प्रकाश गाबा ,मयूर पेपर बैक्स , नोएडा ।
2. तुलनात्मक शासन एवं राजनीति — डॉ . बीरकेश्वर प्रसाद सिंह, ज्ञानदा प्रकाशन (पी.एण्ड डी.) 24, दरियागंज, अंसारी रोड, दिल्ली ।
3. तुलनात्मक राजनीति एवं राजनीतिक संस्थाएँ — सी.बी . गेना , विकास पब्लिशिंग हाउस प्रा.लि. अंसारी रोड, दिल्ली ।
4. तुलनात्मक राजनीति — जे.सी . जौहरी , स्टर्लिंग पब्लिशर्स प्रा.लि. , दिल्ली ।
5. ब्रिटिश संविधान — महादेव प्रसाद शर्मा, किताब महल इलाहाबाद, दिल्ली ।



Subject : Political Science(Comparative Constitutions of UK & USA (Optional-I))	
Course Code : POLS-303	Autor : Dr. Parveen Sharma
Lesson No. 2	
संविधान और संविधानवाद Constitutions and Constitutionalism	

अध्ययन की संरचना

2.1 अधिगम उद्देश्य (Learning Objectives)

2.2 प्रस्तावना (Introduction)

2.3 अध्ययन के मुख्य बिन्दु (Main Points of Text)

2.3.1 संविधान का अर्थ व परिभाषा (Meaning and Definitions of Constitution)

2.3.2 संविधान के प्रकार, (kinds of constitution)

2.3.3 संविधान के विकास की प्रक्रिया (Process of growth of Constitution)

2.3.4 आदर्श संविधान की विशेषताएं (Features of an Ideal Constitution)

2.4 पाठ के आगे का मुख्य भाग (Further main body of the text)

2.4.1 संविधानवाद का अर्थ व परिभाषा (Meaning and Definitions of Constitutionalism)

2.4.2 संविधान और संविधानवाद में अन्तर (Difference between Constitution and Constitutionalism)

2.4.3 संविधानवाद के आधार (Foundations of Constitutionalism)

2.4.4 संविधानवाद की विशेषताएं (Features of Constitutionalism)

2.4.5 संविधानवाद के तत्व (Elements of constitutionalism)

2.4.6 संविधानवाद की अवधारणाएं (concepts of Constitutionalism)



2.4.7 ब्रिटेन का संविधान (Constitution of UK)

2.4.8 स्विट्जरलैण्ड का संविधान (Constitution of China)

2.4.9 चीन का संविधान (Constitution of Switzerland)

2.4.10 अमेरिका का संविधान (Constitution of America)

2.5 अपनी प्रगति जांचें (Check your progress)

2.6 सारांश (Summary)

2.7 सूचक शब्द (Key Words)

2.8 स्वयं मूल्यांकन हेतु प्रश्न (Self Assessment Questions)

2.9 अपनी प्रगति की जांच करने के लिए उत्तर (Answers to check your progress)

2.10 सन्दर्भ ग्रन्थ/निर्देशित पुस्तकें (References / Suggested Readings)

2.1 अधिगम उद्देश्य (Learning Objectives)

1. इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् विद्यार्थी योग्य होंगे :-

1. संविधान और संविधानवाद के अर्थ और उनकी अवधारणाओं की व्याख्या करने में ।

2. ब्रिटेन, स्विट्जरलैण्ड , अमेरिका व चीन के संविधान के अर्थ और उनकी अवधारणाओं की व्याख्या करने में ।

2.2 प्रस्तावना (Introduction)

संविधान, मूल सिद्धान्तों का एक समुच्चय है, जिससे कोई राज्य या अन्य संगठन अभिशासित होते हैं।

वह किसी संस्था को प्रचालित करने के लिये बनाया हुआ संहिता (दस्तावेज) है। यह प्रायः लिखित रूप में होता है। यह वह विधि है जो किसी राष्ट्र के शासन का आधार है उसके चरित्र, संगठन, को निर्धारित करती है तथा उसके प्रयोग विधि को बताती है, यह राष्ट्र की परम विधि है तथा विशेष वैधानिक स्थिति का उपभोग करती है सभी प्रचलित कानूनों को अनिवार्य रूप से संविधान की भावना के अनुरूप होना चाहिए यदि वे इसका उल्लंघन करेंगे तो वे असंवैधानिक घोषित कर दिए जाते हैं।

2.3 अध्ययन के मुख्य बिन्दु (Main Points of Text)



2.3.1 संविधान का अर्थ व परिभाषा (Meaning and Definitions of Constitution)

(अ) संविधान का अर्थ

संविधान शब्द का प्रयोग साधारणतया संकुचित एवं विस्तृत दो रूपों में होता है। विस्तृत रूप में इसका प्रयोग किसी राज्य के शासनप्रबन्ध सम्बन्धी सब नियमों के लिये होता है। इन नियमों में से कुछ नियम न्यायालयों द्वारा मान्य तथा लागू किए जाते हैं, किंतु कुछ ऐसे भी होते हैं जो पूर्णतया वैधानिक नहीं होते। इन विधि से परे अर्धवैधानिक नियमों की उत्पत्ति रूढ़ि, परंपरागत प्रथाओं, प्रचलित व्यवहार एवं विधि व्याख्या से होती है। अपने अशुद्ध रूप के कारण यह नियम न्यायालयों में मान्यता नहीं पाते, किंतु फिर भी शासनप्रबंध की व्यावहारिकता में इनका प्रभाव शुद्ध नियमों का मिश्रण ही संविधान होता है। इंग्लैंड का विधान इस कथन का साक्षी है। अन्य देशों में संविधान का अर्थ तनिक अधिक संकुचित रूप में होता है, तथा केवल जन विशेष नियमों के सम्बन्ध में होता है जो शासन प्रबन्ध के हेतु आधिकारिक लेखपत्रों में आबद्ध कर लिए जाते हैं। फलतः संविधान एक प्रकार से किसी देश का वह एक या अधिक लेखपत्र होता है जिसमें उस देश के शासनप्रबन्ध में अनुशासन के मूल नियम संकलित हों। इस अर्थ के साक्षी संयुक्त राष्ट्र अमरीका तथा भारत के संविधान हैं।

‘संविधान’ शब्द का आशय कोई भी माना जाए किंतु मूल वस्तु यह है कि किसी देश के संविधान का पूर्ण अध्ययन केवल कुछ लिखित नियमों के अवलोकन के संभव नहीं। कारण, यह तो शासन प्रबन्ध सम्बन्धी अनुशासन का एक अंश मात्र होते हैं। संपूर्ण संवैधानिक परिचय शासनप्रबंधीय सब अंगों के अध्ययन से ही संभावित हो सकता है। उदाहरणार्थ, बहुधा संविधान संविदा में केवल शासन के मुख्य अंगों – कार्यपालिका, विधायिनी सभा, न्यायपालिका – का ही उल्लेख होता है। किंतु इन संस्थाओं की रचना, पदाधिकारियों की नियुक्ति की रीति इत्यादि की व्याख्या साधारण विधि द्वारा ही निश्चित होती है। इसी प्रकार कई देशों में निर्वाचन नियम, निर्वाचन क्षेत्र एवं प्रति क्षेत्र के सदस्यों की संख्या, शासकीय विभागों की रचना तथा न्यायपालिका का संगठन, इन सब महत्वपूर्ण कार्यों को संविधान में कहीं व्याख्या नहीं होतीय यदि होती भी है तो बहुत साधारण रूप में, मुख्यतः इनका वर्णन तथा नियंत्रण साधारण विधि द्वारा ही होता है। इसके अतिरिक्त संपूर्ण विधिरचना विधानमंडल के क्षेत्र में ही सीमित नहीं होती, न्यायपालिका द्वारा मूलविधि की व्याख्या द्वारा जो नियम प्रस्फुटित होते हैं उनसे संविधान में नित्य संशोधनत्मक नवीनता आती रहती है। फिर, राज्यप्रबन्ध सम्बन्धी रूढ़ि एवं व्यवहार भी कम प्रभावात्मक और महत्वपूर्ण नहीं होते। अतएव इन सब अंशों का अध्ययन ही सर्वांग वैधानिक परिचय पूर्ण कर सकता है।

(ब) संविधान की परिभाषाएँ (Definitions of Constitution)

संविधान क्या होता है, और उसकी परिभाषा क्या है, इस विषय में राजनीति विज्ञान के विभिन्न विचारकों ने विभिन्न विचार व्यक्त किये हैं तथा विभिन्न परिभाषाएँ दी हैं



प्रोफेसर डायसी के अनुसार, “वे सब कानून संविधान में सम्मिलित होते हैं, जिनका प्रभाव प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूपों से राज्य में प्रभुत्व-शक्ति के विवरण अथवा उसके प्रयोग प पड़ता है।”

वुल्से के कथनानुसार, “उन नियमों का समूह संविधान कहलाता है, जि सके अनुसार सरकार की शक्ति, शासित के अधिकार और दोनों के सम्बन्धों का समायोजन होता है।”

लॉस्की के शब्दों में, “नियमों का वह भाग संविधान कहालाता है, जिसके द्वारा यह निर्धारित होता है कि (1) ऐसे नियम कैसे बनाये जायें, (2) किस प्रकार वह बदले जायें, तथा (3) उन्हें कौन बनाये?”

ब्राइस के शब्दां में, “संविधान ऐसे निश्चित नियमों का एक संग्रह होता है, जिनमें सरकार की कार्य-विधि प्रतिपादित होती है, और जिनके द्वारा उनका संचालन होता है।

गैटिल के अनुसार, “वै मौलिक सिद्धान्त, जिनके द्वारा किसी राज्य का स्वरूप निर्धारित होता है, उसका संविधान कहलाता है। इनमें राज्य के संगठन की विधि सरकार के विभिन्न अंगों में उसकी प्रभुत्व-शक्तिका वितरण, सरकार के कार्यों का क्षेत्र तथा सम्पादन की विधि तथा सरकार और जिस पर सरकार की शक्ति का प्रयोग किया जाता है, उस जनता का पारस्परिक सम्बन्ध सम्मिलित होता है, संविधान राज्य का निर्माण नहीं करता किन्तु वह उसके अस्तित्व का बाह्य स्वरूप होता है।”

गिलक्राइस्ट का कथन है कि, “संविधान उन लिखित या अलिखित नियमों अथवा कानूनों का समूह होता है, जिनके द्वारा सरकार का संगठन, सरकार की शक्तियों का विभिन्न अंगों में वितरण और उन शक्तियों के प्रयोग के सामान्य सिद्धान्त निश्चित किये जाते हैं।”

हरमन फाइनर के लिखा है कि, “संविधान आधारभूत राजनीतिक संस्थाओं की व्यवस्था होती है।”

चार्ल्स बर्गेन्ड का कहता है कि, “संविधान एक आधारभूत कानून होता है, जिसके द्वारा किसी राज्य की सरकार संगठित की जाती है और जिसके अनुसार व्यक्तियों अथवा नैतिक नियमों का पालन करने वाले मनुष्यों तथा समाज के पारस्परिक सम्बन्ध निर्धारित किये जाते हैं।”

2.3.2 संविधान के प्रकार (kinds of constitution)

सभी देशों के संविधान एक समान नहीं होते हैं। प्रत्येक देश के संविधान पर यहां की राजनीतिक, सामाजिक व धार्मिक विचारधारा का प्रभाव भी अवश्य पड़ता है। संविधानों का वर्गीकरण कई आधारों पर किया जाता है। संशोधन विधि के आधार पर इसे कठोर और लचीला दो भागों में बांटा जाता है। शक्तियों के विभाजन के आधार पर इसे एकात्मक व संघात्मक में तथा शासन के अंगों को आपसी सम्बन्धों के आधार पर इसे संसदीय व अध्यक्षीय में बांटा जाता है।

(1) लिखित तथा अलिखित संविधान (Written and Unwritten Constitution)



(2) लचीला तथा कठोर संविधान (Flexible and Rigid Constitution)

(3) विकसित तथा निर्मित संविधान (Evolved and Enacted Constitution)

(1) लिखित तथा अलिखित संविधान (Written and Unwritten Constitution)

लिखित संविधान वह होता है जो पूर्ण रूप में लिखित हो। भारत, अमेरिका, चीन, सोवियत संघ, फ्रांस आदि देशों के संविधान लिखित संविधान हैं। इसके विपरीत अलिखित संविधान वह होता है जिसके नियम अलिखित रूप में परम्पराओं व रीति-रिवाजों पर आधारित होता है। यह संविधान पूर्णरूप से अलिखित नहीं होता बल्कि इसका कुछ भाग कालान्तर में लिखित बनता जाता है। ब्रिटेन में अलिखित संविधान भी आज अलिखित नहीं है।

(I) लिखित संविधान :- लिखित संविधान वह होता है जो संविधान सभा द्वारा निर्मित हो। इसमें सरकार के संगठन, कार्य, उद्देश्यों, सरकार के अंगों के अधिकार व शक्तियों का, सरकार का नागरिकों के साथ, सरकार तथा नागरिकों के अधिकारों व कर्तव्यों का लिखित वर्णन होता है। लिखित संविधान देश का सर्वोच्च कानून होता है। जो भी

साधारण कानून संविधान का उल्लंघन करता है, उसे असंविधानिक करार दे दिया जाता है। “संविधान उस जीवन-पद्धति का प्रतीक होता है, जो किसी राज्य द्वारा अपने लिये अपनाई जाती है।”

लिखित संविधान के गुणों की विवेचना निम्न प्रकार की जा सकती है—

- **विस्तृत** — लिखित संविधान में जो शासन-विधि विहित की जाती है अथवा राजनीतिक जीवन को जो रूप किसी राज्य-विशेष के लिए निश्चित किया जाता है, वह अत्यन्त विचारपूर्वक किया जाता है, अतः उसमें उस राजनीतिक जीवन के अधिक स्वायत्तता हाता है। लिखित संविधान होने से इस बात की सम्भावना कम होती है कि सामयिक आवेश में आकर राजनीतिक जीवन में अनावश्यक उथल-पुथल की जा सके, क्योंकि लिखित संविधान में साधारणतः परिवर्तन भी अनावश्यक सरलता से नहीं किए जा सकते हैं।
- **मर्यादित**— लिखित संविधान होने से शासकों के अत्याचारों और स्वेच्छाचार से जनता के अधिकारों की सुरक्षा बनी रहती है, जनता के क्या अधिकार तथा कर्तव्य हैं, शासक तथा शासित, दोनों की ही मर्यादा लिखित संविधान होने से निश्चित रहती है।
- **संघ राज्यों के लिए उपयुक्त** — संघ में सम्मिलित इकाईयों का संघ में क्या स्थान है अथवा उनका पारम्परिक तथा संघ के साथ क्या सम्बन्ध है, संघ तथा इकाईयों की शासन-विधि तथा उनकी सरकारों के स्वरूप आदि का निश्चित विवरण लिखित संविधान में ही अधिक उचित ढंग से दिया जा सकता है।



(II) अलिखित संविधान:- अलिखित संविधान वह होता है जो संविधान सभा द्वारा निर्मित न होकर परम्पराओं, रीति-रिवाजों, संसदीय कानूनों और न्यायिक निर्णयों के रूप में विकसित होता है। ऐसा संविधान आवश्यकतानुसार बदलता रहता है। यह संविधान पूर्ण रूप से अलिखित नहीं होता।

अलिखित संविधान के गुण (Merits of Unwritten Constitution)

(1) **प्रगतिशील** – अलिखित संविधान संविधान अलिखित होने के कारण राजनीतिक जीवन के विकास के साथ-साथ शासन-विधि स्वयं परिवर्तित होती जाती है।

(2) **परिवर्तनीय** – अलिखित संविधान समय एवं परिस्थितियों के अनुसार बदला जा सकता है। अलिखित संविधान होने के कारण जनमत के अनुसार शासन विधि सरलता से परिवर्तित की जा सकती है।

अलिखित संविधान के दोष (Demerits of Unwritten Constitution)

(1) **अस्थिर** – अलिखित संविधान अस्थिर तथा अनिश्चित राजनीतिक जीवन को प्रोत्साहन देते हैं, क्योंकि संविधान अलिखित होने से लोगों को इस बात के लिए बढ़ावा मिलता है कि राजनीतिक जीवन की गतिविधि को जब चाहें, जैसा बना लें।

(2) **न्यायालयों की मनमानी** – इकसे अतिरिक्त अलिखित संविधान न्यायालयों के हाथ के खिलौने होते हैं और संविधान के अलिखित होने से न्यायालयों के निर्णय ही राजनीतिक जीवन के आधार बन जाते हैं।

(2) लचीला तथा कठोर (Flexible and Rigid Constitution)

ब्राइस ने संविधानों को संशोध्य (लचीला) तथा दुस्संशोध्य (कठोर) में बांटा है। ब्राइस के इस वर्गीकरण का आधार संविधान में संशोधन की विधि है।

(I) लचीला संविधान :- लचीला संविधान उसे कहते हैं जिसमें आसानी से परिवर्तन किया जा सके। इसमें संसद उसी तरह संशोधन कर सकती है जिस तरह वह साधारण कानूनों का निर्माण करती है। इसके लिए संसद को विशेष या किसी पेचीदा प्रक्रिया का प्रयोग करने की आवश्यकता नहीं पड़ती। इस संविधान में साधारण कानून और संविधानिक कानून में कोई अन्तर नहीं माना जाता। बार्कर ने लचीले संविधान को परिभाषित करते हुए कहा है – “जब संविधान में परिवर्तन लोगों या उनके प्रतिनिधियों की इच्छानुसार आसानी से किया जा सके तो उसे लचीला संविधान कहा जाता है।” लचीले संविधान में कानून बनाने की शक्ति तथा संविधान में संशोधन करने की शक्ति एक ही संसद के पास होती है। इसके अन्तर्गत न्यायपालिका को संसद में बनाए गए कानूनों को अवैध घोषित करने का अधिकार प्राप्त नहीं होता है। इंग्लैण्ड का संविधान लचीले संविधान का सुन्दर उदाहरण है। संविधान का लचीलापन तो उसके संशोधन की विधि पर ही आधारित होता है। अमेरिका का संविधान लिखित होते हुए भी कम कठोर है।



लचीले संविधान के गुण (Merits of Flexible Constitution)

(1) **परिवर्तनशील**— लचीले संविधान परिवर्तनशील होते हैं। उनमें बलवती हुई परिस्थितियों के अनुकूल विकास की सम्भावना रहती है तथा संशोधन विधि के सरल के कारण उन्हें सरलता से परिस्थितियों के अनुकूल बदला जा सकता है। ग्रेट ब्रिटेन के पिछले 1500 वर्ष के इतिहास को ले सकते हैं, जिसमें संविधान के लचीलेपन के कारण वहां का राजनीतिक जीवन बिना विशेष अशान्ति से प्रगति की ओर अन्मुख होता चला आया है।

(2) **परिस्थितियों के अनुकूल**— लचीले संविधान की एक अन्य महत्वपूर्ण अच्छाई परिस्थिति अनुकूलता है, क्योंकि लचीलेपन के कारण राज्य का संविधान सभी प्रकार की परिस्थितियों में सामना करने की क्षमता रखता है। यदि संविधान लचीला होता है, तो युद्ध आदि जैसी संकटकालीन अवस्थाओं के लिए सरलता और शीघ्रतापूर्वक परिस्थिति के अनुसार उसमें परिवर्तन किये जा सकते हैं और राज्य उन संवैधानिक बाधाओं से बच जाता है।

(3) **विद्रोह से रक्षा**— लचीले संविधान में विद्रोह तथा क्रान्तियों की भयंकरता से राज्य की रक्षा बनी रहती है, क्योंकि समय तथा परिस्थितियों की मांग के अनुसार लचीले संविधान सरलतापूर्वक संशोधित किये जा सकते हैं। उदाहरणार्थ—इंग्लैण्ड में पिछली शताब्दी में राजसत्ता कुलीन श्रेणी के हाथ से निकलकर जनता के हाथों में आई, किन्तु इसके लिए वहाँ फ्राँस जैसी किसी क्रान्ति की आवश्यकता नहीं हुई।

लचीले संविधान के दोष (Demerits of Flexible Constitution)

(1) **अस्थिरता**— लचीले संविधान वाले राज्यों में राजनीतिक जीवन में अस्थिरता बनी रहती है, क्योंकि संविधान में सरलतापूर्वक संशोधन होने की व्यवस्था के कारण राजनीतिक जीवन दलगत राजनीति तथा क्षणिक आवेशों का शिकार सरलता पूर्वक हो जाता है। ऐसी दशा में सम्पूर्ण जनता की भावनाओं का प्रतीक संविधान शाक्तिशाली राजनीतिक दलों और नेताओं के हाथों का लिखौना बन सकता है।

(2) **मर्यादाहीनता**— संविधान का एक अत्यन्त महत्वपूर्ण उद्देश्य शासक और शासित के अधिकारों एवं कर्तव्यों की मर्यादा स्थापित करना होता है तथा संविधान दोनों को इस बात के लिए बाध्य करता है कि वे संविधान द्वारा प्रतिपादित मर्यादा का उल्लंघन न करें। अतः यदि संविधान लचीला होता है, तो शासक और शासित के अधिकारों और कर्तव्यों की मर्यादा का स्थापित रहना असम्भव हो जाता है।

(3) **अधिनायकवाद का भय**— परिस्थिति — अनुकूलता लचीले संविधान की एक अच्छाई मानी जाती है, परन्तु उसकी यही अच्छाई कभी-कभी राज्य में शासकीय अधिनायकतन्त्र की स्थापना का कारण भी हो सकती है। संकटकाल में ही नहीं, शान्ति-काल में भी शासक वर्ग बहुमत का लाभ उठा कर लचीलेपन के कारण संविधान में ऐसे परिवर्तन कर सकता है, जो सम्पूर्ण जनता तथा समष्टि रूप में राज्य के हितों के लिए हानिकारक हैं।



(II) कठोर संविधान (Rigid Constitution):— कठोर संविधान वह संविधान है जिसे आसानी से बदला जा सके और जिसमें संशोधन के लिए विशेष विधि को प्रयोग में लाया जाता हो। इस संविधान में साधारण कानून बनाने की विधि से संशोधन नहीं किया जा सकता। इस संविधान में साधारण कानून तथा संवैधानिक कानून में अन्तर किया जाता है। इसमें संविधान ही देश का सर्वोच्च कानून होता है। यदि संसद संविधान की धाराओं के विरुद्ध कोई कानून बनाती है तो न्यायपालिका इस कानून को अवैध घोषित कर सकती है। अमेरिका तथा भारत में संविधान इसी कोटि के अन्तर्गत रखे जा सकते हैं। अमेरिका के संविधान में संशोधन तभी हो सकता है जब संशोधन का प्रस्ताव कांग्रेस के दोनों सदन दो-तिहाई बहुमत से पास करें और उसके बाद तीन-चौथाई राज्य विधानमण्डल उसे अनुमोदित करें। भारत में कुछ मामलों में तो कठोर संविधान है तथा कुछ में लचीला। जिन मामलों में सदन के दोनों सदनों के कुल संख्या के बहुमत तथा मतदान करने वाले सदस्यों के दो-तिहाई बहुमत से संशोधन करके उसे राष्ट्रपति के पास भेज दिया जाता है और राष्ट्रपति की अनुमति प्राप्त हो जाने पर वह संशोधन स्वीकार कर लिया जाता है, उन्हें सामान्य संशोधन विधि के अन्तर्गत गिना जाता है। लेकिन कई मामलों में आये राज्य विधानमण्डलों की स्वीकृति भी आवश्यक होती है। यह प्रक्रिया कठोर संविधान का उदाहरण प्रस्तुत करती है। स्विट्जरलैंड तथा जापान में भी कठोर संविधान हैं। इस संविधान का प्रमुख गुण इसकी निश्चितता व स्थायित्व है।

कठोर संविधान के गुण (Merits of Rigid Constitution)

- (1) **मनमानेपन से सुरक्षा** — संविधान दुरुह होने से शासन के मनमानेपन से सुरक्षा होती रहती है और शासन के विरुद्ध जनता के अधिकारों की रक्षा भी बनी रहती है, क्योंकि शासन और जनता, दोनों के अधिकारों की व्यवस्था का संशोधन सरलतापूर्वक किसी की मनमानी के अनुसार नहीं किया जा सका।
- (2) **स्थिरता** — कठोर संविधान होने से राज्य की शासन-विधि तथा उसके राजनीतिक जीवन में स्थिरता बनी रहती है और सामयिक आवेशों तथा दलगत राजनीति से उत्पन्न जिस राजनीतिक उथल-पुथल की सम्भावना संविधान लचीला होने की दशा में रहती है वह सम्भावना कठोर संविधान होने की दशा में नहीं रहती।
- (3) **शासन के विभिन्न अंगों में स्थिर सम्बन्ध** — इसी प्रकार संविधान कठोर होने से शासन के विभिन्न भागों के पारस्परिक सम्बन्ध भी स्थिर बने रहते हैं और उनमें आपसी तनाव और खींचातानी की सम्भावना कम रहती है।

कठोर संविधान के दोष (Demerits of Rigid Constitution)

- (1) **प्रगति के बाधक**— कठोर संविधान राज्य की प्रगति में बाधक होते हैं। किसी राज्य के संविधान के लिए यह आवश्यक है कि यह परिवर्तनशील राजनीतिक जीवन के अनुकूल परिवर्तनशील हो। चूँकि कठोर संविधान साधारणतः सरलतापूर्वक परिस्थितियों के अनुसार परिवर्तनशील नहीं होता, अतः वह अवांछनीय समझा जाता है।



(2) अपरिवर्तनशील— कठो संविधान की अपरिवर्तनशीलता कभी—कभी क्रांतियों का कारण भी बन जाती है, क्योंकि जब संविधान राजनीतिक जीवन के परिवर्तनों का समय की मांग के साथ स्वीकार नहीं करता, तो बाध्य होकर उन परिवर्तनों को कार्य—रूप देने के लिये मनुष्य को क्रान्ति का सहारा लेना पड़ता है।

(3) विकसित तथा निर्मित संविधान (Evolved and Enacted Constitution)

कुछ विद्वानों ने संविधानों का वर्गीकरण इस आधार पर भी किया है कि कुछ संविधान तो लम्बे ऐतिहासिक विकास का प्रतिफल है, जबकि दूसरों का किसी विशेष समय पर संविधान सभा ने निर्माण किया है। विकसित संविधान वह संविधान होता है जिसका निर्माण किसी संविधान सभा द्वारा नहीं किया जाता बल्कि यह तो परिस्थितियों और नागरिकों की राजनीतिक चेतना के आधार पर विकसित होता रहा है। इस संविधान की जड़ें इतिहास की परम्पराओं, रीति—रिवाजों, संसदीय कानूनों और न्यायिक निर्णय में होती हैं। इस संविधान का कुछ भाग लिखित तथा कुछ अलिखित होता है। इंग्लैण्ड का संविधान विकसित संविधान है। इस संविधान का प्रमुख गुण यह है कि यह जन इच्छा की स्पष्ट अभिव्यक्ति होने कारण क्रान्ति की संभावना से परे होता है। इसका स्थायित्व ही इसका विशिष्ट गुण है। स्वस्थ परम्पराओं के आधार पर विकसित होने के कारण आज तक इंग्लैण्ड के संविधान में विशेष संशोधनों की आवश्यकता नहीं पड़ी है।

निर्मित संविधान वह होता है जिसे किसी संविधान सभा ने विशेष समय पर बनाकर लागू किया हो। निर्मित संविधान प्रायः लिखित ही होते हैं। अमेरिका का संविधान 1787 में तथा भारत का संविधान 1949 में बनाया गया। इसी तरह अन्य देशों के संविधान भी निर्मित ही हैं। लिखित रूप होने के कारण निर्मित संविधान स्पष्ट रूप में राज्य व नागरिकों के सम्बन्धों को प्रतिबिम्बित करते हैं और इसमें संघर्ष की गुंजाइश कम होती है। ऐसे संविधानों में संशोधन भी सुविधापूर्वक किया जा सकता है। इसमें स्पष्टता व निश्चितता का गुण होता है। इसमें संविधान ही सर्वोच्च कानून होता है।

2.3.3 संविधान के विकास की प्रक्रिया (Process of growth of Constitution)

संविधान को कभी भी किसी संविधान सभा ने एक समय पर नहीं बनाया, वरन् इसका विकास लोगों की राजनीतिक चेतना में वृद्धि के साथ—साथ उनकी आवश्यकतानुसार धीरे—धीरे हुआ है। अंग्रेजों का संवैधानिक इतिहास प्राचीन है, वह लगभग 1500 वर्ष पुराना है।

संविधान को पूर्णतया असंशोधित और लेखबद्ध नहीं कर सकते। मानव समाज की अन्य संस्थाओं की तरह शासन विधि भी एक विकसित सत्ता है जिसका क्रमिक विकास होता रहता है। इस विकास में प्रथाओं एवं अभिसमयों का महत्वपूर्ण योगदान होता है और धीरे—धीरे संविधान विकसित होते रहते हैं। संविधान के विकास में निम्नलिखित तत्वों का योगदान होता है :—



1. प्रथाएं व अभिसमय (Customs and Conventions) :- समय बीतने के साथ-साथ प्रत्येक देश में कुछ संविधानिक परम्पराएं विकसित होने लगती हैं जो अलिखित होते हुए भी लिखित नियमों को अनिर्धारित दिशा प्रदान करती हैं। ब्रिटेन का संविधान परम्पराओं द्वारा ही विकसित हुआ है। अमेरिका, भारत, स्विट्स तथा अन्य देशों के संविधानों पर भी परम्पराओं का प्रभाव पड़ा।

2. संविधियों द्वारा विकास (Evolution by Legislative Elaboration) :- संविधान के विकास में विधायिका का भी महत्वपूर्ण हाथ रहा है। इसने संविधान की तरह से विकसित किया है। अमेरिका और भारत में विधायिका ने मूल संविधान में काफी कुछ नया जोड़ा है। इन कानूनों का भी वही महत्व है जो संवैधानिक कानूनों का है, क्योंकि ये संवैधानिक कानून का अभिन्न अंग बन गए हैं।

3 न्यायिक व्याख्याएं या निर्णय (Judicial Review):- न्यायपालिका द्वारा समय-समय पर संविधान के कानून की व्याख्याएं की जाती रहती हैं। इससे भी संविधान का विकास होता है। अमेरिका में न्यायाधीश मार्शल द्वारा प्रतिपादित व्याख्याओं ने संघात्मक शक्तियों में अभूतपूर्व वृद्धि की है और संविधानिक शब्दावली को आधुनिक बनाया है। भारत में भी सर्वोच्च न्यायालय द्वारा संविधानिक व्याख्याओं के कारण भारतीय संविधान का भी विकास हुआ है।

4. कार्यपालिका की व्याख्याएं (Executive Interpretation):- विधायिका और न्यायपालिका की तरह ही कार्यपालिका भी संविधान की व्याख्या करती रहती है। अमेरिका में कई बार राष्ट्रपति द्वारा इस प्रकार की व्याख्याएं की गई हैं और उन्हें मान्यता भी मिली है।

5. राजनीतिज्ञों तथा नागरिकों द्वारा व्याख्याएं (Interpretation by Politicians and Citizens):- राजनीतिज्ञ और नागरिक शासन के पदाधिकारी न होते हुए भी संविधान की व्याख्या में भाग लेते हैं। इसमें राजनीतिक दलों की भूमिका को लिया जा सकता है। अमेरिका के संविधान की धारा 2 में यह व्यवस्था की गई है कि राज्यों द्वारा नियुक्त निर्वाचक एकत्रित होकर राष्ट्रपति का चुनाव करेंगे। संविधान निर्माताओं की यह थी कि दलबन्दी या निहित स्वार्थों से परे योग्यतम व्यक्ति ही राष्ट्रपति को चुनेंगे।

6. संविधानिक संशोधन (Constitutional Amendments) :- संविधान में समय-समय पर होने वाले संशोधनों ने भी संविधान के विकास में महत्वपूर्ण योगदान दिया है। अमेरिका, भारत, स्विट्जरलैंड आदि देशों में होने वाले संविधानिक संशोधनों ने वहां के संविधान के मूल ढांचे को ही बदल डाला है। अमेरिका में मौलिक अधिकारों की घोषणा तथा भारत में सम्पत्ति के अधिकार को मौलिक अधिकारों की श्रेणी से बाहर निकालना, संविधानिक संशोधनों की ही देन है। सबसे कम संविधानिक संशोधन अमेरिका में हुए हैं जबकि सबसे अधिक भारत के संविधान संविधान में।

2.3.4 आदर्श संविधान की विशेषताएं (Features of an Ideal Constitution)



- **स्पष्टता तथा निश्चितता (Clarity and Definiteness) :-** एक आदर्श संविधान में स्पष्टता व निश्चितता का पाया जाना बहुत जरूरी है।
- **व्यापकता (Comprehensiveness) :-** संविधान के स्पष्ट व निश्चित होने के साथ-साथ उसका व्यापक होना भी आवश्यक है। व्यापकता का अर्थ है कि इसमें सरकार के संगठन व शक्तियों की विस्तृत व्याख्या होनी चाहिए।
- **संक्षिप्तता (Bravity) :-** एक आदर्श संविधान का संक्षिप्त होना भी जरूरी है। संविधान का अधिक लम्बा होना भी इसे आदर्श होने से रोकता है। इस दृष्टि से अमेरिका का संविधान एक आदर्श संविधान है क्योंकि उसमें केवल सात अनुच्छेद हैं जबकि आस्ट्रेलिया के संविधान में 128 तथा भारत के संविधान में 395 अनुच्छेद हैं।
- **लचीलापन (Flexibility) :-** आदर्श संविधान वही होता है जो परिस्थितियों के अनुसार स्वयं को ढाल सके। यदि संविधान में लोचशीलता या परिवर्तनशीलता का गुण नहीं होगा तो वहां जन-विद्रोह की सम्भावनाएं अधिक होंगी। अमेरिका और फ्रांस की क्रान्तियां इस बात का प्रमाण हैं। इसलिए आदर्श संविधान में लचीलेपन का गुण अवश्य होना चाहिए ताकि क्रान्ति की सभी सम्भावनाओं को टाला जा सके। लेकिन इसको इतना लचीला भी नहीं होना चाहिए कि यह शासक वर्ग के हितों का पोषक ही बनकर रह गए।
- **संविधान की सर्वोच्चता (Supremacy of Constitution) :-** एक अच्छे संविधान का गुण है कि उसको देश का सर्वोच्च कानून माना जाना चाहिए। यदि संसद संविधान की मूल आत्मा के विरुद्ध कोई कानून बनाए तो न्यायपालिका को उसे अवैध घोषित करने का अधिकार होना चाहिए।
- **न्यायपालिका की स्वतन्त्रता (Independence of Judiciary) :-** एक आदर्श संविधान में स्वतन्त्र न्यायपालिका का होना बहुत जरूरी है ताकि वह निष्पक्ष होकर संविधान की व्यवस्था कर सके और मौलिक अधिकारों की रक्षा कर सके।
- **मौलिक अधिकार व कर्तव्यों की घोषणा (Declaration of Fundamental Rights and Duties) :-** अधिकार व कर्तव्य एक सिक्के के दो पहलू होते हैं। किसी एक का अभाव दूसरे के लिए परेशानी पैदा करता है। इसलिए आदर्श संविधान वही हो सकता है जिसमें दोनों की व्यवस्था होती है। अधिकारों के बिना व्यक्ति के व्यक्तित्व का विकास नहीं हो सकता और कर्तव्यों के बिना राज्य के व्यक्तित्व का। अतः आदर्श संविधान में अधिकार और कर्तव्यों की समुचित व्यवस्था होनी चाहिए।
- **संविधान में संशोधन करने की विधि का वर्णन (Description of the Methods of Amendment) :-** इस आदर्श संविधान का यह गुण होता है कि उसमें संशोधन की विधि का स्पष्ट उल्लेख होता है। यदि



संविधान में संशोधन की विधि का स्पष्ट प्रावधान न हो तो उससे संसदीय तानाशाही के पैदा होने के आसार बढ़ जाते हैं। राज्य, राज्य न होकर अराजकता को जन्म देने वाला यन्त्र बनकर रह जाता है। अतः आदर्श संविधान में विधि का स्पष्ट वर्णन होता है।

2.4 पाठ के आगे का मुख्य भाग (Further main body of the text)

2.4.1 संविधानवाद का अर्थ व परिभाषा (Meaning and Definitions of Constitutionalism)

संविधानवाद के साथ ही संविधानवाद की अवधारणा जुड़ी हुई है। राजनीतिक शक्ति पर नियन्त्रण के रूप में संविधान के जन्म के साथ ही संवैधानिक सरकार की स्थापना हुई और संविधानवाद की परम्परा का विकास हुआ। संविधानवाद की प्रमुख मान्यता यह है कि यदि राजनीतिक शक्ति पर संविधानिक नियन्त्रण न हो तो वह निरंकुश बन जाती है और मानव स्वतन्त्रताओं और अधिकारों का भक्षण करने लगती है। इसी कारण राजनीतिक शक्ति को नियन्त्रण में रखने के लिए और उसे जन-कल्याण का साधन बनाने के लिए उसमें उत्पीड़न या बाध्यता की शक्ति का समावेश किया जाता है। यह शक्ति ही संविधान कहलाती है और सभी शासकों या राजनीतिक शक्ति को नियन्त्रित रखने की संवैधानिक व्यवस्था ही संविधानवाद है।

संविधानवाद उन विचारों व सिद्धान्तों की ओर संकेत करता है, जो उसे संविधान का विवरण व समर्थन करते हैं, जिनके माध्यम से राजनीतिक शक्ति पर प्रभावशाली नियंत्रण स्थापित किया जा सके। यह संविधान पर आधारित विचारधारा है, जिसका मूल अर्थ यही है कि शासन संविधान में लिखित नियमों व विधियों के अनुसार ही संचालित हो व उस पर प्रभावशाली नियंत्रण स्थापित रहे, जिससे वे मूल्य व राजनीतिक आदर्श सुरक्षित रहें जिनके लिए समाज राज्य के बंधन स्वीकार करता है। परन्तु इसका यह अर्थ नहीं कि संविधान के नियमों के अनुसार शासन संचालन मात्र ही संविधानवाद है। ऐसा तो किसी निरंकुश शासन में भी हो सकता है। एक तानाशाह अपनी इच्छा के अनुसार संविधान बनाकर, जनता की इच्छाओं और आकांक्षाओं की अवहेलना करता हुआ उन पर यह संविधान बलपूर्वक लागू कर सकता है। ऐसे संविधान में जनता के आदर्शों व मूल्यों का समावेश नहीं होता है, और इस कारण यह व्यवस्था संविधानवाद का विलोम ही होगी। अतः संविधानवाद संविधान के नियमों के अनुरूप शासन संचालन से अधिक है। इसका अर्थ है, निरंकुश शासन के विपरीत नियमानुकूल शासन, जिसमें मनुष्य की आधारभूत मान्यताओं, आस्थाओं और मूल्यों की व्यवहार में उपलब्धि सम्भव हो। इसमें यह निष्कर्ष निकलता है कि संविधानवाद शासन की वह पद्धति है जिसमें शासन जनता की आस्थाओं, मूल्यों व आदर्शों का परिलक्षित करने वाले संविधान के नियमों व सिद्धान्तों के आधार पर ही किया जाए व ऐसे संविधान के माध्यम से ही शासकों को प्रतिबंधित व सीमित रखा जाए जिससे राजनीतिक व्यवस्था की मूल व्यवस्थाएँ सुरक्षित करें और व्यवहार में हर व्यक्ति को उपलब्ध हो सकें। संविधान व संविधानवाद एक दूसरे के पर्यायवाची नहीं हैं। जहाँ संविधान है वहाँ संविधानवाद आवश्यक रूप से पाया जाता हो यह जरूरी नहीं है। संविधान के माध्यम से तो हम किसी भी देश की राजनीतिक



व्यवस्था, अर्थात् सरकार के स्वरूप, उसकी शक्तियों व नागरिकों और सरकार के सम्बन्धों से सम्बन्धित सिद्धान्तों व नियमों का संकेत पाते हैं जबकि संविधानवाद एक ऐसी व्यवस्था है जिसमें संविधान के माध्यम से ही सरकार की शक्तियों पर शक्ति वितरण द्वारा प्रभावशाली नियंत्रण स्थापित किया जाता है जिससे वह आकांक्षाएँ व मूल्य सुरक्षित रहें जिनकी उपलब्धि के साधन के रूप में संविधान का अपनाया व समर्थित किया गया है आज भी समर्थन दिया जाता है।

संविधानवाद को कुछ विद्वानों ने निम्न प्रकार से परिभाषित किया है :-

सी०एफ० स्ट्रांग के अनुसार – “संवैधानिक राज्य वह है जिसमें शासन की शक्तियों, शासितों के अधिकारों और इन दोनों के बीच सम्बन्धों का समायोजन किया जाता है।”

कार्टन हर्ज के अनुसार – “मौलिक अधिकार तथा स्वतन्त्र न्यायपालिका प्रत्येक संविधानवाद की अनिवार्य और सामान्य विशेषता है।”

जे०एस० राअसैक के अनुसार – “धारणा के रूप में संविधानवाद का अभिप्राय है कि यह अनिवार्य रूप से सीमित सरकार तथा शासन के रूप में नियन्त्रण की एक व्यवस्था है।”

कोरी तथा अब्राहम के अनुसार – “स्थापित संविधान के निर्देशों के अनुरूप ही शासन ही संविधानवाद कहा जाता है।”

के०सी० व्हीयर के अनुसार – “संविधानवाद का अर्थ है निरंकुश शासन के विपरीत नियमानुकूल शासन।”

उपरोक्त परिभाषाओं के आधार पर कहा जा सकता है कि संविधानवाद एक सीमित शासन है, क्योंकि इसमें कुछ प्रतिबन्धों की व्यवस्था द्वारा सरकार को सीमित व उत्तरदायी बनाया जाता है।

2.4.2 संविधान और संविधानवाद में अन्तर (Difference between Constitution and Constitutionalism)

संविधान ही संविधानवाद का आधार होता है।

- **परिभाषा की दृष्टि से अन्तर (Difference from the view point of definition) :-** संविधान एक संगठन का प्रतीक होता है तथा संविधानवाद एक विचारधारा का प्रतीक है जिसमें राष्ट्र के मूल्य विश्वास तथा राजनीतिक आदर्श शामिल होते हैं। संविधान एक ऐसा संगठन है जिसमें सरकार और शासितों के सम्बन्धों को निर्धारित किया जाता है। संविधान राजनीतिक व्यवस्था के शक्ति सम्बन्धों की आत्मकथा है। संविधानवाद उन विचारों का द्योतक है जो संविधान का वर्णन और समर्थन करते हैं तथा जिसके माध्यम से राजनीतिक शक्ति पर प्रभावकारी नियन्त्रण कायम रखना सम्भव होता है।



- **प्रकृति की दृष्टि से अन्तर (Difference from the view point of Nature) :-** प्रकृति की दृष्टि से संविधान एक साधन प्रधान धारणा है और संविधानवाद एक साध्य प्रधान धारणा है। संविधानवाद राजनीतिक समाज के लक्ष्यों और उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए सुव्यवस्था है। यह हर समाज के गन्तव्यों को प्राप्त करने की संविधान रूपी साधन द्वारा चेष्टा करता है। इस तरह संविधान वह साधन है जो राजनीतिक समाज के लक्ष्यों व उद्देश्यों को प्राप्त करके संविधानवाद की स्थापना करता है या संविधानवाद रूपी साध्य को प्राप्त करता है।
- **उत्पत्ति की दृष्टि से अन्तर (Difference from the view point of Origin) :-** संविधान का निर्माण किया जाता है जबकि संविधानवाद विकास की लम्बी प्रक्रिया का परिणाम होता है। संविधानवाद किसी भी देश के राजनीतिक समाज के मूल्यों, विश्वासों तथा आदर्शों के विकास का परिणाम होता है। संविधान जनता की आवश्यकताओं के अनुरूप सदैव परिवर्तित व संशोधित होते रहे हैं, लेकिन संविधानवाद की स्थापना के बाद उसे बदलना या समाप्त करना निरंकुशता व अराजकता को जन्म देता है।
- **क्षेत्र की दृष्टि से अन्तर (Difference from the view point of Scope) :-** क्षेत्र की दृष्टि से संविधान एक अपवर्जक (exclusive) तथा संविधानवाद एक अन्तर्भूतकारी (inclusive) धारणा है। संविधानवाद तो कई देशों में यदि उनकी संस्कृति समान है तो एक पाया जा सकता है, लेकिन संविधान हर देश का अलग-अलग होता है।
- **औचित्य की दृष्टि से अन्तर (Difference from the view point of Legitimacy) :-** संविधान का औचित्य विधि के आधार पर सिद्ध किया जाता है, जबकि संविधानवाद में आदर्शों का औचित्य विचारधारा के आधार पर सिद्ध होता है। जिस देश के संविधान में उचित कानून व नियमों की व्यवस्था होती है तथा संविधान जन-इच्छा के अनुकूल होता है तो उस संविधान को औचित्यपूर्ण माना जाता है। इसी तरह यदि किसी देश में संवैधानिक आदर्शों का संवैधानिक उपायों से ही प्राप्त करने के प्रयास किए जाते हैं तो संविधानवाद का औचित्य सिद्ध हो जाता है।

इस प्रकार हम कह सकते हैं कि संविधान और संविधानवाद में गहरा अन्तर है। एक संगठन का प्रतीक है तो दूसरा विचारधारा का। एक साधन है तो दूसरा साध्य। एक सीमित धारणा है तो दूसरी विस्तृत। एक का निर्माण होता है तो दूसरे का विकास। इतने अन्तर के बावजूद भी दोनों में आपस में घनिष्ठ सम्बन्ध होता है। दोनों एक ही सिक्के के दो पहलू हैं। यदि दोनों की दिशाएं अलग अलग होंगी तो इसके राजनीतिक समाज के लिए विनाशकारी परिणाम निकलेंगे।

2.4.3 संविधानवाद के आधार (Foundations of Constitutionalism)



राजनीतिक समाज के लोगों में पाई जाने वाली मतैक्य की भावना ही संविधानवाद का आधार है। मतैक्य जितना अधिक विरोध की बजाय सहमति के नजदीक होगा, उतनी ही अधिक संविधानवाद में ठोसता व व्यावहारिकता का गुण होगा। यही मतैक्य संविधानवाद की आवश्यक शर्त भी है और आवश्यकता भी है। यह मतैक्य चार प्रकार का हो सकता है :—

- **संस्थाओं के ढांचे और प्रक्रियाओं पर मतैक्य (Consensus of the form of Institutions and Procedures) :—** यदि नागरिक यह महसूस करते हैं कि सरकार उनके हितों के विरुद्ध कार्य कर रही है तो वे सरकार का विरोध करने में कोई देर नहीं करते। स्थिति संविधानवाद के विपरीत होती है। इसलिए संविधानवाद को बनाए रखने के लिए संस्थाओं के ढांचे और प्रक्रियाओं पर नागरिकों में मतैक्य होना जरूरी है।
- **सरकार के आधार के रूप में विधि—शासन की आवश्यकता पर सहमति (Agreement on desirability of the rule of law as basis of Government) :—** जनता को सदैव यह विश्वास होना चाहिए कि सरकार या शासन कानून द्वारा ही चलाया जा रहा है। जनता की यही आस्था या विश्वास आपातकाल में शासक वर्ग को संविधानवाद से छूट देकर लाभ पहुंचाता है।
- **समाज के सामान्य उद्देश्यों पर सहमति (Agreement on the general goals of Society) :—** राजनीतिक समाज के लोगों में सामान्य उद्देश्यों पर सहमति का अभाव राजनीतिक व्यवस्था में तनाव व खिंचाव उत्पन्न करता है। इसलिए संविधानवाद के लिए यह आवश्यक है कि नागरिक समाज के लोगों में समाज के सामान्य उद्देश्यों पर सहमति बनी रहे। यही संविधानवाद की आधारशिला है।
- **गौण लक्ष्यों एवं विशिष्ट नीति—प्रश्नों पर सहमति (Concurrence in lesser goal and on specify policy question) :—** संविधान के भवन को धराशायी होने से बचाने के लिए यह आवश्यक है कि नागरिक समाज के लोगों में गौण लक्ष्यों और विशिष्ट नीति—प्रश्नों पर भी सहमति बनी रहे। यह सहमति संविधानवाद को व्यावहारिकता का गुण प्रदान करती है।

इस प्रकार कहा जा सकता है कि राजनीतिक समाज के लोगों में संस्थाओं के ढांचे व प्रक्रियाओं पर, सरकार के आधार के रूप में विधि के शासन की आवश्यकता पर, समाज के सामान्य उद्देश्यों, गौण लक्ष्यों तथा विशिष्ट नीति—सम्बन्धी प्रश्नों पर आम राय का होना जरूरी है। विभिन्न बातों पर राजनीतिक समाज के लोगों में पाया जाने वाला मतैक्य या सहमति ही संविधानवाद का आधार है।

2.4.4 संविधानवाद की विशेषताएं (Features of Constitutionalism)



- **संविधानवाद एक गत्यात्मक अवधारणा है (Constitutionalism is a Dynamic Concept):—** गतिशीलता संविधानवाद का प्रमुख गुण होता है। इसी कारण संविधानवाद विकास का सूचक होता है। समय व परिस्थितियों के अनुसार समाज के मूल्य व आदर्शों के बदलने के कारण संविधानवाद को भी अपनी प्रकृति को बदलना पड़ता है। यदि संविधानवाद लोचशीलता तथा परिवर्तनशीलता के गुण से हीन होगा तो संविधानवाद में रक्षा करने वाला कोई नहीं होगा। ऐसे संविधानवाद के दिन जल्दी ही लद जायेंगे और वह विनष्ट हो जाएगा।
- **संविधान मूल्यों पर आधारित अवधारणा है (Constitutionalism is a value based Concept) :—** संविधानवाद का सम्बन्ध उन आदेशों से होता है जो किसी राष्ट्र के लिए बहुत महत्वपूर्ण होते हैं और राष्ट्रवाद का आधार होते हैं। संविधानवाद उन विश्वासों, राजनीतिक आदर्शों और मूल्यों की तरफ इशारा करता है जो प्रत्येक नागरिक को बहुत ही प्रिय होते हैं। अभिजन वर्ग के बाद समाज का बुद्धिजीवी वर्ग इसको जनता तक पहुंचाता है। सामाजिक स्वीकृति प्राप्त होने पर ही मूल्य संविधान का आदर्श बनते हैं और संविधानवाद को मूल्यों से युक्त करता है। इन मूल्यों की रक्षा के लिए नागरिक हर बलिदान देने को तैयार रहते हैं। जिन मूल्यों को समाज द्वारा अस्वीकृत कर दिया जाता है, वे मूल्य संविधानवाद से दूर हट जाते हैं।
- **संविधानवाद संविधान पर आधारित अवधारणा है (Constitutionalism is a Constitution based Concept) :—** संविधान नागरिक समाज के मूल्यों व आदर्शों का प्रतिबिम्ब होता है। संविधान किसी भी देश का सर्वोच्च कानून होता है। प्रतिबन्धों की व्यवस्था के कारण जनता का संविधान में गहरा विश्वास होता है। यही विश्वास और लगाव संविधानवाद का भी आधार है। यदि संविधान और संविधानवाद में साम्य नहीं होगा तो राजनीतिक उथल-पुथल की घटनाएं शुरू हो सकती हैं और देश में अराजकता का माहौल पैदा हो सकता है। इसलिए संविधानवाद को संविधान पर ही आश्रित रहना पड़ता है। इसी से संविधानवाद व्यवहारिकता का गुण प्राप्त करता है।
- **संविधानवाद समभागी अवधारणा है (Constitutionalism is a Shared Concept) :—** एक देश के मूल्य व आदर्श दूसरे देशों के संविधान का भी अंग बन सकते हैं। यद्यपि समान संविधानवाद वाले देशों में भी कुछ असमान लक्षण हो सकते हैं, लेकिन यह अन्तर मात्रात्मक ही रहता है, गुणात्मक नहीं। विकासशील प्रजातन्त्रीय देशों में संविधानवाद के आधारभूत लक्षण लगभग समान मिलते हैं। यदि कोई अन्तर दृष्टिगोचर भी होता है तो वह संविधानवाद की समन्वयकारी शक्ति में घुल जाता है। अतः संविधानवाद एक समभागी अवधारणा है। संविधान तो प्रत्येक देश का अपना अलग अलग होता है, संविधानवाद के लक्षण समान रूप से कई देशों में एक जैसे ही मिल सकते हैं। इस प्रकार संविधानवाद संविधान पर आधारित अवधारणा है।



यह संविधान के आदर्शों व मूल्यों का साध्य के रूप में प्राप्त करने का प्रयास करता है। इसका राजनीतिक समाज के मूल्यों से गहरा लगाव होने के कारण यह संस्कृति से सम्बन्धित भी होता है। यह समय व परिस्थितियों के अनुसार विकास की तरफ भी बढ़ता रहता है।

- **संविधान संस्कृति सम्बद्ध अवधारणा है (Constitutionalism is a culture-bound concept)-** किसी भी राजनीतिक समाज के मूल्यों का विकास समाज की संस्कृति से सम्बद्ध होते हैं हर देश के आदर्श मूल्य व विचारधाराएँ उस देश की संस्कृति की ही उपज होती हैं, और संस्कृति से ही गठबन्धित रहते हैं। संविधानवाद इन्हीं पर आधारित है। वर्तमान युग में कई राजनीतिक समाज इतने विशाल होते हैं कि उनमें संस्कृतियों की विविधता और भिन्नता पाई जाती है। ऐसे राष्ट्रों में संविधानवाद इन विभिन्न संस्कृतियों के समन्वय का सूचक है। उनमें संघर्ष तथा विरोध के स्थान पर सहयोग और सामंजस्य की व्यवस्था संविधानवाद द्वारा ही होती है।
- **संविधानवाद प्रधानतः साध्य मूलक अवधारणा है (Constitutionalism is predominantly an ends concept)-** संविधानवाद प्रधानतः साध्यों से सम्बन्धित विचार है। वैसे भी साधनों व साध्यों को एक दूसरे से अलग नहीं किया जा सकता। फिर भी संविधानवाद से प्रमुखतया लक्ष्यों का ही संकेत मिला है। जब हम यह कहते हैं कि संविधानवाद साध्य-प्रधान विचार है तो उसका अर्थ उन आदर्शों से है जिन्हें समाज साध्य के रूप में अंगीकार करता है। इस प्रकार संविधानवाद का साध्यों को ओर प्रमुख संकेत होता है और साधनों की ओर गौण संकेत ही होता है।

2.4.5 संविधानवाद के तत्त्व

पिनोक व स्मिथ ने अपनी पुस्तक **पोलिटिकल सायंस** : ऐन इंट्रोडक्शन में संविधान के चार तत्वों का उल्लेख किया है।

(क) संविधान अपरिहार्य संस्थाओं की अभिव्यक्ति (The constitution as an embodiment of essential institutions):- संविधान चाहे लिखित हो या विकसित व अलिखित, उसमें व्यवस्थापिका, कार्यपालिका व न्यायपालिका के संगठन, कार्यो व उनके पारस्परिक सम्बन्धों की स्पष्ट व्यवस्था, संविधानवाद की अभिव्यक्ति के लिए अनिवार्य है। संविधान में सरकार के विभिन्न स्तरों व अंगों की शक्तियों की व्याख्या ही नहीं हो वरन् उनके पारस्परिक सम्बन्धों का उन पर लगी सीमाओं और उनकी कार्यविधि का स्पष्ट उल्लेख भी होना चाहिए, अगर किसी संविधान द्वारा आधारभूत राजनीतिक संस्थाओं की स्थापना व उनकी शक्तियों की स्पष्ट व्याख्या नहीं होती है तो ऐसी व्यवस्था में संविधानवाद सम्भव नहीं होता है। ऐसे राज्यो में राजनीतिक शक्तियों के प्रयोगकर्ता अपने अधिकारक्षेत्र में इच्छानुसार वृद्धि करके शासन शक्तियों के दुरुपयोग के अवसर प्राप्त कर लेते हैं। इसलिए संविधान में आधारभूत संस्थाओं की स्पष्ट व्यवस्था, संविधानवाद का एक महत्वपूर्ण तत्त्व है। पिनोक व स्मिथ तो



प्रतिबंधों को संविधानवाद का मूल मन्त्र मानते हैं। हर राज्य में सरकार संवैधानिक बनाए रखने के लिए, उसका किसी न किसी प्रकार नियंत्रण व्यवस्था के अधीन होना आवश्यक है

संविधान का व्यवहार में किसी भी अधिकारी द्वारा उल्लंघन नहीं किया जाता है। साधारणतया, हर लसकतान्त्रिक राज्य में कुछ नियंत्रण शासको पर लगाए जाते हैं। मोटे तौर पर यह नियंत्रण है (1) विधि के शासन की स्थापना, (2) मौलिक अधिकारों की व्यवस्था, (3) राज्य की शक्तियों के विभाजन, पृथक्करण व विकेन्द्रीकरण की व्यवस्था, तथा (4) सामाजिक बहुलवाद की परिस्थितियों को बनाए रखने की व्यवस्था।

इन नियंत्रण व्यवस्थाओं के माध्यम से सरकार व नागरिक, दोनों ही अपने अधिकार व कार्य क्षेत्र में सीमित रहने के लिए बाध्य हो जाते हैं। ऐसी व्यवस्था में, संविधान समाज के आदर्शों, आस्थाओं और राजनीतिक मूल्यों की प्राप्ति का साधन बना रहता है। अगर किसी राज्य में संविधान द्वारा ऐसे प्रतिबन्ध स्थापित नहीं किये जाते हैं तो यह संविधान राजनीतिक आचरण का निदेशक व नियंत्रककर्ता नहीं रह पाता है। ऐसी नियंत्रण मुक्त राजनीतिक व्यवस्था में शासक स्वेच्छा से सब कुछ कर सकता है और जिस राज्य में शासक उन्मुक्त होकर सब कुछ कर सकें, वहां संविधानवाद सम्भव नहीं हो सकता है। इसलिये संविधान का राजनीतिक शक्ति का प्रतिबन्धक होना संविधानवाद का आधारभूत तत्त्व है। समय, परिस्थितियों और आवश्यकताओं में परिवर्तन के साथ

(ख) संविधान राजनीतिक शक्ति का संगठक (The constitution as an organiser of political authroity) – संविधान केवल सरकार की सीमाओं की स्थापना ही नहीं करता अपितु सरकार की विभिन्न संस्थाओं में शक्तियों का क्षेत्रीय व लम्बात्मक वितरण भी करता है। संविधान यह व्यवस्था भी करता है कि सरकार के कार्य अधिकार युक्त रहें, और स्वयं सरकार भी वैध (Legitimate) रहें। अगर कोई संविधान सरकार के कार्यों को अधिकार युक्त व स्वयं सरकार को वैध नहीं बनाता तो ऐसी सरकार व संविधान अधिक दिन तक स्थाई नहीं हो सकते हैं तथा, ऐसी राजनीतिक व्यवस्था में संविधानवाद राजनीतिक शक्ति का संगठन नहीं रहता। इससे स्पष्ट है कि संविधान द्वारा हर राजनीतिक व्यवस्था में राजनीतिक शक्ति का संगठन होना आवश्यक है, क्योंकि संविधानवाद की अभिव्यक्ति संविधान द्वारा व इसकी व्यवहार में प्राप्ति सरकार द्वारा ही सम्भव है। निष्कर्ष रूप में यह कहना उचित होगा कि संविधानवाद के उपरोक्त वर्णित चारों तत्त्व संविधान में निहित होने चाहिए। अगर किसी राज्य के संविधान में संविधानवाद के इन तत्त्वों का समावेश नहीं होता तो वह संविधान संविधानवाद सम्भव नहीं हो सकता।

2.4.6 संविधानवाद की अवधारणाएं

संविधानवाद संविधान पर आधारित अवधारणा है। संविधान जनता का सर्वोच्च कानून होता है। प्रत्येक देश के संविधान के अपने राजनीतिक आदर्श व मूल्य होते हैं। प्रत्येक देश की संस्कृति के अपने गुण अन्य देशों से भी साम्य रखने के कारण कई देशों में सांझे संविधानवाद का विकास हो जाता है। यद्यपि यह तो सत्य है कि समस्त विश्व में



एक संविधानवाद नहीं हो सकता, क्योंकि विश्वके देशों की संस्कृति में काफी अन्तर है। इसी आधार पर संविधान भी अलग अलग होते हैं और संविधानवाद भी। द्वितीय विश्व युद्ध के बाद विश्व में तीन तरह का संविधानवाद विकसित हुआ है। इस आधार पर संविधानवाद की तीन अवधारणाएं हैं :-

(I) संविधानवाद की पाश्चात्य अवधारणा (Eastern Concept of Constitutionalism)

(II) संविधानवाद की साम्यवादी अवधारणा (Marist or Communist Concept of Constitutionalism)

(III) संविधानवाद की विकासशील देशों की अवधारणा (Concept of Constitutionalism of Developing Countries)

(I) संविधानवाद की पाश्चात्य अवधारणा (Eastern Concept of Constitutionalism)

इस अवधारणा को उदारवादी लोकतन्त्र की अवधारणा भी कहा जाता है। यह अवधारणा मूल्य मुक्त तथा मूल्य अभिभूत दोनों व्याख्याओं पर आधारित है। मूल्य मुक्त अवधारणा के रूप में इसमें केवल संविधानिक संस्थाओं का वर्णन किया जाता है, संविधानवादके आदर्शों व मूल्यों का नहीं। जब राजनीतिक समाज के आदर्शों और मूल्यों के दृष्टिगत संविधानवाद की व्याख्या की जाती है तो वह मूल्य-अभिभूत व्याख्या कहलाती है। मूल्य अभिभूत व्याख्या ही आधुनिक लोकतन्त्र की मांग है। संविधानवाद की पाश्चात्य अवधारणा उदारवाद का दर्शन है। यह संविधानवाद साध्य और साध्य दोनों है। इसमें राजनीतिक संस्थाओं के ढांचे के साथ-साथ राजनीतिक समाज के मूल्यों, आदर्शों (स्वतंत्रता, समानता, न्याय) को भी महत्वपूर्ण स्थान दिया जाता है। यह संविधानवाद प्रतिबन्धों की व्यवस्था द्वारा सीमित सरकार की व्यवस्था करता है और कुछ संविधानिक उपबन्धों द्वारा राजनीतिक उत्तरदायित्व के सिद्धान्त का भी प्रतिपादन करता है। इससे व्यक्ति की स्वतंत्रता व अधिकारों का बचाव होता है और विधि के शासन द्वारा समाज में सुव्यवस्था बनी रहती है। पश्चिमी संविधानवाद में संविधान का महत्व सरकार से अधिक होता है क्योंकि सरकार का निर्माण संविधान के बाद में होता है। इस संविधानवाद में संवैधानिक सरकार संविधान के आदर्शों को मानने के लिए बाध्य प्रतीत होती है। संवैधानिक उपबन्ध तथा उत्तरदायित्व का सिद्धान्त उसे संविधानात्मक बनाए रखने में मदद करते हैं। इस तरह पाश्चात्य संविधानवाद लोकतन्त्रीय भावना पर आधारित होता है।

(II) संविधानवाद की साम्यवादी अवधारणा (Marxist or Communist Concept of Constitutionalism)

साम्यवादी देशों में संविधानवाद की अवधारणा पाश्चात्य संविधानवाद से सिद्धान्त में साम्य रखते हुए भी व्यवहारिक दृष्टिकोण से काफी भिन्न है। इस अवधारणा की दृष्टि में संविधान का उद्देश्य सबके लिए स्वतन्त्रता, समानता, न्याय और अधिकार निश्चित करना होकर, बल्कि समाजवाद की स्थापना करना है। यह संविधानवाद मार्क्स व लेनिन के वैज्ञानिक समाजवादी विचारों पर आधारित है। समस्त साम्यवादी संविधानवाद सोवियत संविधान के इर्द-गिर्द ही



घूमता है और सोवियत संविधान का निर्माण समाजवादी तत्वों से हुआ है। साम्यवादी देशों में सरकार व शक्ति का अर्थ पाश्चात्य देशों के दृष्टिकोण से बिल्कुल विपरीत है। इसी आधार पर संविधानवाद में भी भिन्नता आ जाती है। साम्यवादी सरकार को पूंजीपति वर्ग के हाथ की कठपुतली मानते हैं, जो धनिक वर्ग के हितों की ही पोषक होती है। उनके अनुसार राजनीतिक शक्ति का आधार आर्थिक शक्ति है। उत्पादन शक्ति के धारक होने के कारण पूंजीपति राजनीतिक सत्ता के भी स्वामी होते हैं। इसलिए राजनीतिक शक्ति और मौलिक अधिकारों का प्रयोग जनसाधारण की बजाय अमीर लोग ही करते हैं। इसलिए पाश्चात्य जगत में मौलिक अधिकारों की व्यवस्था राजनीतिक शक्ति प्राप्त लोगों के लिए ही रहती है। राजनीतिक शक्ति पर किसी प्रकार के नियन्त्रण की बात करना मूर्खता है, क्योंकि आर्थिक व राजनीतिक शक्ति से सम्पन्न सरकार पर कोई भी नियन्त्रण प्रभावी नहीं हो सकता। इसलिए राजनीतिक शक्ति पर नियन्त्रण केवल तभी सम्भव है, जब आर्थिक शक्ति पर नियन्त्रण लगाया जाए।

साम्यवादी संविधानवाद आर्थिक शक्ति पर नियन्त्रण करने के लिए ऐसी समाजवादी व्यवस्था की स्थापना पर जोर देते हैं जो आर्थिक साधनों का बंटवारा समाज की सभी व्यक्तियों या वर्गों में कर दे। उनका मानना है कि आर्थिक शक्ति के विकेंद्रीकरण से राजनीतिक शक्ति भी समस्त समाज के हाथ में आ जाएगी और सरकार की नीतियों का लाभ सभी व्यक्तियों को मिलने लगेगा। साम्यवादी विचारकों का मानना है कि आर्थिक शक्ति पर नियन्त्रण राजनीतिक शक्ति पर भी स्वयं नियन्त्रण रखने लग जाएगा।

(III) संविधानवाद की विकासशील देशों की अवधारणा (Concept of Constitutionalism of Developing Countries)

राजनीतिक स्थायित्व के अभाव में विकासशील देशों में संविधानवाद का विकास उतना नहीं हुआ है, जितना पश्चिमी देशों में हुआ है। भारत को छोड़कर सभी विकासशील देशों की राजनीतिक व्यवस्थाएं अभी संक्रमणकाल के दौर से गुजर रही हैं। भारत ही एकमात्र ऐसा देश है जो राजनीतिक स्थायित्व के साथ-साथ संविधानवाद में भी पाश्चात्य देशों से पीछे नहीं है। भारत में संविधानवाद अपनी पराकाष्ठा पर पहुंच चुका है। भारत ने पाश्चात्य संविधानवाद के समस्त आदर्श प्राप्त कर लिए हैं और वह बराबर संविधानवाद का विकास कर रहा है। विकासशील देशों की अपनी कुछ समस्याएं हैं जो संविधानवाद के मार्ग में बाधा बनकर खड़ी हैं। फिर भी विकासशील देश कम या अधिक मात्रा में पश्चिमी देशों की तरह संविधानवाद का पोषण कर रहे हैं। विकासशील देशों के संविधानवाद को समझने के लिए इन देशों की समस्याओं को समझना बहुत आवश्यक है।

भारत में संविधानवाद

भारत एक विकासशील देश है। भारत में संविधानवाद पाश्चात्य व साम्यवादी संविधानवाद का मिश्रित रूप है। भारत ने संसदीय प्रजातन्त्र को विरासत के रूप में अपनाया है। भारत में यह व्यवस्था अन्य विकासशील देशों की तुलना में अधिक सफल रही है। भारत के संविधानवाद में कानून का शासन, मौलिक अधिकारों, स्वतन्त्रता व समानता



का आदर्श, स्वतन्त्र व निष्पक्ष न्यायपालिका, राजनीतिक शक्ति का पृथक्करण, निश्चित अवधि के बाद चुनाव, राजनीतिक दलों की व्यवस्था, प्रैस की स्वतन्त्रता, सामाजिक बहुलवाद आदि द्वारा सीमित सरकार व उत्तरदायी सरकार की परम्परा का निर्वाह किया गया है। इस दृष्टि से भारत में संविधानवाद उदारवादी पाश्चात्य लोकतन्त्र के काफी निकट है। इसी तरह भारत में साम्यवादी संविधानवाद के समाजवादी तथ्यों को भी अपनाया गया है। भारत में जनकल्याण को बढ़ावा देने के लिए उत्पादन व वितरण के साधनों पर सार्वजनिक स्वामित्व की व्यवस्था की गई है। अतः भारत का संविधानवाद मिश्रित प्रकृति का है और विकसित अवस्था में है। इस प्रकार विकासशील देशों में भारत को छोड़कर संविधानवाद अभी निर्माण के दौर में है। धीरे धीरे कई विकासशील देशों में स्वच्छ संवैधानिक परम्पराएं विकसित हो रही हैं। होवार्ड रीगिन्स का कथन सत्य है कि “राज्य नए हैं और राजनीतिक खेल के नियम प्रवाह में हैं इसलिए संविधानवाद अभी सुस्थिर नहीं हो सका है।” आज विकासशील देश संविधानवाद की वास्तविकताओं से काफी दूर है। भारत की तरह आज बर्मा, इण्डोनेशिया, नाइजीरिया, श्रीलंका आदि विकासशील देशों में संविधानवाद की लोकतन्त्रीय परम्पराएं विकसित हो रही हैं।

2.4.7 ब्रिटेन का संविधान (Constitution of UK)

1. ब्रिटिश संविधान की परिभाषा (Definition of British Constitution)

ब्रिटिश संविधान का निर्माण एक निश्चित समय अथवा किसी गठित संविधान सभा द्वारा नहीं किया गया था और न ही कभी इसे एक प्रारूप में लेख किया गया। अतः इसकी एक निश्चित परिभाषा देना एक कठिन कार्य है।

- **ओगा और जिंक Ogga and Zink** के अनुसार— “ ब्रिटिश संविधान सिद्धान्तों और आचरणों का एक समूह है , जो एक सहस्र वर्ष के इतिहास व उनका अवलोकन करने पर ही एकत्र किए जा सकते हैं , जिसमें कोई कानून कहीं मिलता है , तो कोई न्यायिक निश्चय किसी अन्य स्थान पर । जिसमें राजनीतिक आचरणों को सर्वमान्य परम्पराओं व रीतियों में प्रतिष्ठित देखा जाता है। इसके अतिरिक्त विधि निर्माण, शासक वित्त, न्याय और निर्वाचन यंत्र के आन्तरिक भाग को देखना पड़ता है कि य अतीत में किस प्रकार थे और वर्तमान में किस प्रकार कर रहे हैं।”
- **चार्ल्स डिकेन्स Charies Dicken** के अनुसार—“हम अंग्रेजों को अपने संविधान पर गर्व है । यह ईश्वर की देन है। इस सम्बन्ध में अन्य किसी देश पर इसकी कृपा नहीं हुई है।”
- **लिटन स्ट्रेची Lyton Stracheys** के अनुसार—“ब्रिटिश संविधान अवसर ;संयोगद्ध व बुद्धि (विवेक) की संतान है।”
- **मुनरो Munro** के अनुसार—“इंग्लैण्ड का संविधान विभिन्न संस्थाओं, आदेशों और व्यवहारों का विचित्र मिश्रण है, राजपत्रों (Charters) न्यायिक निर्णयों, सामान्य विधि (Common law) पूर्वोदाहरणों



(Precedents), प्रथाओं तथा परम्पराओं का मिश्रण है इसमें कोई एक अभिलेख, क्वबनउमदजद्ध न होकर हजारों अभिलेख सम्मिलित हैं। उनके पूर्व-योग व संयोग को ही ब्रिटिश संविधान कहा जाता है। अर्थात् इसको किसी एक निश्चित स्रोत से न लेकर अनेक साधनों व स्थानों से लिया गया है। यह कोई पूर्णतः प्राप्त वस्तु न होकर विकसित वस्तु है। यह बुद्धिमत्ता एवं संयोग की संतान है, जिसका मार्गदर्शन कहीं आकस्मिकता ने और कहीं कोटि की योजनाओं ने किया है

- **जार्ज बर्नार्ड के अनुसार**— ब्रिटेन में संविधान नहीं क्योंकि यह कहीं भी लिखा हुआ नहीं है और न ही इसमें कोई संशोधन किया जा सकता है क्योंकि यह संविधान कहीं भी लेखध्व ही नहीं है।

ब्रिटिश संविधान का अर्थ और परिभाषों को जाने के बाद हम यह कह सकते हैं कि ब्रिटिश संविधान ब्रिटेन की प्रथाओं और परम्पराओं का एक सम्मिलित रूप है जो लिखित नहीं है।

2. ब्रिटेन के संविधान के निर्माणक तत्त्व (Making Elements of British Constitution)

ब्रिटिश संविधान वस्तुतः स्वाभाविक रूप में विकसित होना वाला संविधान है, जो शनैः शनैः विकसित हुआ है विकास की इस प्रक्रिया में अनेक तत्वों ने मिलकर अंग्रेजी संविधान को उसका आधुनिक रूप प्रदान किया है।

(1) संवैधानिक समझौते (Constitutional Agreements):— “संवैधानिक समझौते व समझौते हैं, जो इंग्लैण्ड के राजा व वहाँ की प्रजा में ऐस समयों पर हुए, जब राजा ने आपनी शक्ति का दुरुपयोग किया और जनता ने अपने अधिकारों के लिए आन्दोलन किये।” परिणामस्वरूप इन समझौतों में राजा की शक्ति व प्रजा की अधिकारों की परिभाषा करने का प्रयत्न किया है। वस्तुतः इंग्लैण्ड का ‘लोकतन्त्रीकरण’ अधिकांशतः इन्हीं समझौतों के माध्यम से हुआ है। यह समझौते संवैधानिक चरण (Constitutional Landmarks) कहे जाते हैं, क्योंकि उनके द्वारा लोकतन्त्रीकरण के प्रगति पथ के उन स्थलों का बोध होता है, जिनसे इंग्लैण्ड ‘लोकतन्त्रीय व्यवस्था’ की ओर अग्रसर होता गया। सन् 1215 का ‘मैग्नाकार्टा’ (Magna Carte of 1215) सन् 1628 का ‘पिटिशन ऑफ राइट्स’ (Petition of Rights of 1628) तथा 1689 का ‘बिल ऑफ राइट्स’ (Bill of Rights of 1689) आदि इनमें मुख्य हैं।

(2) संवैधानिक कानून (Constitution laws):— अंग्रेजी संविधान का विकास संसद द्वारा बनाये गये संवैधानिक कानूनों के द्वारा भी हुआ है। यहां की संसद ने समय-समय पर अनेक कानून बनाये हैं, निका सम्बन्ध देश के प्रशासित ढाँचे के संचालन, मताधिकार को व्यापक बनाने, लार्ड-सभा की शक्ति को सीमि करने और जनता की स्वतन्त्रताओं का निर्धारण करने में रहा है। सन् 1832, 1867 व 1884 के ‘रिफार्म एक्ट (Reform Acts)’, सन् 1689 के ‘हैबियस कोर्पस’ (Habeas Corpus) एक्ट, सन् 1716 के ‘सेप्टीनियल’ (Septennial) एक्ट, सन् 1872 के ‘पार्लियामेन्ट एण्ड म्यूनिसिपल इलेक्शन एक्ट’, सन् 1911 व 1949 पार्लियामेन्ट एक्ट और सन् 1918 के ‘रिप्रेजेंटेशन ऑफ दी पीपुल एक्ट’ जैसे अनेक संवैधानिक कानून इस श्रेणी में आते हैं।



(3) न्यायिक व्याख्याएँ व कानूनी टीकाएँ (Judicial Interpretations and Legal Commentaries):—

न्यायाधीशों ने भी अंग्रेजी संविधान के निर्माण में सदा से योगदान दिया है। न्यायाधीशों ने अपने निर्णयों में 'संवैधानिक कानूनों' की व्याख्या की है। वकीलों ने भी के संविधान पर टीकाएँ लिखी है और संविधान की धाराओं के क्षेत्र की परिभाषा व उसकी आलोचना की है। संसद को इस प्रकार संविधान के रूप में परिमार्जित करने में उन्होंने अपना योगदान दिया है।

(4) सामान्य कानून (Common Law) :- संविधान का निर्माण न्यायिक निर्णयों के द्वारा भी हुआ है। न्यायाधीशों ने अपने निर्णयों में ऐसे अनेक सिद्धान्तों का प्रतिपादन किया है, जिन्होंने समय बीतने पर कानून जैसी महत्ता प्राप्त कर ली है। इन सिद्धान्तों व नियमों की कोई संहिता नहीं बनी है और इन्हें देश की संसद द्वारा पारित नहीं किया गया है, फिर भी न्यायालय उन्हें मान्यता देते हैं। यदि उनका उल्लंघन होता है तो उनके विषय में न्यायालयों में निभायेग चलाया जा सकता है। उल्लंघन करने वाले को दण्डित किया जाता है।

(5) संवैधानिक अभिसमय या परम्परायें (Constitutional Conventions) :- संवैधानिक अभिसमयों में वे अलिखित व असंग्रहित रिवाज, प्रथाएँ तथा लोगों के अभ्यास सम्मिलित होते हैं, जो प्रत्येक देश के शासन के संचालन के लिए बड़े महत्त्व के होते हैं। 'अभिसमय' संसद के कानून की तरह लिखित रूप में नहीं होते, वरन् उनका रूप एक ऐसी अलिखित संहिता जैसा होता है, जिसका पालन करना सरकार के लिए नैतिक रूप से आवश्यक होता है। न्यायालय उन्हें मान्यता नहीं देता। यदि किसी अभिसमय का उल्लंघन हो, तो उस रूप निर्धारण होता है, सुनियोजित व्यवस्थापन द्वारा ही अस्तित्व में आये हैं।

3. ब्रिटेन संविधान की प्रमुख विशेषतायें (Major Characteristics of British Constitution)

ब्रिटिश संविधान का अपना एक निराला स्वरूप है। यह दुनिया को सबसे प्राचीनतम और एकमात्र अलिखित संविधान है। अनेक राजनीतिक प्रथाओं का इससे प्रादुर्भाव हुआ है। इसके द्वारा राजनीतिक क्षेत्र में अनेक प्रकार से विश्व का पथ-प्रदर्शन हुआ है। सर्वशक्तिशाली संसद, उत्तरदायी मन्त्रिमण्डल, द्वि-सदनात्मक व्यवस्थापिका, संवैधानिक कार्यपालिका, कानून का शासन व स्वायत्तशासन आदि ब्रिटिश संवैधानिक परम्पराओं की देन है। विश्व में प्रचलित अनेक राजनीतिक प्रथाएँ व संस्थाएँ अंग्रेजी-संविधान से विकसित हुईं व दुनिया के दूसरे देशों में फैली हैं। इस अंग्रेजी संविधान की प्रमुख विशेषताओं का विवेचन (1) संवैधानिक आलेख के रूप में, (2) राजनीतिक प्रणाली के रूप में, तथा (3) अधिकार-पत्र के रूप में अग्रलिखित प्रकार किया जा सकता है :-

1. संवैधानिक आलेख के रूप में अंग्रेजी संविधान की व्याख्या:- संवैधानिक आलेख के रूप में अंग्रेजी संविधान में निम्न विशेषतायें दिखाई देती हैं



(1) **अलिखित संविधान**—अंग्रेजी संविधान की एक प्रमुख विशेषता उसका अलिखित होता है। पर ऐसा कहने मात्र से उसकी वास्तविकता हमारे समक्ष नहीं आती। संविधान वस्तुतः एक ऐसी तकनीक मात्र होती है जिससे गाज

(2) **विकसित संविधान**—अंग्रेजी संविधान को बनाने के लिये कभी किसी 'संविधान सभा' का आयोजन नहीं किया गया। वह तो अंग्रेजी समाज के विकास के साथ-साथ विकसित हुआ है तथा उसका वर्तमान स्वरूप शताब्दियों के विकास का परिणाम है। यही कारण है कि उसे इतिहास का उत्पादन 'अथवा' परिस्थितियों की कृति 'कहा जाता है। अंग्रेजी संविधान का विकास बिना पूर्व-योजना के अवसर आने पर आवश्यकतानुकूल भी हुआ है और नियोजित ढंग से भी हुआ है। अनेक परम्पराएँ, जो अंग्रेजी संविधान के अभिन्न अंग हैं, किसी योजनाबद्ध ढंग से अस्तित्व में नहीं आयी हैं, वरन् परिस्थितियों के कारण विकसित हुई हैं। इसका अर्थ यह नहीं है कि अंग्रेजी संविधान में चिन्तन व आयोजन के तत्व का पूर्ण अभाव है। संसद के वे अनेक कानून, जिनके द्वारा वहाँ के संविधान का रूप निर्धारण होता है, सुनियोजित व्यवस्थापन द्वारा ही अस्तित्व में आये हैं।

(3) **सिद्धान्त तथा व्यवहार का अन्तर (Difference Between Theory and Practice)**—अंग्रेजी संविधान की सर्वाधिक महत्वपूर्ण विशेषता यह है कि उसके संविधान में सैद्धान्तिक तथा व्यावहारिक रूप में अन्तर पाया जाता है। इंग्लैण्ड के संवैधानिक जीवन में पायी जाने वाली कतिपय अवास्तविकताएँ निम्नलिखित हैं:—

(i) इंग्लैण्ड में 'राजतंत्र' है, यह बात अंग्रेजी संविधान की सबसे प्रमुख अवास्तविकता है। क्योंकि वास्तव में वहाँ 'राजतंत्र' न होकर 'लोकतंत्र' हैं। सिद्धान्त: वहाँ राजा का प्रभुत्व है, जब कि वास्तव में वहाँ जनता संप्रभु है और 'वास्तविक संप्रभुता' का प्रतिक राजा (King) न होकर मुकुट (Crown) है। मुकुट प्रशासन की 'संस्था' है, जबकि राजा, प्रशासन का व्यक्तिगत 'प्रतीक' है। मुकुट की शक्ति वास्तविक है, जब कि राजा की शक्ति नाम मात्र की है। राजा व मुकुट की स्थिति के इस भेद का कारण वहाँ की शासन-प्रणाली के सैद्धान्तिक पहलु वह व्यावहारिक पहलु में पाया जाने वाला अन्तर है। सैद्धान्तिक रूप से राजा यद्यपि सर्वशक्तिमान है, तथापि व्यवहार में वह केवल वैधानिक प्रमुख है। सिद्धान्त: संसद व मन्त्रिमण्डल केवल 'परामर्शदात्री संस्थाएँ' हैं और राजा उनके परामर्श को मानने के लिए पूर्ण स्वतंत्र है, पर व्यवहार में ये संस्थाएँ ही सर्वशक्तिमान हैं।

(ii) इंग्लैण्ड शासन व्यवस्था में शक्ति का पृथक्करण पाया जाता है, क्योंकि वहाँ की कानून निर्माण की शक्ति—संसद में, कार्यपालक शक्ति—मन्त्रिमण्डल में व न्यायापालक शक्ति—न्यायापालिका में निहित है। इंग्लैण्ड में व्यवस्थापक, कार्यपालिका व न्यायापालिका शक्तियाँ सरकार के तीनों अंगों में पृथक् पृथक् निहित हैं, वहाँ के संविधान की अवास्तविकता एक उत्तम उदाहरण है, जबकि वास्तविकता यह है कि वहाँ शासन की शक्ति पूर्णतः केन्द्रीभूत है।

(iii) विद्वानों की यह मान्यता भी वास्तविकता पर आधारित नहीं है 'इंग्लैण्ड में संसद की सर्वोच्चता है।' डायसी की ऐसी ही मान्यता है उन्होंने कहा है कि "संसद की सर्वोच्चता का पहला प्रमाण यह कि उसकी कानून-निर्माण



संबंधी शक्ति अपरिमित है और उस पर कोई कानूनकी प्रतिबंध नहीं है। वह किसी भी विषय के सम्बन्ध में कानून बना सकती है और पूर्ववर्ती संसदों के किसी भी कानून को संशोधित अथवा पूर्णतः समाप्त कर सकती है। दूसरा प्रमाण यह कि अंग्रेजी संसद साधारण व संवैधानिक दोनों प्रकार के कानूनों को साधारण बहुमत में बदल सकती है व पारित कर सकती है। तीसरा प्रमाण इस सम्बन्ध में यह कि इंग्लैण्ड में 'न्यायिक समीक्षा' (Judicial Review) की व्यवस्था नहीं है। वहाँ न्यायपालिका को इस बात का अधिकार नहीं है कि संसद द्वारा पारित कानूनों की वैधानिकता अथवा अवैधानिकता के प्रश्न पर विचार कर सके और अवश्यक समझे, तो उन्हें अवैध घोषित कर सके। संसद की यह सर्वोच्चता वास्तविक नहीं है, वरन् यह अंग्रेजी संविधान की अवास्तविकता का एक उदाहरण है। वास्तविक रूप से वहाँ मन्त्रिमण्डल सर्वोच्च शक्तिमान है, जो अपने बहुमत के सहारे वहाँ की संसद पर हावी रहती है।

(4) लचीलापन (Flexibility) :- संवैधानिक आलेख के रूप में अंग्रेजी संविधान की एक अन्य विशेषता यह है कि वह एक 'लचीला संविधान' है। 'लचीला संविधान' उस संविधान को कहा जाता है, जिसका संशोधन सामान्य प्रक्रिया द्वारा किया जा सके, जिस प्रक्रिया द्वारा साधारण कानून का संशोधन किया जाता है। इंग्लैण्ड में संवैधानिक व साधारण, दोनों प्रकार कानूनों का एक-सा स्तर है। दोनों प्रकार के कानूनों का संशोधन 'सामान्य कानून निर्माण प्रक्रिया' द्वारा किया जा सकता है। मैरियट (Marriot) के अनुसार अंग्रेजी संविधान में लचीलापन इसलिए और भी अधिक है कि औपचारिक संशोधनों के बिना भी उसमें संशोधन हो सकता है। परम्पराओं के परिवर्तनों द्वारा संविधान में जो संशोधन होते हैं, वे ऐसे ही संशोधन होते हैं, क्योंकि उनके द्वारा किसी भी औपचारिक कानून सम्बन्धी संशोधन के बिना ही शासन का संवैधानिक ढाँचा बदल जाता है।

(5) विधि का सामन:- ब्रिटेन विधि के शासन के लिये विश्व विख्यात है क्योंकि विधि के शासन की न सिर्फ यहीं से शुरुआत हुई अपितु अपने श्रेष्ठतम अर्थ में वह ब्रिटेन में ही लागू है। विधि के शासन का अर्थ है – सामान्य कानून की सर्वोच्चता। डायसी ने 'दि ला ऑफ कॉस्टीट्यूशन' (1885) में विधि के शासन के तीन अर्थ बताये हैं:-

- सामान्य कानून की सर्वोच्चता: देश में सामान्य कानून ही सर्वोच्च है, जिस पर किसी स्वेच्छाचारी शक्ति का प्रभाव नहीं है। प्रत्येक व्यक्ति केवल कानून द्वारा ही शासित है।
- कानून के समक्ष समानता: कानून के समक्ष सब व्यक्ति एक समान हैं चाहे उनकी सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक हैसियत कुछ भी हो। सबके लिए एक ही कानून है।
- स्वयं संविधान कानून की देन है: इंग्लैण्ड में नागरिक अधिकारों का स्रोत सामान्य कानून है जो न्यायिक निर्णयों के द्वारा लागू है। वहाँ विधान स्वयं ही इन निर्णयों-कानूनों के परिणामस्वरूप विकसित हुआ है।

(6) एकात्मक संविधान:- ब्रिटिश संविधान एकहरा संविधान है। यह न सिर्फ संपूर्ण ग्रेट ब्रिटेन के लिये एक है, अपितु यह इकहरी नागरिकता, एक ही कानून आदि को सुनिश्चित करता है।



(7) **नागरिक अधिकार:**— ब्रिटेन का संविधान नागरिकों को अनेक अधिकार प्रदान करता है जैसे दैहिक स्वतंत्रता, सभा-सम्मेलन की स्वतंत्रता, शस्त्रधारण करने की स्वतंत्रता, विचार अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता इत्यादि ।

(8) **एकात्मक राज्य:**— ब्रिटेन का संविधान संपूर्ण ब्रिटेन को संघ के स्थान पर “एकात्मक राज्य” घोषित करता है। इसमें संपूर्ण शक्ति केंद्र सरकार में निहित मानी जाती है और वह अपनीशासन सुविधा के लिये क्षेत्रीय इकाइयां, स्थानीय सरकार आदि का गठन और विघटन कर सकती है ।

(9) **द्वि-दलीय राजनीतिक व्यवस्था:**— ब्रिटेन ने संसदीय प्रजातंत्र को अपनाते हुए भी बहुदलीय के स्थान पर द्वि-दलीय व्यवस्था को अपनाया है । यहां अनुदार दल (कंजर्वेटिव पार्टी) और मजदूर दल (लेबर पार्टी) नामक दो दलों का अस्तित्व है ।

इस कहा प्रकार जा सकता है कि यूनाइटेड किंगडम का संविधान उन सभी कानूनों एवं सिद्धान्तों के समुच्चय को कहते हैं जिसके अन्तर्गत यूनाइटेड किंगडम का शासन चलता है। ब्रिटिश संविधान दुनिया का एक मात्र ऐसा संविधान है, जिसका निर्माण न तो किसी योजनानुसार हुआ है और न ही इसे कभी लेखबद्ध किया गया है। ब्रिटिश संविधान एक लम्बे समय के ऐतिहासिक विकास का परिणाम है। ब्रिटिश संविधान वास्तव में एक विकासशील संविधान है। समय तथा परिस्थितियों ने इस में बहुत सी नई परम्पराएं डाल दी हैं। अन्य देशों के संविधान पूर्णतः लिखित रूप में हैं किन्तु यूके का कोई मूल संवैधानिक दस्तावेज (अर्थात् संविधान) नहीं है। ब्रिटिश संविधान को सभी “संविधानों की जननी” कहा जाता है क्योंकि सबसे पुराने इस संविधान ने बाद के सभी संविधानों के लिए मार्गदर्शक का काम किया । राजतंत्र वादी ब्रिटेन में ही आधुनिक विश्व की पहली प्रजातांत्रिक शासन प्रणाली अस्तित्व में आयी । कुलीनवाद से प्रेरित रहे ब्रिटेन में राजतंत्र के रहते हुए भी प्रजातांत्रिक संस्थाओं और प्रतिनिधिक शासन का विकास हुआ और अलिखित ब्रिटिश संविधान पर राजतंत्र, कुलीनतंत्र और जनतंत्र तीनों का असर आया ।

2.4.8. स्विट्जरलैण्ड का संविधान (Constitution of Switzerland)

स्विट्जरलैण्ड के संविधान का जो वर्तमान रूप हम देखते हैं कि वह लम्बे विकास का परिणाम है। 1 अगस्त 1221 ऐसा ऐतिहासिक दिन है, जब स्विट्जरलैण्ड के संवर्ग (Confederation) का जन्म हुआ था। उस दिन उरी (Uri), श्वेत (Schwyz) व अण्टरवाल्डेन (Unterwalden) नाम अल्पाइन (Alpine) की घाटियों के लोगों में एक सन्धि हुई थी। उन्होंने आपस में यह समझौता किया था कि बाह्य आक्रमण से अपनीरक्षा व सम्मिलित रूप से करेंगे। फ्रांस की क्रान्ति से पूर्व संवर्ग में 13 स्वतन्त्र राज्य सम्मिलित थे, जिनकी इच्छा यह थी कि सम्मिलित सुरक्षा का प्रबन्ध किया जाय । संवर्ग के तहत कैण्टनो की सरकारें भिन्न-भिन्न प्रकार की थी उरी (Uri), स्वेज (Schwayz), अण्टरवाल्डेन (Unterwalden), जोन्ग (Zong), ग्लौस (Glaus) व अपैन्जेले (Appenzele), इन छह राज्यों में पूर्ण लोकतन्त्र था, और उनमें राजसत्ता का प्रयोग नागरिकों की एक सभा द्वारा किया जाता था, जिसका नाम



लैण्ड्सजेमिनाइड (Landsgemenide) था। ल्यूसर्न (Lucerne), बर्न (Berne), फ्राइबर्ग (Friburg) व सोल्यूर (Soleure), इन चार में शहरी कुलीनतन्त्र (Urban Aristocracies) व्यवस्था थी। ज्यूरिक (Zurich), बैसिल (Basle) व स्कैफहौसिल (Schaffhausen) के तीन कैण्टनों में व्यापारिक अल्पतन्त्र (Commercial Oligarchies) थी।

इस संवर्ग में कई दोष थे। इसका रूप छोटे राष्ट्र संघ (League of Nation) जैसा था। संघ की कोई सेना भी नहीं थी। इसका कोई बजट भी नहीं बनता था। सभी कैण्टन अपने-अपने में पूर्ण स्वतन्त्र थे। संवर्ग की एकमात्र राजनीतिक संस्था डायट (Diet) थी। वह एक अत्यन्त कमजोर संस्था थी। उसकी कार्यप्रणाली भी ऐसी थी कि प्रत्येक निर्णय के लिए सर्वसम्मति होना आवश्यक था। इसके परिणामस्वरूप यह कोई काम नहीं कर सकती थी। उसके निर्णय सब कैण्टनों पर लागू नहीं हो सकते थे, क्योंकि व्यवस्था ऐसी थी कि जिन कैण्टनों की स्वीकृत से व निर्णय किये जाते थे, उन्हीं पर वे लागू होते थे।

सन् 1798 में सेना ने देश पर आक्रमण किया और उस पर अधिकार कर लिया। स्विट्जरलैण्ड के सभी निवासियों को उसका मुकाबला करने के लिए एक होना पड़ा। तत्काल एक नये शासन की स्थापना हुई और एक नया संविधान बनाया गया, जिसे स्वीकार करने के लिए स्विट्जरलैण्ड को बाध्य होना नड़ा। नये संविधान द्वारा हैल्वेटिक गणतन्त्र (Helvetic Republic) की स्थापना की गयी और इसमें यह घोषणा की गयी कि वह गणतन्त्र “एक व अविभाज्य” होगा जैसा ओक्सली ने कहा है, “उसमें एक बात पर जोर दिया गया कि देश की एकता की समृद्धि का आवश्यक आधार है। नागरिकों की समष्टि में सर्वोच्च शक्ति को निहित किया गया और वह घोषणा की गयी कि स्विज राज्य का भावी रूप प्रतिनिध्यात्मक लोकतन्त्र का होगा।” अल्पतन्त्रों को उखाड़ा फेंका गया। अधीन प्रदेश को मुक्त कर दिया गया और कुछ लोगों को जो सुविधाएँ मिली हुई थी वे समाप्त कर दी गयीं। सब कैण्टन केन्द्रीय सरकार के प्रशासनिक क्षेत्र बना दिये। सीनेट (Senate) और ग्राण्ड कोन्सिल (Grand Council) नाम के दो सदनों की एक राष्ट्रीय व्यवस्थापिका की स्थापना की व्यवस्था भी संविधान में की गयी। कार्यपालिका की शक्तियों की एक ऐसी संचालन समिति (Directory) में निहित की गयी, जिसका निर्वाचन व्यवस्थापिका के दोनों सदनों द्वारा किया जाता था। भाषण, धर्म, व्यापार व प्रेस आदि के महत्वपूर्ण अधिकारों की सुरक्षा की व्यवस्था में भी क्रान्तिकारी परिवर्तन किये गये। डायट (Diet) ने ज्यूरिच में सन् 1814 में एक संविधान बनाया जिसका पुष्टिकरण सन् 1815 के पेरिस समझौते (Pact of Paris) के रूप में वियना की कांग्रेस द्वारा किया गया। इसके द्वारा शासन के उस रूप को बनाये रखने की कैण्टनों को अनुमति दे दी गयी, जो उनमें पुराने संविधान के अनतर्गत प्रचलित था। फ्रांस के अधिकार से मुक्त किये हुए तीन कैण्टनों को भी नये संघ का सदस्य बनाया गया, जिनमें वलाइस (Valais), न्यू-चटेल (New Chatel) व जिनेवा (Geneva) थे। इस प्रकार फिर पहले ही स्थिति स्थापित की दी



गयी। जुलाई, 1830 में फ्रांस में क्रान्ति हुई। स्विट्जरलैण्ड में भी प्रगतिशील तत्वों जोर पकड़ा। कैण्टनों ने अपने-अपने कैण्डनों की सरकारों के समक्ष माँग-पत्र रखा, जिलसमें माँग की गयी थी कि व्यवस्थापिका के लिए प्रत्यक्ष निर्वाचन हो, प्रेस की स्वतन्त्रता प्राप्त हो, आपने अधिकारों के लिए सरकार के समक्ष प्रार्थना करने की स्वतन्त्रता हो तथा सबको सम्पत्ति का अधिकार प्राप्त हो।

1. स्विट्जरलैण्ड के संविधान की मुख्य विशेषताएँ (Main Characteristic of Switzerland's Constitution):—

1. **निर्मित व लिखित संविधान:**— जैसा कि संवैधानिक विकास से स्पष्ट है कि स्विट्जरलैण्ड में लिखित संविधान की दीर्घ परम्परा रही है तथा 1815 के पश्चात् यह चौथा संविधान है। इससे पूर्व 1874 का संविधान 126 वर्ष तक रहा।
2. **अचल संविधान:**— आलेख रूप में स्विट्जरलैण्ड से संविधान की एक अन्य विशेषता यह है कि वह एक अचल (Rigid) संविधान है। अचलता के सम्बन्ध में वह अमेरिका के संविधान से अधिक लचीला और भारत के संविधान कुछ अधिक अचल है। स्विट्जरलैण्ड के संविधान में सन् 1848 से 57 संशोधन हो चुके हैं। अचलता के होते हुए भी स्विट्जरलैण्ड के संविधान में आवश्यक संशोधन होते रहे हैं। यह स्पष्ट है कि उसकी अचलता उसकी प्रगति में बाधन सिद्ध नहीं हुई है। स्विट्जरलैण्ड के संविधान में वस्तुतः जो कुल अचलता है, वह संविधान के संघीय रूप की रक्षा के लिए आवश्यक है।
3. **कठोर संविधान:**— इस देश का संविधान कठोर है जिसमें संशोधन करने की रीति 'साधारण विधि-निर्माण' से है। फिर भी यह संविधान उतना कठोर नहीं है जितना कि अमेरिकी का। यही कारण है कि जहाँ स्विस् संविधान में 145 वर्षों में ही 57 संशोधन हुए हैं कि वहाँ अमेरिकी संविधान में 200 वर्षों में 27 संशोधन ही हुए हैं। स्विस् संविधान की कठोरता से उसकी संघात्मकता की रक्षा होती है। इस संविधान में परिस्थितियों के अनुरूप ढलने की अपूर्ण क्षमता भी है।
4. **विशिष्ट संघात्मक स्वरूप:**— स्विस् संविधान का संघात्मक स्वरूप विशिष्टता लिए हुए है इस विशिष्टता के निम्नांकित लक्षण हैं—

(i) नई इकाइयों को संघ में सम्मिलित करने की भी संविधान में कोई व्यवस्था नहीं है।

(ii) संघवाद की सम्प्रभुता पर आधारित है, वहाँ स्विज संविधान में कोई व्यवस्था नहीं है।

(iii) स्विस् संघीय व्यवस्था में संविधान की सर्वोच्चता है, केन्द्र और कैण्टनों के मध्य शक्ति-विभाजन की व्यवस्था भी है, किन्तु न्यायपालिका को विधियों को अवैध घोषित करने, संविधान की व्याख्या करने तथा न्यायिक पुनरावलोकन को कोई अधिकारी प्राप्त नहीं है। न्यायाधीशों का निर्वाचन एक नियत अवधि के लिए व्यवस्थापिका द्वारा किया जाता है। न्यायपालिका को सांविधानिक विवादों को तय करने का भी कोई अधिकार प्रदान नहीं किया



गया। स्विज संविधान सांस्कृतिक संघ की भी स्थापना करता है। उसमें विविध भाषाएँ, धर्म ओ सस्कृतियाँ एक राष्ट्र क रूप में समाहित हो गई हैं। संविधान में चारों भाषाओं को 'राज्य-भाषा' का स्तर प्रदान किया गया है और सभी नागरिकों को अपने धर्म-पालन की पूरी स्वतन्त्रता है। राज्य का रूप भी 'धर्म-निरपेक्ष' है। स्विट्जरलैण्ड में दोहरी नागरिकता प्रचलित है। प्रत्येक नागरिक अपने कैण्टन का तथा संघ का अथवा राज्य-मण्डल का नागरिक है।

5. **गणतन्त्रवादी स्वरूप:-** स्विज संविधान का स्वरूप गणतन्त्रात्मक है। जनता में ही प्रभुसत्ता निहित है। राज्य का प्रधान, प्रत्यक्ष चुनाव के आधार पर निर्वाचित होता है। संविधान के छठे अनुच्छेदों में कैण्टनों को गणतन्त्रीय स्वरूप देने और अपनी संस्थाओं को गणतन्त्रीय ढंग पर निर्मित करने का उल्लेख है। संविधान में कुलीनतन्त्रीय और ऐसी ही अन्य प्रवृत्तियों को रोकने का समुचित प्रबन्ध किया गया है।
6. **प्रत्यक्ष लोकतन्त्र:-** स्विट्जरलैण्ड प्रत्यक्ष लोकतन्त्र का श्रेष्ठतम उदाहरण है। शासन के प्रत्येक कार्य में जनता प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप से अवश्य भाग लेती है। जनता की इच्छा का निर्माण नीचे से ऊपर की ओ हुआ है। कैण्टनों से अधिक महत्त्व कम्यूनों का है और संघ से अधिक महत्त्व कैण्टनों का है। संविधान में जनता द्वारा संशोधन किया जाता है। स्विज संविधान में अन्य संविधानों की अपेक्षा स्वतन्त्रता और समानता पर विशेष बल दिया गया है, यहाँ तक कि सभी मन्त्री भी परस्पर स्वतन्त्रा और समान हैं। स्विट्जरलैण्ड में 'व्यस्क मताधिकार' का प्रयोग मतदाताओं की मर्जी पर ही नहीं छोड़ दिया गया है, अपितु कुछ कैण्टनों में उसे अनिवार्य बना दिया गया है और यदि कोई मतदाता अपने मत का प्रयोग नहीं करता तो उसे जुर्माना देना होता है। स्त्रियाँ पहले मताधिकार से वंचित थी, किन्तु 8 फरवरी 1971 से उनको भी मताधिकार प्राप्त हो गया है। इस प्रकार अब 20 वर्ष की आयु प्राप्त स्त्री-पुरुष को मताधिकार प्राप्त है। स्विज लोग यह उपयुक्त नहीं समझते कि स्त्रियाँ राजनीति में भाग लें।
7. **बहुल कार्यपालिका:-** स्विज कार्यपालिका, जो संघीय परिषद् (Federal Council) कहलाता है। यह व्यवस्थापिका के दोनों सदनों द्वारा निर्वाचित सात सदस्यों से मिलकर बनती है। बहुत कार्यकारिणी के सभी सदस्यों की शक्तियाँ समान हैं। अध्यक्ष भी अन्य सदस्यों के समान स्तर को होता है। सभी सदस्य बारी-बारी से अध्यक्ष बनते हैं। स्विज कार्यपालिका इस दृष्टि से भी अनोखी है कि उसमें उत्तरदायित्व और स्थायित्व दोनों के गुण विद्यमान हैं। एक ओर व्यवस्थापिका के प्रति उत्तदायी है तथा दूसरी ओर व्यवस्थापिका द्वारा हटायी नहीं जा सकती। मन्त्रीगण वेतन भोगी असैनिक सेवकों की तरह हैं, जो व्यवस्थापिका की आज्ञानुसार काम करते हैं।
8. **संसदीय व अध्यक्षीय शासन:-** प्रणालियों का समन्वय-स्विज संसदीय व्यवस्था अनेक दृष्टियों से विलक्षण है।
 - (i) स्विज शासन-व्यवस्था न पूरी तरह संसदीय है और न पूरी तरह अध्यक्षीय है।



- (ii) शासन का प्रमुख राष्ट्रपति भी है और प्रधानमंत्री भी, तथा नाम-मात्र का शासन प्रमुख भी है और वास्तविक शासन प्रमुख भी।
- (iii) स्विस् कार्यपालिका संसद में से ली जाती है, संसदीय कार्यवाही में भाग लेती है तथा संसद के प्रति उत्तरदायी भी होती है, किन्तु संसद के अविश्वास के फलस्वरूप उसे त्याग-पत्र नहीं देना पड़ता।
- (iv) स्थायित्व की दृष्टि से स्विस् शासन 'अध्यक्षात्मक' है, किन्तु शक्तियों का पृथक्करण नहीं पाया जाता। कार्यपालिका और व्यवस्थापिका दोनों एक-दूसरे पर निर्भर है।
- (v) मंत्रीगण, संसदीय व्यवस्था की तरह, उत्तरदायित्व और पारस्परिक सहयोग की भावना कसे काम करते हैं, किन्तु सामूहिक उत्तरदायित्व के नाम पर उन्हें अपनी आत्मा का बलिदान नहीं करना पड़ता। वे न केवल मन्त्रिमण्डल वरन् संसद की बैठकों में भी अपना स्वतंत्र मत व्यक्त कर सकते हैं। ;अपद्ध स्विस् व्यवस्थापिका द्विसदनीय है और दोनों सदनों के अधिकार बराबर हैं।

9. **मूल अधिकार:-** संविधान लोकतन्त्रीय व्यवस्था होते हुए भी पूर्व संविधानों में नागरिकों के लिए पृथक् से अधिकार-पत्र की व्यवस्था नहीं की गई थी यद्यपि विभिन्न स्थानों पर मूल अधिकारों की चर्चा की गई थी। नवीन संविधान इस कमी को पूरा करता है। संविधान के प्रथम अध्याय में 7वें व 35वें अनुच्छेद तक मौलिक अधिकारों का वर्णन किया गया है। मानवीय सम्मान, समानता तथा किसी भी प्रकार के भेद-भाव के विरुद्ध सुरक्षा का आश्वासन अनुच्छेद 7 तथा 8 में दिया गया है। अनुच्छेद 9 राज्य की निरंकुशता के विरुद्ध नागरिकों को सुरक्षा प्रदान करता है।

अनुच्छेद 10 जीवन तथा निजी स्वतन्त्रताका अधिकार, 11 बच्चों व युवा लोगों की सुरक्षा, 12 संकट में सहायता, 13 वैयक्तिक गोपनीयता तथा 14 परिवार व विवाह का अधिकार प्रदान करते हैं। इसी प्रकार संविधान में निम्न स्वतन्त्रताओं का वर्णन भी किया गया है। इसमें धर्म की, सूचना प्राप्त करने की, संचार के साधनों की, विज्ञान व कला की, शिक्षा प्राप्त करने की, सभा करने व संगठन बनाने की व आर्थिक गतिविधियों की स्वतन्त्रता सम्मिलित है। संविधान का अनुच्छेद 29 इन अधिकारों की सुरक्षा के लिए कानूनी कार्यवाही की व्यवस्था करता है। अपने अधिकारों की रक्षा के लिए नागरिक न्यायालय की शरण में जा सकता है। प्रत्येक नागरिक को अधिकार है कि उसके अधिकारों के उल्लंघन की समुचित जाँच न्यायालय द्वारा की जाए। अनुच्छेद 31 – यह सुरक्षा प्रदान करता है कि बिना समुचित कानूनी कार्यवाही के व्यक्ति की स्वतन्त्रता का हनन नहीं किया जाएगा। अनुच्छेद 35 में व्यवस्था की गई है कि सम्पूर्ण विधि व्यवस्था के द्वारा नागरिकों के मौलिक अधिकारों की रक्षा की जाएगी। राज्य को अधिकारी अपने कार्यों में इस बात का ध्यान रखेंगे कि नागरिकों के मौलिक अधिकारों का उल्लंघन नहीं होता है। स्विट्जरलैण्ड का संविधान नागरिकों के मौलिक



अधिकारों को निरपेक्ष नहीं मानता है। अनुच्छेद 36 मूल अधिकारों पर सीमाओं की चर्चा करता है तथा वह व्यवस्था है कि किसी मूल अधिकार को सीमित करने के लिए कानूनी आधार का होना अवश्यक है।

किसी मूल अधिकार को तभी सीमित किया जा सकता है जब ऐसा करना या तो सार्वजनिक हित में है अथवा अन्य लोगों के मूल अधिकारों की रक्षा के लिए ऐसा करना जरूरी हो। इस प्रकार मूल अधिकारी निरपेक्ष नहीं है। इस प्रकार नागरिक के मूल अधिकारों का विस्तृत वर्णन नवीन को पुराने संविधान की तुलना में श्रेष्ठ बनाता है तथा संविधान की एक महत्वपूर्ण कमी को पूरा करता है। भारतीय अथवा अमेरिकी संविधानों विपरीत स्विस संविधान में स्विट्जरलैण्ड के संविधान किसी भी औपचारिक अधिक-पत्र का अभाव है। फि भी बहुत से अनुच्छेद सम्पूर्ण प्रलेखों में बिखरे पड़े हैं, जो नागरिकों को अनेक महत्वपूर्ण अधिकार प्रदान करते हैं। अनुच्छेद 4 के अनुसार सब लोग कानून की दृष्टि से समान हैं। अनुच्छेद 27 यह व्यवस्था करता है कि कैण्टनों के स्कूलों में धर्म-रिपरेक्षता के साथ प्रारम्भिक शिक्षा प्राप्त करने की सबको सुविधा होगी। अनुच्छेद 31 में नागरिकों को व्यापार व्यवसाय के व्यापक अधिकार दिए गए हैं। अनुच्छेद 44 में कहा गया है कि किसी भी स्विस नागरिक को संघ या अपने जन्म की कैण्टन की सीमा से बाह निर्वासित नहीं किया जाएगा। अनुच्छेद 49 के अन्तर्गत सबको धर्म और पूजा की स्वतन्त्रता प्राप्त है। अनुच्छेद 25 द्वारा प्रेस एवं प्रकाशन सम्बन्धी स्वतन्त्रता प्रदान की गई है, बशर्ते कि इसका दुष्योग न किया जाए। अनुच्छेद 56 नागरिकों को समुदाय बनाये की स्वतन्त्रता और अनुच्छेद 57 याचिका प्रस्तुत करने का अधिकार देता है, अनुच्छेद 60 द्वारा स्विस नागरिकों को यह अधिकार दिया गया है कि वे किसी भी कैण्टन में स्वतन्त्रतापूर्वक निवास कर सकेंगे और उनके साथ कोई भेद-भाव नहीं होगा। अधिकारों के साथ ही संविधानों में नागरिकों के कुछ कर्तव्यों का उल्लेख किया गया है, यथा—राज्य के प्रति भक्ति, कानूनों का अनुपालन और सैनिक सेवा। नागरिक अपने अधिकारों को लागू करवाने के लिए 'संघीय न्यायाधिकरण' में अपील कर सकते हैं।

10. **समाजवादी दर्शन पर आधाति संविधानः—** स्विस संविधान पर उदारवादी दर्शन का ही प्रभाव है। इस संविधान का मूल दर्शन यही है कि नागरिकों को सभी क्षेत्रों में अधिकतम स्वतन्त्रता प्राप्त और राज्य हस्तक्षेपवादी नीति पर कम से कम चलें।
11. **विभिन्नता में एकता का प्रतीकः—**स्विस संविधान 'विविधता में एकता' को प्रोत्साहन देने वाला और जनता के व्यावहारिक दृष्टिकोण को प्रतिबिम्बित करता है। स्विट्जरलैण्ड इतना छोटा देश है। इतना छोटा देश होते हुए भी इसमें जति, भाषा और धर्म का काफी विविधता है। तीन अलग-अलग भाषाएँ बोलने वाली तीन जातियाँ हैं तथा स्विस लोगों की अपनीकोई राष्ट्रभाषा नहीं है। जर्मन, फ्रेंच और इटालियन भाषाओं के अतिरिक्त 'रोमांश' नामक आदि भाषा भी स्विट्जरलैण्ड की राज्यभाषा है।
12. **संघीय क्षेत्र में न्यायिक पुनरावलोकन का अभाव(Absence of Judicial Review in Federal Sphere) :—** स्विस संविधान, न्यायपालिका को न्यायिक पुनरावलोकन का अधिकार केवल आंशिक रूप में ही देता है। स्विस



सर्वोच्च न्यायालय, जिसे 'संघीय न्यायाधिकरण' कहा जाता है, कैबिनेटों के नानूनों और प्रशासनिक कार्यों को तो अवैध घोषित कर सकता है, पर संघीय व्यवस्थापिका द्वारा निर्मित कानून अथवा संघीय प्रशासन के कार्यों को अवैध घोषित नहीं कर सकता। स्पष्ट है कि स्विस् संघीय न्यायपालिका को संविधान की क्षा को कार्य नहीं सौंपा गया है। यह कार्य स्वयं जनता द्वारा किया जाता है, क्योंकि जनता लोक-निर्णय के अन्तर्गत संघीय व्यवस्थापिका के किसी कानून को अवैध ठहा सकती है।

13. **धर्म निरपेक्ष राज्य (Secular State) :-**स्विस् संविधान की धारा 49 व 50 में सभी नागरिकों को धर्म व पूजा सम्बन्धी स्वतन्त्रता दी गई है। धारा 51 में जस्यूट्स धर्मावलम्बियों पर प्रतिबन्ध है।
14. **शक्ति-पृथक्करण के सिद्धान्त का अभाव (Lack of Principle of Separation of Powers) :-** स्विस् संविधान में अमेरिकी संविधान की भाँति ही 'शक्ति-पृथक्करण' के सिद्धान्त को नहीं अपनाया गया है। वहाँ सारी शक्ति के अंतिम उपभोक्ता वहाँ के कैबिनेट और नागरिक है। स्विस् विधानमण्डल का कार्यपालिका पर पूर्ण अधिकार है।
15. **प्रशासनिक कानून पर आधारित न्यायपालिका (Judiciary Based on Administrative Law) :-** स्विस् संविधान इंग्लैण्ड की भाँति कानून के शासन 'की स्थापना न कर प्रशासकीय कानून' की व्यवस्था करता है। प्रशासकीय कानून की व्यवस्था के अन्तर्गत जन-साधारण तथा प्रशासनिक कर्मचारियों के लिए पृथक्-पृथक् कार्यालय होते हैं। स्विस् संविधान और स्विस् चरित्र की यह विशेषता है कि यहाँ प्रशासकीय कानून की व्यवस्था ने न्याय - व्यवस्था को आघात नहीं पहुंचाया है। स्विट्जरलैण्ड में प्रशासकीय कानून और न्यायिक व्यवस्था नागरिक अधिकारों और स्वतन्त्रताओं की रक्षा की है।

इस प्रकार कहा जा सकता है कि स्विस् संविधान संसदीय तथा अध्यक्षात्मक शासन प्रणालियों का संयोग है। यह संघात्मक शासन प्रणाली के गुण भी रखता है। यह स्विट्जरलैण्ड को प्रत्यक्ष प्रजातन्त्र घोषित करता है। अपनी मौलिक तथा अनूठी विशेषताओं के कारण आज पिस संविधान विश्व के उदारवादी प्रजातन्त्रीय देशों के लिए एक आदर्श प्रस्तुत करता है।

2.4.9. चीन का संविधान (Constitution of Switzerland)

जनवरी, 1953 में 'माओत्से तुंग' की अध्यक्षता में चीन के जनवादी गणराज्य के लिए संविधान का प्रारूप तैयार करने हेतु एक समिति नियुक्त की गई। इस समिति द्वारा तैयार किये गये संविधान के प्रारूप को 14 जून, 1954 को स्वीकार कर लिया गया। 20 सितम्बर, 1954 को 'राष्ट्रीय जन कांग्रेस' की बैठक में संविधान के प्रारूप को अन्तिम रूप से मानकर लागू कर दिया गया। 1975 में स्वीकृत संविधान के 20 वर्षों तक कार्य करने के पश्चात् चीन में नये संविधान के निर्माण की आवश्यकता अनुभव की गई। चीन-सोवियत संघ संघर्ष, 1996 की सांस्कृतिक क्रांति तथा चीन में चलने वाले सत्ता-संघर्ष को इस संविधान की पृष्ठभूमि में देखा जा सकता है। 19 जनवरी, 1975 को



चीन की 'चतुर्थ राष्ट्रीय जनवादी कांग्रेस' ने देश के लिए इस नवीन संविधान की स्वीकृति प्रदान की। 1975 ई. में जनवादी चीन के लिए नया संविधान स्वीकार किया गया था, और केवल 3 वर्षों के बाद ही पंचम 'राष्ट्रीय जनवादी कांग्रेस' द्वारा एक और नये संविधान को अंगीकार किया गया। 5 मार्च, 1978 को 'राष्ट्रीय जन कांग्रेस' द्वारा इस नवीन संविधान को अंगीकार किया गया। 4 दिसम्बर, 1982 को जनवादी चीन के राष्ट्रीय ने एक बार पुनः नये संविधान को स्वीकार किया, जिसे '1982 का संविधान' या 'वर्तमान संविधान' की संज्ञा दी जाती है। देश के सर्वकालिक शक्तिशाली नेता माओत्सेतुंग के देहावसान के बाद देश में जो नवीन परिस्थितियाँ उत्पन्न हुई, उनके परिप्रेक्ष्य में इस संविधान को अंगीकार किये जाने का विशेष महत्त्व है।

इस संविधान की मुख्य विशेषताओं को निम्नलिखित रूप में विश्लेषित किया जा सकता है :—

1. **लिखित संविधान (Written Constitution)** — जनवादी चीन का संविधान एक 'लिखित संविधान' है। इसमें 138 अनुच्छेद हैं। संविधान की प्रस्ताव का भी उल्लेख किया गया है। सारे संविधान को चार अध्यायों में विभाजित किया गया है। संविधान में शासन-व्यवस्था के स्वरूप पर प्रकाश डाला गया है। नवीन संविधान पूर्ववर्ती संविधान की तरह ही एक लिखित दस्तावेज है।
2. **पूर्व संविधान की तुलना में व्यापक संविधान (It's Wider Constitution in Comparison in Previous Constitution)** :—1982 का जनवादी चीन का संविधान पूर्ववर्ती संविधानों की तुलना में व्यापकता लिए हुए है। जहाँ 1954 के संविधान में 105 अनुच्छेद, 1975 के संविधान में 30 अनुच्छेद तथा 1978 के संविधान में 60 अनुच्छेद थे, वहाँ 1982 के संविधान में 138 अनुच्छेद हैं, जो उसकी व्यापकता का परिचायक हैं। इसके बावजूद भी जनवादी चीन का संविधान भारतीय संविधान की तुलना में कहीं अधिक छोटा या संक्षिप्त स्वरूप लिए हुए है।
3. **लचीला संविधान (Flexible Constitution)** :—संविधान के अनुच्छेद 64 में 'संशोधन प्रक्रिया' का उल्लेख किया गया है, जिसके अनुसार संविधान में संशोधन का प्रस्ताव राष्ट्रीय जनवादी कांग्रेस सभी स्थायी समिति द्वारा या राष्ट्रीय जनवादी कांग्रेस के 115 सदस्यों द्वारा प्रस्तावित किया जाना चाहिए तथा यह प्रस्ताव राष्ट्रीय जनवादी कांग्रेस के कुल सदस्यों के 2/3 बहुमत या दो-तिहाई बहुमत से स्वीकृत होना चाहिए। इस प्रावधान से सिद्ध है कि यह प्रतीत होता है कि यह 'संविधान संशोधन प्रणाली' दुष्परिवर्तनशील है। लेकिन व्यवहार में ऐसा नहीं है। जनवादी चीन जैसा एकदलीय व्यवस्था में राष्ट्रीय जनवादी कांग्रेस के दो-तिहाई बहुमत को प्राप्त करना कोई कठिन कार्य नहीं है। अतः यह एक लचीला संविधान ही माना जायेगा।
4. **नागरिकों के मूल-अधिकार तथा कर्तव्य (The Fundamental Rights and Duties of The Citizens)** :— पूर्ववर्ती संविधान की तरह ही 1982 के संविधान में भी चीनी नागरिकों के मूल-अधिकारों का उल्लेख किया गया है। इस संविधान के अध्याय 2 तथा अनुच्छेद 33 से 56 तक इनके उल्लेख किया गया है। प्रमुख



मूल-अधिकारों में चुनाव लड़ने तथा मत देने का अधिकार, धार्मिक विश्वास की स्वतन्त्रता, कानून के समक्ष समानता, आलोचना करने का अधिकार, शिक्षा पाने का अधिकार, विश्राम तथा अवकाश पाने का अधिकार, काम पाने या रोजगार प्राप्त करने का अधिकार, व्यवस्था तथा शारीरिक अक्षमता की स्थिति में भरण-पोषण करने का अधिकार तथा पुरुषों के समान ही महिलाओं के अधिकारों को मान्यता जैसे अधिकारों को मान्यता दी गई है। सिद्धान्त में तो ये मूल-सिद्धान्त में तो ये मूल-अधिकार पाश्चात्य लोकतान्त्रिक व्यवस्थाओं में नागरिकों को प्राप्त मूल-अधिकारों से भी अधिक व्यापकता लिए हुए हैं, लेकिन व्यवहार में साम्यवादी दल की तानाशाही के सम्मुख ये अर्थहीन ही प्रतीत होनते हैं। जब भी लोकतान्त्रिक अधिकारों के लिए जनता ने आवाज उठाई, उसे बुरी तरह से कुचल दिया गया। अतः इन मूल-अधिकारों का केवल सैद्धान्तिक तथा प्रतीकात्मक महत्त्व है। जनवादी चीन का यह नया संविधान नागरिकों के लिए विभिन्न मौलिक कर्तव्यों (Fundamental Duties) की भी व्यवस्था करता है। इन मूल-कर्तव्यों में राष्ट्रीय एकता और अखण्डतरा को बनाये रखने संविधान तथा देश की विधि का पालन करने, मातृभूमि की सुरक्षा करने तथा उसकी प्रतिष्ठा को अक्षुण्ण रखने तथा उसकी रक्षा के लिए सैनिक सेवा प्रदान करने तथा भुगतान करने को सम्मिलित किया गया है। यहाँ उल्लेखनीय है कि संविधान मूल-अधिकारों के स्थान पर मूल-कर्तव्यों पर अधिक बल देता है।

5. **जन-सम्प्रभुता तथा जनवादी गणतन्त्र (Popular Sovereignty People's Republic):**—1982 संविधान में जन-सम्प्रभुता के सिद्धान्त को स्थान देकर देश में 'जनवादी गणतन्त्र' की स्थापना की गई है। इसका मूल सार यह है कि देश की अन्तिम शक्ति तथा सत्ता जनता में निहित है जो 'राष्ट्रीय जन कांग्रेस' के माध्यम से अपनी शक्ति या सत्ता का प्रयोग करती है। इस तरह संविधान में जन-सम्प्रभुता को मान्यता दी गई है। इसका अर्थ यह है कि शासन की अन्तिम शक्ति साम्यवादी जनता में निहित है।
6. **साम्यवादी दल की केन्द्रीय भूमिका(The Central Role of The Communist Party):**—साम्यवादी सिद्धान्तों के अनुरूप जनवादी चीन में साम्यवादी दल को शासन-व्यवस्था की धुरी बताया गया है। यद्यपि साम्यवादी दल को शान-व्यवस्था के केन्द्रीय स्थान प्रदान किया गया है। इस तथ्य का पता इस बात से ही लगता है कि संविधान की प्रस्तावना में ही साम्यवादी दल की भूमिका की प्रशंसा की गई है। देश की अनन्य सभी संस्थाएँ—कार्यपालिका, व्यवस्थापिका तथा न्यायपालिका साम्यवादी दल के अधीन रहकर ही कार्य करते हैं। साम्यवादी दल ही सब कुछ है, साम्यवादी दल के बाहर कुछ नहीं।
7. **एकात्मक राज्य (Unitary State) :**—पूर्ववर्ती संविधानों की तरह ही 1982 के संविधान में भी जनवादी चीन को 'एकात्मक राज्य' (Unitary State) बनाया गया है। जिसका आशय यह है कि देश की शासन-व्यवस्था एक ही 'केन्द्र या इकाई' द्वारा संचालित होती है। शासन का सुचारु रूप से संचालन करने की दृष्टि से सम्पूर्ण देश को 4 इकाइयों में विभाजित किया गया है। इन इकाइयों की पृथक् से कोई शक्ति



नहीं है, इन्हें द्वारा शक्तियाँ प्रदान की जाती हैं। इस तरह से चीन में 'संघात्मक व्यवस्था' के आदर्श को अस्वीकार किया गया है।

8. **समाजवादी राज्य (Socialist State):**—नया संविधान जनवादी चीन में 'सामाजवादी राज्य (Socialist State)' की स्थापना करता है। देश में 'सामाजवादी अर्थ-व्यवस्था' के सिद्धान्त को स्वीकार किया गया है। यद्यपि कुछ वर्षों से देश में 'मिश्रित अर्थ-व्यवस्था' (Mixed Economy) की ओर रुझान बढ़ता जा रहा है। चीन की अर्थव्यवस्था भी विश्व व्यापी उदारीकरण की प्रक्रिया से अप्रभावित नहीं रह सकी है।
9. **लोकतान्त्रिक अधिनायकत्व (People's Dictatorship):**—संविधान का प्रथम अनुच्छेद ही जनवादी चीन में 'लोकतान्त्रिक अधिनायकत्व' या तानाशाही का प्रतिपादन करता है। इसमें किसानों और श्रमिकों के अधिनायकत्व या तानाशाही को मान्यता दी गई है ये पूँजीपतियों तथा जमींदारों पर अपना अधिनायकत्व स्थापित करके लोकतान्त्रिक व्यवस्था को अक्षुण्ण रखते हैं।
10. **राष्ट्रीय पद की पुनर्स्थापना (Re-establishment of the Office of the President):**—1978 के संविधान में राष्ट्रपति पद को समाप्त कर दिया गया था, लेकिन 1982 के प्रस्तावित संविधान में इस पद को पुनर्स्थापित किया गया। राष्ट्रपति को नजवादी चीन के 'राष्ट्रध्यक्ष' का दर्जा प्रदान किया गया। राष्ट्रपति के साथ-साथ उप-राष्ट्रपति पद की भी पुनर्स्थापना की गई।
11. **मार्क्सवाद, लेनिनवाद तथा माओवाद (Marxism, Leninism and Maoism):**—जनवरी चीन के नये संविधान में मार्क्सवाद, लेनिनवाद तथा माओवाद के सिद्धान्तों को स्थान दिया गया है, और ये सिद्धान्त इस संविधान के वैचारिक आधार (Ideological Basis) हैं।
12. **बहु-राष्ट्रीय राज्य की स्थापना (Establishment of the Multi National State) :**— जनवादी चीन एक विशाल देश है, जिसमें विविध प्रकार की राष्ट्रियताओं का निवास है। यहां कुल 56 राष्ट्रीयताओं के लोग निवास करते हैं। नवीन संविधान में इन राष्ट्रीयताओं को अपनीभाषा, लिपि तथा संस्कृति के विकास करने की स्वतन्त्रता प्रदान की गई है।
13. **केन्द्रीय सैनिक आयोग की स्थापना (The Establishment of the Central Military Commission) :**— 1982 के इस नवीन संविधान में केन्द्रीय सैनिक आयोग की स्थापना की गई है। इस आयोग की मुख्य उत्तरदायित्वा देश की सेवाओं को बांधित निर्देश देना है। नवीन संविधान में यह एक नूतन प्रवृत्ति है। पूर्ववर्ती संविधानों में इस प्रकार की कोई व्यवस्था नहीं थी।
14. **न्यायपालिका की कमजोर स्थिति (The Weak Position of the Judiciary) :**— नजवादी चीन के इस नवीन संविधान में न्यायपालिका की स्थिति बहुत कमजोर है। इसे न तो संविधान की व्याख्या करने का ही अधिकार है, और न ही यह नागरिकों के मूल अधिकारों की ही रक्षा कर सकती है। जनवादी चीन की



न्यायपालिका को संविधान विरोधी कानूनों को निरस्त करने का भी अधिकार प्राप्त नहीं है। किसीभी देश की न्यायपालिका को संविधान की व्याख्या करने, नागरिकों के मूल अधिकारों की रक्षा करने तथा संविधान विरोधी कानूनों को निरस्त किये जाने सम्बन्धी अधिकार प्रदान किये जाते हैं, जिनमें जनवादी चीन की न्यायपालिका को संचित किया जाना इसकी कमजोर स्थिति का स्पष्ट परिचायक है। न्यायपालिका के स्वतन्त्र अस्तित्व को भी स्वीकार नहीं किया गया है, और इसे देश की संसद अर्थात् राष्ट्रीय न कांग्रेस के प्रति उत्तरदायी बना दिया गया है।

15. विदेश नीति के सिद्धान्त का समावेश (Including of the Principles of Foreign Policy):—

जनवादी चीन के इस नवीन संविधान में देश की विदेश नीति के मूल सिद्धान्तों का समावेश किया गया है। इन मूल सिद्धान्त का समावेश किया गया है। इन मूल सिद्धान्तों में – साम्राज्यवाद तथा उपनिवेशवाद का विरोध, शान्तिपूर्ण सह-अस्तित्व, राष्ट्रीय हितों का संरक्षण, पंचशील के सिद्धान्त तथा विश्व शान्ति जैसे सिद्धान्तों का समावेश किया गया है पूर्ववर्ती संविधानों में इस प्रकार का कोई स्पष्ट उल्लेख नहीं किया गया था।

उपरोक्त विवेचन के बाद कहा जा सकता है कि चीन का संविधान एकात्मक शासन प्रणाली की स्थापना करता है तथा चीन में समाजवादी राज्य व अर्थव्यवस्था पर जोर दिया गया है। सिद्धान्त तौर पर वहां संविधान सर्वोच्च कानून है और सरकार के विभिन्न अंगों में शक्तियों का बंटवारा भी किया गया है, लेकिन व्यवहार में साम्यवादी दल ही चीनी लोगों के जीवन का नियन्ता है। सिद्धान्त में सरकार की जो शक्तियां हैं, व्यवहार में उनका प्रयोग साम्यवादी दल के सदस्यों द्वारा ही किया जाता है। चीन में न्यायपालिका को न्यायिक पुनरावलोकन की शक्ति प्राप्त नहीं है। चीन में नागरिक अधिकारों की बजाय कर्तव्यों पर अधिक जोर दिया गया है। सत्य तो यह है कि आधुनिक उदारवाद के दौर में भी चीनी संविधान व्यवहार में साम्यवादी दल की तानाशाही के सिवाय कुछ नहीं है।

2.4.10 अमेरिका का संविधान (Constitution of America)

संयुक्त राज्य अमेरिका का संविधान, संयुक्त राज्य अमेरिका का सर्वोच्च कानून है। 'नई दुनिया' की स्वतंत्रता की घोषणा के उपरांत जिस संविधान का निर्माण हुआ उसने न सिर्फ अमेरिकी जनता और राष्ट्र को एक सूत्र में बांधा बल्कि विश्व के समक्ष एक आदर्श भी स्थापित किया। अमेरिकी संविधान विश्व का पहला लिखा हुआ संविधान है जिसमें राज्य के स्वरूप, नागरिकों के अधिकार शक्तियों के पृथक्करण का सिद्धान्त तथा न्यायिक पुनरावलोकन जैसे पहलू शामिल हैं। अमेरिका का संविधान एक लिखित संविधान है। सन् 1789 में लागू होने से लेकर आज तक यह बदलते परिवेश व आवश्यकताओं के अनुरूप निरन्तर परिवर्तित तथा विकसित होता रहा है। चार्ल्स ए. बीयर्ड के मतानुसार " अमेरिका का संविधान एक मुद्रित दस्तावेज है जिसकी व्याख्या न्यायिक निर्णयों, पूर्व घटनाओं और व्यवहारों द्वारा की जाती है और जिसे समझ और आकांक्षाओं द्वारा आलोकित किया जाता है। 17 सितंबर 1787 में,



संवैधानिक कन्वेंशन फिलाडेल्फिया (पेनसिलवेनिया) और ग्यारह राज्यों में सम्मेलनों की पुष्टि के द्वारा संविधान को अपनाया गया था। यह 4 मार्च 1789 को प्रभावी हुआ।

1. संविधान की विशेषताएँ

1. संयुक्त राज्य अमेरिका के संविधान की उद्देशिका में कहा गया कि यह संविधान "संयुक्त राज्य की जनता" ने तैयार किया है।
2. अमरीकी संविधान को सामान्यतया लिखित संविधान के क्लासिकीय उदाहरण के तौर पर प्रस्तुत किया जाता है। वास्तव में यह दुनिया के मौजूदा लिखित संविधानों में सबसे पुराना है।
3. **संघीय संविधान**—अमरीकी संविधान संघीय राज्य को निर्दिष्ट करता है। वास्तव में आधुनिक विश्व में संयुक्त राज्य अमेरिका सबसे पहला और सबसे पुराना संघीय राज्य है। यह 50 राज्यों (प्रारंभ में 13) और कोलंबिया जनपद से निर्मित एक संघीय गणराज्य है। संविधान में संघीय (केंद्रीय) सरकार और राज्य सरकारों के बीच अधिकारों के विभाजन का प्रावधान किया गया है। इसमें केंद्र को सीमित और विशिष्ट अधिकार दिए गए हैं और शेष अधिकारों को (संविधान में जिनको स्पष्ट नहीं किया गया है) राज्यों के पास रखा गया है। प्रत्येक राज्य का अपना संविधान, निर्वाचित विधायिका, राज्यपाल और सर्वोच्च न्यायालय होता है।
4. **अध्यक्षात्मक सरकार**—ब्रिटिश संविधान के विपरीत अमरीकी संविधान में सरकार के अध्यक्षतात्मक रूप का प्रावधान है। अमरीका की अध्यक्षतात्मक प्रणाली की निम्न विशेषताएँ हैं:
 - अमरीकी राष्ट्रपति राज्य और सरकार दोनों का प्रमुख होता है। राज्य प्रमुख के रूप में उसका पद औपचारिक होता है किंतु सरकार प्रमुख के रूप में वह सरकार के कार्यकारी अंग का नेतृत्व करता है। संयुक्त राज्य अमेरिका का राष्ट्रपति प्रमुख वास्तविक कार्यकारी होता है।
 - राष्ट्रपति का चुनाव चार वर्ष के लिए एक निर्वाचन मंडल द्वारा किया जाता है। कांग्रेस द्वारा उसके विरुद्ध किसी गंभीर असंवैधानिक कार्यवाही के लिए महाभियोग लगाए बिना उसे हटाया नहीं जा सकता है।
 - राष्ट्रपति शासन कार्य मंत्रिमंडल या एक छोटे निकाय जिसे 'किचेन' केबिनेट कहते हैं, की सहायता से करता है किंतु यह केवल परामर्शदायी निकाय होता है और इसके विभागों के अनिर्वाचित सचिव होते हैं। उनका चयन और नियुक्ति राष्ट्रपति के द्वारा की जाती है और वे केवल उसी के प्रति उत्तरदायी होते हैं। वह उनको किसी भी समय हटा सकता है।



- राष्ट्रपति और उसके सचिव अपने कार्यों के लिए कांग्रेस के प्रति उत्तरदायी नहीं होते । वे न तो कांग्रेस के सदस्य होते हैं और न ही इसके अधिवेशनों में भाग लेते हैं। राष्ट्रपति कांग्रेस के निचले सदन अर्थात् प्रतिनिधि सभा को विघटित नहीं कर सकता ।
5. **शक्तियों का विभाजन:**—शक्तियों के विभाजन का सिद्धांत अमरीका की संवैधानिक प्रणाली का आधार है—। विधायिका, कार्यकारिणी और न्यायिक शक्तियां अलग-अलग हैं और वे सरकार के तीन स्वाधीन अंगों के पास होती हैं । संविधान की यह विशिष्टता इस की तीन प्रथम धाराओं में स्पष्ट रूप से प्रदर्शित होती है । धारा 1 के अनुसार इस धारा के अंतर्गत प्रदत्त तमाम विधायी अधिकार कांग्रेस में निहित होंगे । धारा 2 का प्रावधान है कि कार्यकारी अधिकार राष्ट्रपति में निहित होंगे । धारा 3 के अनुसार कार्यकारी अधिकार राष्ट्रपति में निहित होंगे । धारा 3 कहती है कि न्यायिक अधिकार सर्वोच्च न्यायालय तथा दूसरे निचले न्यायालयों में निहित होंगे जिनको कांग्रेस समय-समय पर नियुक्त और स्थापित कर सकती है।
6. **परीक्षण और संतुलन:**—अमरीकी संविधान में नियंत्रण और संतुलन की प्रणाली शक्तियों के विभाजन के सिद्धांत को अपनाने की देन है । परीक्षण और संतुलन की प्रणाली सरकार के प्रत्येक अंग को दूसरे अंग पर आंशिक नियंत्रण लागू करने में सक्षम बनाती है, जिससे कि कोई अंग निरंकुश और अनुत्तरदायी न बने। इसका अर्थ है कि इसके अपने क्षेत्र में भी सरकार का कोई भी अलग असीमित शक्तियां नहीं रख सकता है। अमरीकी संवैधानिक प्रणाली में परीक्षण और संतुलन की प्रणाली की कार्य पद्धति के कुछ पक्ष निम्न हैं:
- कांग्रेस द्वारा पारित विधेयकों को राष्ट्रपति वीटो कर सकता है । उसके पास दो तरह के वीटो होते हैं—जेबी-वीटो और निलम्बलीय वीटो ।
 - राष्ट्रपति द्वारा की गई उच्चस्तरीय नियुक्तियों तथा अंतर्राष्ट्रीय संधियों का अनुमोदन सीनेट करती है।
 - न्यायपालिका के संगठन और पुनर्विचार क्षेत्राधिकार का निर्धारण कांग्रेस द्वारा किया जाता है ।
 - न्यायाधीशों की नियुक्ति सीनेट की सहमति से राष्ट्रपति करता है ।
 - कांग्रेस द्वारा बनाए गए कानूनों तथा राष्ट्रपति के आदेशों को सर्वोच्च न्यायालय अधिकारातीत घोषित कर सकता है ।
7. **संविधान की सर्वोच्चता और न्यायिक पुनर्विचार :** अमरीकी संविधान “कानूनों के सोपान तंत्र” के सिद्धांत को साकार करता है । लिखित संविधान को देश के सर्वोच्च (अथवा मूलभूत) कानून के रूप में स्वीकार किया जाता है । कांग्रेस तथा राज्य विधायिकाओं के अधिनियम इस सर्वोच्च कानून के अनुरूप होने चाहिए । अगर ये अधिनियम संविधान के प्रावधानों के विरुद्ध हैं तो सर्वोच्च न्यायालय द्वारा उनको अधिकारातीत घोषित किया जा सकता है, जिसके फलस्वरूप वे अप्रभावी एवं रद्द हो जाएंगे । इस प्रकार न्यायिक पुनर्विचार के अपने अधिकारों के द्वारा सर्वोच्च न्यायालय संविधान के अभिरक्षक के रूप में काम



करता है। अधिकार पत्र (Bill of Rights): अधिकार पत्र प्रदान करने के मामले में अमरीकी संविधान दुनिया का पहला संविधान है। यह अपने नागरिकों को अनेक अधिकारों की गारंटी देता है। इसके अनुसार न्यायिक प्रक्रिया के बगैर किसी भी व्यक्ति को उसके जीवन, स्वतंत्रता और संपत्ति से वंचित नहीं किया जा सकता है। ये अधिकार सरकार की सत्ता को नियंत्रित करते हैं। न्यायिक पुनर्विचार के अपने अधिकारों के द्वारा सर्वोच्च न्यायालय इन अधिकारों के रक्षक का काम करता है। अधिकार पत्र को मूल संविधान में 1791 में संविधान के पहले 10 संशोधनों के द्वारा जोड़ा गया था।

8. **द्विसदनी पद्धति:** अमरीका की संघीय विधायिका, जिसे कांग्रेस कहा जाता है, द्विसदनी है, अर्थात् इसके दो सदन हैं— सीनेट और प्रतिनिधि सभा (House of Representatives)। ऊपरी सदन को 'सीनेट' और निचले सदन को 'प्रतिनिधि सभा' कहते हैं। सीनेट में 100 सदस्य होते हैं— जिनमें प्रत्येक राज्य 2 से 6 वर्ष की निश्चित अवधि के लिए चुने गए 2 सदस्य शामिल होते हैं जबकि प्रतिनिधि सभा में 435 सदस्य होते हैं जिनमें से प्रत्येक एक सदस्य वाले निर्वाचन क्षेत्र से 2 वर्ष की निश्चित अवधि के लिए चुना हुआ होता है। कांग्रेस का अधिक शक्तिशाली सदन सीनेट है। वास्तव में अमरीकी सीनेट दुनियाभर के उच्च सदनो में सर्वाधिक शक्तिशाली है।
2. **अमेरिकी संविधान की रचना को प्रभावित करने वाले तत्व एवं कारक :-** स्वतंत्रता के पश्चात राष्ट्र निर्माण को पूर्णता तक पहुंचाने के लिए, विषमरूपी तथा बहुलवादी विभिन्न रीति-रिवाज से युक्त समाज को एकसूत्र में बांधने हेतु संविधान की जरूरत थी। इतना ही नहीं जिन मुद्दों को लेकर उपनिवेशों ने क्रांति की थी उन्हें भी संविधान के माध्यम से दूर किया जाना था। निम्नलिखित तत्वों एवं कारकों ने संविधान की रचना को प्रभावित किया—
 1. **देश को गणतंत्र का स्वरूप प्रदान करना :-** विश्व के अनेक देशों में उस काल में राजतंत्रात्मक शासन प्रणाली थी और संसद की मौजूदगी के बावजूद भी राजा निरंकुश हो जाता था। फलतः नागरिक स्वतंत्रता बाधित होती थी। उसको दूर करने के लिए जरूरी था कि एक गणतंत्रात्मक सरकार का गठन हो इसलिए अमेरिका संविधान में गणतंत्र के स्थापना की बात की गई।
 2. **संघीय व्यवस्था को अपनाया जाना :-** क्रांति के दौरान सभी तरह अमेरिकी उपनिवेशों ने निर्धारित लक्ष्य की पूर्ति के लिए एकजुट होकर कार्य किया था। अब मुद्दा यह था कि "अनेक ऐ एक" (One out of many) कैसे हुआ जाए। इस आवश्यकता की पूर्ति के लिए संघीय शासन प्रणाली की स्थापना की गई। राज्यों के समान हितों की रक्षा के लिए जो महासंघ अस्तित्व में आया उसे 'नाम' दिया गया। महासंघ की स्थापना से तेरहों उपनिवेश एकता के सूत्र में बंध गए और हर राज्य के नागरिकों को वे ही अधिकार और कर आदि से छोटे मिली जो अन्य राज्य के नागरिकों को प्राप्त थी।



3. **एक शक्तिशाली केन्द्र की स्थापना :-** एक शक्तिशाली केन्द्र की स्थापना की गई ताकि राज्य अपने निहित स्वार्थों के कारण आगे चलकर स्वतंत्र होने का प्रयास न कर सकें। दूसरी तरफ राज्यों की पहचान बनाए रखने का भी प्रावधान किया गया। यही वजह है कि अमेरिका संविधान में लिखा गया—“अविनाशी राज्यों का अविनाशी संघ”। राज्यों के आपसी विवादों तथा उनके बीच व्यापारिक संबंधों के नियमन हेतु भी एक मजबूत केन्द्र की स्थापना की गई संघीय शासन को चलाने हेतु एक राष्ट्रीय विधायिका का निर्माण किया गया जिसमें दो सदन थे—एक उच्च सदन (सीनेट) तथा दूसरा निम्न सदन (प्रतिनिधि सभा)। चूंकि स्वतंत्रता के दौरान उपनिवेशों ने प्रतिनिधित्व नहीं तो कर नहीं का नारा दिया था इस बात को ध्यान में रखते हुए सीनेट में समानता के सिद्धान्त को बनाए रखा गया और प्रत्येक राज्य से दोधो सदस्यों के चुने जाने का प्रावधान किया गया।
4. **शक्ति का पृथक्करण सिद्धान्त:-** सरकार की शक्ति किन्हीं एक हाथों में पड़कर निरंकुश न हो जाए तथा कार्यपालिका ही सर्वशक्तिमान न हो जाय और व्यक्ति की स्वतंत्रता तथा नागरिक अधिकारों का हनन न हो इसलिए संविधान में कार्यपालिका, विधायिका और न्यायपालिका के बीच शक्तियों के विभाजन का सिद्धान्त अपनाया गया।
5. **संविधान संशोधन में राज्यों की भूमिका:-**राज्यों को पर्याप्त महत्व देने हुए कानून के निर्माण में उनकी सहभागिता को महत्व देना जरूरी था। अतः संविधान संशोधन प्रक्रिया में यह प्रावधान किया गया कि प्रत्येक सदन के दो तिहाई मतों के आधार पर कांग्रेस संविधान में संशोधन का प्रस्ताव प्रस्तुत कर सकेगी या राज्यों की कुल संख्या में से दो तिहाई राज्यों की विधायिका में से आवेदन प्राप्त होने पर संशोधन प्रस्तावित करने के लिए सम्मेलन बुलाएगी।
6. **राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था को मजबूत बनाना:-**राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था को वाणिज्यिक सौदागरों के चंगुल से मुक्त कर एक स्वतंत्र आर्थिक नीति का निर्माण करना जरूरी था। अतः सिक्के ढालने, सरकारी नोट जारी करने, विदेशों के साथ ऋण प्राप्त करने तथा ऋणों का भुगतान करने आदि से संबंधित अधिकार संघ को दिए गए।

2.5 अपनी प्रगति जांचें (Check your progress)

1. विधान मंडल की प्रधानता, स्विट्जरलैण्ड शासन की एक प्रमुख विशेषता है ।
(अ) सत्य है (ब) असत्य है (स) दोनों (द) इनमें से कोई भी नहीं
2. ब्रिटेन.....के शासन के लिये विश्व विख्यात है ।
3. को “मुकुटधारी” गणतंत्र कहते हैं ।
4. अमरीका की संघीय विधायिका, जिसे.....कहा जाता है,



5 में साम्यवादी दल की केन्द्रीय भूमिका हैं

6 मूल सिद्धान्तों का एक समुच्चय है, जिससे कोई राज्य या अन्य संगठन अभिशासित होते हैं।

2.6 सारांश (Summary)

संविधान, मूल सिद्धान्तों का एक समुच्चय है, जिससे कोई राज्य या अन्य संगठन अभिशासित होते हैं। वह किसी संस्था को प्रचालित करने के लिये बनाया हुआ संहिता (दस्तावेज) है। यह प्रायः लिखित रूप में होता है। यह वह विधि है जो किसी राष्ट्र के शासन का आधार है उसके चरित्र, संगठन, को निर्धारित करती है तथा उसके प्रयोग विधि को बताती है, यह राष्ट्र की परम विधि है तथा विशेष वैधानिक स्थिति का उपभोग करती है सभी प्रचलित कानूनों को अनिवार्य रूप से संविधान की भावना के अनुरूप होना चाहिए यदि वे इसका उल्लंघन करेंगे तो वे असंवैधानिक घोषित कर दिए जाते हैं।

संविधानों का वर्गीकरण 3 आधारों पर किया जाता है 1.लिखित तथा अलिखित संविधान 2.लचीला तथा कठोर संविधान 3 विकसित तथा निर्मित संविधान । एक आदर्श संविधान की, लचीलापन, :संक्षिप्तता, व्यापकता, स्पष्टता तथा निश्चितता,संविधान की सर्वोच्चता, न्यायपालिका की स्वतन्त्रता,संविधान में संशोधन करने की विधि का वर्णन , मौलिक अधिकार व कर्तव्यों की घोषणा आदि विशेषताएं होती है संविधानवाद संविधान पर आधारित अवधारणा है। यह एक ऐसी राजनीतिक व्यवस्था है जिसका संचालन उन विधियों और नियमों द्वारा होता है जो संविधान में वर्णित होते हैं। संविधानवाद संविधानिक शासन का आधार व सार दोनों ही हैं। संविधानवाद उसी राजनीतिक व्यवस्था में संभव है जहां संविधान और संविधानिक सरकार दानों हों। संवैधानिक सरकार वह होती है जो संविधान की व्यवस्थाओं के अनुसार संगठित, सीमित और नियन्त्रित हो तथा व्यक्ति विशेष की इच्छाओं के स्थान पर कानून के शासन का ही पालन करती है। संवैधानिक सरकार ही संविधान को व्यवहारिक बनाती है और संविधानवाद की स्थापना करती है।

यूनाइटेड किंगडम का संविधान उन सभी कानूनों एवं सिद्धान्तों के समुच्चय को कहते हैं जिसके अन्तर्गत यूनाइटेड किंगडम का शासन चलता है। ब्रिटिश संविधान दुनिया का एक मात्र ऐसा संविधान है, जिसका निर्माण न तो किसी योजनानुसार हुआ है और न ही इसे कभी लेखबद्ध किया गया है। ब्रिटिश संविधान एक लम्बे समय के ऐतिहासिक विकास का परिणाम है। ब्रिटिश संविधान वास्तव में एक विकासशील संविधान है। समय तथा परिस्थितियों ने इस में बहुत सी नई परम्पराएं डाल दी है। अन्य देशों के संविधान पूर्णतः लिखित रूप में हैं किन्तु यूके का कोई मूल संवैधानिक दस्तावेज (अर्थात संविधान) नहीं है। ब्रिटिश संविधान को सभी “संविधानों की जननी” कहा जाता है क्योंकि सबसे पुराने इस संविधान ने बाद के सभी संविधानों के लिए मार्गदर्शक का काम किया । राजतंत्र वादी ब्रिटेन में ही आधुनिक विश्व की पहली प्रजातांत्रिक शासन प्रणाली अस्तित्व में आयी । स्विस संविधान संसदीय तथा अध्यक्षात्मक शासन प्रणालियों का संयोग है । यह संघात्मक शासन प्रणाली के गुण भी रखता है । यह



रिवट्जरलण्ड को प्रत्यक्ष प्रजातन्त्र घोषित करता है । अपनी मौलिक तथा अनूठी विशेषताओं के कारण आज पिस संविधान विश्व के उदारवादी प्रजातन्त्रीय देशों के लिए एक आदर्श प्रस्तुत करता है । संयुक्त राज्य अमेरिका का संविधान, संयुक्त राज्य अमेरिका का सर्वोच्च कानून है। 'नई दुनिया' की स्वतंत्रता की घोषणा के उपरान्त जिस संविधान का निर्माण हुआ उसने न सिर्फ अमेरिकी जनता और राष्ट्र को एक सूत्र में बांधा बल्कि विश्व के समक्ष एक आदर्श भी स्थापित किया। अमेरिकी संविधान विश्व का पहला लिखा हुआ संविधान है जिसमें राज्य के स्वरूप, नागरिकों के अधिकार शक्तियों के पृथक्करण का सिद्धान्त तथा न्यायिक पुनरावलोकन जैसे पहलू शामिल हैं। चीन का संविधान एकात्मक शासन प्रणाली की स्थापना करता है तथा चीन में समाजवादी राज्य व अर्थव्यवस्था पर जोर दिया गया है । सिद्धान्त तौर पर वहां संविधान सर्वोच्च कानून है और सरकार के विभिन्न अंगों में शक्तियों का बंटवारा भी किया गया है , लेकिन व्यवहार में साम्यवादी दल ही चीनी लोगों के जीवन का नियन्ता है । सिद्धान्त में सरकार की जो शक्तियां हैं , व्यवहार में उनका प्रयोग साम्यवादी दल के सदस्यों द्वारा ही किया जाता है । चीन में न्यायपालिका को न्यायिक पुनरावलोकन की शक्ति प्राप्त नहीं है । कांग्रेस चीन में नागरिक अधिकारों की बजाय कर्तव्यों पर अधिक जोर दिया गया है । सत्य तो यह है कि आधुनिक उदारवाद के दौर में भी चीनी संविधान व्यवहार में साम्यवादी दल की तानाशाही के सिवाय कुछ नहीं है ।

2.7 सूचक शब्द (Key Words)

- **संविधान**—संविधान, मूल सिद्धान्तों एक समुच्चय है, जिससे कोई राज्य या अन्य संगठन अभिशासित होते हैं। वह किसी संस्था को प्रचालित करने के लिये बनाया हुआ संहिता (दस्तावेज) है। यह प्रायः लिखित रूप में होता है।
- **संविधानवाद**—यह विचार कि सरकार की सत्ता संविधान से उत्पन्न होती है तथा इसी से उसकी सीमा भी तय होती है।
- **निर्मित**—जो रचा या बनाया गया हो या जिसका निर्माण हुआ हो या किया गया हो।
- **अधिनायकवाद** —तानाशाही या अधिनायकवाद (डिक्टेटरशिप) उस शासन—प्रणाली को कहते हैं जिसमें कोई व्यक्ति (प्रायः सेनाधिकारी) विद्यमान नियमों की अनदेखी करते हुए डंडे के बल से शासन करता है।
- **न्यायिक पुनरावलोकन**—उस प्रक्रिया को कहते हैं जिसके अन्तर्गत कार्यकारिणी तथा विधायिका के कार्यों की न्यायपालिका द्वारा पुनरीक्षा का प्रावधान हो।
- **अवधारणा**— सुविचारित धारणा। किसी विषय में मन में होने वाला कोई विचार या मत।

2.8 स्वयं मूल्यांकन हेतु प्रश्न (Self Assessment Questions)

1. लिखित संविधान के गुण कौन-कौन से हैं ?



2. अलिखित संविधान के गुण कौन-कौन से हैं
3. कठोर और लचीले संविधानों का भेद क्या है ?
4. ब्रिटेन संविधान की प्रमुख विशेषताये लक्षण क्या है ?
5. अमेरिकी संविधान की विशेषताएँ क्या है ?
6. स्विट्जरलैण्ड के संविधान की मुख्य विशेषताएँ कौन-कौन सी है ?
7. संविधानवाद के अर्थ और उनकी अवधारणाओं की व्याख्या करो।

2.9 अपनी प्रगति की जांच करने के लिए उत्तर (Answers to check your progress)

1. (अ) सत्य है 2. विधि के शासन 3. ब्रिटेन 4. कांग्रेस 5 संविधान,

2.10 सन्दर्भ ग्रन्थ/निर्देशित पुस्तकें (References / Suggested Readings)

1. तुलनात्मक राजनीति की रूपरेखा— ओम प्रकाश गाबा , मयूर पेपर बैक्स , नोएडा ।
2. तुलनात्मक शासन एवं राजनीति — डॉ . बीरकेश्वर प्रसाद सिंह , ज्ञानदा प्रकाशन (पी . एण्ड डी .) 24, दरियागंज, अंसारी रोड, दिल्ली ।
3. तुलनात्मक राजनीति एवं राजनीतिक संस्थाएँ — सी.बी . गेना , विकास पब्लिशिंग हाउस प्रा.लि. अंसारी रोड , दिल्ली ।
4. तुलनात्मक राजनीति — जे.सी . जौहरी , स्टर्लिंग पब्लिशर्स प्रा.लि. , दिल्ली ।



Subject : Political Science (Comparative Constitutions of UK & USA (Optional-I))	
Course Code : POLS-303	Autor : Dr. Parveen Sharma
Lesson No. 3	
संवैधानिक संरचना- विधायिका Constitutional Structure - Legislature	

अध्ययन की संरचना

3.1 अधिगम (Learning Objectives)

3.2 प्रस्तावना (Introduction)

3.3 अध्ययन के मुख्य बिन्दु (Main Points of Text)

3.3.1 व्यवस्थापिका का अर्थ और परिभाषा (Meaning and Definition of Legislature)

3.3.2 ब्रिटिश विधायिका संसद की संरचना (Composition of the British Legislature)

- कॉमन सदन (The House of Commons)
- लॉर्ड सभा (The House of Lords)

3.3.3 लॉर्ड-सभा की 'अमेरिकी सीनेट' से तुलना (Comparison of House of Lords with American Senate)

3.3.4 लार्ड सदन का औचित्य (Justification of the House of Lords)

3.3.5 संयुक्त राज्य में विधायिका का ढांचा (Legislative Structure in U.S.A.)

- सीनेट (The Senate)
- प्रतिनिधि सदन (The House of Representatives)

3.4 पाठ के आगे का मुख्य भाग (Further main body of the text)

3.4.1 स्विटजरलैण्ड की विधायिका संसद की संरचना (Composition of the Switzerland Legislature)



- संघीय सभा (**Federal Assembly**)
- राष्ट्रीय सभा (**National Council**)
- राज्यसभा अथवा राज्य परिषद (**State Assembly or State Council**)
- संघीय सभा की शक्तियाँ व कार्य (**Power and Functions of Federal Assembly**)
- राष्ट्रीय परिषद व राज्य परिषद में सम्बन्ध (**Relationship between the National**

Council and the Council of States

- संघीय सभा की स्थिति (**Position of the Federal Assembly**)

3.4.2 चीन विधायिका की संरचना (Composition of the British Legislature)

- राष्ट्रीय जन-कांग्रेस की स्थिति (**Position of the National People's Congress**)
- स्थायी समिति की स्थिति (**Position of the Standing Committee**)

3.5 अपनी प्रगति जाँचें (Check your progress)

3.6 सारांश (Summary)

3.7 सूचक शब्द (Key Words)

3.8 स्वयं मूल्यांकन हेतु प्रश्न (Self -Assessment Questions)

3.9 अपनी प्रगति की जांच करने के लिए उत्तर (Answers to check your progress)

3.10 सन्दर्भ ग्रन्थ/निर्देशित पुस्तकें (References / Suggested Readings)

3.1 अधिगम उद्देश्य (Learning Objectives)

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् विद्यार्थी योग्य होंगे –

1. ब्रिटिश संसद, अमरीकी कांग्रेस, स्विट्स संघीय व्यवस्थापिका और चीनी गणराज्य की व्यवस्थापिका के संगठन एवं शक्तियों की व्याख्या करने में।

2. व्यवस्थापिका के अर्थ एवं उसके महत्व की व्याख्या करने में।



3.2 प्रस्तावना (Introduction)

सरकार के कार्यों के कुशल संचालन के लिए उसे तीन अंगों में बांटा गया है। इनमें से विधायिका तो कानून निर्माण करती है, कार्यपालिका उन्हें लागू करती है तथा न्यायपालिका संविधान व सरकार की मर्यादा को बनाए रखती है। आज कार्यपालिका और विधायिका के कार्यों में तालमेल हो चुका है। विधायिका वित्तीय और प्रशासनिक कार्य भी करने लगी है और कार्यपालिका, विधायिका कानून निर्माण में भी योगदान देती है। आज जनता की भावनाओं को व्यक्त करने और उनकी इच्छानुसार शासन चलाने के लिए यह आवश्यक है कि जनता द्वारा निर्वाचित प्रतिनिधि संसद (विधायिका) के रूप में विधि-निर्माण और नीति-निर्माण के साथ-साथ कार्यपालिका पर भी अंकुश रखने का प्रयास करें। जो शासन व्यवस्था जन-प्रतिनिधित्व पर आधारित नहीं है तो वह लोकतन्त्र विरोधी है।

3.3 अध्ययन के मुख्य बिन्दु (Main Points of Text)

3.3.1 व्यवस्थापिका का अर्थ और परिभाषा (Meaning and Definition of Legislature)

साधारण शब्दों में विधायिका या व्यवस्थापिका सरकार का वह अंग है जो कानून निर्माण का कार्य करता है। इसे आमतौर पर संसद के नाम से जाना जाता है। संसद शब्द की उत्पत्ति फ्रेंच शब्द 'Parler' जिसका शाब्दिक अर्थ है – बातचीत करना या बोलना तथा लेटिन शब्द 'Parliamentum' से हुई है। संसद को अंग्रेजी में 'Parliament' कहा जाता है। लेटिन शब्द 'Parliamentum' का प्रयोग भी बातचीत के लिए ही होता रहा है। इस प्रकार संसद शब्द का प्रयोग व्यक्तियों की उस संस्था के लिए प्रयोग किया जाता है जो चर्चा या विचार-विमर्श के लिए एकत्रित हुए हैं। आज सरकार के कार्यों के सन्दर्भ में संसद को व्यवस्थापिका या विधायिका का नाम दिया जाता है, जिसका सम्बन्ध कानून निर्माण से है। कुछ विद्वानों ने व्यवस्थापिका को परिभाषित करते हुए कहा है :-

गिलक्राइस्ट के अनुसार – “विधानमण्डल सरकार की शक्ति का अधिक भाग है, जिसका सरकार के वित्त तथा कानून निर्माण दोनों पर अधिकार होता है।”

एलन बाल के अनुसार – “विधायिका, कार्यपालिका का परामर्शदात्री निकाय है।”

आधुनिक समय में व्यवस्थापिका की सही परिभाषा **फाईनर** ने ही दी है। उसका कहना है कि “विधायिका सरकार का वह अंग है जिसका कार्य जनमत या जनता की इच्छा को कानून निर्माण में लगाना और कार्यपालिका के कार्यों का निर्देशन, निरीक्षण एवं नियन्त्रण करना है।” अतः सार रूप में कहा जा सकता है कि व्यवस्थापिका सरकार का कानून निर्मात्री अंग है जो अध्यक्षतात्मक सरकार में तो कार्यपालिका से स्वतन्त्र होता है, लेकिन संसदीय सरकार में कार्यपालिका पर नियन्त्रण भी रखता है। इस दृष्टि से उसके कार्य कानून निर्माण व कार्यपालिका पर नियन्त्रण रखना दोनों हैं।

3.3.2 ब्रिटिश विधायिका संसद की संरचना (Composition of the British Legislature)



ब्रिटेन में 'संसद' की सम्प्रभु है, जो 'शासन-तंत्र को संचालित व नियंत्रित भी करती है। डायसी ने ब्रिटेन की संसद के बारे में कहा है कि, "इंग्लैण्ड की संसद वैधानिक रूप में इतनी शक्तिशाली है कि 'वह शिशु को प्रौढ़ घोषित कर सकती है', औ यदि वह उचित समझे तो किसी भी व्यक्ति को अपने ही मामले में न्यायाधीश बना सकती है, 'किसी भी व्यक्ति को मृत्योपरान्त भी राजद्रोही सिद्ध कर सकती है', 'गैर-कानूनी संतान को कानूनी ठहरा सकती है।' डायसी ने ब्रिटेन की संसद के निम्न कारण बताए हैं –

- (i) ब्रिटेन की संसद भी कानून बना सकती है।
- (ii) संसद, किसी भी कानून को निरस्त कर सकती है। ब्रिटेन के संविधान में ऐसा कोई भी सीमा-चिन्ह नहीं है। जिससे यह सिद्ध किया जा सके कि कौन सा कानून मौलिक तथा कौन सा अमौलिक है।
- (iii) ब्रिटेन में ऐसा कोई भी कानून, ऐसा किसी भी अधिकार को मान्यता प्रदान नहीं करता जो संसद द्वारा निर्मित किसी भी नियम को अवैधानिक ठहरा कर रद्द कर सके। संसद की सम्प्रभुता, राजा के शासन के प्रत्येक क्षेत्र में व्याप्त है।

ब्रिटेन में 'न्यायिक पुनरावलोकन' के सिद्धान्त का प्रचलन नहीं होने से वहाँ संसद पर न्यायपालिका का बंधन नहीं है। इसके अतिरिक्त वहाँ 'संवैधानिक विधि' तथा 'साधारण विधि' में भी किसी तरह का भेद नहीं किया गया है। जो ब्रिटेन की संसद की सर्वोच्चता स्थापित करने में सहायक बनी है। ब्रिटेन की संसद जहाँ एक तरफ सर्वोच्च है तो वहीं दूसरी तरफ सर्वोच्च न्यायालय का यह अधिकार प्राप्त है कि वह कांग्रेस द्वारा पारित किसी भी कानून को अवैध अथवा असंवैधानिक घोषित कर सकता है, यदि वह कानून संविधान की भावना के विपरीत हो। लेकिन ऐसा शक्ति ब्रिटेन के किसी भी न्यायालय को प्राप्त नहीं है। वहाँ संसद की शक्ति ही सर्वोच्च व सम्प्रभु है, दोनों हैं।

व्यावहारिक दृष्टि से संसद पर अनेक परम्पराओं और राजनीतिक यथार्थों का बन्धन है, जो उसकी सम्प्रभुता को सीमित करता है। मुख्य रूप से संसद की सम्प्रभुता पर निम्नलिखित बन्धन स्पष्ट रूप से झलकते हैं –

1. जनमत का नियंत्रण (Control of Public Opinion) – संसद का निम्न-सदन (कॉमन-सभा), जनता द्वारा प्रत्यक्ष रूप से निर्वाचित होता है। ऐसी स्थिति में इसके द्वारा जनता की इच्छाओं तथा परम्पराओं के विरुद्ध विधि-निर्माण का साहस नहीं किया जा सकता।
2. मंत्रिमण्डल की शक्ति व विधि का शासन (Power's of the Cabinet and Rule of Law)– 'विधि के शासन' का सामान्य अर्थ यह है कि देश का आम कानून सब पर लागू होता है। किसी के पास किसी प्रकार की कोई भी मनमानी शक्ति नहीं है और कानून के समक्ष सभी नागरिक समान हैं। संसद कानून के शासन का उल्लंघन नहीं कर सकती। यदि संसद स्वयं भी विधि के शासन का उल्लंघन करती है तो गम्भीर जनप्रतिक्रिया उत्पन्न हो जायेगी।



3. अन्तराष्ट्रीय कानून एवं संगठन (International Law and Organization) – अन्तराष्ट्रीय कानून एवं संगठनों द्वारा भी संसद की 'सम्प्रभुता शक्ति' सीमित हो जाती है। इसी प्रकार आज विश्व भर में अनेक अन्तराष्ट्रीय संगठन, विभिन्न मानवीय समस्याओं पर समय-समय पर विचार-विनियम कर, विश्वभर में एक सामान्य नीति के अपनाये जाने की सिफारिश करते हैं। इससे भी ब्रिटिश संसद की शक्तियाँ आंशिक रूप से सीमित होती है।
4. निर्वाचक मण्डल तथा संसद की संगठन (Electorate and the Composition of the Parliament)– 'सम्प्रभुता-शक्ति' वास्तविक रूप से संसद में निहित नहीं है, बल्कि यह निर्वाचक मण्डल में निहित है। क्योंकि निर्वाचन मण्डल की संसद को चुनते हैं और वे ही उसे हटा सकते हैं अतः संसद को निर्वाचक मण्डल की प्रतिक्रिया को ध्यान में रखकर ही अपना कार्य करना पड़ता है
5. दबाव समूह की भूमिका (Role of Pressure Group)– संसद द्वारा जब भी कभी कोई कानून बनाया जाता है तो उससे सम्बन्धित 'दबाव समूह' सक्रिय हो जाते हैं। उनकी 'संसदीय समितियों' में गवाहियाँ ली जाती हैं और उनके द्वारा प्रस्तुत तथ्यों को ध्यान में रखा जाता है। अतः संसद, विधि बनाने में अपना मनमानी नहीं कर सकती ब्रिटेन में संसद के दो सदन और 1.कॉमन सदन 2. लार्ड सभा है ।

• कॉमन सदन (The House of Commons)

इस सदन के प्रतिनिधि जनता द्वारा व्यस्क मताधिकार के आधार पर प्रत्यक्ष तरीके से चुने जाते हैं। इसके सदस्यों का चुनाव एकल सदस्य निर्वाचन क्षेत्र से होता है।

(अ) कॉमन सदन के सदस्यों की योग्यताएं (Qualifications of the Members of the House of Commons) :- कॉमन सदन का सदस्य बनने के लिए निम्नलिखित योग्यताएं हैं:-

वह ब्रिटेन का नागरिक हो। वह 21 वर्ष की आयु पूरी कर चुका हो। उसका नाम मतदाता सूची में हो। वह देश व राष्ट्र के प्रति निष्ठावान हो। वह विदेशी, दिवालिया, पागल व अपराधी न हो। वह कुलीन जन या पीवर तथा लार्ड सभा का सदस्य न हो। वह इंग्लैण्ड, स्ट्रालैण्ड तथा आयरलैण्ड में स्थापित गिरजाघरों और रोमन कैथोलिक चर्च का पादरी न हो। वह 1957 में पास किए गए 'कोमन सदन अयोग्यता अधिनियम' के प्रावधानों से मुक्त हो। वह किसी सरकारी लाभदायक पद पर न हो।

(ब) कॉमन सदन का कार्यकाल (Tenure of the House of Commons) :- 1911 से पहले सदन का कार्यकाल 7 वर्ष था लेकिन 1911 के संसद अधिनियम के पारित हो जाने पर इसका कार्यकाल 5 वर्ष निर्धारित किया गया। वर्तमान में इसका कार्यकाल 5 वर्ष ही है।



(स) कॉमन सदन के सदस्यों के विशेषाधिकार (Privileges of the Members of the House of Members)

:- कॉमन सदन के सदस्यों को निम्नलिखित विशेषाधिकार प्राप्त हैं।

कॉमन सदन को यह अधिकार है कि यदि कोई व्यक्ति सदन के विशेषाधिकार का अतिक्रमण करता है तो उसे जेल भेजा जा सकता है।

(द) कॉमन सदन की शक्तियां व कार्य (Powers and Functions of the House of Commons)

ब्रिटिश कॉमन सदन की शक्तियां महान होने के कारण इस सदन को लोकप्रिय सदन कहा जाता है। इस सदन की प्रमुख शक्तियां व कार्य निम्नलिखित हैं :-

1. **वित्तीय शक्तियां (Financial Powers)** :- यद्यपि बजट निर्माण में कार्यपालिका का ही महत्वपूर्ण योगदान होता है, लेकिन राष्ट्रीय वित्त पर लोक सदन या कॉमन सदन का ही वास्तविक नियन्त्रण है। लार्ड सदन वित्त विधेयक को केवल एक महीने तक रोक सकता है। यदि किसी बिल के वित्तीय बिल होने पर कोई मतभेद हो जाए तो उस पर निर्णय देना कॉमन सदन का ही अधिकार है। इस सदन की स्वीकृति के बिना न तो कोई कर लगाया जा सकता है और न ही कोई व्यय किया जा सकता है। वित्तीय अनुदानों के सम्बन्ध में कॉमन सदन को अन्तिम शक्ति प्राप्त है। देश का वार्षिक बजट वित्तमन्त्री इसी सदन में प्रस्तुत करता है। इसमें आय-व्यय का पूरा ब्यौरा होता है। इसकी पूरी समीक्षा कॉमन सदन द्वारा की जाती है।
2. **कार्यपालिका पर नियन्त्रण (Control over Executive)** :- ब्रिटिश अभिसमयों के अनुसार मन्त्रिमण्डल लोकसभा या कॉमन सदन के प्रति उत्तरदायी होता है लोकसभा ही मन्त्रिमण्डल के अस्तित्व को बनाए रखती है। मन्त्रिमण्डल के प्रमुख सदस्य लोकसभा के भी सदस्य होते हैं तथा लोकसभा में बहुमत दल के नेता को ही प्रधानमन्त्री नियुक्त किया जाता है। इस सदन के सदस्यों का बहुमत न होने पर प्रधानमन्त्री सहित सम्राट मन्त्रिमण्डल को त्यागपत्र देना पड़ता है। यदि कॉमन सदन सरकार को प्रशासन चलाने के लिए नियमित अधिकार प्रदान न करे और उसे अपना आवश्यक समर्थन न दे तो सरकार का कार्य चलना असम्भव हो जायेगा। कॉमन सदन प्रश्न पूछकर, आलोचना करके, स्थगन प्रस्ताव, निन्दा प्रस्ताव, अविश्वास प्रस्ताव, वित्तीय अधिकार आदि साधनों का प्रयोग करके कार्यपालिका को नियन्त्रित करती रहती है। कॉमन सदन के सदस्य किसी भी नीति अथवा सार्वजनिक महत्व के किसी भी विषय पर वाद-विवाद की मांग कर सकते हैं। लेकिन व्यवहारिक धरातल पर स्थिति में कमजोर नहीं है। व्यवहार में मन्त्रिमण्डल अपनी इच्छानुसार तथा बहुमत के कारण मन्त्रिमण्डल लोकसभा से किसी भी स्थिति में कमजोर नहीं है। व्यवहार में मन्त्रिमण्डल अपनी इच्छानुसार हर विधेयक पास करवा लेता है और नीति-निर्माण सम्बन्धी निर्णय भी स्वयं ही लेता है। कॉमन सदन को



यह भय भी बना रहता है कि कहीं ऐसा न हो कि प्रधानमंत्री कॉमन सदन को भंग करवाकर नए चुनाव न करवा दे। इसी कारण **जेर्निंग्स** ने लिखा है— “लोकसभा का कार्य सरकार पर नियन्त्रण रखना नहीं है; बल्कि आलोचना स्थल के रूप में कार्य करना और बाह्य मत की ओर ध्यानाकर्षण करना है।”

3. **कॉमन सदन जन-सेवक के रूप में (The House of Commons as a Public Servant) :-** लोकसभा या कॉमन सदन के सदस्य जन-प्रतिनिधि हैं। ये जनता की शिकायतों को सदन के माध्यम से सरकार तक पहुंचाते हैं तथा उनका निवारण करने के लिए उसे बाध्य भी करते हैं।
4. **कॉमन सदन की वास्तविक स्थिति (Actual Position of the House of Commons) :-** ब्रिटेन में सिद्धान्त तथा व्यवहार में काफी अन्तर है। सिद्धान्त में तो ब्रिटेन का कॉमन सदन काफी शक्तिशाली है, लेकिन व्यवहार में इसकी स्थिति कम महत्वपूर्ण है। आज ब्रिटेन में कॉमन सदन या संसद की अपेक्षा कार्यपालिका अधिक शक्तिशाली हो गई है। लेकिन इसका अर्थ यह नहीं है कि लोकसदन या कॉमन सदन की स्थिति पूर्णतया महत्वहीन है। व्यवहार में लोकसदन ही ब्रिटिश संसद है जिसका प्रमुख कार्य सरकारी नीतियों तथा कार्यक्रमों की आलोचना करना है। कोई भी सरकार लोकसदन की उपेक्षा नहीं कर सकती। इसी कारण आज ब्रिटेन में लोकसदन तथा मन्त्रिमण्डल के नेतृत्व के बीच संतुलन कायम करने पर बल दिया जाने लगा है। इसी दृष्टि से कई बार संसद को मन्त्रिमण्डलीय नियन्त्रण से मुक्त रखने के लिए संसदीय प्रक्रिया में भी सुधारों की मांग की जाती है।

● लॉर्ड सभा

इंग्लैंड में एकात्मक शासन प्रणाली प्रचलित है जिसमें साधारणतः दूसरे सदन की जरूरत नहीं होती परंतु वहाँ ऐतिहासिक कारणों से लॉर्ड सभा के रूप में दूसरा सदन चला आ रहा है, और वह आज भी बना हुआ है। विश्व में लॉर्ड सभा एकमात्र ऐसा द्वितीय सदन है जिसमें सदस्यों की संख्या प्रथम सदन से अधिक है।

(अ) लॉर्ड-सभा की रचना (Composition of the House of Lords :- लॉर्ड – सभा की सदस्य संख्या कभी एक नहीं रही है। उदाहरणार्थ, सन् 1948 में उसके सदस्यों की संख्या 844, सन् 1952 में 842 और सन् 1956 में 820 थी। 1968 में इसके सदस्यों की संख्या 1062 के ऊपर ही थी। वर्तमान में इसकी सदस्य – संख्या 1080 है, जिसमें 1054 लौकिक तथा 26 आध्यात्मिक लार्ड्स हैं। लॉर्ड सभा की रचना कई प्रकार के सदस्यों से मिलकर होती है और वे विविध प्रकार की प्रक्रियाओं द्वारा सदन के सदस्य बनते हैं। लॉर्ड – सभा के सदस्य अग्रांकित प्रकार के होते हैं



1. (1) राजवंश के राजकुमार लॉर्ड सभा की पहली श्रेणी के सदस्य होते हैं। ये राजवंश के लोग होते हैं। इनकी संख्या बहुत थोड़ी होती है। वर्तमान में इनकी संख्या चार है। ये सदस्य लॉर्ड-सभा की बैठक में प्रायः भाग नहीं लेते हैं।
2. (2) वंश परम्परागत पीर दूसरी श्रेणी के सदस्य होते हैं। इस प्रकार के सदस्यों में सेना, कला, संस्कृति अथवा शिक्षा के क्षेत्रों के विशिष्ट व्यक्तियों की नियुक्ति की जाती है। ऐसी सदस्यता वंश-परम्परा के सदस्य के बड़े लड़के को प्राप्त होती है, जिसकी आयु कम से कम 21 वर्ष हो। इस वर्ग के सदस्यों की संख्या निश्चित नहीं है। 'पीर' (Peer) शब्द का अर्थ समान होता है, पर पीर लोग कई स्तर के होते हैं। कुछ उनमें से 'ड्यूक' व कुछ 'बैरन' कहे जाते हैं। पहले पीरों की नियुक्ति स्वयं राजा द्वारा की जाती थी, पर राजतंत्र के लोकतंत्रीकरण के बाद से अब पीरों की नियुक्तियाँ प्रधानमंत्री के परामर्श के राजा द्वारा की जाती है।
3. (5) जीवन पार, सन् 1958 के लाइफ पीरेज के अनुसार राजा द्वारा लॉर्ड-सभा के लिए नियुक्त किये जाते हैं। इसके अन्तर्गत प्रायः वयोवृद्ध नेताओं की नियुक्ति हुआ करती है। इस प्रकार नियुक्त किये गये सदस्यों को कोई वेतन नहीं मिलता, तथापि उन्हें मार्ग-व्यय और दैनिक सभा (8.50 पौण्ड) अवश्य मिलता है। इस ऐक्ट का उद्देश्य यह था कि 'लॉर्ड-सभा' विभिन्न दलों का प्रतिनिधित्व संतुलित रहे। असन्तुलन की स्थिति में प्रधानमंत्री अपने दल के सदस्यों को पीर बनवा सकता है।
4. (6) साधारण-अपील – लॉर्ड भी 'लॉर्ड-सभा' के सदस्य होते हैं। लॉर्ड-सभा देश भर के लिए अपील का सर्वोच्च न्यायालय है। उसके इस कार्य का सम्पादन 'अपील-लॉर्ड' ही करते हैं। सन् 1879 के ऐक्ट की व्यवस्था के अनुसार 'देश के विधि विशेषज्ञों में से राजमुकुट द्वारा जीवन भर के लिए कानूनी-लॉर्ड नियुक्त किये जाते हैं। इस समय कानूनी लॉर्डों की संख्या 10 है।
5. (7) आध्यात्मिक लॉर्ड की लॉर्ड-सभा के सदस्य होते हैं। ये पीर नहीं होते वरन् 'धर्मगुरु' होते हैं। उनकी संख्या 26 है, जिनमें (1) कैंटरबरी का आर्कबिशप, (2) यॉर्क का आर्कबिशप (3) लन्दन का बिशप, (4) डरबन का बिशप, व (5) विन्चेस्टर का बिशप अवश्य सम्मिलित किये जाते हैं। शेष 21 पदों पर इंग्लैण्ड के वरिष्ठ बिशप लोग होते हैं।

इस प्रकार लॉर्ड-सभा की रचना एक प्रकार के सदस्यों द्वारा नहीं होती। उनमें से कुछ मनोनीत व कुछ निर्वाचित होते हैं।

(ब) लॉर्ड-सभा के पदाधिकारी (Officers of the House of Lard)—लॉर्ड-सभा का सभापतित्व लॉर्ड चांसलर करता है, उसकी नियुक्ति प्रधानमंत्री के परामर्श से राजा या रानी द्वारा की जाती है। वह सदन का पदेन अध्यक्ष (Speaker) होता है। परन्तु उसे निर्णायक मत देने का अधिकार नहीं है। वह मन्त्रिमण्डल का सदस्य होता



है। लॉर्ड कुछ अन्य ऐसे पीर लोगों की नियुक्ति भी करता है, जो अध्यक्ष की अनुपस्थिति में अध्यक्ष का कार्य करते हैं तथा उपाध्यक्ष (Deputy Speaker) कहता है। पहला उपाध्यक्ष सदन की समितियों की अध्यक्षता भी करता है सदन के स्थायी कर्मचारियों में सदन का लिपिक, जैण्टिलमैन उशर ऑफ दि ब्लैक रॉड व सारजेण्ट-ए-आर्म्स प्रमुख होते हैं।

(स) लॉर्ड-सभा की गणपूर्ति तथा कार्य-प्रणाली-संसद के दोनों सदनों का प्रारम्भ और सत्रावसान साथ-साथ होता है। लॉर्ड-सभा का अधिवेशन लगभग सप्ताह में चार दिन- सोमवार से गुरुवार तक चलता है और वह भी लगभग दो घण्टे प्रतिदिन लॉर्ड-सभा के अधिकांश सदस्य सक्रिय होते हैं। अतः मुश्किल से ही लॉर्ड-सभा की उपस्थिति कभी 100 से ऊपर पहुँच पाती है। चूँकि गणपूर्ति 3 सदस्यों से हो जाती है, लेकिन विधि पारित करते समय 30 सदस्यों की उपस्थिति आवश्यक है। अतः बैठकों को स्थगित करने की प्रायः आवश्यकता नहीं होती है। जो सदस्य भाग लेते हैं, वे सब उच्च योग्यता और सार्वजनिक जीवन के अनुभवी व्यक्ति होते हैं। लॉर्ड-सभा में अधिकांश लोक सदन के भूतपूर्व सदस्य, भूतपूर्ण प्रधानमंत्री, राजदूत, उद्योगपति आदि होते हैं। कार्यवाही में नियमों के पालन की ओर भी लोक सदन की तरह अधिक सतर्क नहीं रहा जाता। यहाँ 'स्थायी आदेशों' व 'समापन प्रस्तावों' की व्यवस्था नहीं है।

3.3.3 लॉर्ड-सभा की 'अमेरिकी सीनेट' से तुलना (Comparison of House of Lords with American Senate) – अमेरिकी सीनेट, कांग्रेस का उच्च सदन है लॉर्ड-सभा इंग्लैण्ड की संसद का उच्च, द्वितीयद्व सदन है। लेकिन कार्यों व शक्तियों की दृष्टि से इंग्लैण्ड की लॉर्ड-सभा जितनी कमजोर है एवं गौण है, अमेरिकी सीनेट उतनी ही अधिक शक्तिशाली है।

1. **रचना के आधार पर**—रचना की दृष्टि से लॉर्ड-सभा पूर्णतया उत्ताधिका पद्धति पर आधारित आनुवांसीक कुलीनतंत्रीय सदर है 'जबकि अमेरिकी सीनेट जनता द्वारा प्रत्यक्ष रूप से निर्वाचित सदन है।' इसके अतिरिक्त दोनों में सदस्य संख्या के अनुपात का भी बड़ा अन्तर है। अमेरिकी सीनेट की सदस्य संख्या 100 है, वहीं लॉर्ड-सभा की सदस्य संख्या 1080 है। लार्ड-सभा के बहुत कम सदस्य सदन में उपस्थित होते हैं, जबकि सीनेट के सभी सदस्य सीनेट की कार्यवाही में भाग लेते हैं।
2. **विधायी क्षेत्र के आधार पर**—साधारण विधेयकों के प्रतुतीकरण के सम्बन्ध के दोनों की स्तिति समान है। इसके किसी भी सदन में (लॉर्ड-सभा व सीनेट) साधारण विधेयकों को प्रस्तुत किया जा सकता है और दोनों ही सदनों द्वारा स्वीकार करने पर भी कोई भी विधेयक 'कानून' का रूप धारण कर सकता है। लेकिन मतभेद की स्थिति उत्पन्न होने पर सीनेट की स्थिति लॉर्ड-सभा से अधिक शक्तिशाली प्रतीत होती है। क्योंकि अमेरिका में सीनेट की स्वीकृति के बिना कोई भी विधेयक पारित नहीं हो



- सकता। जबकि इंग्लैण्ड की लॉर्ड-सभा, विधेयक को केवल एक वर्ष के लिए रोक सकती है, उसके बाद वह विधेयक राजा की स्वीकृति के बाद 'कानून' बन जाता है।
3. **कार्यपालिका शक्तियों के आधार पर** —वित्त विधेयकों की प्रस्तुतीकरण की यह व्यवस्था है कि वित्त-विधेयक न तो सीनेट में प्रस्तुत किया जाता है और न ही लॉर्ड-सभा में, लेकिन लॉर्ड-सभा की शक्ति इस क्षेत्र में बहुत ही कम है। लॉर्ड-सभा को वित्त-विधेयक में कोई भी महत्वपूर्ण परिवर्तन करने की शक्ति प्राप्त नहीं है। वह अधिक से अधिक एक माह तक किसी वित्त-विधेयक पर रोक लगाने के अतिरिक्त कुछ नहीं कर सकता। जबकि सीनेट केवल प्रारम्भिक धारा को छोड़कर विधेयक के रूप में संशोधित कर उसके स्वरूप को भी बदलने की शक्ति प्राप्त है। सीनेट को वित्त-विधेयक पर अस्वीकृति प्रदान करने का भी अधिकार प्राप्त है। अमेरिका में दोनों सदनों की स्वीकृति के बिना विधेयक कांग्रेस से पारित नहीं माना जाता।
 4. **कार्यपालिका शक्तियों के आधार पर**—कार्यपालिका से सम्बन्धित शक्तियों में भी 'सीनेट' ही अधिक शक्तिशाली है। इस क्षेत्र में लॉर्ड-सभा प्रभावशाली होती है। क्योंकि मंत्रिमण्डल पर इसका नियंत्रण नहीं के बराबर है। यद्यपि लॉर्ड-सभा द्वारा मंत्रियों से प्रश्न पूछने पर आलोचना की जा सकती है, लेकिन इससे अधिक वह कुछ नहीं कर सकता। अमेरिकी सीनेट को कार्यपालिका क्षेत्र में प्रभावशाली शक्तियाँ प्राप्त हैं। सीनेट की संधियों के पुष्टीकरण की, राष्ट्रपति द्वारा की गई नियुक्तियों के पुष्टीकरण की विविध विभागों के विरुद्ध जाँच का तथा युद्ध की घोषणा के सम्बन्ध में महत्वपूर्ण शक्तियाँ प्राप्त हैं। इन शक्तियों के माध्यम से ही सीनेट राष्ट्रपति का नियंत्रण रखती है। सीनेट का इन शक्तियों के कारण 'प्रतिनिधि-सदन' से ही अधिक महत्त्व बढ़ जाता है।
 5. **न्यायिक शक्तियों के आधार पर** — जब लॉर्ड-सभा व सीनेट की शक्तियों की तुलना की जाती है, तो लॉर्ड-सभा की स्थिति सीनेट से अधिक शक्तिशाली प्रतीत होती है। लॉर्ड-सभा ब्रिटेन का सबसे ऊँचा 'अपील न्यायाधीकरण' है, जबकि सीनेट को इस प्रकार की कोई शक्ति प्राप्त नहीं है। संवधान में इस सम्बन्ध में कहा गया है कि "इसके अन्तर्गत प्रदान की गई व्यवस्थापन सम्बन्धी समस्त शक्तियाँ संयुक्त राज्य की एक कांग्रेस में निहित होंगी, जिसका निर्णय एक सीनेट व प्रतिनिधि सभा से मिलक होगा।"

3.3.4 लार्ड सदन का औचित्य (Justification of the House of Lords)

लार्ड सदन की शक्तियाँ और महत्त्व कॉमन सदन की तुलना में काफी कम है। कई विद्वानों ने तो इस सदन को निरर्थक मानकर समाप्त करने का सुझाव दिया है। इसके विपरीत कुछ विद्वान इस सदन की व्यावहारिक उपयोगिता को देखते हुए इसे बनाए रखने के पक्षधर हैं। इस सदन को समाप्त करने के पक्ष में मत देने वाले विद्वानों का



कहना है कि लार्ड सदन का संगठन अप्रजातन्त्रीय है, क्योंकि इसमें आम जनता को कोई प्रतिनिधित्व प्राप्त नहीं है। इसी कारण यह सदन निहित स्वार्थों की शरण-स्थली बन चुका है। इस सदन के समक्ष अनुदयवादी होने के कारण ब्रिटिश राजतन्त्र के लोकतन्त्रीकरण के विरुद्ध मत देते हैं। इसमें निष्पक्षता का भी अभाव है और इसके पास वित्तीय और विधायी शक्तियां भी नहीं हैं। इस सदन की उपस्थिति विधेयक को अनावश्यक रूप से देरी के गर्त में धकेलती है। ब्रिटिश संसद के दूसरे सदन को लोकतन्त्रीय राजतन्त्र की सफलता के लिए आवश्यक मानता है। इस मत के समर्थक दूसरे सदन के औचित्य के बारे में निम्न तर्क देते हैं:—

- लार्ड सदन प्रजातन्त्रीय राज्यों की आधारभूत विशेषता है।
- यह सदन ब्रिटिश राजतन्त्र की परम्परा को समेटे हुए हैं और ब्रिटिश जनता के स्वाभावानुकूल है।
- यह सदन कॉमन सदन को जल्दबाजी में बिल पास करने से रोकता है।
- यह सदन कॉमन सदन की निरंकुशता पर रोग लगाता है।
- कानून-निर्माण में प्रथम सदन की मदद करता है।
- यह सदन ब्रिटिश समाज में व्यापक भाग का प्रतिनिधित्व करता है। ऑग ने लिखा है— “ यह सदन उद्योग, कला, साहित्य, वित्त, धर्म व विज्ञान का प्रतिनिधि है।”
- इस सदन के विचारात्मक कार्य उच्च स्तर के हैं जो कॉमन सदन के सदस्यों के संकीर्ण स्वार्थों पर अंकुश लगाते हैं।
- यह सदन कॉमन सदन के कार्यभार को कम करता है।
- यह सदन उच्चतम अपीलीय न्यायालय का कार्य करता है।
- यह सदन जनमत को शिक्षित करने का प्रमुख साधन है।

3.3.5 अमेरिका विधायिका संसद की संरचना (Composition of the U.S.A. Legislature)

● प्रतिनिधि सदन (The House of Representatives)

अमेरिका की संघीय व्यवस्थापिका के निम्न सदन को ही प्रतिनिधि सदन कहा जाता है। यह समस्त राष्ट्र का प्रतिनिधित्व करता है और यह ब्रिटेन तथा भारत के लोकसदन के समान है। इसमें हर राज्य को जनसंख्या के अनुपात में प्रतिनिधित्व प्राप्त है। इस सदन के सदस्य प्रत्यक्ष रूप में व्यस्त मताधिकार द्वारा चुने जाते हैं। इस सदन की संख्या 435 है। अमेरिका में इस सदन के सदस्यों के चुनाव में सभी क्षेत्र एक सदस्यीय होते हैं। लगभग 3 लाख 30 हजार व्यक्तियों के पीछे एक प्रतिनिधि को ही चुना जाता है।



- (i) **प्रतिनिधि सदन के सदस्यों की योग्यताएं (Qualifications for the Members of the House of Representative)** प्रतिनिधि सदन को सदस्य बनने के लिए निम्नलिखित योग्यताएं होनी चाहिए :-प्रतिनिधि सदन के प्रत्याशी की आयु कम से कम 25 वर्ष होनी चाहिए। वह कम से कम 7 वर्ष तक अमेरिका का नागरिक रह चुका हो। वह जिस राज्य से चुनाव लड़ रहा है, उस राज्य का निवासी हो। वह संघीय सरकार का सैनिक तथा नागरिक अधिकारी न हो। वह अमेरिका का निवासी हो। वह पागल या दिवालिया न हो।
- (ii) **प्रतिनिधि सदन के सदस्यों का निर्वाचन (Election of the Members of the House of Representatives) :-**
प्रतिनिधि सदन के सदस्यों का चुनाव व्यस्क मताधिकार के आधार पर किया जाता है।
- (iii) **सदस्यों के विशेषाधिकार व उन्मुक्तियां (Privileges and Immunities of the Members)** :- प्रतिनिधि सदन के किसी भी सदस्य को अधिवेशन के दिनों में किसी दीवानी मुकद्दमें न तो गिरफ्तार किया जा सकता है और न ही कोई सजा दी जा सकती है। लेकिन यह छूट उन सदस्यों को प्राप्त नहीं है जिन पर देश-द्रोह, भ्रष्टाचार और शान्ति भंग करने वा अपराध हो। इसके अतिरिक्त प्रतिनिधि सदन के सदस्यों को भाषण की स्वतन्त्रता भी प्राप्त है।
- (iv) **प्रतिनिधि सदन का कार्यकाल (Tenure of the House of Representatives) :-** प्रतिनिधि सदन के सदस्यों का कार्यकाल दो वर्ष है। भारत तथा ब्रिटेन में निम्न सदन के सदस्य 5 वर्ष के लिए चुने जाते हैं।
- (v) **अधिवेशन (Session) :-** इस सदन का वर्ष में एक अधिवेशन होना जरूरी है। यह अधिवेशन जनवरी मास में होता है। सदन में गणपूर्ति के लिए सदस्यों के बहुमत की उपस्थिति होना जरूरी है।
- (vi) **प्रतिनिधि सदन का स्पीकर (Speaker of the House of Representative) :-** ब्रिटेन या भारत की तरह अमेरिका में भी स्पीकर पद की व्यवस्था है। अध्यक्ष का कार्यकाल भी प्रतिनिधि सदन की तरह 2 वर्ष ही होता है। स्पीकर हमेशा बहुमत दल से चुना जाता है। इसके विपरीत ब्रिटिश स्पीकर का पद स्थायी और निर्दलीय है। अमेरिकन स्पीकर भी ब्रिटिश तथा भारतीय स्पीकर की तरह अनेक कार्य करता है। सदन की बैठकों की अध्यक्षता करना, सदन की कार्यवाही को नियमित एवं व्यवस्थित करता, सदन में सुव्यवस्था बनाए रखना, सदन में अनुशासन बनाए रखना, अशान्ति की अवस्था में सदन को स्थगित करना, सदन के नियमों का क्रियान्वयन करना, सदन की सम्पूर्ण कार्यवाही पर नियन्त्रण रखना आदि उसके प्रमुख कार्य हैं। लेकिन इसके बावजूद भी उसकी स्थिति ब्रिटिश स्पीकर से भिन्न है।



• **प्रतिनिधि सदन के कार्य व शक्तियां (Functions and Powers of the House of Representatives)**

संवैधानिक व्यवस्था ने कांग्रेस के दोनों सदनों को समान शक्तियां प्रदान की हैं लेकिन अपनी शक्तियों के प्रयोग में यह सदन भारत तथा ब्रिटेन के निम्न सदनों की तरह शक्तिशाली नहीं है। इस सदन के प्रमुख कार्य व शक्तियां निम्नलिखित हैं :-

1. **विधायी शक्तियां (Legislative Powers):-** प्रतिनिधि सदन सीनेट के साथ मिलकर संघीय सरकार में दिए गए विषयों पर कानून बनाता है। कानून-निर्माण में दोनों सदनों को समान शक्तियां प्राप्त हैं। कोई भी विधेयक प्रतिनिधि सदन की स्वीकृति के बिना कानून नहीं बन सकता। लेकिन वित्त विधेयक केवल इसी सदन में पेश किए जा सकते हैं। यदि दोनों सदनों में किसी बात को लेकर मतभेद हो जाता है तो दोनों सदनों की संयुक्त सीनेट का पक्ष ही स्वीकृत होता है। इसलिए प्रतिनिधि सदन की शक्तियां सीनेट से कम ही हो जाती हैं।
2. **कार्यपालक शक्तियां (Executive Powers) :-** सीनेट की तुलना में प्रतिनिधि सदन की कार्यपालक शक्तियों के समान हैं परन्तु विशेष परिस्थिति में प्रतिनिधि सदन को राष्ट्रपति का निर्वाचन करने के अधिकार प्राप्त हैं। यदि किसी प्रत्याश को चुनाव में स्पष्ट बहुमत प्राप्त न हो तो प्रतिनिधि सदन सर्वाधिक मत प्राप्त तीन व्यक्तियों में से एक को राष्ट्रपति निर्वाचित कर सकता है। प्रतिनिधि सदन सीनेट के साथ मिलकर युद्ध की घोषणा भी कर सकता है। यह अपने सदस्यों की योग्यता को जांच-पड़ताल भी कर सकता है।
3. **न्यायिक शक्तियां (Judicial Powers) :-** यह सदन का अपमान करने वाले व्यक्ति को दण्ड दे सकता है। महावियोग सम्बन्धी प्रस्ताव इसी सदन से पास होकर सीनेट को जाता है। वह सदन सीनेट के साथ मिलकर सर्वोच्च न्यायालय के अधीनस्थ कार्यालयों की स्थापना करता है। इस तरह देश के प्रमुख संवैधानिक पदों पर आसीन अधिकारियों के विरुद्ध यह सदन महावियोग लगा सकता है।
4. **संविधान में संशोधन (Amendment in the Constitution):-** यह सदन सीनेट के साथ मिलकर संशोधन का प्रस्ताव प्रस्तुत कर सकता है। संविधान में संशोधन सम्बन्धी कोई भी प्रस्ताव प्रतिनिधि सदन द्वारा 2/3 बहुमत से पास किया जाना अनिवार्य है, अन्यथा संविधान में कोई संशोधन नहीं होगा।
5. **स्पीकर का चुनाव (Election of Speaker) :-** प्रतिनिधि सदन निर्वाचन सम्बन्धी कार्य भी करती है। अपने प्रथम अधिवेशन में यह स्पीकर को बहुमत के आधार पर चुनती है जो इसकी बैठकों की अध्यक्षता करता है।



6. **अन्य कार्य (Miscellaneous Functions):**— प्रतिनिधि सदन को अपने सदस्यों को भ्रष्टाचार, देशद्रोह जैसे मामलों में सदन से निष्कासित करने का अधिकार प्राप्त है। यह सदन विशेष समितियों के माध्यम से संघीय सरकार के प्रशासन तथा संघीय न्यायालयों के कार्य की जांच पड़ताल भी कर सकता है। यह अपने सदस्यों के निर्वाचन तथा योग्यताओं के सम्बन्ध में नियम भी बना सकता है।
7. **प्रतिनिधि सदन की स्थिति (Position of the House of Representative):**— उपरोक्त विवेचन के आधार पर कहा जा सकता है कि प्रतिनिधि सदन में कार्यपालक शक्ति का अभाव है। विधायी क्षेत्र में यह सीनेट से कमजोर है। यह अपनी समस्त शक्तियों का प्रयोग सीनेट के साथ मिलकर ही करता है।

• सीनेट (The Senate)

अमेरिका की सीनेट का निर्माण राज्यों की समानता के संघीय सिद्धान्त के आधार पर हुआ है। प्रत्येक राज्य अपने—अपने यहाँ से दो प्रतिनिधि चुनकर सीनेट के लिए भेजते हैं। इस समय अमेरिका के संघ में 51 राज्य हैं, जिनके 102 प्रतिनिधि सीनेट के सदस्य हैं। सीनेट का सदस्य बनने के लिए प्रत्येक व्यक्ति के लिए यह आवश्यक है कि उसकी आयु 30 वर्ष से कम न हो, वह कम-से-कम 9 वर्ष तक संयुक्त राज्य का नागरिक रहा हो और उस राज्य का निवासी हो, जिससे वह निर्वाचित हो। उनका निर्वाचन राज्यों की जनता द्वारा प्रत्यक्ष रीति से होता है।

1. **अवधि** — सीनेट एक स्थायी सदन है, जिसके सदस्य 6 वर्ष की अवधि के लिए निर्वाचित किये जाते हैं। प्रति दो वर्ष बाद एक—तिहाई सदस्य अवकाश ग्रहण करते हैं जिनके स्थान पर नवीन निर्वाचन कराये जाते हैं। सदस्यों के पुनर्निर्वाचन पर कोई प्रतिबन्ध नहीं है और अनेक सदस्य लम्बे समय तक इसके सदस्य बने रहते हैं। सीनेट के एकस्मात मृत्यु या अन्य प्रकार से रिक्त हुये स्थानों को भरने के लिए राज्यों की विधान सभाएँ उस समय तक के लिए सदस्यों की नियुक्ति कर सकती हैं, जब तक आगामी प्रत्यक्ष निर्वाचन हो।
2. **गणपूर्ति** — सीनेट की बैठकों के लिए कुल सदस्यों के बहुमत की उपस्थिति को आवश्यक माना गया है।
3. **अधिवेशन** — अमेरिकी संविधान के अनुसार सीनेट का अधिवेशन तीन जनवरी की दोपहर को प्रतिनिधि सभा के साथ ही प्रारम्भ होता है और दोनों सदनों का अधिवेशन उस समय तक चलता है, जब तक कि दोनों सदन अधिवेशन के स्थगित या समाप्ति के लिये प्रस्ताव पारित न करें। यदि दोनों में अधिवेशन स्थगित की तिथि पर मतभेद उत्पन्न हो जाए तो राष्ट्रपति तिथि निश्चित करता है। सामान्यतया यह अधिवेशन जुलाई में समाप्त हो जाता है, लेकिन युद्ध या संकट की स्थिति में अधिक समय तक भी चल सकता है। राष्ट्रपति के द्वारा कांग्रेस के सदनों के विशेष अधिवेशन भी आमंत्रित किये जा सकते हैं।

4. **सभापति तथा अन्य पदाधिकारी (Chairman and other office bearers)** — संयुक्त राज्य अमेरिका का उपराष्ट्रपति सीनेट का पदेन सभापति होता है। वह मतदान में भाग नहीं लेता वह अपने निर्णायक मत का प्रयोग करता है। सीनेट को अपना एक 'सामयिक अध्यक्ष' ;उत्तमपकमदज चतवजमउचवतमद्ध भी चुनने का अधिकार होता है। वह बहुमत दल का मनोनीत सदस्य होता है। सीनेट के सभापति और उपसभापति की अनुपस्थिति में यह सदन की बैठकों की अध्यक्षता करता है। सामयिक अध्यक्ष सदन का सदस्य होने के नाते, उसे सदन की सभी कार्यवाहियों में भाग लेने और मत देने का अधिकार प्राप्त होता है । सीनेट के अन्य पदाधिकारी भी होते हैं जैसे बहुमत दल का नेता, दल सचेत, सचिव, सार्जेंट एट आर्म्स और सदन या लिपिक आदि।
5. **विशेषाधिकार व उन्मुक्तियाँ (Privileges and Immunities)** :— सीनेट सदस्यों को भी प्रतिनिधि सदन के सदस्यों की तरह ही कई विशेषाधिकार व उन्मुक्तियाँ प्राप्त हैं। इन्हें अधिवेशन के दौरान किसी भी दीवानी मुकद्दमे में नहीं पकड़ा जा सकता और न ही गवाही देने के लिए बाध्य किया जा सकता है। इन्हें सदन में बोलने की पूरी स्वतन्त्रता भी होती है।
6. **सीनेट की कार्यकारी विधि (Procedure of the Senate)** :— सीनेट अपनी कार्यकारी विधियों को स्वयं निर्मित करती है। सदन का कामकाज स्थापित नियमों के अनुसार ही चलता है। सदन में कोई भी सदस्य बोलने की पूरी स्वतन्त्रता रखता है। इस तरह असीमित समय के लिए बहस करते रहना विधेयक के मार्ग में सबसे बड़ी बाधा बन गया तो 1917 में यह नियम बनाया गया कि यदि बहस की समाप्ति का प्रस्ताव $1/6$ सदस्यों के हस्ताक्षरों से सीनेट में पेश किया जाता है और वहां उपस्थित $2/3$ सदस्यों की स्वीकृति मिलने पर वह प्रस्ताव पास हो जाता है तो बहस समाप्त करनी ही पड़ती है। 1949 में इस नियम में संशोधन करके $2/3$ बहुमत की बजाय कुल सदस्यों की बहु-संख्या कर दी गई।
7. **सीनेट के कार्य व शक्तियाँ (Functions and Powers of the Senate)** सीनेट की शक्तियाँ व उसके कार्य (**Powers of Senate and their Functions**) — सीनेट संसार का सबसे शक्तिशाली दूसरा सदन है, उसकी शक्तियाँ व्यापक हैं, जिन्हें मुख्यतः तीन भागों में बाँटा जा सकता है— व्यवस्थापन सम्बन्धी, कार्यपालिका सम्बन्धी एवं न्याय सम्बन्धी।
1. **व्यवस्थापन सम्बन्धी शक्तियाँ (Legislative Powers)**— सीनेट की मूल शक्तियाँ व्यवस्थान सम्बन्धी हैं। अमेरिका में व्यवस्थापिका के दोनों सदन समानपदी हैं और उसके अधिकार व्यवस्थापन के सम्बन्ध में समान हैं।
 - (i) जहाँ तक वित्त विधेयकों का सम्बन्ध है, उनके लिए यह आवश्यक है कि उन्हें प्रतिनिधि सभा में प्रस्तुत किया जाय। अमेरिकन संविधान के अनुच्छेद 1 के अनुसार वित्त विधेयक केवल प्रतिनिधि



सदन में ही पेश किए जा सकते हैं, परन्तु उनमें आवश्यक संशोधन करने का अधिकार सीनेट को पूरा अधिकार है। सीनेट वित्त-विधेयक के शीर्षक को छोड़कर उसमें शेष सभी प्रकार के संशोधन कर सकती है। कोई भी वित्तीय विधेयक सीनेट की अनुमति के बिना कानून नहीं बन सकता।

(ii) साधारण विधेयकों के विषय में दोनों सदनों की शक्तियाँ सब प्रकार से समान हैं। ये विधेयक दोनों सदनों में प्रस्तुत किये जा सकते हैं और व तब तक पारित नहीं समझे जाते, जब तक दोनों सदन उन्हें स्वीकार न करें।

(iii) संवैधानिक विधेयकों के विषय में दोनों सदनों की स्थिति पूर्णतः समान है। दोनों ही सदनों में सविधान के संशोधन सम्बन्धी विधेयक प्रस्तुत किये जा सकते हैं और प्रत्येक ऐसे विधेयक को पारित समझने जाने के लिए यह आवश्यक है कि उसे दोनों सदन अपने-अपने दो-तिहाई बहुमत से स्वीकार करें।

2. **कार्यपालन के क्षेत्रों में भी सीनेट की शक्तियाँ बड़ी महत्वपूर्ण हैं। इस क्षेत्र में तो उसकी शक्ति यहाँ की प्रतिनिधि सभा में भी बढ़कर है—**

(i) सीनेट की सबसे महत्वपूर्ण शक्ति वैदेशिक सन्धियों के विषय में है। इस विषय में व्यवस्था है कि राष्ट्रपति द्वारा विदेशों के साथ की गई सन्धियाँ तब तक पूर्ण व देश में लागू नहीं समझी जायेंगी, जब तक उन्हें सीनेट अपने दो-तिहाई बहुमत से स्वीकार न करे ले।

(ii) सीनेट की दूसरी प्रमुख कार्यपालन सम्बन्धी शक्ति राष्ट्रपति द्वारा की गई नियुक्तियों के पुष्टिकरण की गई। इस पुष्टिकरण के दो तिहाई बहुमत की आवश्यकता न होकर, केवल साधारण बहुमत की आवश्यकता होती है।

(iii) सीनेट को तीसरी कार्यपालन सम्बन्धी शक्ति विविध विभागों के विरुद्ध शिकायतों की जाँच से सम्बन्धित है। इस विषय में उसका निर्णय अन्तिम होता है।

(iv) सीनेट की कार्यपालन सम्बन्धी अन्तिम शक्ति युद्ध की घोषण के सम्बन्ध में है। इस विषय में प्रतिनिधि सभा के साथ सीनेट भी युद्ध की घोषणा किये जाने से पहले उसे अपनी स्वीकृति प्रदान करता है। इस सम्बन्ध में सिद्धान्तः उसकी शक्ति यद्यपि प्रतिनिधि सभा के समान ही है।

3. **न्याय सम्बन्धी शक्तियाँ (Judicial Power)—** न्यायिक क्षेत्र में भी सीनेट की शक्ति बड़ी महत्व की है। इस क्षेत्र में सीनेट को सरकार के अत्यन्त उच्च अधिकारियों के विरुद्ध (रिश्वत, धेखाधड़ी अथवा राष्ट्रद्रोह के सम्बन्ध में महाभियोग ; उच्चमंन्त्री उमदजद्व की जाँच कने का अधिकार प्राप्त है, यद्यपि अभियोग लगाने का कार्य प्रतिनिधि सभा करती है। ऐसे अवसरों पर वह न्यायिक प्रक्रिया के सभी कार्य, जैसे आदेश जारी करना, गवाहों को बुलाना, उन्हें शपथ दिलाना आदि करती है। राष्ट्रपति के विरुद्ध भी महाभियोग की



सुनवाई की शक्ति सीनेट को प्राप्त है। महाभियोग तभी सि(समझा जाता है, जब उसे सीनेट के कम-से-कम दो तिहाई सदस्यों का समर्थन प्राप्त हो।

4. **संविधान में संशोधन (Amendment in the Constitution) :-** सीनेट प्रतिनिधि सदन के साथ मिलकर 2/3 बहुमत से संशोधन प्रस्ताव पास करके संविधान में संशोधन कर सकती है।

उपरोक्त विवेचन के बाद कहा जा सकता है कि सीनेट को कुछ मामलों में तो प्रतिनिधि सदन के समान शक्तियां प्राप्त हैं और कुछ में अधिक। इस सदन के पास जितनी अधिक शक्तियां हैं, वे विश्व में किसी भी उच्च सदन के पास नहीं हैं।

3.4 पाठ के आगे का मुख्य भाग (Further main body of the text)

3.4.1 स्विट्जरलैण्ड की विधायिका (Legislature of Switzerland)

- **संघीय सभा (Federal Assembly)**

स्विट्जरलैण्ड में समानपदी द्विसदनीय व्यवस्था है स्विट्जरलैण्ड में जनता के प्रतिनिधि के रूप में सभा का निचला सदन है जिसे राष्ट्रीय सभा (National Assembly) कहते हैं तथा कैण्टनों के प्रतिनिधि के रूप में ऊपर का सदन है, जिसे राज्य सभा (Council of State) कहते हैं। दोनों सदनों को संघीय सभा (Federal Assembly) कहा जाता है।

- **राष्ट्रीय सभा (National Council)**
- **राज्य सभा (Council of States)**
- **राष्ट्रीय सभा (National Council)** – संविधान के अनुसार राष्ट्रीय परिषद् की अधिकतम सदस्य संख्या 200 हो सकती है। वर्तमान में इसकी वास्तविक सदस्य संख्या यही है। राष्ट्रीय परिषद् का निर्माण जनता के निर्वाचन प्रतिनिधियों द्वारा होता है। प्रत्येक कैण्टन या अर्(—कैण्टन को प्रादेशिक निर्वाचन-क्षेत्रों में विभक्त किया जाता है। प्रत्येक 24 हजार व्यक्तियों पर एक प्रतिनिधि चुना जाता है, किन्तु 12 हजार से अधिक जनसंख्या वाले क्षेत्र से भी एक प्रतिनिधि को राष्ट्रीय परिषद में स्थान दिया जाता है। सभा की सदस्य संख्या 200 की सीमा में ही रहे, इसके लिए यदि आवश्यक हो तो जनसंख्या की सीमा बढ़ायी जा सकती है। चूंकि प्रतिनिधित्व का आधार जनसंख्या है, अतः स्वाभाविक रूप से बड़ी जनसंख्या वाले कैण्टनों के प्रतिनिधि अधिक और छोटी जनसंख्या वाले कैण्टनों के प्रतिनिधि कम हैं। इसकी रचना की व्यवस्था संविधान की धारा 72 में दी गयी है।



- (i) **कार्यकाल, बैठकें, वेतन** – राष्ट्रीय सभा का कार्यकाल चार वर्ष है। सभा की बैठकें राज्य –सभा की बैठकों के साथ ही होती हैं। राष्ट्रीय सभा में निर्णय बहुमत से ले लिया जाते हैं और गणपूर्ति संख्या 101 है। यदि राष्ट्रीय सभा के सदस्यों में एक-चौथाई लोग या कैण्टनों की संपूर्ण संख्या के एक-चौथाई कैण्टनों की ओर से माँग की जाए तो संघीय परिषद् दोनों सदनों की संयुक्त बैठक बुला सकती है। राष्ट्रीय सभा के सदस्यों को मासिक वेतन नहीं दिया जाता। सदन की बैठक के समय केवल दैनिक भत्ता और मार्ग-व्यय दिया जाता है। इसका निर्वाचन प्रति 4 वर्ष अक्टूबर के अन्तिम रविवार को होता है और दिसम्बर के पहले सोमवार को सभा की पहली बैठक होती है।
- (ii) **सदस्यों की योग्यता व प्रतिबन्ध** – प्रत्येक सइस-नागरिक इसका सदस्य बन सकता है। धर्माधिकारी तथा राज्य सभा एवं संघीय-परिषद् के सदस्य 'राष्ट्रीय सभा' के सदस्य नहीं बन सकते हैं। वे व्यक्ति भी राष्ट्रीय सभा के सदस्य नहीं हो सकते हैं, जो संघीय परिषद (Federal Council) या राज्य सभा के (Council of States) सदस्य हों अथवा संघीय, सरकार के प्रमुख कर्मचारी हों।
- (iii) **निर्वाचन**— कोई भी व्यक्ति 'राष्ट्रीय सभा' की सदस्यता के लिए प्रत्याशी हो सकता है। राष्ट्रीय सभा के सदस्यों का निर्वाचन प्रत्यक्ष निर्वाचन प्रणाली द्वारा होता है, जिसमें वे सब व्यक्ति मतदान में भाग ले सकते हैं, जो 20 वर्ष या इससे अधिक आयु के होते हैं। निर्वाचन गुप्त मतदान द्वारा होता है। राष्ट्रीय सभा के लिए आनुपातिक प्रतिनिधित्व की प्रणाली काम में लायी जाती है। प्रत्येक कैण्टन एक निर्वाचन क्षेत्र में जिसमें प्रतिनिधियों का निर्वाचन के लिए विविध दल अपने-अपने प्रत्याशियों की सूची प्रस्तुत करते हैं। इस प्रकार प्रत्याशी व्यक्तिगत रूप से नहीं, वरन् सामुदायिक रूप से खड़े होते हैं। नियम यह है कि कोई भी पन्द्रह मतदाता मिलकर एक सूची प्रस्तुत कर सकते हैं, पर ऐसा साधारणतः संगठित राजनीतिक दल ही करते हैं। प्रत्येक सूची में उतने नाम होते हैं, जितने स्थान उस कैण्टन के होते हैं। मतदाता उतने मत देने का अधिकारी होता है, जितने सदस्यों का निर्वाचन उस कैण्टन से होता है। आनुपातिक प्रतिनिधित्व की प्रणाली का प्रयोग केवल उन कैण्टनों में होता है, जिसमें एक से अधिक सदस्यों का निर्वाचन होता है। उन कैण्टनों में जहाँ केवल सदस्य चुना जाता है, मतदान साधारण बहुमत प्रणाली द्वारा होता है।
- (iv) **बैठकें** – राष्ट्रीय सभा के सदस्यों का निर्वाचन 4 वर्ष के लिए होता है। इससे पहले सभा तभी भंग की जा सकती है, जब राष्ट्रीय सभा व राज्य सभा दोनों में किसी संवैधानिक संशोधन के लिए विषय में मतभेद हो। राष्ट्रीय सभा की बैठकें राज्य सभा की बैठकों के साथ ही साथ होती हैं और वर्ष भर में चार बार मार्च, जून, सितम्बर व दिसम्बर में होती है। यदि राष्ट्रीय सभा के एक-चौथाई सदस्यों या



सम्पूर्ण संख्या के एक-चौथाई कैण्टन की ओर से माँग की आये तो संघीय परिषद (Federal Council) दोनों सदनों की सम्मिलित बैठक बुला सकती है।

- (v) **अध्यक्ष व उपाध्यक्ष** – राष्ट्रीय सभा को प्रत्येक साधारण और असाधारण अधिवेशन के लिए अपने सदस्यों में से एक अध्यक्ष और एक उपाध्यक्ष चुनने का अधिकार दिया गया है। प्रतिवर्ष चुने जाते हैं। कोई भी सदस्य लगातार दो वर्षों तक अध्यक्ष नहीं बन सकता और न कोई जो एक वर्ष तक अध्यक्ष रह चुका हो, अगले वर्ष के लिए पुनः अध्यक्ष या उपाध्यक्ष निर्वाचन हो सकता है। अध्यक्ष, राष्ट्रीय सभा की अध्यक्षता तथा उसकी कार्यवाही का संचालन करता है। उस पर सदन में शान्ति और व्यवस्था बनाए रखने तथा सदन के सम्मान, गरिमा और प्रतिष्ठा को बनाये रखने का उत्तरदायित्व होता है। उसे निर्णायक मत देने का अधिकार है। सदन में जब विभिन्न समितियों का निर्वाचन होता है, तो अध्यक्ष भी साधारण सदस्य के समान मतदान करता है। उसका पद उतना निष्पक्ष भी नहीं होता जितना ब्रिटिश लोक सदन या अमेरिकी प्रतिनिधि-सभा के अध्यक्ष का होता है।

● राज्यसभा अथवा राज्य परिषद (State Assembly or State Council)

- (i) **राज्य परिषद की रचना (Composition of the Council of States) :-** जिसकी रचना अमेरिकी सिनेट से मिलती-जुलती है। अमेरिकी संघ की भांति स्विज संघ में भी प्रत्येक कैण्टन को चाहे उस का आकार व जनसंख्या कुछ भी हो, समानता के आधार पर प्रतिनिधित्व दिया गया है। संविधान की कतिपय धाराओं द्वारा इसके सदस्यों के चुनाव पर कुछ प्रतिबन्ध लगाए गए हैं जैसे- धारा-6 में स्पष्ट किया गया है कि “कैण्टन के समस्त सदस्यों का चुनाव लोकतन्त्रीय विधि से हो।” धारा-81 में लिखा है कि “राज्य परिषद का सदस्य इस पद पर रहते हुए न तो राष्ट्रीय परिषद और न संघीय परिषद का सदस्य हो सकता है। धारा-108 के तहत परिषद के सदस्यों को एक साथ संघीय न्यायालय की सदस्यता प्राप्त करने पर रोक लगा दी है। राज्य-सभा की सदस्य संख्या 44 है। प्रत्येक कैण्टन के दो और प्रत्येक अर्द्ध-कैण्टन का एक प्रतिनिधि होता है। सदस्य संख्या की यह व्यवस्था इसलिए रखी गयी है कि संघ की व्यवस्थापिका का ऊपरी सदन वास्तविक रूप से संघ की इकाइयों का प्रतिनिधि सदन हो।
- (ii) **पदाधिकारी (Officers) :-** राज्य परिषद प्रति वर्ष अपने सदस्यों में से एक अध्यक्ष और एक उपाध्यक्ष निर्वाचित नहीं हो सकते हैं। अध्यक्ष इसकी बैठकों की अध्यक्षता करता है। राज्य-परिषद् स्विज संघीय सभा का उच्च या द्वितीय सदन है। संविधान के अनुसार यह निम्न सदन का अधीनस्थ नहीं बल्कि समक्ष सदन है, अर्थात् स्विट्जरलैण्ड की संघीय सभा के दोनों सदनों की स्थिति समान्य है। संघीय



सभा का दूसरा सदन राज्यसभा है। वह राष्ट्रसभा की एक समानपदी संस्था है, यद्यपि अनेक बातों में राष्ट्र सभा से भिन्न है।

- (iii) **कार्यकाल** —स्विस राज्य-परिषद् के सदस्यों के कार्यकाल में भी असमानता है। विभिन्न कैण्टन भिन्न-भिन्न अवधियों के लिए सदस्यों का निर्वाचन करते हैं। इसके फलस्वरूप राज्य-परिषद् के 35 सदस्य 4 वर्ष के लिए, 5 सदस्य 3 वर्ष के लिए और 4 सदस्य केवल 1 वर्ष के लिए चुने जाते हैं। प्रायः उनका बार-बार पुनर्निर्वाचन होता रहता है। राज्य-परिषद् की बैठकें राष्ट्रीय की बैठकें राष्ट्रीय सभा की बैठकों के साथ ही होती हैं। किसी भी विषय पर सम्मिलित रूप से विचार करने के लिए राज्य-परिषद् और राष्ट्रीय परिषद् की सम्मिलित बैठक भी हो सकती है। यदि राष्ट्रीय-परिषद् के सदस्यों का एक-चौथाई भाग या कैण्टनों की एक-चौथाई संख्या संघीय परिषद् से प्रार्थना करे तो संघीय परिषद् ऐसा संयुक्त बैठक आमंत्रित कर सकती है।
- (iv) **बैठकें** — राज्यसभा की बैठकें राष्ट्रसभा की बैठकों के साथ-साथ होती हैं। उसकी भी बैठकें राष्ट्रसभा की तरह वर्ष भर में चार बार मार्च, जून, सितम्बर व दिसम्बर में होती है। किसी भी विषय पर सम्मिलित रूप से विचार करने के लिए राज्यसभा व राष्ट्रसभा की सम्मिलित बैठक भी हो सकती है, यदि राष्ट्रसभा के सदस्यों के एक-चौथाई भाग या कैण्टनों की एक-चौथाई संख्या की प्रार्थना पर संघीय परिषद् ऐसा सम्मिलित बैठक बुलाये।
- (v) **अध्यक्ष व उपाध्यक्ष** — राष्ट्रीय परिषद् की भाँति ही राज्य-परिषद् भी अपने सदस्यों में से ही अपना अध्यक्ष और एक उपाध्यक्ष चुनती है, किन्तु यह चुनाव एक वर्ष के लिए कहा जाता है। संविधान के अनुसार यह निश्चित किया गया है कि किसी एक कैण्टन के प्रतिनिधियों में से अध्यक्ष-उपाध्यक्ष लगातार दो वर्ष तक नहीं चुने जा सकते। राज्य-परिषद् के अध्यक्ष को भी वही अधिकार प्राप्त है जो राष्ट्रीय परिषद् के अध्यक्ष को है। वही सभा की बैठकों का सभापतित्व करता है, सदन में शान्ति और सुव्यवस्था स्थापित रखता है, सदन के नियमों का क्रियान्वयन करता है तथा समान मत आने पर निर्णयक मत देता है। राज्यसभा का भी एक अध्यक्ष व एक उपाध्यक्ष होता है। इसका निर्वाचन उसके सदस्यों के द्वारा एक वर्ष के लिए किया जाता है कोई भी दूसरी बार उसी पद के लिए निर्वाचित नहीं हो सकता। इसके अतिरिक्त यह प्रतिबन्ध भी है। कि एक कैण्टन के व्यक्ति एक ही साथ अध्यक्ष व उपाध्यक्ष नहीं हो सकते हैं।
- (vi) **विशेषाधिकार एवं उन्मुक्तियाँ (Privileges and Immunities)** :— स्विस संघीय सभा के सदस्यों को संविधान द्वारा कुछ विशेषाधिकार व उन्मुक्तियाँ दी गई हैं। उन्हें सिर्फ अपने सदन के प्रति उत्तरदायी ठहराया जा सकता है। अन्य किसी अधिकारी के प्रति नहीं। इसके सदस्यों को विचार अभिव्यक्ति और वाद-विवाद में भाग लेने की पूर्ण स्वतन्त्रता है। वे विधानमण्डल द्वारा पारित विधियों के



प्रति उत्तरदायी नहीं होते। न्यायिक क्रियाओं के सत्र के समय उन्हें उन्मुक्ति प्राप्त है। विधानमण्डल के सत्र के समय सम्बन्धित सदन से 24 घण्टे के अन्दर आज्ञा लेकर, किसी गम्भीर अपराध के लिए किसी प्रतिनिधि को गिरफ्तार किया जा सकता है।

• संघीय सभा की शक्तियाँ व कार्य (Power and Functions of Federal Assembly)

स्विट्जरलैण्ड की संघीय सभा को प्रायः वही व्यवस्थान सम्बन्धी अधिकार प्राप्त हैं, जो साधारणतः अन्य व्यवस्थापन संस्थाओं को प्राप्त होते हैं। संविधान की 85वीं धारा में यह व्यवस्था दी गयी कि कैबिनेटों के लिए सुरक्षित मामलों को छोड़कर अन्य सब मामलों में उसे पूरा अधिकार प्राप्त है। उसकी शक्तियाँ व कार्यों का विवेचन इस निम्न शीर्षकों में कर सकते हैं –

संघीय सभा दोनों सदनों के संयुक्त अधिवेशन में संघीय परिषद के सदस्यों, उसके अध्यक्ष और उपाध्यक्ष, संघीय न्यायपालिका के न्यायाधीशों, संघीय बीमा निकाय के सदस्य, सर्वोच्च सेनापति, विशेष जन-अभियोजक ; चांसलर आदि का निर्वाचन करती है। संघीय सभा, संघ-शासन और संघ-न्यायपालिका की कार्यवाहियों पर दृष्टि रखती है। इस सभा का अधिकार संघ की सामान्य अधिनियम शक्ति को क्रियान्वित करने, संविधान को क्रियान्वित कराने तथा संघ के कर्तव्यों को अच्छी तरह से पालन कराने का प्रयत्न करना है। कैबिनेटों की शासन-व्यवस्था पर भी संघीय सभा का नियंत्रण रहता है उसे यह अधिकार है कि कैबिनेटों के संविधान तथा उनके संविधान की उचित जाँच करे और उन्हें स्वीकार करें। दण्डित अपराधियों को क्षमादान अथवा सामूहिकक्षमादान समादान प्रदान करता है, संघीय सेना का नियमन व नियंत्रण करना तथा संघीय प्रशासन का निरीक्षण और निर्देशन करना आदि। वैदेशिक सम्बन्धों पर संघीय सभा का पूर्ण नियंत्रण है। ब्राह्म आक्रमणों से राष्ट्र की रक्षा करना, उसकी स्वतंत्रता और तटस्थता की रक्षा करना, युद्ध की घोषणा करना, संधियों और समझौतों को उत्पन्न करना आदि सभी कार्य संघीय के अधिकार-क्षेत्र में हैं। संधि-वार्ता सामान्यतः संघीय परिषद् द्वारा की जाती है, परन्तु उसके अन्तिम रूप को संघीय सभा के समझ प्रस्तुत करना होता है। संघीय सभा यदि आवश्यक समझती है तो उस संधि को स्वीकार करने के लिए संघीय परिषद् को अनुमति दे देती है।

- (i) **नियुक्ति सम्बन्धी अधिकार** – संघीय सभा को नियुक्तियों के सम्बन्ध में भी व्यापक अधिकार प्राप्त हैं। संविधान के अनुसार उसे संघीय परिषद व संघीय न्यायालय के सदस्यों, संघ के चांसलर तथा संकटकाल में मुख्य सेनाध्यक्ष को चुनने का अधिकार है। संविधान के अनुसार वह संघीय परिषद के अध्यक्ष व उपाध्यक्ष व संघीय न्यायालय के अध्यक्ष व उपाध्यक्ष का चयन करता है। उसे कुछ अन्ध चुनाव सम्बन्धी अथवा पुष्टिकरण सम्बन्धी अधिकार भी प्राप्त हैं जैसे वही संघीय बीमा न्यायालय के सदस्यों का निर्वाचन करती है। इनमें से अधिकांश नियुक्तियाँ संघीय सभा के दोनों सदन अपने संयुक्त अधिवेशन में करते हैं।



- (ii) **वित्त-सम्बन्धी अधिकार** – संघीय सभा का संघ के वित्त पर पूर्ण नियंत्रण है। वह संघ के आय-व्यय के लेखे को स्वीकार करती है और संघ की आर्थिक स्थिति पर नियंत्रण रखती है। उसको करों की मात्रा निश्चित करने तथा सकारात्मक आयों का व्यय करने का अधिकार है। संघीय सभा ही संघीय सरकार के प्रमुख पदों का सृजन और उसके वेतन आदि का निर्णय करती है। संघ की ओर से दिये जाने वाले ऋणों के विषय में भी निर्णय करना संघीय सभा का ही काम है। बजट पर संघीय सभा की स्वीकृति अन्तिम होती है, संघीय प्रशासन के विविध विभागों के अधिकारियों के वेतन आदि का निर्णय संघीय सभा ही करता है। संघीय सरकार के प्रमुख पदों की उत्पत्ति व उनके लिए वेतन आदि के विषय में निर्णय भी नहीं करती है। उसके सबसे प्रमुख वित्तीय अधिकार बजट की स्वीकृति का है। संघ की ओर से दिये जाने वाले ऋणों के विषय में भी निर्णय संघीय सभा ही करती है।
- (iii) **नियन्त्रण सम्बन्धी अधिकार**— संघीय सभा को यह अधिकार है कि वह सरकार के अन्य अंगों के कार्यों के प्रतिवेदन प्राप्त कर सके इन प्रतिवेदनों की जाँच करने वह सम्बन्धित अंग को उसकी त्रुटियों की ओर ध्यान दिलाते हुए उनसे भूल-सुधार के लिए कह सकती है। संघीय परिषद् के विषय में नियम यह है कि संघीय सभा उसके निर्णय को पलट नहीं सकती, यद्यपि सभा के आदेशों को भविष्य में मानना संघीय परिषद् के लिए आवश्यक होता है। संघीय न्यायालय के विषय में राष्ट्रीय सभा का अधिकार केवल उसकी कार्यविधि का जाँच करने का है। वह उनके निर्णयों की कोई आलोचना नहीं कर सकती।
- (iv) **विदेश सम्बन्धी अधिकार** – दूसरे देशों से की घोषणा करना, उनसे सन्धि करना, राष्ट्र की सेना का उपयोग करना तथा व सब कार्य करना संघीय सभा के कार्यक्षेत्र में हैं, जो स्विट्जरलैण्ड की स्वतन्त्रता व तटस्थता की रक्षा के लिए आवश्यक हों। सन्धि-वार्ता साधारणतः संघीय परिषद् द्वारा की जाती है, पर जब उसका रूप अन्तिम हो जाता है तो वह उसे संघीय सभा के समक्ष प्रस्तुत करती है। संघीय सभा यदि आवश्यक समझती है, तो उसे स्वीकार करने के लिए संघीय परिषद् को अनुमति दे देती है। इस सम्बन्ध में संघीय सभा अध्यादेश पारित कर देती है।
- (v) **विधायी शक्तियाँ (Legislative Powers)** :— संघीय एक विधायी सभा होने के नाते प्रत्येक संघीय विषय पर कानून बनाने का अधिकार रखती है। इसे संघ बड़े-बड़े प्राधिकारियों का संगठन व नियुक्ति सम्बन्धी कानून बनाती है। सभी नए नियम व अधिनियम उसके सामने ही प्रस्तुत किए जाते हैं और उनकी स्वीकृति होने पर ही वे कानून का रूप ले सकते हैं। स्विट्स संविधान में कार्यपालिका (राष्ट्रपति) को यह अधिकार प्राप्त नहीं है कि वह किसी विधेयक पर वीटो शक्ति का प्रयोग कर सके। परन्तु स्विट्स जनता को यह अधिकार अवश्य प्राप्त है कि वह अपने अधिकारों का प्रयोग करके किसी विधेयक



को अधिनियम बनने से रोक सकती है। स्विस् संघीय सभा ही संघीय अधिकारियों के भत्ते व वेतन निर्धारित करनी है और नए संघीय पदों का स्थायी सृजन करती है।

- (vi) **न्यायिक शक्तियाँ (Judicial Powers) :-** संघीय सभा देश की न्याय-व्यवस्था पर पूर्ण नियन्त्रण रखती है। वह संघीय न्यायपालिका के न्यायधीशों का निर्वाचन करती है और न्यायपालिका का निरीक्षण व निर्देशन भी करती है। कई मामलों में यह स्वयं ही अन्तिम न्यायालय होती है। यह संघीय परिषद, संघीय न्यायालय तथा बीमा न्यायालयों के बीच उत्पन्न मतभेदों को दूर करती है। यह प्रशासनिक मामलों पर भी अपील सुन सकती है। यह किसी भी संघीय प्राधिकारी व कर्मचारी के विरुद्ध कुछ विशेष मामलों में केस सुन सकती है और उसे सजा भी दे सकती है। इसे संघीय न्यायालय द्वारा दण्डित तथा सैनिक शासन के अन्तर्गत मृत्युदण्ड सुनाए गए व्यक्ति के दण्ड को माफ करने का अधिकार भी है।

● **राष्ट्रीय परिषद व राज्य परिषद में सम्बन्ध (Relationship between the National Council and the Council of States)**

स्विस् संविधान में विधानमण्डल के दोनों सदनों को समान शक्तियाँ प्रदान हैं। स्विट्जरलैण्ड में द्वितीय सदन प्रथम सदन के समान ही शक्तिशाली है, कोई भी विधेयक तब तक पास नहीं हो सकता, जब तक संघीय सभा के दोनों सदन उसे पास न कर दें। स्विस् विधानमण्डल में यदि किसी विधेयक पर कोई सदन आपत्ति करता है तो दोनों सदनों के बीच उत्पन्न मतभेद को दूर करने के लिए एक मध्यस्थ समिति गठित की जाती है। यदि यह समिति समाधान तक पहुंचने में असफल हो जाए तो विधेयक रद्द हो जाता है। स्विट्जरलैण्ड में द्वितीय सदन को ब्रिटेन तथा भारत की तरह विधेयकों में देरी करने की ही शक्ति प्राप्त नहीं है, बल्कि समान स्थिति प्राप्त है। भारत तथा ब्रिटेन में तो द्वितीय सदन द्वारा अमान्य विधेयक पर मध्यस्थ समिति का गठन कर दिया जाता है और यदि समिति उस मतभेद को दूर करने में असफल रहती है तो प्रथम सदन को ही प्राथमिकता मिलती है, लेकिन स्विस् में ऐसा नहीं है। वित्तीय क्षेत्र में भी दोनों को समान अधिकार प्राप्त हैं। भारत तथा ब्रिटेन में वित्त पर प्रथम या निम्न सदन का ही वर्चस्व रहता है। परन्तु स्विट्जरलैण्ड में ऐसा नहीं है। वहां पर हर क्षेत्र में दोनों को समान शक्तियाँ प्राप्त हैं। यदि वहां दोनों सदनों में कोई अन्तर प्रकट होता है तो वह मात्रात्मक है, गुणात्मक नहीं।

● **संघीय सभा की स्थिति (Position of the Federal Assembly)**

स्विस् संघीय सभा ब्रिटिश सभा ब्रिटिश संसद की तरह सर्वोच्च सत्ता रखती है। संघीय परिषद भी इसी के नियन्त्रण व निर्देशन में कार्य करती है। संघीय सभा संवैधानिक उपबन्धों तथा व्यवहारिक परम्पराओं के परिणामस्वरूप एक सम्प्रभुसत्ता सम्पन्न विधायिका बन चुकी है। स्विस् संघीय सभा उस सीमा तक सर्वोच्च नहीं है जैसी कल्पना की जाती है। संविधान द्वारा संघीय सभा पर जनता व कैबिनेटों के अधिकार बाधित हैं। जनमत संग्रह



की व्यवस्था संघीय सभा की सम्प्रभुता को चुनौती देती है। स्विट्जरलैंड की व्यवस्थापिका जिसे संघीय सभा कहा जाता है, वहाँ के संविधान के अनुसार सर्वोच्च सत्ताधिकारी है। अमरीका के संविधान के तीनों अंग व्यवस्थापिका, कार्यपालिका तथा न्यायपालिका समान सत्ताधारी हैं। क्योंकि वहाँ शक्ति पृथक्करण की व्यवस्था है। भारतीय संघ में शक्ति का पृथक्करण नहीं है। यहाँ संसद की सत्ता सर्वोच्च है। पर फिर भी इस बात की व्यवस्था है कि संसद द्वारा बनाये हुए कानूनों का पुनर्निरीक्षण सर्वोच्च न्यायालय द्वारा हो सके। स्विट्जरलैंड की संघीय सभा की स्थिति अमरीका की कांग्रेस व भारत की संसद दोनों से उच्चतर है। वहाँ संघीय सभा की सत्ता सर्वोच्च तथा असीमित है। वहाँ की संघीय सभा, वहाँ की कार्यपालिका संघीय परिषद् के सदस्यों का निर्वाचन करती है। वहीं संघीय न्यायालय के न्यायाधीशों का भी चयन करती है। कुछ मामलों में तो वह संघीय न्यायालय के निर्णयों को भी रद्द कर सकती है, संघीय न्यायालय द्वारा उसके बनाये हुए कानूनों के न्यायिक पुनर्निरीक्षण का तो प्रश्न ही क्या हो सकती है। इस प्रकार हम देखते हैं कि शासन के तीनों अंगों के पारस्परिक सम्बन्धों की दृष्टि से संघीय सभा की स्थिति सर्वोच्च है। संघीय सभा की सत्ता पर यदि कोई प्रतिबन्ध है, तो जनता व कैंटनों के अधिकारों का है। जनता व कैंटन भी उसके सह-अधिकारी हैं और वे अपने इस सह-अधिकारी का प्रयोग जनमत-संग्रह का प्रयोग करते रहते हैं। संघीय सभा की शक्ति पर यह एक महत्वपूर्ण कानूनी प्रतिबन्ध है कि अपने जनमत-संग्रह व आरम्भिक के अधिकार के प्रयोग द्वारा जनता व कैंटन उसके द्वारा पारित कानूनों को रद्द कर सकते हैं। स्विज संघीय सभा की स्थिति अमेरिकी कांग्रेस और भारतीय संसद दोनों से ही उच्चतर हैं।

3.4.2 चीन विधायिका की संरचना (Composition of the British Legislature)

चीन में भी ब्रिटेन तथा भारत की तरह संसदीय सर्वोच्चता को स्वीकार तो किया गया है, लेकिन एक सदनात्मक स्वरूप में। चीन एक साम्यवादी राज्य है, इसलिए चीन को सामाजिक, आर्थिक व राजनीतिक व्यवहारिक सत्यताओं के सन्दर्भ में एक ही सदन की व्यवस्था की गई है जिसे राष्ट्रीय जन कांग्रेस कहा जाता है। राष्ट्रीय जन कांग्रेस चीन की सर्वोच्च व्यवस्थापिका है जो साम्यवादी दल के झाण्डे तले ही रहकर कार्य करती है। चीनी गणतन्त्र का संविधान संसदीय सर्वोच्चता के सिद्धान्त पर आधारित है और वह शक्तियों के पृथक्करण के सिद्धान्त को मान्यता नहीं देता। 1982 के चीनी संविधान में राष्ट्रीय जन कांग्रेस को सर्वोच्च विधायी निकाय स्वीकार किया गया है। संविधान के अनुच्छेद 3 में स्पष्ट लिखा है कि चीनी जनवादी गणतन्त्र को समस्त शक्तियाँ जनता में निहित हैं और वह अपनी शक्तियों का प्रयोग न कांग्रेस के माध्यम से करती है।

1. रचना एवं संगठन (Composition and Organisation) – संसार के अन्य लोकतन्त्रात्मक राज्यों के समान चीन में राष्ट्रीय जनवादी कांग्रेस का स्वरूप द्वि – सदनात्मक ' नहीं है। इसका स्वरूप ' एकसदनात्मक ' ही है। जनवादी कांग्रेस का स्वरूप 1954, 1975, 1978 तथा 1982 के नवीन संविधान में भी एकसदनात्मक ही था। 1982 के संविधान के अ : उच्छेद 59 में राष्ट्रीय जनवादी कांग्रेस की रचना और संगठन का उल्लेख किया गया है।



राष्ट्रीय जनवादी कांग्रेस के सदस्यों का निर्वाचन प्रान्तों, स्व-शासित प्रदेशों, केन्द्रीय सत्ता की प्रत्यक्ष अधीनता वाली नगरपालिकाओं और सशस्त्र सेनाओं द्वारा किया जाता है। राष्ट्रीय जनवादी कांग्रेस के प्रतिनिधियों का निर्वाचन वयस्क मताधिकार के आधार पर होता है। चीन का प्रत्येक नागरिक, जिसकी आयु 18 वर्ष हो चुकी हो और जिसे कानून आज्ञा देता हो, इच्छानुसार मतदान कर सकता है और चुनाव लड़ सकता है। चुनाव में पागल व्यक्तियों और उन साम्राज्यवादी सामन्तों तथा नौकरशाही पूँजीवादी लोगों को जिन्हें नागरिक अधिकार 'प्राप्त नहीं है', भाग लेने का अधिकार प्राप्त नहीं है। मत देने और चुनाव लड़ने के लिए स्त्रियों को समान अधिकार प्रदान किया गया है। 'राष्ट्रीय जनवादी कांग्रेस' विश्व की सबसे बड़ी व्यवस्थापिका है। इसकी सदस्य संख्या परिवर्तनशील है। इसकी वर्तमान सदस्य संख्या 1 हजार से भी अधिक है। इसके सदस्यों को 'डेपुटी' (Deputy) या 'प्रतिनिधि' कहा जाता है। यहाँ यह उल्लेखनीय है कि राष्ट्रीय जनवादी कांग्रेस के सदस्य पूर्णकालिका राजनीतिज्ञ (Whole & time Politicians) नहीं होते हैं। वे अपने दैनिक जीवन में विभिन्न प्रकार के उत्पादन कार्यों में लगे रहते हैं और निर्वाचित होने के बाद भी अपना काम नहीं छोड़ते। जनता के साथ उनका गहरा और निरन्तर सम्पर्क बना रहता है। राष्ट्रीय जनवादी कांग्रेस के सदस्य कांग्रेस में अवरोध या अडंगेबाजी लगाकर व्यवधान उपस्थित नहीं करते हैं। वे अपने प्रत्येक कार्य के लिए अपने-अपने निर्वाचन क्षेत्र की जनता के प्रति उत्तदायी होते हैं।

2. कार्यकाल (Tenure)—1982 के संविधान के अनुच्छेद 60 के अन्तर्गत 'राष्ट्रवादी जनवादी' कांग्रेस के सदस्यों के कार्यकाल का

का उल्लेख किया गया है। इसके अनुसार राष्ट्रीय जनवादी कांग्रेस के सदस्यों या प्रतिनिधियों को 5 वर्ष के लिए निर्वाचित किया जाता है। कांग्रेस की अवधि समाप्त होने से 2 माह पूर्व ही इसका नया चुनाव सम्पादित कराया जाता है। लेकिन संकटकालीन अवस्था में यदि एक चुनाव संभव न हो तो पुरानी राष्ट्रीय जनवादी कांग्रेस की अवधि को ही नई कांग्रेस के प्रमुख अधिवेशन तक बढ़ाया जा सकता है। राष्ट्रीय जनवादी कांग्रेस की स्थायी समिति को ही यह चुनाव सम्पन्न कराने का अधिकार है।

3. अधिवेशन (Conference)—1982 के संविधान के अनुच्छेद 61 में राष्ट्रीय जनवादी कांग्रेस के अधिवेशन बुलाये जाने की व्यवस्था का उल्लेख किया गया है। उसकी स्थायी समिति ही इसके अधिवेशन को कम से कम एक बार अवश्य आमंत्रित करती है। यदि आवश्यक हो तो संविधान के अनुच्छेद 61 के अनुसार स्थायी समिति राष्ट्रीय जनवादी कांग्रेस का विशेष अधिवेशन भी बुला सकता है।

4. राष्ट्रीय जनवादी कांग्रेस के सदस्यों के विशेषाधिकार (Privileges)—राष्ट्रीय जनवादी कांग्रेस के सदस्यों को कतिपय विशेषाधिकार भी प्राप्त होते हैं। इसके सदस्य राज्य परिषद् अथवा राज्य परिषद् के मंत्रालय एवं आयोगों से प्रश्न पूछ सकते हैं, जिनका उत्तर दिया जाना आवश्यक है। इसके सदस्यों को कांग्रेस की अनुमति के



बिना न तो गिरफ्तार किया जा सकता है और न ही उन पर मुकदमा चलाया जा सकता है । बैठक के भीतर भी किसी भी सदस्य के विरुद्ध तब तक कोई कार्रवाई नहीं की जा सकती जब तक स्थायी समिति उसके लिए आज्ञा प्रदान न करे । राष्ट्रीय जनवादी कांग्रेस के सदस्यों के ये विशेषाधिकार या उन्मुक्तियाँ लोकतांत्रिक देशों की व्यवस्थापिका सभाओं ' के सदस्यों के अनुरूप ही है ।

5. शक्तियाँ और कार्य (Powers and Function) 1982 के संविधान में राष्ट्रीय जनवादी कांग्रेस को व्यापक शक्तियाँ तथा कार्य सौंपे गये हैं । संपूर्ण चीन के लिए कानून बनाने का अधिकार इसी कांग्रेस को है । इसकी व्यवस्थापिका शक्ति पर किसी भी प्रकार का कोई प्रतिबंध नहीं है । साधारण कानून कांग्रेस के सदस्यों के साधारण बहुमत से पारित किए जाते हैं । राष्ट्रीय जनवादी कांग्रेस को संविधान में संशोधन करने का भी अधिकार प्रदान किया गया है संविधान में संशोधन के लिए इसके कुल प्रतिनिधियों के दो – तिहाई बहुमत का होना आवश्यक है । यही संविधान के परिपालन की देखरेख भी करती है । राष्ट्रीय जनवादी कांग्रेस को कई प्रकार की समितियाँ बनाने का अधिकार है । जिसमें प्रमुख हैं – राष्ट्रीयताओं की समिति , विधेयक समिति , बजट समिति आदि । जब कांग्रेस का अधिवेशन हो रहा होता है तब राष्ट्रीयताओं की समिति , स्थायी समिति के अधीन कार्य करती हैं । विशेष कार्यों के लिए विशेष समितियों की स्थापना की जाती है । सरकार के विभिन्न विभागों का कर्तव्य है कि वे समितियों को वे सभी सूचनाएँ प्रदान करें जो उनके कार्यों के लिए आवश्यक और वांछनीय हों । राष्ट्रीय जनवादी कांग्रेस को निर्वाचन सम्बन्धी महत्वपूर्ण शक्तियाँ भी प्राप्त हैं । यह चीनी जनवादी गणराज्य के राष्ट्रपति तथा उप – राष्ट्रपति सर्वोच्च जन न्यायालय के अध्यक्ष तथा सर्वोच्च जन प्रोक्यूरेटरायल के मुख्य प्रोक्यूरेटर का निर्वाचन करती है । राष्ट्रपति की सिफारिश पर राज्य परिषद् के प्रधान अर्थात् प्रधानमंत्री के चयन तथा प्रधानमंत्री की सिफारिश पर राज्य परिषद् के अन्य सह सदस्यों के चयन के सम्बन्ध में राष्ट्रीय जनवादी कांग्रेस को निर्णय लेने का अधिकार है । यह ' राष्ट्रीय सैनिक आयोग के अध्यक्ष तथा सदस्यों का निर्वाचन करती है । राष्ट्रीय जनवादी कांग्रेस अपनी ' स्थाई समिति ' का भी निर्वाचन करती है, जो कि व्यवस्थापिका का ही एक लघु रूप है । राष्ट्रीय जनवादी कांग्रेस को देश के महत्वपूर्ण पदाधिकारियों – राष्ट्रपति , उप राष्ट्रपति , प्रधानमंत्री एवं उप प्रधानमंत्रियों , मंत्रियों , आयोगों के प्रधान , राज्य परिषद् के महासचिवों , स्थायी समिति के अध्यक्ष एवं उपाध्यक्ष , सर्वोच्च जनवादी न्यायालय के अध्यक्ष तथा प्रोक्यूरेटर जनरल इत्यादि को पदच्युत करने की भी शक्ति प्राप्त है ।

राष्ट्रीय जनवादी कांग्रेस की वित्तीय शक्तियों का उल्लेख भी संविधान में किया गया है । बजट को पारित करने तथा उसमें संशोधन करने का कार्य करती है । वित्तीय प्रतिवेदनों की जाँच करना , आर्थिक योजनाएँ बनाना तथा बजट समिति का निर्माण करना राष्ट्रीय जनवादी कांग्रेस का ही कार्य है । जनता पर कर लगाना और उन्हें वसूल करने के लिए नियम बनाना राष्ट्रीय जनवादी कांग्रेस के क्षेत्राधिकार में आते हैं । राष्ट्रीय जनवादी कांग्रेस दूसरे देशों में कूटनीतिक प्रतिनिधियों की नियुक्ति करने और उन्हें वापस बुलाने जैसे प्रश्नों पर भी निर्णय करती है । इसके द्वारा अपनी प्रशासनिक शक्तियों के बल पर स्थाई समिति एवं राज्य परिषद् (मंत्रिमण्डल) के कार्यों की देख



— रेख भी की जाती है । राष्ट्रीय जनवादी कांग्रेस को राज्य परिषद् के उन निर्णयों और आदेशों को रद्द करने का अधिकार है जो संविधान , विधियों तथा आज्ञप्तियों का उल्लंघन करते हों । यह प्रान्तों , स्वायत्त प्रदेशों एवं केन्द्र — शासित नगरपालिकों के अधिकृत अधिकारियों द्वारा किए गए असंगत निर्णयों को रद्द या संशोधित कर सकती है । युद्ध और शांति के प्रश्न का निर्णय राष्ट्रीय जनवादी कांग्रेस द्वारा ही किया जाता है । इसे सामान्य राज्य — क्षमा प्रदान करने की भी शक्ति प्रदान की गई है । संविधान ने राष्ट्रीय जनवादी कांग्रेस को ऐसे कार्य और अधिकार प्रदान किये हैं जिन्हें यह आवश्यक समझती हो । राष्ट्रीय जनवादी कांग्रेस की उपर्युक्त शक्तियों तथा कार्यों का अवलोकन करने से यह स्पष्ट हो जाता है कि संविधान में इस संस्था को सर्वशक्तिमान बनाते हुए इसे असीमित अधिकार प्रदान किये हैं । राष्ट्रीय जनवादी कांग्रेस केवल वैचारिक संस्था ही नहीं है , अपितु संपूर्ण देश पर इसका वास्तविक शासन है । लेकिन व्यवहार में , राष्ट्रीय जनवादी कांग्रेस अपने स्वरूप की विशालता के कारण स्वयं प्रभावशाली संस्था का कार्य नहीं कर सकती है और सभी निर्णय इसकी स्थायी समिति द्वारा सम्पन्न किये जाते हैं । जो कि इसके प्रति उत्तरदायी होती है । यह भी वास्तविकता है कि यह स्थायी समिति भी चीन के साम्यवादी दल के 'पोलिट ब्यूरो ' के अनुरूप ही कार्य करती है । इस तरह से साम्यवादी दल ही देश की सर्वोच्च नियामक शक्ति है ।

चीन का संविधान राष्ट्रीय जनवादी कांग्रेस को राज्यसभा का सबसे बड़ा अंग स्वीकार करता है और साथ ही इस कांग्रेस को असीम शक्तियाँ एवं अधिकार प्रदान करता है । परन्तु आकार में जनवादी कांग्रेस विशालता लिए हुए है, साथ ही इसके सत्र अत्यंत अल्पकालिक होते हैं । अतः : इसके अतः : इसके लिए यह सर्वथा असंभव है कि संविधान द्वारा प्रदत्त शक्तियों और अधिकारों को वह प्रभावशाली रूप में क्रियान्वित कर सके । इस परिस्थिति का समाधान करने के लिए चीनी संविधान निर्माताओं ने राष्ट्रीय जनवादी कांग्रेस के सदस्यों की एक 'स्थायी समिति' की व्यवस्था की है । यह एक स्थायी संस्था है, और जब जनवादी कांग्रेस का अधिवेशन नहीं हो रहा होता है तो उसके सभी कार्यों का निर्वाह करती है । इस 'स्थायी समिति' का निर्वाचन राष्ट्रीय जनवादी कांग्रेस करती है और वैधानिक दृष्टि से यह उसके प्रति उत्तरदायी है । संविधान की धारा 65 में उल्लिखित है कि, "स्थायी समिति, राष्ट्रीय जनवादी कांग्रेस के प्रति उत्तरदायी है और उसके समक्ष अपना प्रतिवेदन प्रस्तुत करती है । "साथ 162 तुलनात्मक शासन एवं राजनीति ही राष्ट्रीय जनवादी कांग्रेस को अपने स्थायी समिति के सदस्यों को वापिस बुलाने का अधिकार भी है । स्थायी समिति , जन कांग्रेस द्वारा निर्वाचित अग्रलिखित सदस्यों से निर्मित होती है — चेयरमैन , वाइस चेयरमैन , महासचिव एवं अन्य सदस्य । स्थायी समिति का कार्यकाल जन कांग्रेस के समकालीन है, किन्तु इस विषय में प्रतिबंध यह है कि एक कांग्रेस द्वारा निर्वाचित स्थायी समिति अपने अधिकार एवं अपनी शक्तियों का प्रयोग दूसरे राष्ट्रीय जनवादी कांग्रेस द्वारा अन्य स्थायी समिति का निर्वाचन किए जाने के दिन तक करती है । शक्तियाँ एवं कार्य — संविधान के अनुच्छेद 67 में इसकी शक्तियों का उल्लेख किया गया है । राष्ट्रीय जन कांग्रेस की स्थायी समिति अपने जनक निकाय (राष्ट्रीय जनवादी कांग्रेस) की भाँति विस्तृत शक्तियों का प्रयोग करती है ।



इसकी कुछ शक्तियाँ प्रक्रियात्मक आचरण की है। अतः इसे जन कांग्रेस के प्रतिनिधियों का चुनाव सम्पादित करने एवं जन कांग्रेस का आह्वान करने की शक्ति प्राप्त है। यह विधायी शक्तियों को भी प्रयुक्त करती है क्योंकि इसे आज्ञापितियाँ जारी करने का अधिकार है जिनका व्यवहारतः इतना ही प्रभाव होता है, जितना कि जनवादी कांग्रेस द्वारा पारित कानूनों का। स्थायी समिति विदेशों के साथ की गई संधियों पर स्वीकृति या अस्वीकृति प्रदान करने का इर्णय भी लेती है। स्थाई समिति की कार्यकारी शक्तियाँ भी बड़ी व्यापक और विस्तृत हैं। जब राष्ट्रीय जनवादी कांग्रेस का सत्र नहीं हो रहा होता है तो यह स्थायी समिति ही उप – प्रधानमंत्री, आयोगाध्यक्षों अथवा राज्य – परिषद् के प्रधान सचिव को नियुक्त करने तथा उसे हटाने के लिए अधिकृत है। यही समिति सर्वोच्च न्यायालय के उप – प्रधान न्यायाधीश, सर्वोच्च न्यायालय की न्यायिक समितियों के अन्य सदस्यों, प्रमुख न्यायाधीश एवं प्रोक््यूरेटरालय की समिति के सदस्यों को नियुक्त करने और हटाने का अधिकार रखती है। यही दूसरे देशों में अपने राजदूत भेजने और उन्हें वापस बुलाने के प्रश्नों का निर्णय करती है, विदेशों के साथ किसी भी प्रकार की संधियों का अनुसमर्थन और उनके निराकरण का निर्णय करती है तथा राज्य परिषद् के कार्य की देख – रेख करती है। प्रान्तीय स्वायत्त क्षेत्रों और केन्द्रशासित नगरपालिकाओं के सरकारी प्राधिकरणों द्वारा बनाए गए किसी भी अनुचित नियम को संशोधित करने अथवा रद्द करने का अधिकार भी संविधान द्वारा इस स्थायी समिति को दिया गया है। राष्ट्रीय जनवादी कांग्रेस का सत्र न होने के दिनों में यदि देश पर सशस्त्र आक्रमण हो जाए या होने की संभावना हो तो यह समिति युद्ध की घोषणा करने अथवा पारस्परिक सुरक्षा की किसी भी अन्तर्राष्ट्रीय संधि की पूर्ति करने के लिए अधिकृत है। इस समिति का अधिकार है कि यह पूर्ण अथवा आंशिक लामबन्दी का आदेश दे सके और देश के किसी भाग अथवा संपूर्ण देश में 'मार्शल लॉ' की घोषणा कर सके। उपर्युक्त शक्तियों के अतिरिक्त स्थायी समिति को महत्वपूर्ण न्यायिक अधिकार भी प्राप्त है जिनके अनुसार इसे न केवल कानूनों के निर्वाचन करने की शक्ति प्रदान की गई है बल्कि यह 'सर्वोच्च जन न्यायालय एवं 'सर्वोच्च जन प्रोक््यूरेटरालय' के कार्य का भी निरीक्षण करती है। इस समिति को राज्य की रक्षा करने का या किसी नागरिक, सैनिक और कूटनीतिक अथवा अन्य सम्मान, पुरस्कार, उपाधियाँ या पदक आदि देने का विशेषाधिकार भी प्राप्त है। राज्य परिषद् के ऐसे आदेश और निर्णय जो संविधान की किसी व्यवस्था या अधिनियम आदि का विरोध करते हो, इस स्थाई समिति द्वारा रद्द किए जा सकते हैं।

• राष्ट्रीय जन-कांग्रेस की स्थिति (Position of the National People's Congress)

राष्ट्रीय जन-कांग्रेस एक सर्वोच्च विधायी निकाय है जिसकी शक्तियाँ असीम हैं। जनता का प्रतिनिधि होने के कारण इसे भी अन्य लोकतन्त्रीय देशों की व्यवस्थाओं की तरह व्यापक शक्तियाँ सौंपी गई हैं परन्तु साम्यवादी दल के कठोर नियन्त्रण के तले वे शक्तियाँ एकमात्र कल्पना बनकर रह गई हैं। डी०जे० वालर ने लिखा है – "यह निकाय केवल विचार-विमर्श करने वाला है जिसका प्रमुख कार्य साम्यवादी दल की केन्द्रीय समिति द्वारा निर्धारित



नीतियों को स्वीकृति प्रदान करना है। इसलिए यह बात निराधार है कि चीन में प्रजातंत्रात्मक व्यवस्थापिका है। विरोधी दल के अभाव में चीन में राष्ट्रीय जन कांग्रेस के सदस्यों का चुनाव निष्पक्ष एवं स्वतन्त्र नहीं हो सकता। राष्ट्रीय जन कांग्रेस की समस्त गतिविधियों पर साम्यवादी दल का कठोर नियन्त्रण है। राष्ट्रीय जनवादी कांग्रेस के अधिवेशन वर्ष में एक बार ही होते हैं। यह अपना कार्यकाल भी स्वेच्छा से बढ़ा सकती है। इसके सदस्यों की अधिक संख्या किसी विषय पर गम्भीर चिन्तन नहीं कर सकती। परन्तु इसका अर्थ यह नहीं है कि राष्ट्रीय जन कांग्रेस सरकार का एक निष्क्रिय अंग है। सत्य तो यह है कि राष्ट्रीय जन कांग्रेस विभिन्न वर्गों की प्रतिनिधि है और इसकी सबसे बड़ी उपयोगिता इस बात में है कि यह साम्यवादी नीतियों व कार्यक्रमों को अमली जामा पहनाती है।

• स्थायी समिति की स्थिति (Position of the Standing Committee)

चीन में स्थायी समिति को राष्ट्रीय जनकांग्रेस के एक अंग के रूप में महत्वपूर्ण शक्तियाँ व अधिकार सौंपे गए हैं। वह राष्ट्रीय जन कांग्रेस के अधिवेशन की अनुपस्थिति में उन सभी शक्तियों की स्वामी बन जाती है। चीन में सिद्धान्त में तो राष्ट्रीय जन कांग्रेस ही शासन की सर्वोच्च सत्ता है, लेकिन व्यवहार में जन कांग्रेस की समस्त शक्तियों का प्रयोग करने वाली स्थायी समिति ही सर्वोच्च है। यद्यपि यह समिति अपने कार्यों के लिए राष्ट्रीय जन कांग्रेस के प्रति उत्तरदायी है, परन्तु व्यवहार में यह जन कांग्रेस के अधिक महत्वपूर्ण कार्यों का निष्पादन करके अपने को जन कांग्रेस के समक्ष लाकर खड़ी हो। राष्ट्रीय जन कांग्रेस और उसकी स्थायी समिति दोनों ही साम्यवादी दल के कठोर अनुशासन के पाश में जकड़ी हुई है। उनको कार्य और शक्तियाँ साम्यवादी दल के कार्यक्रमों और नीतियों के साथ बंधी हुई है। व्यवहार में वे साम्यवादी नेताओं की इच्छा के बिना कुछ नहीं कर सकती।

3.5 अपनी प्रगति जाँचें (Check your progress)

प्रश्न 1. राज्य परिषद् स्विट्स संघीय सभा का..... है ।

प्रश्न 2. अमरीकी कांग्रेस की समिति को आमतौर पर..... की संज्ञा दी जाती है ।

प्रश्न 3. चीन में..... एक सर्वोच्च विधायी निकाय है ।

प्रश्न 4. चीन में. साम्यवादी दल ही देश की सर्वोच्च नियामक शक्ति है ।

प्रश्न 5.....देश के संविधान में कार्यपालिका (राष्ट्रपति) को यह अधिकार प्राप्त नहीं है कि वह किसी

विधेयक पर वीटो शक्ति का प्रयोग कर सके।

प्रश्न 6 राष्ट्रीय सभा व राज्य सभा दोनों सदनों को कहा जाता है।

प्रश्न 7 ब्रिटेन में निम्न सदन के सदस्य वर्ष के लिए चुने जाते हैं।



प्रश्न 8 ने ब्रिटेन की संसद के बारे में कहा है कि, “इंग्लैण्ड की संसद वैधानिक रूप में इतनी

शक्तिशाली है कि ‘वह शिशु को प्रौढ़ घोषित कर सकती है’,

प्रश्न 9 ब्रिटेन में संसद के दो सदन और 1..... 2..... हैं

प्रश्न 10 सरकार का वह अंग है जो कानून निर्माण का कार्य करता है।

3.6 सारांश (Summary)

सरकार के कार्यों के कुशल संचालन के लिए उसे तीन अंगों में बांटा गया है। इनमें से विधायिका तो कानून निर्माण करती है, कार्यपालिका उन्हें लागू करती है तथा न्यायपालिका संविधान व सरकार की मर्यादा को बनाए रखती है। ब्रिटेन में ‘संसद’ की सम्प्रभु है, जो ‘शासन-तंत्र को संचालित व नियंत्रित भी करती है। डायसी ने ब्रिटेन की संसद के बारे में कहा है कि, “इंग्लैण्ड की संसद वैधानिक रूप में इतनी शक्तिशाली है कि ‘वह शिशु को प्रौढ़ घोषित कर सकती है’, ब्रिटेन में संसद के दो सदन और 1.कॉमन सदन 2. लार्ड सभा हैं अमेरिका की संघीय व्यवस्थापिका के निम्न सदन को ही प्रतिनिधि सदन कहा जाता है। यह समस्त राष्ट्र का प्रतिनिधित्व करता है और यह ब्रिटेन तथा भारत के लोकसदन के समान है। इसमें हर राज्य को जनसंख्या के अनुपात में प्रतिनिधित्व प्राप्त है। स्विट्जरलैण्ड में समानपदी द्विसदनीय व्यवस्था है स्विट्जरलैण्ड में जनता के प्रतिनिधि के रूप में सभा का निचना सदन है जिसे राष्ट्रीय सभा (National Assembly) कहते हैं तथा कैण्टनों के प्रतिनिधि के रूप में ऊपर का सदन है, जिसे राज्य सभा (Council of State) कहते हैं। दोनों सदनों को संघीय सभा (Federal Assembly) कहा जाता है। चीन में भी ब्रिटेन तथा भारत की तरह संसदीय सर्वोच्चता को स्वीकार तो किया गया है, लेकिन एक सदनात्मक स्वरूप में। चीन एक साम्यवादी राज्य है, इसलिए चीन को सामाजिक, आर्थिक व राजनीतिक व्यवहारिक सत्यताओं के सन्दर्भ में एक ही सदन की व्यवस्था की गई है जिसे राष्ट्रीय जन कांग्रेस कहा जाता है। राष्ट्रीय जन कांग्रेस चीन की सर्वोच्च व्यवस्थापिका है जो साम्यवादी दल के झाण्डे तले ही रहकर कार्य करती है। चीनी गणतन्त्र का संविधान संसदीय सर्वोच्चता के सिद्धान्त पर आधारित है और वह शक्तियों के पृथक्करण के सिद्धान्त को मान्यता नहीं देता। 1982 के चीनी संविधान में राष्ट्रीय जन कांग्रेस को सर्वोच्च विधायी निकाय स्वीकार किया गया है। संविधान के अनुच्छेद 3 में स्पष्ट लिखा है कि चीनी जनवादी गणतन्त्र को समस्त शक्तियां जनता में निहित हैं और वह अपनी शक्तियों का प्रयोग न कांग्रेस के माध्यम से करती है।

3.7 सूचक शब्द (Key Words)

1.सभा— विशिष्ट प्रयोजन के लिए एकत्र कुछ लोगों की मंडली।

2.संघ— ऐसे राज्यों का समूह जो अपने-अपने क्षेत्र में कुछ स्वतंत्र हों, पर कुछ विशिष्ट कार्य के लिए किसी केंद्रीय शासन के अधीन हों।



3.विधायिका या व्यवस्थापिका— सरकार का वह अंग है जो कानून निर्माण का कार्य करता है।

4.न्यायिक पुनरावलोकन— उस प्रक्रिया को कहते हैं जिसके अन्तर्गत कार्यकारिणी के कार्यों की न्यायपालिका द्वारा पुनरीक्षा का प्रावधान हो ।

5.सम्प्रभुता— किसी भौगोलिक क्षेत्र या जन समूह पर सत्ता या प्रभुत्व के सम्पूर्ण नियंत्रण पर अनन्य अधिकार को सम्प्रभुता कहा जाता है ।

3.8 स्वयं मूल्यांकन हेतु प्रश्न (Self Assessment Questions)

प्रश्न 1. अमेरिका में व्यवस्थापिका का वर्णन कीजिए

प्रश्न 2.स्विट्जरलैण्ड में व्यवस्थापिका का वर्णन कीजिए

प्रश्न 3 चीन की राज्य परिषद् का वर्णन कीजिए ।

प्रश्न 4 ब्रिटेन में व्यवस्थापिका का वर्णन कीजिए ।

प्रश्न 5 अमरीकी कांग्रेस की शक्तियों का विवेचन कीजिए

3.9 अपनी प्रगति की जांच करने के लिए उत्तर (Answers to check your progress)

प्रश्न.1 उच्च या द्वितीय सदन प्रश्न.2 लघु विधान मण्डल प्रश्न 3. राष्ट्रीय जन-कांग्रेस

प्रश्न 4. साम्यवादी प्रश्न 5 .स्विट्जरलैण्ड प्रश्न 6 संघीय सभा प्रश्न 7 5

प्रश्न 8. डायसी प्रश्न 9. 1.कॉमन सदन 2. लार्ड सभा 10.विधायिका या व्यवस्थापिका

3.10 सन्दर्भ ग्रन्थ/निर्देशित पुस्तकें (References / Suggested Readings)

1. तुलनात्मक राजनीति की रूपरेखा— ओम प्रकाश गाबा, मयूर पेपर बैक्स , नोएडा ।
2. तुलनात्मक शासन एवं राजनीति — डॉ. बीरकेश्वर प्रसाद सिंह, ज्ञानदा प्रकाशन (पी.एण्ड डी.) 24, दरियागंज, अंसारी रोड, दिल्ली ।
3. तुलनात्मक राजनीति एवं राजनीतिक संस्थाएँ — सी.बी. गेना, विकास पब्लिशिंग हाउस प्रा.लि. अंसारी रोड, दिल्ली ।
4. तुलनात्मक राजनीति — जे.सी . जौहरी, स्टर्लिंग पब्लिशर्स प्रा.लि. , दिल्ली ।



Subject : Political Science(Comparative Constitutions of UK & USA (Optional-I))	
Course Code : POLS-303	Autor : Dr. Parveen Sharma
Lesson No. 4	
संविधानिक ढांचा – कार्यपालिका (Constitutional Structure - Executive)	

अध्ययन की संरचना

4.1 अधिगम (Learning Objectives)

4.2 प्रस्तावना (Introduction)

4.3 अध्ययन के मुख्य बिन्दु (Main Points of Text)

4.3.1 कार्यपालिका का अर्थ और परिभाषा (Meaning and Definition of Executive)

4.3.2 कार्यपालिका के निर्माण अथवा चुनाव के तरीके (Mode of Choice of Executive)

4.3.3 कार्यपालिका के प्रकार (Types of Executive)

- वास्तविक तथा नाममात्र की कार्यपालिका (Real and nominal executive)
- राजनीतिक और स्थायी कार्यपालिका (Political and permanent executive)
- संसदीय तथा अध्यक्षीय कार्यपालिका (Parliamentary and presidential executive)
- एकल तथा बहुकार्यपालिका (Single and plural executive)
- पैतृक तथा चुनी हुई कार्यपालिका (Parent and elected executive)

4.3.4 कार्यपालिका के कार्य व भूमिका (Executive Functions and Role)

4.4 पाठ के आगे का मुख्य भाग (Further main body of the text)

4.4.1 ब्रिटेन में कार्यपालिका (Executive in U.K.)

- राजा व राजमुकुट (King and Crown)
- राजा के उत्तराधिकार आदि से सम्बन्धित व्यवस्थाएँ (Systems Related to Heir of King)



- राजा के विशेषधिकार (King's Privilege)
- सम्राट का स्थान (The Position of King)

4.4.2 राजा व ताज में अन्तर (Difference between king and crown)

4.4.3 ब्रिटेन में राजतन्त्र का औचित्य (Justification of Monarchy in Britain)

4.4.4 ब्रिटिश प्रधानमन्त्री (The British Prime Minister)

4.4.5 संयुक्त राज्य अमेरिका में कार्यपालिका का ढांचा (Executives Structure in U.S.A.)

4.4.6 अमेरिकन राष्ट्रपति की स्थिति (Position of American President)

4.4.7 अमेरिका का उपराष्ट्रपति (Vice-President of America)

4.4.8 अमेरिकन राष्ट्रपति और ब्रिटेन के सम्राट की तुलना (Comparison Between the American President and the King of England)

- राजा और राष्ट्रपति में समानताएं (Similarities between the King and the President)
- राजा और राष्ट्रपति में असमानताएं (Dissimilarities between the King and the President)

4.4.9 अमेरिका में राष्ट्रपति और ब्रिटिश प्रधानमन्त्री में तुलना (Comparison between the American President and the British Prime Minister)

- चीन में कार्यपालिका का ढांचा (Executive Structure in China)
- चीनी गणतन्त्र का राष्ट्रपति (President of the People's Republic of China)
- अध्यक्ष एवं उपाध्यक्ष (President and Vice-President)

4.5 अपनी प्रगति जांचें (Check your progress)

4.6 सारांश (Summary)

4.7 सूचक शब्द (Key Words)

4.8 स्वयं मूल्यांकन हेतु प्रश्न (Self- Assessment Questions)

4.9 अपनी प्रगति की जांच करने के लिए उत्तर (Answers to check your progress)

4.10 सन्दर्भ ग्रन्थ/निर्देशित पुस्तकें (References / Suggested Readings)



4.1 अधिगम (Learning Objectives)

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् विद्यार्थी योग्य होंगे—

1. ब्रिटिश राजा और प्रधानमंत्री, यू.एस.ए., और चीन के राष्ट्रपति की संवैधानिक स्थिति की व्याख्या करने में।
2. स्विट्जरलैंड की बहुल कार्यपालिका का विवेचन करने में।
3. कार्यपालिका के अर्थ एवं उसके महत्व को जान सकेंगे
4. तुलनात्मक अध्ययन करके इनके बारे में जान सकेंगे।

4.2 प्रस्तावना (Introduction)

कार्यपालिका सरकार की इच्छा या विधायिका के कानूनों को अमली जामा पहनाने वाला अंग है। इसे आमतौर पर सरकार का दूसरा तथा विधायिका का पूरक और समकक्षी अंग कहा जाता है। कार्यपालिका का जन्म शक्तियों के पृथक्करण के सिद्धान्त का प्रतिफल है। जैसे जैसे सरकार के कार्यों में वृद्धि होती गई, वैसे वैसे सरकार द्वारा एक ही संस्था के द्वारा सम्पन्न होने वाले कार्यों का विभाजन सरकार व प्रशासन चलाने के लिए आवश्यक होता गया। इससे सरकार के तीन अंगों का जन्म हुआ। व्यवस्थापिका को तो कानूननिर्माण का उत्तरदायित्व दिया गया, जबकि कार्यपालिका को उन कानूनों का क्रियान्वयन करने वाला अंग माना गया। इसलिए आज भी कार्यपालिका के लिए सरकार के नियम-क्रियान्वयन विभाग का प्रयोग किया जाता है। सरकार का यह अंग संगठन की दृष्टि से सभी देशों में समानता ही रखता है। संसदीय देशों में इसका विधायिका से प्रत्यक्ष सम्बन्ध रहता है, जबकि अध्यक्षीय शासन वाले देशों में यह सम्बन्ध स्वतन्त्र व अप्रत्यक्ष हो जाता है। आज कार्यपालिका के अन्तर्गत प्रशासन को भी शामिल किया जाता है, क्योंकि राजनीतिक कार्यपालिका और प्रशासन के कार्य आपस में घनिष्ठ रूप से सम्बन्धित हैं और राजनीतिक इच्छा का वास्तविक संचालन अनेक देशों में प्रशासकीय अंगों द्वारा ही किया जाता है। इसलिए अनेक विद्वानों द्वारा कार्यपालिका को अलग पहचान देने के लिए राजनीतिक कार्यपालिका, शब्द का ही प्रयोग किया जाने लगा है। आज सभी देशों में सरकार का यह अंग सबसे महत्वपूर्ण अंग बन चुका है। इसके बिना सरकार पंगु है। इसके निर्माण या चुनाव के तरीके भी सभी देशों में अलग अलग हैं। इंग्लैंड में यह वंशानुगत आधार पर चुना जाता है तो जर्मनी, दक्षिण अमेरिका, चिल्ली, घाना आदि में इसको प्रत्यक्ष रूप से चुनाव प्रणाली के आधार पर अनता द्वारा निर्वाचित किया जाता है। संयुक्त राज्य अमेरिका में यह निर्णायक मंडल द्वारा निर्वाचित किया जाता है तो भारत व स्विट्जरलैंड में इसे व्यवस्थापक मण्डल द्वारा चुना जाता है। सभी देशों में इसका कार्यकाल भी निर्वाचन के तरीके की तरह अलग-अलग है। भारत में इसका कार्यकाल पांच वर्ष, स्विट्जरलैंड में एक वर्ष, अमेरिका में चार वर्ष, फ्रांस में सात वर्ष तथा अर्जेन्टाइना में छः वर्ष है।



4.3 अध्ययन के मुख्य बिन्दु (Main Points of Text)

4.3.1 कार्यपालिका का अर्थ और परिभाषा (Meaning and Definition of Executive)

साधारण अर्थ में कानूनों का क्रियान्वयन करने वाली संस्था कार्यपालिका कहलाती है। आज इसका अर्थ सीमित और व्यापक दोनों अर्थों में किया जाता है। सीमित अर्थ में तो राज्य के प्रधान तथा उसके मन्त्रिमण्डल को ही कार्यपालिका कहा जाता है। व्यापक अर्थ में कार्यपालिका के अन्तर्गत नीति को अमली जामा पहनाने वाले प्रशासकीय अंग भी शामिल हो जाते हैं। कार्यपालिका को कुछ विद्वानों ने सीमित और व्यापक दोनों अर्थों में निम्न प्रकार से परिभाषित किया है :-

- **मेक्रिडीस** के अनुसार – “ राजनीतिक कार्यपालिका, राजनीतिक समाज के शासन के लिए औपचारिक उत्तरदायित्व निभाने वाली संस्थागत व्यवस्थाएं हैं।”
- **गिलक्राइस्ट** के अनुसार – “ कार्यपालिका सरकार का वह अंग है जो कानून के रूप में अभिव्यक्त जनता की इच्छा को कार्य में परिणत करती है। यह वह धुरी भी है जिनके चारों ओर राज्य का वास्तविक प्रशासन घूमता है।”
- **ला पालोम्बारा** के अनुसार – “ कार्यपालिका से आशय मुख्य कार्यपालक, विभागों के अध्यक्ष तथा सरकारी सोपान में उच्चतम स्तर के सार्वजनिक प्रशासकों से है। इसमें वे व्यक्ति, सिविल कर्मचारी तथा अन्य लोग जो मुख्य कार्यपालक की मदद के लिए भर्ती किए जाते हैं, शामिल होते हैं।”
- **गार्नर** के अनुसार – “ व्यापक तथा सामूहिक अर्थ में कार्यपालिका के अन्तर्गत व सभी अधिकारी, राज्य कर्मचारी तथा एजेन्सियां आ जाती हैं जिनका कार्य राज्य की इच्छा को, जिसे विधानमण्डल ने प्रकट कानून का रूप दे दिया है, कार्यरूप में परिणत करना है।”

इस प्रकार कार्यपालिका का अर्थ सीमित और व्यापक दोनों अर्थों में किया जाता है। आज कार्यपालिका तथा प्रशासन में अन्तरकरने के लिए सरकार तथा राजनीतिक कार्यपालिका जैसे शब्दों का प्रचलन बढ़ गया है। आधुनिक अर्थों में कार्यपालिका के लिए राजनीति विज्ञान में सरकार तथा राजनीतिक कार्यपालिका जैसे शब्दों का प्रचलन आम बात है। अब कार्यपालिका के अन्तर्गत उनव्यक्तियों को शामिल किया जाता है जो नीति निर्धारण, योजना-निर्माण, कानूनों का क्रियान्वयन तथा सैनिक व अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों या विदेश नीति का प्रतिनिधित्व करते हैं। आज प्रशासकीय अधिकारियों को कार्यपालिका से दूर रखा जाता है। यद्यपि व्यवहारमें कार्यपालिका को प्रशासन से दूर करना कठिन कार्य है, लेकिन सैद्धान्तिक तौर पर तो यह प्रयास किया ही जाता है। आम व्यक्तिकी दृष्टि में तो प्रशासन ही कार्यपालिका है और कार्यपालिका ही प्रशासन है।

4.3.2 कार्यपालिका के निर्माण अथवा चुनाव के तरीके (Mode of Choice of Executive)



(i) वंशानुगत आधार पर निर्वाचन :- यह व्यवस्था ब्रिटेन में प्रचलित है। इस व्यवस्था के तहत चुना हुआ कार्यपालक (सम्राट) आजीवन अपने पद पर बना रहता है।

(ii) जनता द्वारा निर्वाचन :- इस विधि का प्रयोग प्रत्यक्ष निर्वाचन के लिए किया जाता है। आज यह प्रणाली चिली, घाना तथा दक्षिणी अमेरिका के कुछ राज्यों में है। इस प्रणाली द्वारा चुना हुआ कार्यपालक प्रजा का वास्तविक प्रतिनिधि होने के कारण देश का भी वास्तविक शासक होता है। उसकी शक्तियां नाममात्र की नहीं हो सकती। यह प्रणाली अध्यक्षात्मक शासन प्रणाली वाले देशों में तो ठीक रह सकती है, संसदीय शासन प्रणाली वाले देशों में नहीं।

(iii) निर्वाचित निर्वाचक-मण्डल द्वारा अप्रत्यक्ष निर्वाचन :- जनता प्रत्यक्ष रूप से कार्यपालिका का निर्माण नहीं करती बल्कि जनता द्वारा निर्वाचित प्रतिनिधि ही निर्वाचक मण्डल के रूप में उसका निर्वाचन करते हैं। अमेरिका तथा स्पेन में राष्ट्रपति का चुनाव एक निर्वाचक-मण्डल द्वारा ही किया जाता है।

(iv) व्यवस्थापक-मण्डल द्वारा निर्वाचन :- इस प्रणाली के तहत व्यवस्थापिका के द्वारा ही कार्यपालिका का निर्वाचन किया जाता है। भारत तथा स्विट्जरलैण्ड में यही पद्धति अपनाई जाती है।

4.3.3 कार्यपालिका के प्रकार (Types of Executive)

कार्यपालिका के प्रमुख रूप या प्रकार निम्नलिखित हैं :-

- वास्तविक तथा नाममात्र की कार्यपालिका (Real and nominal executive) :- प्राचीन समय में नाममात्र तथा वास्तविक कार्यपालिका में कोई अन्तर नहीं था। शासन की सारी शक्तियां राजा के पास होती थी और वही अकेला समस्त शक्तियों का प्रयोग करता था। लेकिन 1688 की शानदार क्रान्ति के बाद इंग्लैण्ड में मन्त्रिमण्डल नाम की संस्था के जन्म के साथ ही कार्यपालिका के दो रूप उभर गए शासन की वास्तविक शक्तियों मन्त्रिमण्डल की संस्था के हाथ में चली गईं और नाममात्र की शक्तियां सम्राट के पास रह गईं। नाममात्र की कार्यपालिका के लिए संविधानिक कार्यपालिका का भी प्रयोग किया जाता है। संसदीय शासन प्रणाली वाले सभी देशों में इस प्रकार की कार्यपालिकाएं हैं। भारत में राष्ट्रपति नाममात्र की कार्यपालिका है और प्रधानमंत्री वास्तविक। नाममात्र की कार्यपालिका वह कार्यपालिका होती है जिसमें शासन की शक्तियों का राष्ट्राध्यक्ष के नाम पर वास्तविक प्रयोग मन्त्रिमण्डल या प्रधानमंत्री ही करता है, क्योंकि वही वास्तविक कार्यपालक होता है। राष्ट्राध्यक्ष तो रबड़ की मुहर या ध्वजमात्र होता है। उसे अपने अधिकारों और शक्तियों का स्वतन्त्र प्रयोग करने की अनुमति नहीं होती। भारत में राष्ट्रपति शासन सम्बन्धी जो भी कार्य करता है, वह मन्त्रिमण्डल की सलाह से ही करता है। संसदीय शासन प्रणालियों में ही वास्तविक और नाममात्र की कार्यपालिका का अन्तर देखने को मिलता है, अध्यक्षात्मक सरकारों में नहीं।



अध्यक्षात्मकसरकारों में तो राष्ट्राध्यक्ष ही वास्तविक कार्यपालक होता है, वहां नाममात्र की कार्यपालिका का सर्वथा अभाव होता है। अपने कार्यों के लिए पूर्ण रूप से उत्तरदायी होता है।

- राजनीतिक और स्थायी कार्यपालिका(Political and permanent executive) :-** आज राज्यों के कार्यों में वृद्धि हो जाने के कारण कार्यपालिका प्रशासन के साथ जुड़ गई है। आज कार्यपालिका के सभी कार्य प्रशासनिक अधिकारियों पर नौकरशाहीद्वारा ही किए जाते हैं। इससे प्रशासकीय और राजनीतिक कार्यपालिका का अन्तर मिट गया है। लेकिन राजनीति विज्ञान में इनका अलग-अलग अर्थों में प्रयोग किया जाता है। लोकतन्त्रीय देशों में तो सारे राजनीतिक निर्णय तथा सर्वोच्च प्रशासनिक निर्णय मुख्य कार्यपालक या मन्त्रीमण्डल द्वारा ही लिए जाते हैं। इसे राजनीतिक कार्यपालिका कहा जाता है। इसका स्वरूप अस्थायी होता है। निश्चित अवधि के बाद चुनावों के बाद नई कार्यपालिका अस्तित्व में आ जाती है। दूसरी तरफ प्रशासन के अधिकारी स्थायी रूप से अपने पद पर रिटायरमेंट की अवधि तक रहते हैं। उन्हें अपने पद पर रहने के लिए राजनीतिक समर्थन की आवश्यकता नहीं होती। इनका कार्य राजनीतिक कार्यपालिका के निर्णयों को कार्यरूप देना है। यह कार्यपालिका स्थायी कार्यपालिका कहलाती है। इसका स्वरूप स्थायी है। आज के लोकतन्त्रीय देशों में ये दोनों कार्यपालिकाएं इस तरह से अंगीकार हो चुकी हैं कि इनमें अन्तर करना कठिन हो गया है। भारत में स्थायी व राजनीतिक कार्यपालिका का सुन्दर समन्वय है।
- संसदीय तथा अध्यक्षात्मक कार्यपालिका(Parliametary and presidential executive) :-** कार्यपालिका तथा विधायिका के पारस्परिक सम्बन्धों के आधार पर दो तरह की कार्यपालिका होती है संसदीय और अध्यक्षात्मक। संसदीय कार्यपालिका को मन्त्रीमण्डल तथा उत्तरदायी कार्यपालिका भी कहा जाता है। संसदीय कार्यपालिका के सदस्य संसद या विधायिका के सदस्यों में से चुने जाते हैं और वे अपने अस्तित्व के लिए विधायिका के निरन्तर विश्वास और समर्थन पर आश्रित होते हैं। वे अपने कार्यों के लिए सीधे ही संसद के प्रति उत्तरदायी होते हैं। इस प्रकार की कार्यपालिका में राष्ट्राध्यक्ष व सरकार के अध्यक्ष या शासनाध्यक्ष में अन्तर होता है। इसके अन्तर्गत राष्ट्राध्यक्ष नाममात्र की शक्तियों का स्वामी होता है तथा शासनाध्यक्ष (प्रधानमन्त्री) वास्तविक शक्तियों का स्वामी होता है। इसमें समस्त निर्णय सामूहिक स्तर पर मन्त्रीमण्डल द्वारा ही लिए जाते हैं और अपनी नीतियों के लिए वही उत्तरदायी रहता है। इसके अन्तर्गत राष्ट्राध्यक्ष का कोई उत्तरदायित्व नहीं होता। उसकी स्थिति तो रबड़ की मुहर जैसी होती है। इस कार्यपालिका में राष्ट्राध्यक्ष शासनाध्यक्ष की अनुमति से कार्यपालिका को भंग कर सकता है। इसके विपरीत अध्यक्षात्मक कार्यपालिका में शासनाध्यक्ष व राष्ट्राध्यक्ष एक ही व्यक्ति होता है। उसे शासन की समस्त शक्तियां प्राप्त होती हैं। वह अपने कार्यकाल तथा नीतियों के लिए विधायिका के प्रति उत्तरदायी नहीं होता। वह प्रतीकात्मक या नाममात्र का शासनाध्यक्ष न होकर वास्तविक कार्यपालक होता है। इस प्रकार की कार्यपालिका अमेरिका में है, जबकि संसदीय कार्यपालिका इंग्लैण्ड तथा भारत में है।



- एकल तथा बहुकार्यपालिका (Single and pural executive) :-** राज्य की कार्यपालक शक्तियों के आधार पर कार्यपालिका, एकल व बहुसंख्यक दो प्रकार की होती है। जहां पर शासन की सारी शक्तियां एक ही व्यक्ति में निहित रहती हैं, वह एकलकार्यपालिका होती है। इसके विपरीत जब कार्यपालक शक्तियां अनेक व्यक्तियों या समूह के हाथों में होती हैं तो उसे बहुलया मंडल-कार्यपालिका के नाम से जाना जाता है। भारत, स्विटजरलैण्ड व ब्रिटेन में बहुकार्यपालिका हैं, जबकि अमेरिका में एकल कार्यपालिका है। एकल कार्यपालिका वहीं पर अस्तित्व में पाई जाती हैं जहां शक्तियों का पृथक्करण सिद्धान्त कोकठोरता से अपनाया गया हो। अमेरिका में शक्तियों के पृथक्करण के कारण कार्यपालिका, विधायी नियन्त्रण से मुक्त है। वहां पर शासन की कार्यपालक, विधायी नियन्त्रण से मुक्त है। वहां पर शासन की कार्यपालक शक्तियां राष्ट्रपति में निहित हैं। वहां पर संविधानिक मन्त्रीमण्डल की संस्था का अभाव है। राष्ट्रपति अपने उत्तरदायित्वों के निर्वहन के लिए कुछ व्यक्तियों की समिति या मन्त्रिमण्डल बना सकता है, लेकिन उनका कोई स्वतन्त्र व संविधानिक अस्तित्व नहीं हो सकता। वे कार्यपालक शक्तियों का प्रयोग राष्ट्रपति की इच्छानुसार ही करते हैं। वास्तविक कार्यपालक के रूप में प्रशासन पर समस्त अधिकार उसीका होता है। इसके विपरीत बहुत कार्यपालिका में सामूहिक उत्तरदायित्व का सिद्धान्त कार्य करता है। इसमें शासन की सारी शक्तियां मन्त्रिमण्डल नामक संविधानिक संस्था के पास होती हैं। इसके अन्तर्गत न तो शक्तियों का एकमात्र स्वामी होता है और न ही वह अपनी इच्छानुसार कार्यपालक शक्तियों का प्रयोग कर सकता है। अमेरिका का राष्ट्रपति एकल कार्यपालिका का उत्तम उदाहरण है तो भारत का मन्त्रीमण्डल बहुत कार्यपालिका का।
- पैतृक तथा चुनी हुई कार्यपालिका (Parent and elected executive):-** जिस देश में कार्यपालिका को पैतृक आधार पर चुना जाता है, वह पैतृक कार्यपालिका होती है। ब्रिटेन में सम्राट का चुनाव पैतृक आधार पर ही होता है। यह कार्यपालिका वंशानुगत होती है। इसमें जन इच्छा का अभाव पाया जाता है। इसके विपरीत जिन देशों में कार्यपालिका जनता या जन-प्रतिनिधियों द्वारा प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से चुनाव के आधार पर चुनी जाती है, उसे निर्वाचित या चुनी हुई कार्यपालिका कहा जाता है। भारत, अमेरिका, बंगलादेश, श्रीलंका, पीरू, चिल्ली आदि देशों में निर्वाचित कार्यपालिकाएं हैं।

4.3.4 कार्यपालिका के कार्य व भूमिका

लोककल्याणकारी राज्यों का प्रादुर्भाव से सरकार के उत्तरदायित्वों में भी वृद्धि हुई है। आज सरकार ऐसे कार्य करने लग गई है जो पहले किसी भी संस्था के द्वारा नहीं किए जाते थे। इन कार्यों की प्रकृति राजनीतिक व्यवस्था की प्रकृति, ढाँचे व राजनीतिक कार्यपालिका की स्वयं की प्रकृति पर निर्भर करती है। कार्यपालिका द्वारा निष्पादित किए जाने वाले कार्य प्रत्येक देश में अलग अलग हैं। संविधानिक तौर पर तो कार्यपालिका का कार्य विधायिका द्वारा बनाए



गए नियमों व कानूनों का क्रियान्वयन करना या उन्हें अमलीजाना पहनाना है, लेकिन आज कार्यपालिका वास्तविक रूप में अनेक कार्य करती है। कार्यपालिका द्वारा निष्पादित किए जाने वाले प्रमुख कार्य हैं :-

- (i) **प्रशासकीय कार्य** :- कार्यपालिका प्रशासन को सुचारु रूप से चलाने के लिए सभी प्रशासनिक तथा नीति सम्बन्धी निर्णय लेती है। विधायिका द्वारा निर्मित कानूनों को अमली जामा पहनाने के लिए वह महत्वपूर्ण पदों पर कर्मचारियों व अधिकारियों की नियुक्ति करती है। प्रशासन को चलाने के लिए सभी आवश्यक विभागों की स्थापना भी कार्यपालिका ही करती है। सभी विभागों पर अपना नियन्त्रण निर्देशन व निरीक्षण बनाए रखने की भी व्यवस्था कार्यपालिका ही करती है। संसदीय देशों में कार्यपालिका को अपने प्रशासकीय कार्य अधिक कुशलता से करने पड़ते हैं। इनमें मन्त्रीमंडल नामक संस्था के द्वारा सामूहिक उत्तरदायित्व के आधार पर प्रशासकीय कार्यों का निष्पादन होता है, जबकि अध्यक्षीय देशों में राष्ट्राध्यक्ष ही वास्तविक कार्यपालक होने के नाते समस्त प्रशासन का अधिकृत प्रशासक होता है। सभी महत्वपूर्ण विभागों में नियुक्तियों व प्रशासनिक अधिकारियों पर उसी का नियन्त्रण रहता है। देश के अन्दर प्रशासन पर कार्यपालिका का ही वास्तविक नियन्त्रण रहता है।
- (ii) **विदेश नीति का संचालन** :- आज का युग अन्तर्राष्ट्रीय अन्तर्निर्भरता का युग है। दूसरे देशों से व्यापारिक तथा कूटनीतिज्ञ सम्बन्ध बनाए रखना प्रत्येक राष्ट्र की मजबूरी है। परमाणु युद्ध का खतरा उत्पन्न होने के बाद तो विदेशी-सम्बन्धों का महत्व और अधिक बढ़ गया है। ये कार्य अब कार्यपालिका के हाथों से ही सम्पन्न किए जाते हैं। विदेशों में विदेश नीति के संचालन के लिए राजदूतों की नियुक्ति, विदेशी राजनयिकों का स्वागत, अन्तर्राष्ट्रीय संगठनों व सम्मेलनों में देश का प्रतिनिधित्व, विदेशी सम्बन्धों को सुसंगत बनाए रखने के लिए की जाने वाली सन्धियां व समझौते, सांस्कृतिक, शैक्षिक व व्यापारिक गतिविधियों का संचालन व नियन्त्रण आदि समस्त कार्य कार्यपालिका के ही कार्य हैं। राष्ट्रीय हित को प्राप्त करने में कार्यपालिका का बहुत अधिक हाथ होता है। यद्यपि विदेश नीति के संचालन में विधायिका का भी कुछ न कुछ योगदान अवश्य होता है, लेकिन वह औपचारिकता तक ही सिमटकर रह जाता है। युद्धकाल में तो कूटनीतिक सम्बन्धों को गति देने के लिए सक्रिय कार्यपालिका की आवश्यकता अधिक अनुभव की जाती है। भारत में विदेश नीति के संचालन में राष्ट्रपति व प्रधानमंत्री दोनों की महत्वपूर्ण भूमिका रहती है। अमेरिका में इस कार्य में राष्ट्रपति पूर्ण रूप से महत्वपूर्ण अधिकार रखता है।
- (iii) **व्यवस्थापन सम्बन्धी कार्य** :- संसदीय देशों में व्यवस्थापन का कार्य कार्यपालिका के सहयोग से विधायिका द्वारा ही किया जाता है। अध्यक्षीय देशों में यह कार्य विधायिका द्वारा स्वतन्त्र रूप से किया जाता है। अध्यक्षीय व संसदीय सरकार में कानून को मूर्त रूप देने का कार्य कार्यपालिका ही करती है। कार्यपालिका प्रत्येक व्यवस्थापन में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका संसदीय शासन प्रणाली वाले देशों में ही निभाती है। यहां पर वह कानून का निर्माण और उसे लागू करना दोनों कार्यों को पूरा करने में



सक्षम होती है। पारस्परिक निर्भरता के सिद्धान्त पर आधारित होने के कारण व्यवस्थापन प्रक्रियासे उसका प्रत्यक्ष सम्बन्ध होता है। संसद का अधिवेशन बुलाना, उसका सत्रवसान, स्थगन तथा विघटन कार्यपालिका ही करती है। कार्यपालिका ही विधेयक पेश करती है और उसे संसद से पारित भी कराती है। व्यवस्थापन कार्य में कार्यपालिका नीति-सम्बन्धी सूचनाएं व्यवस्थापिका की सलाह मानने को बाध्य नहीं होती लेकिन आजकल कई देशों में अध्यक्षात्मक सरकारके व्यवस्थापन सम्बन्धी कार्यों को कार्यपालिका कुछ न कुछ प्रभावित अवश्य करती है। अपनी प्रदत्त व्यवस्थापन की शक्तिके अन्तर्गत कार्यपालिका को स्वतन्त्र रूप से कानून बनाने का अधिकार प्राप्त होता है। विधायिका के अधिवेशन न चलने की स्थिति में कार्यपालिका अध्यादेश भी जारी कर सकती है।

(iv) **सैनिक कार्य:**— युद्धकाल या शांतिकाल में देश की सैनिक शक्ति को संगठित रखना व संचालन करनेका अधिकार भी कार्यपालिका के हाथों में ही होता है। राष्ट्रपति सेनाओं का वास्तविक कार्यपालक होता है। उसे सेनाओं के गठन, सैनिक अधिकारियों की नियुक्ति, पदच्युति और युद्ध का नेतृत्व करने का अधिकार प्राप्त होता है। वह राष्ट्रीय सम्मान या सुरक्षा के लिए युद्ध की घोषणा भी कर सकता है। संसदीय सरकार में तो उसे मन्त्रीमण्डल या विधायिका की अनुमति लेनी पड़ती है, लेकिन अध्यक्षात्मक सरकार में उसे स्वतन्त्र रूप से सैनिक कार्यों के संचालन का अधिकार होता है। युद्ध कालमें कार्यपालिका देश के निवासियों को अनिवार्य सैनिक सेवा देने को बाध्य भी कर सकती है। अमेरिका में अफगानिस्तान और ईराक के विरुद्ध युद्ध की घोषणा अमेरिका के राष्ट्रपति ने ही की थी। सद्दाम को पकड़ने का निर्णय राष्ट्रपति बुश का ही स्वतन्त्र निर्णय था। इस तरह सैनिक कानून लागू करने और संकटकाल की घोषणा करने का भी अधिकार राष्ट्रपति या कार्यपालिका को ही है, चाहे वह औपचारिक हो या अनौपचारिक। युद्धकाल में कार्यपालिका की शक्ति कई गुणा बढ़ जाती है। तानाशाही देशों में तो कार्यपालिका का सैनिक कार्यों पर सर्वाधिकार हो जाता है। शांतिकाल में भी देश की सेनाओं पर वास्तविक नियन्त्रण कार्यपालिका का ही होता है, चाहे वह प्रत्यक्ष हो या अप्रत्यक्ष।

(v) **वित्तीय कार्य:**— आज देश के वित्त पर भी कार्यपालिका का कुछ न कुछ नियन्त्रण अवश्य रहता है। आय-व्यय पर व्यवहारिक नियन्त्रण प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से कार्यपालिका का ही होता है। सिद्धान्त रूप में तो यह कार्य विधायिका का है। संसदीय देशों में कार्यपालिका को विधानमण्डल में बहुमत प्राप्त होने के कारण नए टैक्स लगाने, टैक्स हटाने या घटाने के बिल प्रायः कार्यपालिका ही पेश करती है और उन्हें पास करा लेती है। राष्ट्रीय कोष की समुचित व्यवस्था के लिए कार्यपालिका के अन्तर्गत एक वित्त विभाग रहता है। कार्यपालिका प्रत्येक विभाग के वित्त पर नियन्त्रण भी रखती है। अध्यक्षात्मक सरकार में भी कार्यपालिका बजट तो पेश नहीं करती, लेकिन बजट को अपनी देख-रेख



में ही तैयार कराती है। अमेरिका में बजट का निर्माण राष्ट्रपति की ही देखरेख में होता है। भारत में वित्तमन्त्री ही बजट पेश करता है। इस तरह कार्यपालिका कुछ वित्तीय कार्य भी करती है।

- (vi) **न्यायिक कार्य:**— उच्चतम न्यायालयों के न्यायाधीशों की नियुक्ति कार्यपालिका द्वारा ही की जाती है। कार्यपालिका के अध्यक्ष के पास अपराधी की सजा माफ करने या घटाने का पूरा अधिकार है। यद्यपि लोकतन्त्र में इस शक्तिको खतरे की निशानी समझा जाता है, लेकिन आज न्यायपालिका के अधिकार का भी कार्यपालिका द्वारा कुछ न कुछ प्रयोग अवश्य किया जाता है। भारत में सर्वोच्च न्यायालय द्वारा दी गई फांसी की सजा को भी राष्ट्रपति माफ कर सकता है या आजीवन कारावास में बदल सकता है। इससे न्यायपालिका की शक्ति का हास अवश्य होता है।
- (vii) **नीति-निर्माण करना:**— कार्यपालिका का सबसे अधिक महत्वपूर्ण कार्य नीति निर्धारण करना भी है। संसदीय सरकार में कार्यपालिका अपनी नीति निर्धारण करके संसद के सामने प्रस्तुत करती है। अध्यक्षतात्मक सरकार में वह अपनी नीतियों की स्वतन्त्र निर्धारक होती है। कार्यपालिका ही देश की आन्तरिक व बाहरी नीति का निर्धारण करती है और उसी के आधार पर शासन चालती है। नीतियों को लागू करना भी कार्यपालिका का ही कार्य है।
- (viii) **संकटकालीन काय :**— संकटकालीन परिस्थितियों में कार्यपालिका की शक्तियां कई गुणा बढ़ जाती हैं। सैनिक संकट, विद्रोह, बाहरी आक्रमण, देश की सुरक्षा को खतरा या आर्थिक संकट के पैदा होने की स्थिति में कार्यपालिका अपनी संकटकालीन शक्तियों का प्रयोग कर सकती है। ऐसे समय में वह नागरिकों के मौलिक अधिकारों का स्थगन भी कर सकती है और देश में आर्थिक आपातकाल की भी घोषणा कर सकती है। इन शक्तियों के कारण व्यवस्थापिका की शक्ति का हास होने लगा है।
- (ix) **राजनीतिक कार्य :**— प्रत्येक देश में राजनीतिक कार्यपालिका कुछ न कुछ राजनीतिक कार्य भी अवश्य करती है। इनमें प्रतिनिधित्व, नेतृत्व, विचार विमर्श व निर्णय, निरीक्षण व नियन्त्रण आदि कार्य शामिल हैं। राजनीतिक समाज में विभिन्न संस्थागत व्यवस्थाओं का संयोजन व एकीकरण करना भी कार्यपालिका ही करती है। विभिन्न हितों को प्रतिनिधित्व देना व उनमें सामंजस्य बिठाना भी कार्यपालिका का ही कार्य है। कार्यपालिका देश व समाज को नेतृत्व देने का भी कार्य करती है। प्रदत्त व्यवस्थापन के अन्तर्गत निर्णय देना भी कार्यपालिका का ही कार्य है। कार्यपालिका की निर्णयकारी भूमिका के कारण आज उसकी शक्तियों में अप्रत्याशित वृद्धि हो रही है।
- (x) **आर्थिक कार्य:**— आज का युग कल्याणकारी राज्यों का युग है। आज सभी सरकारें लोकहित के कार्य करने को मजबूर हैं। इसी कारण में नियोजन द्वारा आर्थिक विकास की योजनाओं को सफल बनाने के प्रयास करती हैं। इस आर्थिक योजना पर कार्यपालिका का ही पूर्ण नियन्त्रण रहता है। देश को सम्पूर्ण आर्थिक जीवन पर नियन्त्रण होने के कारण कार्यपालिका का महत्व भी बढ़ रहा है। व्यापार, वाणिज्य,



कृषि, उद्योग जैसे विषयों पर कार्यपालिका का नियन्त्रणबढ़ा है। आय व व्यय पर नियन्त्रण रखने के साथ-साथ आर्थिक साधनों की उत्पादन व वितरण प्रणाली पर भी कार्यपालिकाका ही नियन्त्रण रहता है।

इस प्रकार कहा जा सकता है कि आधुनिक युग में कार्यपालिका की शक्तियों का विस्तार जीवन के हर क्षेत्र तक है। राज्य के कल्याणकारी आदर्श, राष्ट्रीय सुरक्षा, अन्तर्राष्ट्रीय उत्तरदायित्व, वित्त-व्यवस्था, विधि निर्माण, सैनिक कार्यों का संचालन करना, प्रशासनिक व कूटनीतिक कार्य करना आदि के रूप में कार्यपालिका के उत्तरदायित्व बढ़े हैं। आज प्रत्येक राजनीतिक व्यवस्था में विदेशी सम्बन्धों के संचालन से लेकर आर्थिक गतिविधियों के नियन्त्रण तक कार्यपालिका के अधिकार क्षेत्र का ही विस्तार है। आज कार्यपालिका को सही शासन का लाभ देने व आर्थिक विकास को गति देने में महत्वपूर्ण भूमिका है। आज कार्यपालिका के संविधानिक, संकटकालीन व राजनीतिक कार्यों के रूप में राजनीतिक व्यवस्था को गतिशील बनाए रखने में अभूतपूर्व भूमिका है। चेस्टरबनार्ड ने कार्यपालिका के कार्यों को बहुआयामी बताया है। उनके अन्तर्गत समस्त प्रकारके प्रशासकीय, वित्तीय, न्यायिक, कूटनीतिक, सैनिक, राजनीतिक व आर्थिक कार्य आ जाते हैं। सार रूप में देश में शान्ति व्यवस्था बनाए रखना, लोककल्याण के आदर्श को प्राप्त करना तथा विदेशी नीति का सफल क्रियान्वयन ही कार्यपालिका का आदर्श है।

4.4 पाठ के आगे का मुख्य भाग (Further main body of the text)

4.4.1 ब्रिटेन में कार्यपालिका (Executive in U.K.)

ब्रिटिश संसद (British Parliament):— सैद्धांतिक दृष्टि से ब्रिटिश संसद में राजकुट (The Crown), लार्ड सभा (House of Loard) को कॉमन्स सभा (House of Commons) तीनों आ जाते हैं। लार्ड सभा को उच्च सदन, कॉमन्स सभा का निम्न सदन कहा जाता है। कॉमन्स सभा की शक्तियां और कृत्य लार्ड सभा की तुलना से अधिक विस्तृत और महत्वपूर्ण कॉमन्स सभा को ब्रिटिश संसद का पर्यायवाची समझा जाता है क्योंकि इसके सदस्यों का चुनाव जनसाधारण के द्वारा किया जाता है, इसी सदन को विधि-निर्माण की आंतिक शक्ति प्राप्त है, और मंत्रिमण्डल अपने अस्तित्व के लिए इसी सदन के विश्वास पर आश्रित है।

इंग्लैंड के कानून के अंतर्गत किसी ऐसे व्यक्ति या संस्था को मान्यता नहीं दी गई है जिसे संसद के द्वारा बनाए गए कानून को रद्द करने या उससे ऊंचा कानून बनाने का अधिकार हो। ब्रिटिश संसद का प्रभुसत्तासंपन्न मानने का मुख्य कारण यह है कि संसद से अधिनियम कानून की दृष्टि से सर्वोपरि है। इसके माध्यम से प्रथाओं को भी बदला जा सकता है, या रद्द किया जा सकता है। न्यायपालिका को यह अधिकार नहीं है कि वह किसी भी संसद के अधिनियमों का विधि-बाह्य घोषित कर दे, अर्थात् वह निर्णय दे सके कि प्रस्तुत अधिनियम का निर्माण संसद की शक्ति से बाहर है।



● राजा व राजमुकुट (King and Crown)

प्राचीकाल में राजा व राजमुकुट में कोई अन्तर नहीं था। राजमुकुट की सभी शक्तियों का प्रयोग राजा स्वयं करता था। पर राजतंत्र के लोकतंत्रीकरण के कारण राजा व राजमुकुट के भेद का बड़ा महत्व हो गया है। सैद्धान्तिक रूप से जो राजा सर्वशक्तिमान है, व्यवहार में वह केवल नाममात्र का शासन प्रमुख है। सैद्धान्तिक रूप से संसद तथा मंत्रिमण्डल राजा की 'परामर्शदात्री संस्थाएँ' हैं। राजा उनके परामर्श को मानने या न मानने के लिए पूर्ण स्वतंत्र है। पर व्यवहार में से संस्थाएँ ही सर्वशक्तिमान हैं। वस्तुतः शासन का जो व्यावहारिक रूप है, उसका प्रतीक 'राजमुकुट' व उसके सैद्धान्तिक रूप का प्रतीक 'राजा' है। इंग्लैण्ड में 'राजतंत्र' व लोकतंत्र दोनों साथ-साथ विद्यमान हैं। इसके विशुद्ध सैद्धान्तिक रूप को हम राजतंत्र कह सकते हैं, जिसका प्रतीक राजा है। उसका व्यवहारिक रूप एक पूर्ण लोकतंत्र का रूप है, जिसमें असली राज-सत्ता, जनता एवं जनता के प्रतिनिधियों में स्थित है तथा राजमुकुट उस सत्ता का प्रतीक है। शासन की वास्तविक शक्तियाँ 'राजमुकुट' में निहित हैं और उनका प्रयोग संसद, मंत्रिमण्डल व लोकसेवा से अधिकारियों व कर्मचारियों द्वारा किया जाता है। राजा वास्तव में राज करता है, शासन नहीं करता।

● राजा के उत्तराधिकार आदि से सम्बन्धित व्यवस्थाएँ (Systems Related to Heir of King)

राजपद का अधिकारी कौन हो सकता है? उसका उत्तराधिकारी कौन हो सकता है? राजपरिवार का व्यय क्या होगा? इससे सम्बन्धित व्यवस्थाएँ निम्न प्रकार हैं—

(1) बिल ऑफ राइट्स, 1689 के अनुसार—रोमन कैथोलिक परिवार से जन्म में माध्यम से सम्बन्धित कोई व्यक्ति राजा नहीं बन सकता।

(2) राजा के उत्तराधिकार के सम्बन्ध में सामान्यतः यह व्यवस्था है कि राजा या रानी का ज्येष्ठ-पुत्र या पुत्री सिंहासनारूढ़ हो। परन्तु यदि किसी राजा या रानी के पुत्र या पुत्री न हो या उसे किसी कारणवश पदच्युत कर दिया जाय, तो उसकी व्यवस्था संसद द्वारा की जाती है। संसद इस व्यवस्था को सन् 1701 के उस उत्तराधिकार अधिनियम के अनुसार करती है, जिसे उसने राजा विलियम व राई ऐन के कोई संतान न होने के कारण पारित किया था।

(3) सन् 1931 के 'वेस्ट मिनिस्टर अधिनियम' के द्वारा यह आवश्यक कर दिया गया है कि राजा के पद, उपाधि व उत्तराधिकार व नियमों आदि में किये जाने वाले परिवर्तनों के लिए अधिराज्यों के विधानमण्डलों की स्वीकृति ली जाए।

(4) जन-प्रतिनिधित्व अधिनियम, 1867 के अनुसार, अब राजा के देहावसान के संसद की कार्यविधि पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता है। राजा के अस्वस्थ होने या बाहर यात्रा पर होने के समय राजपरिवार के ही कुछ विशिष्ट व्यक्तियों



को पार्षदों (Councillors) के रूप में नियुक्त करना होगा तथा यदि राजा या उत्तराधिकारी अवयस्क हैं, तो राजपरिवार का कोई ऐसा व्यक्ति 'राजा प्रतिनिधि' (Regent) होगा, जिसकी आयु 21 वर्ष से कम न हो।

• राजा के विशेषाधिकार

(1) प्रधानमंत्री व मंत्रिमण्डल के चयन का विशेषाधिकार – प्रधानमंत्री के चयन में वह साधारणतः अपने विवेच से काम नहीं कर सकता, राजा को लोक सदन में बहुमत दल वाले नेता को प्रधानमंत्री बनाना पड़ता है। कभी किन्हीं अत्यन्त साधारण परिस्थितियों में ऐसा भले ही संभव हो कि राजा स्वयं इस सम्बन्ध में कुछ कर सके। उदाहरणार्थ, सिकी प्रधानमंत्री की मृत्यु हो जाने पर अथवा उसके त्यागपत्र दे देने पर यदि कई लोग प्रधानमंत्रित्व की प्रत्याशी हों और यह बात स्पष्ट न हो कि बहुमत दल का नेता कौन है, तो राजा कदाचित् ऐसा कर सकता है कि अपनी ओर से वह किसी को प्रधानमंत्री नियुक्त कर दे। जहाँ तक अन्य मंत्रियों की नियुक्ति का प्रश्न है, इस सम्बन्ध में प्रधानमंत्री का परामर्श ही निर्णायक सिद्ध होता है।

(2) पीर बनाने का विशेषाधिकार – राजा का दूसरा विशेषाधिकार लोगों को 'पीर' बनाने से सम्बन्धित है। दि लोक सदन द्वारा पारित कोई विधेयक लॉर्ड-सभा में पारित न हो, तो प्रधानमंत्री के कहने पर वह नये लोगों को लॉर्ड बनाकर और उन्हें लॉर्ड-सभा की सदस्यता प्रदान कर लॉर्ड-सभा के विरोध को समाप्त कर सकता है। पर यदि वह ऐसा न करना चाहे, तो प्रधानमंत्री से यह कह सकता है कि 'वह विधेयक को विषय बनाकर पुनः साधारण चुनाव करवाये और यह देखे कि सरकार को राष्ट्र का पूरा समर्थन प्राप्त है या नहीं।'

(3) संसद के विघटन का विशेषाधिकार का होना – राजा का एक अन्य विशेषाधिकार 'प्रधानमंत्री की प्रार्थना पर लोक सदन के विघटन' से सम्बन्धित है। संसद के विघटन सम्बन्धी प्रधानमंत्री के 'परामर्श' को केवल तीन परिस्थितियों में टाला जा सकता है, जो निम्न प्रकार हैं – "(1) संसद ऐसा सलाह के समय भी सशक्त, सक्षम और स्थायी प्रतीत होता हो। (2) अल्पावधि में आयोजित निर्वाचन का भार राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था सहन न कर सके, और (3) दूसरा कोई वैकल्पिक प्रधानमंत्री खोजा जा सके, जो पर्याप्त समय के लिए शासन का संचालन कर सके।"

(4) मंत्रियों की बर्खास्तगी सम्बन्धी विशेषाधिकार – मंत्रियों की बर्खास्तगी के विषय में भी यह कहा जाता है कि वह राजा के विशेषाधिकार की वस्तु है। राजा स्वेच्छा से अपनी इस शक्ति का प्रयोग प्रायः नहीं कर सकता। यदि किसी मंत्रिमण्डल को लोक सदन में बहुमत का समर्थन प्राप्त है, तो पूरे मंत्रिमण्डल की बर्खास्तगी कने के विषय में उसके उस अधिकार का प्रयोग निष्फल रहेगा। यदि राजा यह समझे कि मंत्रिमण्डल की नीति को लोक सदन के बहुमत का समर्थन प्राप्त होते हुए भी जनता का समर्थन प्राप्त नहीं है, तो वह मंत्रिमण्डल को बर्खास्त कर सकता है। सन् 1783 के बाद से कोई मंत्रिमण्डल बर्खास्त भी नहीं किया गया है।



(5) संसद के विधेयकों की स्वीकृति का विशेषाधिकार – सन् 1707 से इस अधिकार का प्रयोग किसी भी राजा द्वारा नहीं किया गया है। वर्तमान में राजा के इस अधिकार को प्रायः मृत माना जाता है।

राजा की शक्ति व उसका व्यावहारिक प्रयोग के विषय में जो कुछ ऊपर कहा गया है, उससे यह निष्कर्ष निकलता है कि राजा केवल एक 'संवैधानिक प्रमुख' है तथा वह केवल राज्य करता है, शान नहीं। उसे मंत्रियों के परामर्श के अनुकूल ही कार्य करना पड़ता है।

- **सम्राट का स्थान (The Position of King):**— 1688 ई० के गौरवपूर्ण क्रान्ति तक सम्राट को अगाध और निरंकुश शक्तियाँ प्राप्त थी। वह सिर्फ राष्ट्र का प्रधान नहीं था, बल्कि वास्तविक शासन भी था। आज राज्य का पुरा शासन उसी के नाम पर होता है, लेकिन व्यवहार में शक्तियों का उपयोग नहीं करता। वास्तविकता तो यह कि व्यक्तिगत स्थिति में सम्राट आज नगण्य है, उसका स्थान सिर्फ सैद्धान्तिक तथा ऐतिहासिक महत्ता का रह गया है, व्यावहारिक नहीं। उसकी शक्तियों का उपयोग उसके नाम पर जनता के प्रतिनिधि करते हैं। सम्राट की शक्तियों का वर्णन करते हुए फाइनर कहता है, “वह विषाल गगनचुम्बी तथा वैभवपूर्ण अट्टालिका है जिसके अन्तर राजनीतिक शक्ति का शून्य स्थान है।”

“सम्राट राज्य करता है, शासन नहीं” इसका साधारण अर्थ यह कि सम्राट सार्वजनिक कार्यों के किसी प्रत्यक्ष और क्रियात्मक नियन्त्रण का उपयोग नहीं करता। सम्राट की शक्तियाँ आज भी असीम हैं, लेकिन उनका प्रयोग वह व्यक्तिगत रूप में नहीं करता है। उसके नाम पर उसकी शक्तियों को उपभोग, उसका प्रयोग मंत्रिमण्डल तथा संसद करती है। सम्राट राष्ट्र का प्रधान है। वह राज्य की समस्त शक्तियों का स्रोत है, फिर भी वह शक्तिहीन है।

“सम्राट कोई लगती नहीं कर सकता” – ब्रिटिश सम्राट के सम्बन्ध में एक दूसरा कथन है – “सम्राट कोई गलती नहीं कर सकता।” इस कथन का प्रयोग इस अर्थ में किया जाता है कि सम्राट को किसी कार्य के लिए दोषी नहीं ठहराया जा सकता। उसके नाम पर किए गए किसी कार्य के लिए कोई मन्त्री या मन्त्रिपरिषद् उत्तरदायी होती है।

- (i) **कानूनों की मार्यादाओं के ऊपर** – उन्मुक्तियों के अन्तर्गत हमने देखा है कि सम्राट विधि के ऊपर (Above the Restriction of Law) है वह सामान्य न्यायालयों के क्षेत्र से उन्मुक्त है। उसे किसी भी कार्य के लिए, चाहे वह हत्या ही क्यों न हो, न्यायालय के समक्ष दोषी नहीं ठहराया जा सकता।
- (ii) **सम्राट सार्वजनिक कार्यों के लिए दोषी नहीं हो सकता** :— सम्राट देश की कार्यपालिका नहीं है और न वह किसी को अधिकृत करने की शक्ति रखता है। उसे किसी भी कार्य के लिए दोषी नहीं ठहराया (not guilty for public acts) जा सकता है। मंत्रिगण वास्तविक शक्तियाँ तथा अधिकार रखते हैं और केवल ये लोग ही उत्तरदायी ठहराये जा सकते हैं। सम्राट स्वविवेक के अन्तर्गत कोई कार्य नहीं कर सकता है। उसके सभी कार्य उसके मन्त्रियों के कार्य हैं और किसी भी त्रुटि के लिए उन्हें ही दोषी करार दिया जाएगा, सम्राट को नहीं।



- (iii) अवैधानिक कृत्य के लिए सम्राट के नाम किसी की उन्मुक्ति नहीं :- कोई भी अधिकारी अपने द्वारा किये गये किसी अवैध या अवैधानिक कृत्य के लिए सम्राट के आदेश की शरण नहीं ले सकता है। अपने कार्यों के लिए मन्त्री ही उत्तरदायी हैं। व्यक्तिगत रूप से सम्राट कुछ नहीं कर सकता, इसलिए वह कोई भी गलती नहीं करता।

4.4.2 राजा व ताज में अन्तर

- (i) राजा एक व्यक्ति है, जबकि ताज एक संस्था है :- ताज के अन्तर्गत मन्त्री, राजा, प्रिवी कौंसिल तथा संसद शामिल हैं। राजमुकुट शासन की प्रतीक संस्था है। राजा वह व्यक्ति है जो राजा पद को सुशोभित करता है।
- (ii) राजमुकुट या ताज स्थाई है, जबकि राजा अस्थायी है :- ताज एक संस्था के रूप में निरन्तर अस्तित्व में बनी रहने वाली है। राजा एक जीवित प्राणी के रूप में नाशवान है। राजनीतिक शक्ति के रूप में इसका अस्तित्व भी उस समय तक अवश्य रहेगा, जब तक राजनीतिक समाज रहेगा। इसके विपरीत राजा मरते रहते हैं और उनके स्थान पर दूसरे राजा आ जाते हैं और ताज की शक्तियों का प्रयोग करते हैं।
- (iii) राजमुकुट जन इच्छा का प्रतीक है, जबकि राजा सजावट मात्र है :- ताज शासन की वास्तविक शक्तियों का स्वामी है जिसका प्रयोग संसद मन्त्रिमण्डल आदि के द्वारा किया जाता है। इसलिए ताज जन इच्छा का प्रतीक है। इसके विपरीत शासक एक ध्वजमात्र या सजावट मात्र है।
- (iv) राजा एक शरीरधारी व्यक्ति है, जबकि ताज एक अमूर्त विचार है।
- (v) राजमुकुट या ताज सामूहिक है जबकि राजा वैयक्तिक है :- राजा एक वैयक्तिक कार्यपालक है जबकि ताज का रूप सामूहिक कार्यपालिका का है जिसमें संसद, मन्त्रीमण्डल तथा लोकसेवा के सदस्य होता है। ताज से शासन की सम्पूर्ण शक्ति के योग का बोध होता है। राजा स्वयं ही सम्पूर्ण शक्ति का एक भाग है।

सम्राट का पद वंशानुगत है, जबकि ताज शब्द शासन की समस्त शक्तियों का प्रतीक है, यह कोई पद नहीं है।

4.4.3 ब्रिटेन में राजतन्त्र का औचित्य (Justification of Monarchy in Britain)

ब्रिटेन में राजतन्त्र की जड़ें बहुत गहरी व पुरानी हैं। 1688 की क्रान्ति ने राजतन्त्र को सीमित अवश्य कर दिया, लेकिन यह भी राजतन्त्र को समाप्त नहीं कर सकी। यह ब्रिटिश लोगों की रुढ़िवादिता और स्वस्थ राजनीतिक परम्पराओं का ही परिणाम है, जो आज तक भी ब्रिटेन में राजतन्त्र को बनाए रखे हुए है। राजतन्त्र और लोकतन्त्र विरोधाभासी होते हुए भी आज तक ब्रिटेन में सामंजस्यपूर्ण तरीके से कर रहे हैं। चर्चिल ने कहा है कि “ हमारे समस्त लोगों के हृदय में राजतन्त्र गहरी पैठ बनाए हुए है और यह हमें अत्यंत प्रिय है। ” आज राजा की स्थिति



नाममात्र की है। इसलिए राजतन्त्र का कोई औचित्य नहीं है। लेकिन फिर भी ब्रिटेन में राजतन्त्र का अस्तित्व बना हुआ है।

इसके समर्थन में निम्नलिखित तर्क दिए जाते हैं :-

राजा व्यक्तिगत तौर पर कई महत्वपूर्ण कार्य करता है :- राजा विदेशी राजदूतों का स्वागत करता है और संसद के उद्घाटन के समय सिंहासन से भाषण भी देता है। कुछ विशेष अवसरों पर यह प्रधानमंत्री को स्वविवेक के आधार पर अपनी इच्छा से नियुक्त भी करता है। ऐसा करते समय उसे किसी मंत्री या मन्त्रीमण्डल की स्वीकृति लेने की आवश्यकता नहीं है। मन्त्रियों को सलाह देना, प्रोत्साहन देना तथा आलोचना के अधिकार भी उसके व्यक्तिगत अधिकार ही हैं।

1. राजा की सलाहकारी भूमिका :- राजा एक अनुभवी व परिपक्व व्यक्ति होता है जिसे देश-विदेश की घटनाओं व सम्बन्धों की पूर्ण जानकारी होती है। राजा को केवल शासन का ही ज्ञान नहीं होता बल्कि उसे शासन का अनुभव भी होता है। मन्त्री आते-जाते रहते हैं, लेकिन राजा अपने पद पर जीवन भर रहता है। इससे उसका अनुभव व शासकीय ज्ञान निरन्तर बढ़ता जाता है जो किसी भी विषय पर सलाह के रूप में महत्वपूर्ण सिद्ध होता है।

2. राजा की मध्यस्थकारी भूमिका :- अपने राजनीतिक प्रभाव व प्रतिष्ठा के कारण वह कई बार गम्भीर राजनीतिक विवादों का हल करता है। 1840 में इंग्लैण्ड और फ्रांस, 1861 में इंग्लैण्ड और अमेरिका के बीच युद्ध रोका। 1884 में ब्रिटिश संसद के दोनों सदनों के आपसी गतिरोध को 1913 व 1914 में राजा जार्ज प्रथम ने होमरूल बिल पर गतिरोध को समाप्त करने का प्रयास किया। 1930 में जार्ज पष्ठ ने भी विदेशी दौरे करके इंग्लैण्ड के अन्य देशों के साथ सम्बन्धों में मधुरता पैदा की। वर्तमान में महारानी एलिजाबेथ द्वितीय की भूमिका भी विदेशी सम्बन्धों में मधुरता लाने की दिशा में महत्वपूर्ण भूमिका कही जा सकती है।

3. ब्रिटिश लोगों में गणतन्त्रात्मक भावना का अभाव :- ब्रिटेन की जनता राजा को सम्मान की दृष्टि से देखती है। प्रजा के लिए राजा का पद प्रतिष्ठा व गौरव का है। जनता हमेशा गणतन्त्र की बजाय राजतन्त्र को ही महत्व देती रही है।

ब्रिटिश जनता शासन व प्रशासन में सुधारों की समर्थक तो रही है, लेकिन वह अपनी शानदार परम्पराओं को समाप्त करने की परस्पर नहीं है।

4. राजा ब्रिटिश राष्ट्र व राष्ट्रमण्डल की एकता का प्रतीक है :- ब्रिटेन में राजा किसी राजनीतिक दल, समुदाय या किसी विशिष्ट वर्ग के प्रति निष्ठावान नहीं है। वह समस्त राष्ट्र के प्रति निष्ठावान और राष्ट्रहित की दृष्टि से ही हर कार्य करता है। इसी कारण वह राष्ट्रीय एकता का प्रतीक है और राष्ट्र की श्रद्धा और भक्ति का



पात्र है। जनता राजा की आज्ञा का पालन निष्ठापूर्वक अपना कर्तव्य समझकर करती है। जनता प्रधानमंत्री से तो नाराज हो सकती है, लेकिन सम्राट से नहीं।

5.राजतन्त्र का लोकतन्त्रीय रूप :- ब्रिटेन का राजतन्त्र लोकतन्त्रीय है। उसने पहले जैसे निरंकुशता नहीं है। आज राजा अपनीमनमानी नहीं कर सकता। उसके समस्त अधिकार और शक्तियां आज मन्त्रिमण्डल द्वारा प्रतिबिंबित है। उसकी समस्त शक्तियों का प्रचम मन्त्रीमण्डल ही करता है जो जनता की भावनाओं का प्रतिनिधित्व करता है।

6.संसदीय शासन प्रणाली का समर्थक :- संसदीय शासन प्रणाली में एक तो नाममात्र की कार्यपालिका होती है और दूसरी वास्तविक। ब्रिटेन में राजा तो नाममात्र की कार्यपालिका है, जबकि मन्त्रिमण्डल वास्तविक है। यदि ब्रिटेन में राजतन्त्र को समाप्त कर दिया जाए तो भी संसदीय शासन के लिए भारत की तरह राष्ट्रपति की आवश्यकता होगी। राष्ट्रपति भी नाममात्र का ही अध्यक्ष होता है।

7.राजा एक सामाजिक व्यक्ति है :- राजा केवल मात्र एक राजनीतिक व्यक्ति ही नहीं है, बल्कि वह देश के सामाजिक ढांचे की आवश्यक कड़ी है। दलगत राजनीति से दूर रहते हुए वह सामाजिक कार्यों में भाग लेता है। राजा का सामाजिक व्यक्तित्व सरकार को लोकप्रियता प्रदान करता है।

8.राजतन्त्र का ऐतिहासिक आधार पर समर्थन :- ब्रिटेन में राजपद अत्यन्त प्राचीन ऐतिहासिक धरोहर है। राजतन्त्र अतीत को वर्तमान से और वर्तमान को अतीत से जोड़ने वाली कड़ी है। राजतन्त्र का गौरवपूर्ण इतिहास राजपद के प्रति स्वभाविक प्रेम और सम्मान की भावना पैदा करता है।

उपरोक्त विवेचन के बाद कहा जा सकता है कि राजतन्त्र एक ऐतिहासिक धरोहर है। इसका गौरवपूर्ण इतिहास इसको इतना लोकप्रिय बना देता है।

4.4.4 ब्रिटिश प्रधानमंत्री (The British Prime Minister)

जिस तरह राज्य राज्य का प्रतीक है, उसी तरह प्रधानमंत्री सरकार का प्रतीक है। ताज की समस्त शक्तियों का प्रयोग प्रधानमंत्री ही करता है। वही वास्तविक कार्यपालक है जिसे सरकार की धुरी माना जाता है।

1.प्रधानमंत्री के पद की उत्पत्ति व विकास (Origin and Development of the Office of Prime Minister)

प्रधानमंत्री शब्द का प्रयोग प्रथम बार 1878 में बर्लिन सन्धि में प्रयोग हुआ। आगे चलकर इस शब्द का प्रयोग किया जाने लगा। लेकिन इस पद को 1937 में 'ताज अधिनियम' के तहत ही मान्यता प्राप्त हुई।

2.प्रधानमंत्री की नियुक्ति (Appointment of Prime Minister)



ब्रिटेन में प्रधानमंत्री की नियुक्ति सम्राट द्वारा की जाती है। लेकिन परम्परा के अनुसार सम्राट कामन्स सदन (लोकसभा) में बहुमत प्राप्त दल के नेता को ही प्रधानमंत्री पद के लिए आमन्त्रित करता है। लेकिन कुछ ऐसी परिस्थितियां भी हैं जब सम्राट स्वेच्छा से किसी भी व्यक्ति को प्रधानमंत्री बना सकता है। ऐसा तभी होता है जब प्रधानमंत्री स्वयं त्यागपत्र दे दे, उनकी मृत्यु हो जाए या कामन्स सदन में उसका बहुमत न रहे।

3. प्रधानमंत्री के पद के लिए योग्यताएं (Qualifications for the office of Prime Minister)

यद्यपि संसद या संविधान द्वारा इस पद के लिए कोई योग्यता निर्धारित नहीं की है। लेकिन स्थापित परम्परा के अनुसार इस पद पर वही व्यक्ति बैठ सकता है जो कामन्स सदन का सदस्य हो और उसे बहुमत प्राप्त हो।

4. ब्रिटिश प्रधानमंत्री की शक्तियां व कार्य

(Powers and Functions of British Prime Minister)

ब्रिटिश प्रधानमंत्री इंग्लैंड का वास्तविक कार्यपालक है। प्रधानमंत्री ही वह केन्द्र है जिसके चारों ओर समस्त शासन तन्त्र घूमता है। ब्रिटिश प्रधानमंत्री की प्रमुख शक्तियां व अधिकार निम्नलिखित हैं :-

5. मन्त्रिमण्डल का नेता (Leader of the Cabinet) :- ब्रिटिश प्रधानमंत्री मन्त्रिमण्डल का नेता होता है। सम्पूर्ण मन्त्री उसके नियंत्रण में रहते हैं। मन्त्रिमण्डल के निर्माण सम्बन्धी समस्त कार्य प्रधानमंत्री ही करता है। यद्यपि प्रधानमंत्री ही करता है। यद्यपि प्रधानमंत्री अपनी शक्ति का प्रयोग करते समय सम्राट की अनुमति लेता है, परन्तु यह एक महज औपचारिकता ही होती है। प्रधानमंत्री का मन्त्रिमण्डल की समस्त गतिविधियों पर नियन्त्रण रहता है।

प्रधानमंत्री मन्त्रिमण्डल का नेता होने के नाते महत्वपूर्ण कार्य करता है। मन्त्रिमण्डल का गठन करते समय व विभागों का वितरण करते समय वह विभिन्न वर्गों, धर्मों, जातियों आदि के प्रतिनिधित्व का ध्यान रखता है। मन्त्रिमण्डल की गतिविधियों को सुचारु रूप से चलाने के लिए वह हर गतिविधि पर अपना नियन्त्रण रखता है।

6. लोकसभा का नेता (Leader of the House of Commons) :- ब्रिटिश प्रधानमंत्री लोकसभा का नेता होने के नाते सम्पूर्ण सरकारी तन्त्र पर अपना नियन्त्रण रखता है और नीति-निर्माण में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करता है। सरकार की नीति व कार्यक्रम सम्बन्धी समस्त घोषणाएं उसी द्वारा की जाती हैं। लोकसदन की बैठकों का नेतृत्व उसी के द्वारा किया जाता है।

7. दल का नेता (Leader of the Part) :- शासन का प्रधान होने के साथ ही प्रधानमंत्री बहुमत दल का नेता भी होता है। प्रधानमंत्री की सर्वोच्च शक्तियां उसकी दलीय स्थिति का ही परिणाम हैं। बहुमत दल का नेता होने के कारण उसका व्यक्तित्व सार्वजनिक रूप ग्रहण कर लेता है। वह दलीय संगठन का सर्वसर्वा होता है।



8.राष्ट्र का नेता (Leader of the Nation) :- प्रधानमंत्री राष्ट्र का प्रतीक होता है। समस्त जनता उससे काफी उम्मीद रखती है और चुनावों में उसका समर्थन करती है। प्रधानमंत्री का व्यक्तित्व दल व राष्ट्र का व्यक्तित्व होता है।

9.सम्राट तथा मन्त्रिमण्डल के बीच कड़ी (Link between the Sovereign and the Cabinet) :- प्रधानमंत्री राजसभा मन्त्रिमण्डल के बीच एक कड़ी का काम करता है।

नियुक्तियां तथा उपाधियों सम्बन्धी शक्ति :- महत्वपूर्ण पदों पर जितनी भी नियुक्तियां होती हैं, वे प्रधानमंत्री की सलाह पर राजा द्वारा की जाती हैं। राजा प्रधानमंत्री के इस अधिकार को कोई नहीं दे सकता। बिशपों, न्यायधीशों, उपनिवेशों के राज्यपालों, राजदूतों, बोर्ड के सदस्यों आदि की नियुक्तियां उसी के द्वारा की जाती हैं, राजा तो उन पर केवल अपनीसहमति की मुहर लगाता है।

10.अन्य कार्य (Miscellaneous Functions) :- प्रधानमंत्री राष्ट्रमण्डलीय देशों से अच्छे सम्बन्ध स्थापित करता है। प्रधानमंत्री वित्त पर पूरा नियन्त्रण रखता है। प्रधानमंत्री मन्त्रिमण्डल की समितियों का गठन करता है। प्रधानमंत्री विभिन्न मन्त्रियों, विभागों व शासकीय नीतियों में समन्वय कायम रखता है। प्रधानमंत्री लोक सदन का विघटन कर सकता है। प्रधानमंत्री को आपातकालीन निर्णय लेने का अधिकार है।

4.4.5 संयुक्त राज्य अमेरिका में कार्यपालिका का ढांचा (Executives Structure in U.S.A.)

1.राष्ट्रपति (The President)

अमेरिका में संसदीय प्रणाली के स्थान पर अध्यक्षतात्मक शासन प्रणाली को अपनाया गया है। अध्यक्षतात्मक शासन प्रणाली की यह विशेषता होती है कि वहां नाममात्र और वास्तविक कार्यपालिका में भेद नहीं किया जाता। अमेरिकन राष्ट्रपति कार्यपालिका का अध्यक्ष होने के नाते विश्व का सर्वाधिक शक्तिशाली पदाधिकारी है। **मुनरो** ने लिखा है – “वह इतनी शक्तियों का स्वामी है, जितना लोकतन्त्र राज्य में कोई दूसरा नहीं है। अमेरिका का राष्ट्रपति ब्रिटिश सम्राट की तरह नाममात्र का कार्यपालक न होकर वास्तविक शक्तियों का स्वामी है।

2.राष्ट्रपति पद के लिए योग्यताएं(Presidential Qualifications)

अमेरिका के संविधान के अनुच्छेद 2, भाग-1 के अन्तर्गत राष्ट्रपति के पद हेतु निम्नलिखित योग्यताएं निर्धारित की गई हैं :- वह संयुक्त राज्य अमेरिका का जन्मजात नागरिक हो। उसकी आयु कम से कम 35 वर्ष हो। वह 14 वर्ष से अमेरिका में रह रहा हो। उसमें मतदाता बनने की समस्त योग्यताएं हों।

वह केन्द्र या राज्य-स्तर पर किसी लाभ के पद पर कार्यरत न हो। वह गैर, पुरुष, ईसाई धर्म के प्रति निष्ठावान, प्रोटेस्टेन्ट धर्मावलम्बी, स्वतन्त्र विचारों वाला भी हो। वह किसी महत्वपूर्ण उच्च राजनीतिक पद पर रह चुका हो। वह पागल या दिवालिया न हो।



3. राष्ट्रपति का कार्यकाल (Tenure of the President)

अमेरिकन राष्ट्रपति का कार्यकाल 4 वर्ष है और वह अपने पद पर पुनर्निर्वाचित भी हो सकता है। स्थापित परम्परा के अनुसार कोई भी राष्ट्रपति दो बार से अधिक राष्ट्रपति का चुनाव नहीं लड़ सकता। अमेरिकन संविधान में यह भी व्यवस्था है कि राष्ट्रपति की मृत्यु हो जाने पर तत्काल चुनाव करने की बजाय उप-राष्ट्रपति को ही राष्ट्रपति के दायित्वों का निर्वहन करना होगा। यदि उपराष्ट्रपति राष्ट्रपति का पद संभालने में असमर्थ हो तो उसके स्थान पर प्रतिनिधि सभा के अध्यक्ष या स्पीकर को राष्ट्रपति का दायित्व निभाना पड़ेगा।

4. राष्ट्रपति की पदच्युति (Removal of President)

अमेरिकन राष्ट्रपति को महाभियोग लगाकर निर्धारित कार्यकाल से पहले भी हटाया जा सकता है। अमेरिकन संविधान में राष्ट्रपति पर देशद्रोह, अनैतिकता या कोई अन्य गम्भीर आरोप लगाकर उसे उसके पद से हटाया जा सकता है। राष्ट्रपति पर महाभियोग की शुरुआत प्रतिनिधि सदन 2/3 बहुमत के आधार पर करता है और उसकी सुनवाई सीनेट करता है। उस समय सीनेट की अध्यक्षता सर्वोच्च न्यायालय का मुख्य न्यायाधीश करता है। 2/3 बहुमत से यदि सीनेट में महाभियोग की प्रक्रिया पास हो जाए तो राष्ट्रपति को अपना पद छोड़ना पड़ता है।

5. राष्ट्रपति की उन्मुक्तियां (Immunities of President)

महाभियोग को छोड़कर उसके विरुद्ध न्यायपालिका या व्यवस्थापिका द्वारा कोई कार्यवाही नहीं की जा सकती। उसे किसी भी अपराध के लिए गिरफ्तार नहीं किया जा सकता। उस पर न्यायालय की मानहानि का कोई केस नहीं चल सकता। महाभियोग द्वारा पदच्युत किसी भी राष्ट्रपति पर उन अपराधों के लिए कोई मुकद्दमा नहीं चलाया जा सकता जो उसने राष्ट्रपति के पद पर रहते हुए किए हों। राष्ट्रपति को किसी मुकद्दमे में न्यायपालिका गवाह के रूप में नहीं बुला सकता।

6. राष्ट्रपति का निर्वाचन (Election of the President)

राष्ट्रपति के चुनाव में एक विशेष प्रक्रिया अपनाई जाती है। सबसे पहले राजनीतिक दल अपने-अपने दल से राष्ट्रपति के पद हेतु उम्मीदवार खड़े करते हैं और अपना चुनाव प्रचार शुरू करते हैं। उसके बाद निर्वाचक मण्डल का चुनाव होता है। चुनाव-मण्डल के सदस्य दिसम्बर के दूसरे बुधवार राष्ट्रपति के चुनाव में अपने-अपने प्रत्याशियों को वोट देते हैं। मतदान प्रक्रिया पूर्ण होने पर सभी मतपेटियों को अमेरिका की राजधानी वाशिंगटन ले जाया जाता है जहां 6 जनवरी को सीनेट का अध्यक्ष उन मतपेटियों को कांग्रेस के दोनों सदनों की उपस्थिति में खोलता है और मतगणना करवाता है। जिस उम्मीदवार को मतों का स्पष्ट बहुमत प्राप्त हो जाता है, उसे निर्वाचित कर लिया जाता है। यदि चुनाव में किसी भी प्रत्याशी को भी स्पष्ट बहुमत प्राप्त नहीं होता है तो प्रतिनिधि सदन ऊपर वाले तीन प्रत्याशियों में से किसी एक को राष्ट्रपति बना सकता है। इस स्थिति में प्रतिनिधि सदन 2/3



बहुमत से निर्णय लेता है। इस स्थिति में प्रत्येक राज्य का केवल एक ही मत माना जाता है। इस स्थिति में 51 राज्यों में से 33 राज्यों का समर्थन प्राप्त व्यक्ति ही राष्ट्रपति बनता है। अमेरिकन संविधान की स्थापित परम्परा व नियमों के तहत नए राष्ट्रपति को 20 जनवरी को बाद दोपहर शपथ दिलाई जाती है। यह शपथ सर्वोच्च न्यायालय का मुख्य न्यायाधीश दिलवाता है।

7. अमेरिकन राष्ट्रपति की शक्तियां, कार्य व भूमिका (Powers, Functions and Role of the American President)

अमेरिकन राष्ट्रपति महान शक्तियों का स्वामी है। उसे ये शक्तियां संविधान, न्यायिक निर्णयों, कांग्रेस के अधिनियमों तथा परम्पराओं व प्रथाओं से मिली हैं। ऑग का कहना है कि अमेरिकन राष्ट्रपति दुनिया का सबसे बड़ा शासक है। वह राज्य का प्रधान, प्रशासन का सर्वोच्च अधिकारी तथा विदेश नीति का प्रमुख वक्ता है। समय और परिस्थिति में अपार वृद्धि की है। उसकी प्रमुख शक्तियां व कार्य निम्नलिखित हैं :-

8. कार्यपालक शक्तियां (Executive Powers) :- अमेरिकन राष्ट्रपति वास्तविक कार्यपालक होता है। संविधान के अनुच्छेद 2 की धारा 3 में उसकी कार्यपालिका सम्बन्धी शक्तियों व अधिकारों का उल्लेख किया गया है। राष्ट्र का प्रमुख शासक होने के नाते संघीय सरकार के प्रशासन सम्बन्धी कार्यों के लिए वही उत्तरदायी है। राष्ट्रपति की प्रमुख कार्यपालक शक्तियां निम्नलिखित हैं :-

राष्ट्रपति व्यवस्थापिका द्वारा बनाए गए कानून को लागू करता है तथा देश में शांति व्यवस्था कायम करता है। यह देखना राष्ट्रपति का प्रमुख कर्तव्य है कि कानून का देश में समुचित पालन हो रहा है या नहीं। राष्ट्रपति को यह अधिकार है कि वह देश में कानून-व्यवस्था को मजबूत बनाए रखने के लिए दण्ड शक्ति का प्रयोग कर सकता है। देश के महत्वपूर्ण पदों पर नियुक्तियां करने का अधिकार भी राष्ट्रपति के पास है। उच्च पदों पर नियुक्तियां करते समय वह सीनेट की अनुमति लेता है, लेकिन कम महत्व के पदों पर वह स्वेच्छा से नियुक्तियां कर सकता है। विदेशों में राजदूतों, वाणिज्य दूतों, सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीशों, सुरक्षा समिति के अध्यक्ष, सर्वोच्च परिषद के सदस्य आदि की नियुक्ति वह सीनेट की स्वीकृति से ही कर सकता है। राष्ट्रपति को सीनेट के अधिवेशन की अनुपस्थिति में आन्तरिक नियुक्तियां करने का भी अधिकार है। इन नियुक्तियों पर भी राष्ट्रपति को सीनेट का अधिवेशन शुरू होते ही स्वीकृति लेनी पड़ती है।

जिस तरह राष्ट्रपति को नियुक्तियां करने का अधिकार है, उसी तरह उसे पद च्युति का भी अधिकार प्राप्त है। इसके लिए उसे सीनेट की अनुमति लेने की आवश्यकता नहीं है। राष्ट्रपति अपने इस अधिकार का प्रयोग न्यायाधीशों, विभिन्न आयोगों के सदस्यों या अन्य उन अधिकारियों को हटाने के लिए नहीं कर सकता जो विशेष नियमों के तहत हटाए जा सकते हैं। विदेश नीति का निर्माण भी राष्ट्रपति ही करता है। विदेशों में भेजे जाने वाले राजदूतों व प्रतिनिधियों को नियुक्त करने का अधिकार भी उसी के पास है। वह विदेशों में सन्धियों व समझौते पर



हस्ताक्षर करने का अधिकार भी रखता है। यद्यपि उसे इन पर सीनेट की स्वीकृति लेनी पड़ती है। राष्ट्रपति तीनों सेनाओं का सर्वोच्च सेनापति होता है। वह सभी सैनिक पदों पर नियुक्तियां करता है और सेना के बजट को कांग्रेस के सामने पेश करता है। युद्ध की घोषणा करते समय उसे सीनेट की अनुमति लेनी पड़ती है, लेकिन युद्ध बन्द करते समय उसे सीनेट की अनुमति की कोई आवश्यकता नहीं होती। प्रमुख प्रशासक होने के नाते राष्ट्रपति को विभिन्न विभागों का पुनर्गठन तथा उनके कार्यों का निरीक्षण करने का अधिकार है। उसे शासन के संचालन के लिए नियम व उपनियम बनाने तथा अध्यादेश जारी करने की शक्ति भी प्राप्त है। राष्ट्रपति के पास राष्ट्रीय संकट के समय संकटकालीन शक्तियों का प्रयोग करने का भी अधिकार है। राष्ट्रपति को क्षमा देने का भी अधिकार प्राप्त है। राष्ट्रपति को प्रशासन को कुशलतापूर्वक चलाने के लिए मन्त्रिमण्डल का गठन भी कर सकता है। विदेशों से व्यापारिक समझौते करना, विदेशी राज्यों व सरकारों को मान्यता देना भी राष्ट्रपति की कार्यपालक शक्तियों का ही भाग है।

9. विधायी शक्तियां (Legislative Powers) :- अमेरिका में शक्तियों के पृथक्करण सिद्धान्त के चलते राष्ट्रपति कोई विधायी शक्ति नहीं सौंपी गई है, लेकिन व्यवहार में राष्ट्रपति विधायिका सम्बन्धी कार्य भी करता है। अमेरिका में नियन्त्रण और संतुलन के सिद्धान्त के कारण राष्ट्रपति को कानून निर्माण के क्षेत्र में भी हस्तक्षेप करने का अधिकार दिया गया है। राष्ट्रपति की प्रमुख विधायी शक्तियां निम्नलिखित हैं :-

- 1) राष्ट्रपति संकटकाल के दौरान कांग्रेस का विशेष अधिवेशन बुला सकता है।
- 2) राष्ट्रपति प्रशासकीय आदेश जारी कर सकता है और प्रशासन को सुचारु ढंग से चलाने के लिए कुछ नियमों-उपनियमों का निर्माण भी कर सकता है। इस प्रवृत्त व्यवस्थापन की शक्ति कहा जा सकता है।
- 3) राष्ट्रपति किसी विधेयक को अस्थायी तौर पर निलम्बित कर सकता है। किसी विधेयक के पूर्ण निलम्बन का अधिकार राष्ट्रपति के पास नहीं है।
- 4) राष्ट्रपति को कांग्रेस के पास सन्देश भेजने का भी अधिकार है।
- 5) जब संसद का अधिवेशन अन्तिम स्थिति में हो अर्थात् दस दिन से कम रह गए हों तो जब कोई विधेयक राष्ट्रपति के पास अनुमोदन के लिए आ जाए तो उस विधेयक को अस्वीकृत करके राष्ट्रपति उस विधेयक को हमेशा के लिए समाप्त कर सकता है। यह उसका जेबी निषेधाधिकार कहलाता है।

10. वित्तीय शक्तियां (Financial Powers) :- यद्यपि वित्तीय क्षेत्र में कांग्रेस को ही अधिकार प्राप्त है, लेकिन व्यवहार में राष्ट्रपति तथा कांग्रेस के बीच घनिष्ठ सम्बन्ध पाया जाता है। कांग्रेस को राष्ट्रीय वित्त के बारे में आंकड़े राष्ट्रपति ही देता है। वही आगामी वर्ष के लिए नियोजित योजना और नए करों को प्रस्तावित करता है।



सेना के बजट को कांग्रेस से राष्ट्रपति ही पास करवाता है। संक्षेप में राष्ट्रीय बजट राष्ट्रपति के ही मार्गदर्शन में तैयार होता है और कांग्रेस उसका अनुमोदन करती है।

11. न्यायिक शक्तियाँ (Judicial Powers) :- अमेरिकन राष्ट्रपति के पास न्यायिक शक्तियाँ भी हैं। उसे अपराधी को क्षमा करने या उसके प्राणदण्ड को स्थगित करने का विशेषाधिकार प्राप्त है। लेकिन वह राज्य के कानूनों का उल्लंघन करने वाले तथा महाभियोग की प्रक्रिया से दण्डित व्यक्ति को क्षमा नहीं कर सकता। राष्ट्रपति ऐसे अपराधियों को भी सामूहिक क्षमादान दे सकता है जिन्हें व्यक्तिगत रूप में दण्डित न कर संघीय कानून को भंग करने के अपराध में एक साथ दण्ड दिया गया हो। लेकिन इस कार्य को वह न्याय विभाग की सिफारिश से ही कर सकेगा।

12. संकटकालीन शक्तियाँ (Emergency Powers) :- युद्ध, आंतरिक, अशान्ति अथवा आर्थिक संकट से उत्पन्न राष्ट्रीय संकटों के समय राष्ट्रपति अपार शक्तियों का मालिक हो जाता है। संकटकाल के दौरान राष्ट्रपति मौलिक अधिकारों में भी कटौती करवा सकता है।

13. दल का नेता (Leader of the Party) :- अमेरिकन राष्ट्रपति अपने दल का नेता, मार्गदर्शक तथा व्याख्याकार होता है।

14. राष्ट्र का नेता (Leader of the Nation) :- अमेरिकन राष्ट्रपति अपने दल का ही नहीं बल्कि अपने देश का भी नेता होता है। वह अमेरिका का प्रथम नागरिक होता है और उसे राष्ट्रीय एकता का प्रतीक माना जाता है। वह विदेशों में अपने राष्ट्र का प्रतिनिधित्व करता है। वह सर्वोच्च प्रशासक होने के नाते राष्ट्रीय हित के लिए हमेशा तत्पर रहता है।

4.4.6 अमेरिकन राष्ट्रपति की स्थिति (Position of American President)

यदि अमेरिकन राष्ट्रपति की शक्तियों पर ध्यान किया जाए तो वह महान शक्तियों का स्वामी प्रतीत होता है। उसका राष्ट्रीय तथा अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में विशिष्ट स्थान है। आपातकाल में तो उसको इतनी अधिक शक्तियाँ व अधिकार प्राप्त हो जाते हैं कि वह तानाशाह बन सकता है। लेकिन अमेरिका में ऐसे बहुत कम उदाहरण मिलते हैं, जब राष्ट्रपति ने अपने पद व शक्तियों का दुरुपयोग किया हो। राष्ट्रपति पर निरोध व संतुलित के सिद्धांत का काफी नियन्त्रण रहता है। जिस तरह कार्यपालिका विधायिका पर नियन्त्रण रखती है, उसी तरह विधायिका कार्यपालिका पर भी नियन्त्रक का काम करती है। राष्ट्रपति की संवैधानिक स्थिति, न्यायिक पुनरावलोकन की शक्ति, राजनीतिक दलों व दबाव समूहों की राजनीति, जनमत, कांग्रेस, राजनीतिक परम्परायें आदि राष्ट्रपति को तानाशाह बनाने से रोकते हैं। राष्ट्रपति नियुक्तियों के मामलों में भी कांग्रेस की सहमति का विरोध नहीं कर सकता। राष्ट्रपति



युद्ध की घोषणा, विदेश नीति का निर्माण, वित्तीय मामलों आदि में स्वतन्त्र नहीं है। अमेरिकन राष्ट्रपति की स्थिति महान तो कही जा सकती है, लेकिन उसे तानाशाह का नाम देना अनुचित है।

4.4.7 अमेरिका का उपराष्ट्रपति (Vice-President of America)

संयुक्त राज्य अमेरिका की शासन व्यवस्था में उप-राष्ट्रपति का भी महत्वपूर्ण स्थान है। राष्ट्रपति की मृत्यु या पदच्युति की अवस्था में उपराष्ट्रपति ही राष्ट्रपति के दायित्वों का निर्वहन करता है। उप-राष्ट्रपति के निर्वाचन की भी वही विधि और प्रक्रिया है जो राष्ट्रपति के निर्वाचन की है। प्रारम्भ में यह अवस्था थी कि राष्ट्रपति के चुनाव में दूसरे स्थान पर रहने वाले प्रत्याशी को उपराष्ट्रपति बना दिया जाता था। 12वां संशोधन करके उप-राष्ट्रपति के पद हेतु भी वही योग्यताएं निर्धारित की गईं जो राष्ट्रपति के पद हेतु हैं। यदि चुनाव में किसी प्रत्याशी को जीतने के लिए पूर्ण बहुमत न मिले तो सीनेट सर्वाधिक मत प्राप्त करने वाले दो प्रत्याशियों में से उप-राष्ट्रपति का चुनाव करती है।

उपराष्ट्रपति प्रायः दो ही प्रमुख कार्य करता है। एक तो वह राष्ट्रपति का पद किसी भी कारण रिक्त होने पर उसका कार्यभार सम्भालता है। दूसरा, वह सीनेट के अध्यक्ष के रूप में भी कार्य करता है। परन्तु सीनेट में वह निर्णायक मत ही दे सकता है, मतदान में भाग नहीं ले सकता। उपराष्ट्रपति को हटाने का तरीका भी महाभियोग ही है। यद्यपि उप-राष्ट्रपति का पद कुछ विशेष परिस्थितियों में महत्वपूर्ण पद माना जाता है, लेकिन अनेक विचारकों ने इस पद को अनावश्यक तथा अनुपयुक्त बताया है।

4.4.8 अमेरिकन राष्ट्रपति और ब्रिटेन के सम्राट की तुलना (Comparison between the American President and the King of England)

ब्रिटेन में राजा वास्तविक कार्यपालक अध्यक्ष है, जबकि अमेरिका में राष्ट्रपति मुख्य कार्यपालक अध्यक्ष है। ब्रिटेन में संसदीय प्रणाली है जबकि अमेरिका में अध्यक्षतात्मक शासन प्रणाली है। इन दोनों प्रणालियों में पाया जाने वाला प्रकृति व कार्यप्रणाली से सम्बन्धित अन्तर ही राष्ट्रपति तथा सम्राट के बीच तुलना का आधार प्रस्तुत करता है।

(i) राजा और राष्ट्रपति में समानताएं (Similarities between the King and the President)

ब्रिटेन में सम्राट और अमेरिका के राष्ट्रपति में निम्नलिखित समानताएं हैं :-

- दोनों अपने अपने राज्यों के प्रधान हैं।
- दोनों को वैधानिक क्षेत्र में भी कुछ समानताएं हैं। ब्रिटेन का सम्राट संसद का अधिवेशन बुला सकता है तो अमेरिका का राष्ट्रपति भी कांग्रेस का विशेष अधिवेशन बुला सकता है।
- दोनों द्वारा औपचारिक स्वीकृति प्रदान करने पर ही कोई विधेयक कानून बनता है।



- दोनों अपनी सेनाओं के सेनापति हैं।
- दोनों को समान न्यायिक शक्तियां प्राप्त हैं। दोनों अपराधी की सजा माफ करने, घटाने तथा स्थगन का अधिकार रखते हैं।
- दोनों विदेशों से आए कूटनीतिक अधिकारियों को मान्यता प्रदान करते हैं और विदेशों में भेजे जाने वाले राजदूतों की नियुक्ति करते हैं।
- देश के महत्वपूर्ण पदों पर की जाने वाली नियुक्तियां दोनों के नाम से ही होती हैं।

(ii) राजा और राष्ट्रपति में असमानताएं (Dissimilarities between the King and the President)

- अमेरिका का राष्ट्रपति वास्तविक कार्यपालक है, जबकि ब्रिटेन का सम्राट नाममात्र का कार्यपालक है।
- अमेरिका का राष्ट्रपति चुना जाता है, जबकि सम्राट का पद वंशानुगत है।
- अमेरिका के राष्ट्रपति का कार्यकाल 4 वर्ष है, जबकि सम्राट का कार्यकाल अनिश्चित है।
- अमेरिका के राष्ट्रपति का अपने मन्त्रिमण्डल पर पूर्ण नियन्त्रण है, जबकि ब्रिटेन में मन्त्रिमण्डल पर राजा की बजाय प्रधानमंत्री का ही नियन्त्रण रहता है।
- अमेरिका के राष्ट्रपति के पास पाकेट वीटों की शक्ति है, जबकि सम्राट के पास ऐसी कोई शक्ति नहीं है।
- अमेरिका के राष्ट्रपति की बजट निर्माण में महत्वपूर्ण भूमिका होती है। ब्यूरो ऑफ बजट पर उसका पूर्ण नियन्त्रण रहता है। ब्रिटेन के सम्राट की बजट निर्माण में कोई प्रभावकारी भूमिका नहीं है।
- अमेरिका का राष्ट्रपति देश-विदेश की नीति का प्रमुख प्रवक्ता होता है। ब्रिटेन में यह शक्ति सम्राट की बजाय प्रधानमंत्री के पास होती है।
- ब्रिटिश सम्राट की शान-शोकात, मर्यादा तथा प्रभाव अमेरिकी राष्ट्रपति के लिए एक स्वप्न मात्र है। लेकिन फिर भी ब्रिटिश सम्राट के लिए यह कहा जाता है कि वह शासन का मुखिया होते हुए भी शासन नहीं करता। इसके विपरीत अमेरिका का राष्ट्रपति शासन का अध्यक्ष और शासनकर्ता दोनों है।

4.4.9 अमेरिका में राष्ट्रपति और ब्रिटिश प्रधानमंत्री में तुलना

(Comparison between the American President and the British Prime Minister)

जहां अमेरिका ने अध्यक्षीय शासन-प्रणाली अपनाई है तो वहीं ब्रिटेन ने संसदात्मक व्यवस्था को अपना है। जहां अमेरिका का राष्ट्रपति वास्तविक कार्यपालक है, वहीं यह शक्ति ब्रिटेन प्रधानमंत्री को प्राप्त है। दोनों के पदों में संवैधानिक अन्तर होते हुए भी कुछ समानताएं भी हैं। लास्की ने अपनी पुस्तक 'Parliamentary Government in England' में लिखा है— “संयुक्त राज्य अमेरिका का राष्ट्रपति कुछ बातों में सम्राट से बढ़कर है तो कुछ में



कम।” रेम्जे म्युर ने लिखा है— “ब्रिटिश प्रधानमंत्री की शक्तियां इतनी व्यापक हैं जितनी विश्व के किसी अन्य संवैधानिक शासक को प्राप्त नहीं; यहां तक अमेरिकन राष्ट्रपति को भी नहीं।” इसी तरह के विचार अन्य विद्वानों ने भी दिए हैं। कुछ अमेरिकन राष्ट्रपति को शक्तिशाली मानते हैं तो कुछ ब्रिटिश प्रधानमंत्री को। इस बात का पता तो तुलनात्मक आधार पर ही लगाया जा सकता है कि किसकी स्थिति क्या है। विधि निर्माण एवं वित्तीय व्यवस्था के क्षेत्र में ब्रिटिश प्रधानमंत्री अमेरिका के राष्ट्रपति से अधिक शक्तिशाली हैं, किन्तु प्रशासनिक एवं कार्यपालिका सम्बन्धी विषयों में अमेरिकन राष्ट्रपति की स्थिति अधिक सर्वोच्च है। यद्यपि अमेरिका का राष्ट्रपति अपनी शक्तियों का प्रयोग स्वतन्त्रतापूर्वक करने की बजाय सीनेट की अनुमति से ही करता है, फिर भी उसकी स्थिति ब्रिटिश प्रधानमंत्री से कम नहीं। व्यवहार में दोनों में कुछ साम्य होते हुए भी असमानताएं ही अधिक हैं।

4.4.10 चीन में कार्यपालिका का ढांचा (Executive Structure in China)

चीन में न तो संयुक्त राज्य अमेरिका की भांति अध्यक्षीय शासन प्रणाली को अपनाया गया है और न ही भारत की भांति संसदीय शासन प्रणाली को। चीन में राज्य का अध्यक्ष राष्ट्रपति होता है। लेकिन उसकी शक्तियां भारतीय राष्ट्रपति की अपेक्षा व्यापक हैं। शासन की अध्यक्ष प्रधानमंत्री है जो राज्य परिषद का अध्यक्ष होता है तथा राज्य परिषद चीन की सर्वोच्च प्रशासनिक संस्था है। राज्य परिषद को चीन की केन्द्रीय सरकार का शक्ति पुंज माना जाता है। 1954 के प्रथम संविधान में राष्ट्रीय कार्यपालिका के दो प्रमुख अंग थे। एक राज्याध्यक्ष— अन्य संसदीय देशों की भांति चीन का राष्ट्राध्यक्ष राष्ट्रपति होता था। दूसरा राज्य परिषद — यह चीनी गणराज्य की मन्त्रिपरिषद के रूप में कार्य करती थी। 1975 में दूसरे संविधान के अनुसार ‘राष्ट्राध्यक्ष’ के पद को समाप्त कर दिया गया और उसके कार्य व शक्तियां साम्यवादी द्वाि की केन्द्रीय समिति और राष्ट्रीय जन कांग्रेस को सौंप दिए गए। राज्य परिषद को बरकरार रखा गया। लेकिन 1975 के संविधान के अनुच्छेद-19 के तहत इसे केन्द्रीय जन सरकार (General People's Government) का नाम दिया गया। वर्तमान 1982 के चौथे संविधान में पुनः राष्ट्राध्यक्ष पद की व्यवस्था की गई और राज्य परिषद को चीन की केन्द्रीय सरकार के प्रशासन का केन्द्र बिन्दु माना गया।

• चीनी गणतन्त्र का राष्ट्रपति (President of the People's Republic of China)

चीन में आंशिक रूप से संसदीय शासन प्रणाली को अपनाया गया है जिसमें दोहरी कार्यपालिका होती है। एक में नाममात्र की और दूसरी वास्तविक। राष्ट्रपति भारत की भांति चीनी गणतन्त्र का नाममात्र अध्यक्ष (Titular Head) होता है।

1. राष्ट्रपति का चुनाव (Election of the President):— चीनी संविधान के अनुच्छेद 79 के तहत चीनी गणतन्त्र के राष्ट्रपति का चुनाव चीन की राष्ट्रीय जन कांग्रेस द्वारा किया जाता है।



2. कार्यकाल:— चीनी गणतन्त्र के वर्तमान संविधान के अनुसार राष्ट्रपति का कार्यकाल 5 वर्ष है। लेकिन 5 वर्ष से पहले भी राष्ट्रपति का पद निम्नलिखित कारणों से रिक्त हो सकता है यदि वह स्वयं त्यागपत्र दे दे। उसकी मृत्यु हो जाए। Article 63 के अनुसार राष्ट्रीय जन कांग्रेस राष्ट्रपति को समय से पहले हटा सकती है। यदि राष्ट्रपति कार्य करने में अक्षम हो जाये तो उसकी अनुपस्थिति में 'उप-राष्ट्रपति' ही राष्ट्रपति के कार्यों को सम्पन्न करता है। राष्ट्रपति का पद रिक्त हो जाने पर वही राष्ट्रपति बन जाता है।

3. योग्यताएं (Qualifications):— चीन के राष्ट्रपति पद का चुनाव लड़ने वाले उम्मीदवार के लिए निम्नलिखित योग्यताएं होनी आवश्यक हैं :—

- (1) वह चीन का जन्मजात नागरिक हो।
- (2) उसकी आयु 45 वर्ष या उससे अधिक हो।
- (3) उसे चीन के राजनीतिक अधिकार प्राप्त हों। (विशेषकर मत देने व चुनाव लड़ने का)।
- (4) इस पद के लिए चुनाव लड़ने वाला उम्मीदवार देशभक्त, चरित्रवान, दल का वरिष्ठ व प्रतिष्ठित नेता हो।

चीनी संविधान में राष्ट्रपति को पुनः चुनाव लड़ने का अधिकार दिया गया है। लेकिन यह भी व्यवस्था की गई है कि कोई भी व्यक्ति दो से अधिक बार इस पद पर नहीं रह सकता। अतः कोई भी राष्ट्रपति 10 वर्ष तक इस पर सुशोभित रह सकता है। चीनी संविधान के अनुच्छेद-84 के अनुसार यह व्यवस्था की गई है कि यदि चीनी राष्ट्रपति का पद किसी कारण रिक्त हो जाता है तो उप-राष्ट्रपति शेष समय के लिए देश का राष्ट्रपति बन जाएगा। यदि राष्ट्रपति और उप-राष्ट्रपति दोनों के पद रिक्त हों तो राष्ट्रीय जन कांग्रेस एक नए राष्ट्रपति और एक नए उप-राष्ट्रपति का चुनाव करेगी। जब तक इन दोनों अधिकारियों का चुनाव नहीं हो जाता तब तक राष्ट्रीय जन कांग्रेस की स्थाई समिति का अध्यक्ष चीन के राष्ट्रपति के रूप में कार्य करेगा। यदि राष्ट्रपति अपने पद और इससे सम्बन्धित कार्यों या शक्तियों का उचित प्रयोग नहीं करता तो संविधान के अनुसार उसे समय से पहले भी हटाया जा सकता है। अनुच्छेद-63 में यह व्यवस्था है कि राष्ट्रीय जन कांग्रेस विधि द्वारा राष्ट्रपति को समय से पहले हटा सकती है।

4. राष्ट्रपति के कार्य या शक्तियां (Functions and Powers of President)

चीनी गणराज्य के राष्ट्रपति के कार्यों व शक्तियों का वर्णन संविधान के अनुच्छेद 80 और 81 में किया गया है। जिसके अनुसार उसे व्यापक कार्यकारी शक्तियां सौंपी गई हैं। लेकिन इन शक्तियों का प्रयोग वह इच्छा से नहीं करता। संविधान के अनुसार राष्ट्रपति को अपनी शक्तियों का प्रयोग या तो राष्ट्रीय जन कांग्रेस या उसकी स्थाई समिति (Standing Committee) के निर्णयों के अनुसार करना पड़ता है। राष्ट्रपति की कुछ महत्वपूर्ण शक्तियों का वर्णन निम्नलिखित है :—



(1) **प्रशासकीय कार्य (Administrative Function)** :- चीनी राष्ट्रपति को राष्ट्र का अध्यक्ष होने के नाते महत्वपूर्ण प्रशासनिक कार्य सौंपे गए हैं। लेकिन भारत के राष्ट्रपति की भांति वह नाममात्र का प्रधान (Nominal Head) है और उसके प्रशासकीय अधिकारों का वास्तविक प्रयोग प्रधानमंत्री (Premier) तथा उसके सहयोगी दल के प्रेजिडियम की इच्छा के अनुसार करते हैं। कहने को तो देश का समस्त प्रशासन उसी के नाम से चलाया जाता है। देश का सर्वोच्च शासन होने के नाते वह नियम अधिनियम भी बना सकता है। लेकिन व्यवहार में स्थिति इससे भिन्न है। वह केवल संवैधानिक प्रधान है, लेकिन समस्त प्रशासन की बागडोर प्रधानमंत्री के हाथ में रहती है।

(2) **नियुक्तियां करने की शक्ति (Powers of Making Appointments)**:- संविधान के अनुसार देश के महत्वपूर्ण पदों पर आसीन अधिकारियों की नियुक्ति चीनी गणराज्य के प्रधान द्वारा की जाती है। राष्ट्रपति प्रधानमंत्री (Premier), उप-प्रधानमंत्री (Vice-Premier) मंत्रियों तथा आयोगों के अध्यक्षों, राष्ट्रीय सुरक्षा परिषद के उपाध्यक्ष व अन्य सदस्यों को निर्धारित विधि द्वारा नियुक्ति करता है। राज्य परिषद के महासचिव की नियुक्ति भी राष्ट्रपति द्वारा की जाती है। राष्ट्रपति की यह स्थिति मात्र संवैधानिक है, जबकि व्यवहार में इन शक्तियों का प्रयोग वह अपनी इच्छा से नहीं अपितु साम्यवादी दल के प्रेजिडियम की इच्छानुसार करता है।

(3) **सैनिक शक्तियां (Military Powers)** :- चीनी गणराज्य का अध्यक्ष भारत के राष्ट्रपति की भांति सेना का सर्वोच्च अधिकारी होता है। वह राष्ट्राध्यक्ष के साथ-साथ राष्ट्रीय सुरक्षा परिषद का भी अध्यक्ष होता है। इसका उपाध्यक्ष और अन्य सदस्यों का चुनाव भी राष्ट्रपति द्वारा किया जाता है। वह समस्त देश या उसके किसी भाग में सैनिक शासन लागू कर सकता है।

(4) **कूटनीतिक शक्तियां (Diplomatic Power)**:- राष्ट्रपति को विदेशी मामलों में भी व्यापक अधिकार प्राप्त हैं। राष्ट्र का सर्वोच्च अधिकारी होने के नाते अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में वह अपने देश का प्रतिनिधित्व करता है। चीन के राजदूतों को विदेशों में भेजना, वापस बुलाना और विदेशों से चीन में आने वाले राजदूतों को स्वीकार करना, उनके प्रमाण-पत्रों का निरीक्षण करना आदि राष्ट्रपति के कार्य हैं। वह किसी भी देश से युद्ध की घोषणा कर सकता है और किसी भी देश से युद्ध की घोषणा कर सकता है।

(6) **निरीक्षणात्मक शक्तियां(Powers relating to Supervision)** :- चीन के संविधान में राष्ट्रपति की निरीक्षणात्मक शक्तियों का उल्लेख किया गया है। वह सर्वोच्च राज्य सम्मेलन का अध्यक्ष होता है और सम्मेलन में वह अपनी इच्छानुसार कुछ सदस्यों को नियुक्त कर सकता है। सम्मेलन के महत्वपूर्ण विषयों में वह अपनी राय जाहिर करता है और सम्मेलन द्वारा लिए गए निर्णय को राष्ट्रीय जन कांग्रेस के पास भेजता है। चीन के गणराज्य के उपाध्यक्ष के चुने जाने से पूर्व उसकी शक्तियों को प्रयोग का अधिकार भी अध्यक्ष को दिया गया है।



(7) विविध शक्तियां (Miscellaneous Powers) :- चीनी गणराज्य का राष्ट्रपति निम्नलिखित विविध प्रकार के कार्य भी करता है। जैसे :- वह किसी भी व्यक्ति को क्षमादान दे सकता है। उसे राज्यादेशों, उपाधियों एवं पदवियों के वितरण का भी अधिकार है। इनके अलावा अन्य सम्मानसूचक उपाधियां भी उसी द्वारा प्रदान की जाती हैं।

(9) स्वैच्छिक शक्तियां (Discretionary Powers):- राष्ट्र की स्वैच्छिक शक्तियां निम्नलिखित हैं :-

चीन में भेजे जाने वाले अन्य देशों के राजदूतों को स्वीकार करना या न करना। चीन के प्रधानमंत्री पद के लिए नियुक्त किए जाने वाले व्यक्ति की नामजदगी करना। राष्ट्रपति द्वारा नामजद किए गए व्यक्तियों में से ही राष्ट्रीय जन कांग्रेस प्रधानमंत्री का चुनाव करती है।

5. राष्ट्रपति की स्थिति (Position of the President)

चीन में आंशिक रूप से संसदीय शासन प्रणाली को अपनाया गया है जिसके अनुसार देश के सर्वोच्च अधिकारी को नाममात्र का अध्यक्ष बनाया गया है। संविधान द्वारा उसे जो शक्तियां प्रदान की गई हैं उनका प्रयोग वह स्वयं अपनी इच्छा से नहीं अपितु राष्ट्रीय जन कांग्रेस या इसकी स्थायी समिति के परामर्श से करता है। इसके अतिरिक्त राज्य परिषद (State Council) जो प्रशासन की नीति बनाती है और प्रशासन चलाती है, को अध्यक्ष के प्रति नहीं अपितु राष्ट्रीय जन कांग्रेस के प्रति उत्तरदायी बनाया गया है। इसी कारण संवैधानिक आलोचक यह विचार प्रकट करते हैं कि चलन का राष्ट्रपति देश का नाममात्र अध्यक्ष ही प्रतीत होता है, लेकिन फिर भी यह अवश्य कहा जा सकता है कि उसकी स्थिति पूर्व सर्वाच्च सोवियत की प्रेजिडियम के अध्यक्ष की स्थिति से अधिक महत्वपूर्ण और शक्तिशाली है।

संक्षेप में राष्ट्रपति की स्थिति के संदर्भ में कहा जा सकता है कि चीनी संविधान ने राष्ट्रपति को एक संवैधानिक मुखिया ही बनाया गया है। भारत के राष्ट्रपति की भांति काफी हद तक उसकी स्थिति उसके व्यक्ति, साम्यवादी दल पर नियन्त्रण व प्रभाव पर निर्भर है, जिनके द्वारा राष्ट्रपति प्रभावशाली महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है।

4.4.11. स्विटजरलैण्ड की कार्यपालिका

स्विटजरलैण्ड के संघ की परिषद में सात सदस्य होते हैं, जिनका चुनाव वहाँ की संसद के दोनों भवन सम्मिलित बैठक में चार वर्ष के लिए अपने पूर्ण बहुमत के आधार पर करते हैं। संघीय परिषद की रचना के सम्बन्ध में परम्परागत प्रतिबन्ध हैं,

(1) कानूनी रूप से संसद पर यद्यपि इस बात का कोई प्रतिबन्ध नहीं है कि अमुक व्यक्ति को चुने अथवा अमुक व्यक्ति को न चुने। फिर भी परम्परा के अनुसार सात सदस्यों में प्रायः सभी दलों के प्रतिनिधि आ जाते हैं। ऐसा



नहीं होता कि सब सदस्य एक ही दल का हो जायें। इसका परिणाम यह होता है कि संघीय परिषद के सदस्यों के लिए यह आवश्यक नहीं होता कि वे स्वयं किसी एक नीति से ही बँधा हुआ मानें।

(2) परिषद ही सदस्यता के सम्बन्ध में एक और प्रतिबन्ध हैं, जो सन् 1914 के एक कानून के अनुसार है। उसके अनुसार, 'ऐसे कोई भी लोग जो रक्त या वैवाहिक सम्बन्ध से प्रत्यक्ष वंश-पम्पा में कहीं तक भी तथा अप्रत्यक्ष परम्परा में चौथी पीढ़ी तक परम्परा सम्बन्धित हो जिन्होंने बहनों से विवाह कर लिया हो तथा जो गोद रखे जाने के कारण परस्पर सम्बन्धित हों, एक समय पर परिषद के सदस्य नहीं हो सकते।

(3) संविधान की दारा 96 के अन्य एक विशेषता यह भी है कि संघीय सभा उन समस्त नागरिकों में से संघीय परिषद के सदस्य चुन सकती है, जो राष्ट्रसभा के प्रत्याशी होने योग्य हों। परन्तु एक कैण्टन से एक ही अधिक सदस्य नहीं चुने जा सकते।

• अध्यक्ष एवं उपाध्यक्ष (President and Vice-President)

संघीय परिषद अपने सदस्यों में से ही प्रतिवर्ष अपने अध्यक्ष और उपाध्यक्ष का निर्वाचन करती है। जिन्हें संघ का राष्ट्रपति और उप-राष्ट्रपति कहा जाता है। दोनों ही पदों के लिए व्यक्ति दुबारा निर्वाचित किये जा सकते हैं, किन्तु उनका निर्वाचन लगातार दो बार नहीं हो सकता। यही कारण है कि लगातार दो वर्ष नहीं, लेकिन अनेक बार लोगों ने इन पदों पर कार्य किया है। संघीय परिषद के अध्यक्ष की स्थिति न हो अमेरिकी राष्ट्रपति जैसी होती है और न ब्रिटिश प्रधानमंत्री के समान। उसे कोई विशेषाधिकार प्राप्त नहीं होते। अपने साथियों के समान वह भी एक विभाग का अध्यक्ष होता है। अध्यक्ष की शक्तियाँ बहुत ही कम हैं। देश के प्रशासन के लिए अन्य सदस्यों की अपेक्षा किसी भी प्रकार वह अधिक उत्तरदायी नहीं है। वह समस्त निर्णय संघीय परिषद् 'एकल सत्ता' के रूप में करती है। अध्यक्ष न किसी अधिकारी की नियुक्त करना है और न कोई संधि-वार्ता आदि ही कर सकता है। किसी अवधेयक पर उसे निषेधात्मक अधिकार भी नहीं है। उसकी शक्ति इतनी ही है कि वह संघ की सभाओं का सभापतित्व करता है, विभिन्न विभागों द्वारा भेजी गई रिपोर्टों को देखना है, विभिन्न प्रशासकीय विभागों के कार्यों का सामान्य निरीक्षण करता है और किसी मामले पर समान मत होने पर अफना निर्णायक मत देता है। उसकी स्थिति वास्तव में एक प्रतीकात्मक या नाममात्र के प्रधान की सी है। स्विटजरलैण्ड के अध्यक्ष पद की तुलना यदि हम इंग्लैण्ड के प्रधानमन्त्री पद से करें, तो दोनों की स्थिति में बड़ा अन्तर है। इंग्लैण्ड किसी भी रूप में उसकी स्थिति स्विटजरलैण्ड के अध्यक्ष से ही उच्चस्तरीय है। इंग्लैण्ड में वस्तुतः प्रधानमंत्री का नेतृत्व माना जाता है, जबकि स्विटजरलैण्ड की संघीय परिषद में ऐसी बात नहीं है। अमरीका की कार्यपालिका के विषय में यदि हम इस प्रसंग में सोचें, तो वहाँ यह भिन्नता और भी तीव्र रूप में पायी जाती है। स्विटजरलैण्ड में यदि अध्यक्ष के पद के परिषद के पद की तुलना में कोई विशेष महत्व नहीं है, अमरीका में कार्यपालिका का अध्यक्ष कार्यपालिका के कुटुम्ब का प्रमुख होता है। इस प्रकार वह स्पष्ट है कि स्विटजरलैण्ड की कार्यपालिका बहुत (Plural) है, क्योंकि वहाँ किसी एक



सदस्य का नेतृत्व नहीं माना जाता तथा इंग्लैण्ड व अमरीका में कार्यपालिका एकल है, क्योंकि कार्यपालिका में एक व्यक्ति का प्रभुत्व रहता है, जो औरों पर छाया रह सकता है स्विस् शासन-पद्धति ने तो संसदात्मक है, न अध्यक्षतात्मक ही। उसकी कार्यपालिका में दोनों की विशेषताओं का सम्मिश्रण मिलता है। इसमें दोनों शासन-पद्धतियों के गुणों को अपनाने तथा अवगुणों के बचने का प्रयत्न किया गया है। स्विट्जरलैण्ड के कार्यपालिका शक्ति को ब्रिटेन तथा अमेरिका के सदृश किसी एक व्यक्ति में निहित न कर सात सदस्यों की एक परिषद् में निहित किया गया है जिसे संघीय परिषद् (Federal Council) कहते हैं। इसी कारण स्विस् कार्यपालिका को बहुत कार्यपालिका (Plural Executive) या मण्डलात्मक कार्यपालिका (Collegiate Executive) या मिश्रित कार्यपालिका (Commission Type Executive) कहते हैं। कोडिंग के शब्दों में इस अनोखे संस्था निस्संदेह संघीय परिषद् अर्थात् स्विस् संघीय कार्यपालिका है।

1 सदस्य-संख्या एवं संगठन : संविधान की धारा 92 के अनुसार स्विस् राज्यमण्डल में सर्वो निर्देशन तथा कार्यपालिका शक्ति 7 सदस्यों की एक संघीय परिषद् द्वारा प्रयुक्त की जाती है। इस प्रकार स्विट्जरलैण्ड में कार्यकारिणी शक्ति किसी एक व्यक्ति-राष्ट्रपति या सम्राट के हाथ में नहीं बल्कि एक परिषद् के हाथ में सौंपी गयी है। संविधान द्वारा सदस्य-संख्या 7 निश्चित की गयी है।

इस नयी संवैधानिक व्यवस्थाओं में मुख्यतः दो कारण हो सकते हैं। प्रथम, वह व्यवस्था देश की ऐतिहासिक परम्परा के अनुकूल है। 1848 ई. में संघीय संविधान के निर्माण से पूर्व विभिन्न कैण्टनों की कार्यपालिकाएँ मंडलात्मक ही थीं। इसके अतिरिक्त 1738 से 1803 ई० तक जब स्विट्जरलैण्ड फ्रांस के अधीन था तो राष्ट्रीय कार्यकारिणी शक्ति 5 सदस्य की डाइरेक्टरी को दी गयी थी। यह भी एक मंडलात्मक कार्यकारिणी का प्रयोग था। द्वितीय, स्विस्-जनता किसी व्यक्ति विशेष के हाथ में सत्ता को केन्द्रित करने की प्रवृत्ति का स्वभावतः विरोध करती है। इस प्रवृत्ति को यह जनतंत्रीय सिद्धान्तों के प्रतिकूल मानती है। इसमें उसे राजतन्त्र अथवा तानाशाही का आभास मिलता है।

2. निर्वाचन-पद्धति: संघीय परिषद् के सदस्यों की निर्वाचन-पद्धति (System of Election) 1847 ई. के संविधान द्वारा निर्धारित की गयी थी। संघीय सभा के दोनों सदन संयुक्त अधिवेशन में उनका निर्वाचन करते हैं।

3. कार्यकाल: संविधान की धारा 96 में संघीय परिषद् के कार्यकाल की व्यवस्था की गई है। संघीय परिषद् के सदस्य 4 वर्षों के लिए नियुक्त किये जाते हैं। 1931 ई. के पहले इसकी अवधि केवल 3 वर्ष की थी। लेकिन 1931 ई. में राष्ट्रीय परिषद् के साथ इसके कार्य-काल को भी प्रायः बढ़ाकर 4 वर्ष कर दिया। यद्यपि सदस्यों का वैधानिक काल 4 वर्ष है परन्तु उनका बार-बार पुनर्निर्वाचन होता रहता है।

4. योग्यताएँ : संविधान की धारा 96 के अनुसार संघीय परिषद् के सदस्य उन सभी स्विस् नागरिकों के बीच में से चुने जाते हैं जो राष्ट्रीय परिषद् की सदस्यता की योग्यता रखते हैं। अतः कोई भी व्यक्ति जो राष्ट्रीय परिषद् के



लिए चुने जाने की योग्यता रखता है संघीय परिषद् का सदस्य निर्वाचित हो सकता है। धर्माधिकारी (Clergy) संघीय परिषद् के सदस्य नहीं हो सकते। 1914 ई. में एक कानून द्वारा यह बन्धन लगा दिया गया कि दो निकट सम्बन्धी संघीय परिषद् के सदस्य नहीं हो सकते और न तो संघीय परिषद् के निकट सम्बन्धी किसी ऐसे पर नियुक्त किये जा सकते हैं जो कि संघीय परिषद् के अधीन हो। संविधान की धारा 97 के अनुसार यह प्रतिबन्ध लगा दिया गया है कि संघीय परिषद् के सदस्य राज्य-मण्डल अथवा किसी कैंटन के अन्तर्गत अन्य कोई पद ग्रहण नहीं कर सकते न तो वे कोई अन्य व्यवहार ही कर सकते हैं। उन्हें अनुभवी योग्य तथा निपुण होना चाहिए। उनमें पारस्परिक मतभेदों को समझौते के द्वारा सुलझाने की क्षमता होनी चाहिए। उनमें प्रशानिक योग्यता श्रेष्ठ मानसिक शक्ति बुद्धि चैतन्य, व्यवहार-कुशलता, शांत स्वभाव आदि गुणों का होना आवश्यक है।

5. वेतन: संघीय परिषद् के सदस्य को संघीय निधि से 48000 फ्रैंक वार्षिक वेतन मिलता है। 55 वर्ष की उम्र वाले सदस्यों को निवृत्ति-वेतन (Pension) दिया जाता है बशर्ते कि वे इस वर्षों तक पार्षद रह चुके हों। निवृत्ति-वेतन 40 से 60 प्रतिशत होता है।

6. प्रशासकीय विभाग:- स्विट्जरलैण्ड में प्रशासन के समस्त कार्य को 7 विभागों में बाँट दिया गया है। प्रत्येक विभाग एक संघीय परिषद् के अधीन होता है। जो उसके कार्यसंचालक के लिए समस्त परिषद् के प्रति उत्तरदायी होता है। एक विभाग के प्रमुख की अस्वस्था या अनुपस्थिति में कार्य करने के लिए प्रत्येक विभाग का प्रमुख दूसरे विभाग का उप-प्रमुख होता है। सम्पूर्ण प्रशासन के लिए सामूहिक रूप से उत्तरदायी (Collectively responsible) होता है।

- (1) राजनीतिक विभाग (Political Department)
- (2) गृह विभाग (Department of Interior)
- (3) न्याय और पुलिस विभाग (Department of Justice and Police)
- (4) सैनिक विभाग (Military Department)
- (5) वित्त और प्रशुल्क विभाग (Department of Finance and Customs)
- (6) सार्वजनिक अर्थ-विभाग (Department of Economy)
- (7) डाक और रेल विभाग (Postal and Railways Department)

साधारण तथा संघीय परिषद् की बैठकें सप्ताह में दो बार होती हैं। इसकी कार्यवाही गुप्त होती है। इसमें कम-से-कम चार सदस्यों की उपस्थिति आवश्यक है। निर्णय बहुमत से होता है। कोई भी सदस्य बिना परिषद् की आज्ञा के बैठक से अनुपस्थित नहीं रह सकता। परिषद् का अध्यक्ष निर्णयात्मक मत देता है। संघीय चांसलर



(Federal Chancellor) जो विधान-सभा और संघीय परिषद् के कार्यालय का अध्यक्ष होता है संघीय परिषद् के सचिव के रूप में परिषद् की बैठकों में उपस्थिति रहता है। चांसलर के बदले कोई उप- चांसलर भी उनके कार्यों को कर सकता है।

7. पदाधिकारी: संघीय परिषद् के लिए सभापति और उप- सभापति की भी व्यवस्था है जिनका निर्वाचन संघीय सभा प्रतिवर्ष संघीय परिषद् के सदस्यों में से ही करती हैं। इन्हीं पदाधिकारियों को राज्यमण्डल के राष्ट्रपति और उप-राष्ट्रपति भी कहते हैं।

8 संघीय परिषद् के अधिकार एवं कृत्य (Powers and functions of the Federal Council): संविधान की धारा 102 में संघीय परिषद् की शक्तियों तथा कृत्यों की एक लम्बी सूची दी गयी है। इसके कार्य मुख्यतः प्रशासकीय हैं। संविधान की धारा 95 के अनुसार इसे सर्वोच्च निर्देशिका तथा कार्यपालिका शक्ति (the supreme directing and executive authority) प्राप्त है। प्रशासकीय शक्तियों के अतिरिक्त इसे कुछ महत्वपूर्ण विधायनी, वित्तीय एवं न्यायिक शक्तियाँ भी प्रदान की गयी हैं। अध्ययन की सुविधा के दृष्टिकोण से संघीय परिषद् को निम्नलिखित शीर्षकों के अन्तर्गत रखा जा सकता है—

(1) कार्यपालिका की भाक्तियाँ: यह स्विस राज्यमण्डल की सर्वोच्च कार्यकारी सत्ता है। संघीय विधियों तथा आदेशों के अनुसार समस्त राज्यमण्डल के प्रशासक को नियन्त्रित करती है तथा इस बात का निरीक्षण करती है कि संघीय संविधान तथा संघीय कानूनों का निरीक्षण हो या नहीं और इसके लिए आवश्यक कार्यवाही करती है। संघीय सभा द्वारा निर्मित विधियों तथा अधिनियमों, संघीय न्यायाधिकरण के निर्णयों तथा विभिन्न कैंटनों के परस्पर झगड़ों के निबटारे हेतु हुए समझौते एवं मध्यस्थों के निर्णयों को लागू कराने का प्रबन्ध करती है। इसे नियुक्ति का भी अधिकार प्राप्त है। जिन पदों पर संघीय सभा, संघीय न्यायालय अन्य किसी संघीय प्राधिकारी की नियुक्ति का अधिकार दिया गया है, उस पर संघीय परिषद् नियुक्ति करती है। संघीय प्रशासन के सभी विभाग इसके अधीक्षण में ही अपना कार्य करते हैं। संघीय परिषद् पर राज्यसंघ में शान्ति एवं व्यवस्था, देश की बाह्य आक्रमणों एवं आंतरिक उपद्रवों से रक्षा तथा स्विट्जरलैंड की स्वतन्त्रता एवं तटस्थता की सुरक्षा का उत्तरदायित्व सौंपा गया है। संघीय सेना के बढिवेशन न चल रहा हो संघीय परिषद् सेना का संगठन कर उसका आवश्यकतानुसार उपयोग कर सकती है। परन्तु यदि सेना 3 सप्ताह से अधिक के लिए अथवा दो हजार सैनिकों से संगठित किया जाये तो संघीयसभा के सदस्यों की बैठक तुरंत बुलाना आवश्यक है। स्विट्जरलैंड के वैदेशिक सम्बन्ध के नियत तथा देखभाल का अधिकार भी संघीय परिषद् को ही दिया गया है। संविधान में कहा गया है कि यह विदेश में राज्यमण्डल के हितों की देखभाल करेगी, खासकर अन्तरराष्ट्रीय संबंध तथा वैदेशिक मामले। इसके अतिरिक्त कैंटनों द्वारा परस्पर या विदेशों से की गयी संधियों को यह स्वीकृति देती है। संघीय परिषद् सभा के प्रत्येक साधारण अधिवेशन में अपने कार्य का विवरण देती है, आन्तरिक स्थिति तथा वैदेशिक संबंध पर एक रिपोर्ट प्रस्तुत करती है और सभा के



विचारार्थ सार्वजनिक कल्याण के उपायों का सुझाव खती है। संघीय सभा या उनके किसी एक सदन द्वारा मांग की जाने पर विवरणों के अतिरिक्त विवरण भी प्रस्तुत कर सकता है। संघीय परिषद को किसी एक या दोनों सदनों को किसी विषय पर सन्देश भेजने के अधिकार है। सन्देश के साथ विधेयकों अथवा योजनाओं के प्रारूप भी संघीय सभा के विचार तथा स्वीकृति के हेतु भेजे जा सकते हैं। अन्त में, कैबिनेटों के प्रशासन पर भी संघीय परिषद का अधिकार है। यह कैबिनेटों के कतिपय प्रशासन विभागों का निरीक्षण करता है कैबिनेटों की विधान सभाओं द्वारा पारित कुछ विधेयकों को संघीय परिषद की स्वीकृति प्रदान करता है। संघीय सभा की स्वीकृति के लिए कैबिनेट विधान में संशोधन प्रस्तावों का संघीय परिषद जांच करती तथा विधानमण्डल में उपर्युक्त प्रस्ताव प्रस्तुत करती है। किसी कैबिनेट में उपद्रव अथवा अशान्ति की स्थिति में संघीय परिषद संघीय हस्तक्षेप का निश्चय करती तथा सभा का अनुमोदन प्राप्त कर हस्तक्षेप करती है।

(2) विधायी भाक्तियां: विधि-निर्माण में भी संघीय परिषद का काफी हाथ रहता है धारा 102 (4) के अनुसार यह संघीय सभा में कानून का प्रारूप प्रस्तुत करती है तथा परिषद् या कैबिनेटों द्वारा प्रस्तुत प्रस्ताव पर प्रारंभिक प्रतिवेदन देती है। यद्यपि इसके सदस्य विधानमण्डल के सदस्य नहीं होते, लेकिन वे किसी भी सदन की बैठक में भाग ले सकते हैं। अपने विचार सुझाव तथा प्रस्थावर रख सकते हैं तथा वाद-विवाद में भी ले सकते हैं। संघीय परिषद स्वेच्छा से या विधानसभा के निर्देश से विधेयक भी प्रेषित कर सकती है। इसके अलावा सभा में प्रस्तुत किए जाने वाले सभी विधेयकों का संघीय परिषद करती है तथा संवैधानिक दृष्टि से उन्हें त्रुटि रहित बनाती है। स्विट्जरलैंड में नया विधेयक प्रायः संघीय परिषद संघीय परिषद से प्रारम्भ होती है। अगर कोई विधेयक संघीय-परिषद की नजर में छुट भी जाता है तो उनकी औपचारिक शुरुआत करने के लिए संघीय परिषद से निवेदन किया जाता है। संघीय परिषद विधेयक का प्रारूप तैयार करती तथा तर्कपूर्ण प्रतिवेदन के साथ उसे संघीय सभा के समक्ष रखती है। अगर संघीय सभा ने संघीय परिषद को किसी विषय पर विधेयक के प्रारूप तैयार करने के लिए कहा हो और परिषद् उसके विरुद्ध रिपोर्ट देती है तो साधारणतः सभा विधेयक के उस प्रारूप को कानून नहीं बनने देती है। संघीय परिषद का कार्य सिर्फ विधेयक का प्रारूप तैयार करना ही नहीं है बल्कि इसके बाद के उपक्रमों में भी वह सभा को नेतृत्व प्रदान करती है। इसका भार परिषद् के एक सदस्य को सौंप दिया जाता है। वह विधेयक समिति से विचार-विमर्श करता, उसकी बैठक में भाग लेता तथा उसे परामर्श देता है। इस संदर्भ में प्रो. रैपड का कथन है कि यह समझना कठिन नहीं कि संसद सदस्य क्यों नहीं वास्तविक विधायक बन पाते हैं जब विधेयक किसी सदन के समक्ष रखा जाता है, जब संघीय परिषद जो परिषद् द्वारा उसे विधेयक का संरक्षक नियुक्त किया जाता है, उसे प्रस्तुत करता है। उसका अर्थ बतलाता है उसके पक्ष में तर्क देता है और विधायिकी भेड़ियों से उसकी रक्षा करने के लिए गड़रिये का काम करता है। पुनः प्रो. रैपड के शब्दों में मानना पड़ेगा कि सर्वाधिक उत्तरदायी तथा भावपूर्ण कार्य विधानमण्डल हैं तथा उसके आदेश से निर्धारित तिथि से व्यवहार में लाये जाते हैं। संघीय सभा की समितियों



की कार्यवाही औ निर्णय को भी संघीय परिषद् प्रभावित करती है। समितियाँ परिषद् के विशेषज्ञों के मतों की उपेक्षा नहीं कर सकती, वे संघीय परिषद् के विशेषज्ञों की सहायता से अपनी रिपोर्ट तैयार करती है।

संघीय सभा अपने कानूनों की व्याख्या अथवा स्पष्टीकरण हेतु संघीय परिषद् के विनियम (regulations) बनाने का अधिकार देती है। अतः एक भारी संघीय परिषद् प्रति वर्ष विनियम अथवा अधिनियम पारित कर प्रत्यक्ष रूप से विधि निर्माण में भाग लेती है।

3. न्यायिक अधिकार: संघीय परिषद् को कुछ न्यायिक अधिकार (Judicial Power) भी प्राप्त हैं। वह कुछ विशेष प्रकार की अन्तर्राष्ट्रीय संधियों तथा संविधान की कतिपय आधारों जैसे—183 (शुल्क रहित सैनिक अस्त्र-शस्त्र), 511 (जिसूट धार्मिक समुदाय) ए 53 (कब्रिस्तान) आदि के अन्तर्गत उत्पन्न विवादों के सम्बन्ध में की गई अपीलों पर निर्णय देती है। संघीय रेलवे प्रशासन तथा विभिन्न प्रशासकीय विभागों के विरुद्ध की गयी अपील की वह सुनवाई करती है। अन्य देशों की कार्यपालिका के सदृश से उसे क्षमादान (pardon) का अधिकार प्राप्त नहीं है।

4. वित्तीय अधिकार:— संविधान स्पष्ट शब्दों में कहना है कि संघीय परिषद् राज्य-मण्डल वित्त का प्रशासन करती है, बजट तैयार करती है तथा आय-व्यय का लेखा रखती है।

इस प्रकार संघीय सभा की स्वकीकृति से संघीय परिषद् राज्य एकत्र करती है तथा उसके व्यवसाय का अधीकरण करती है।

5. संकटकालीन अधिकार:— भारत के संविधान के सदृश स्विस संविधान कार्यपालिका संकट अथवा आपत्तिकाल में कोई विशेष अधिकार प्रदान नहीं करती है। लेकिन आन्तरिक या अन्तर्राष्ट्रीय स्थिति में उत्पन्न संकटकाल में (emergency) संघीय सभा ने परिषद् को पूर्ण अधिकार सौंप दिया है उदाहरणस्वरूप 1835, 1853 और 1870 ई. में देश की तटस्थता के रक्षार्थ 1914 तथा 1939 ई. में विश्वयुद्ध के समय राष्ट्र की तटस्थता, स्वतन्त्रता तथा आर्थिक हितों की रक्षा के हेतु और 1930 ई. में आर्थिक संकट का सामना करने के लिए संघीय परिषद् को 'पूर्णाधिकार' सौंपे गये। संघीय विधानमण्डल तथा कैंटनों के अधिकार संघीय परिषद् द्वारा प्रयुक्त होने लगे, नागरिक अधिकार निलम्बित कर दिये। ह्यूबर ने संघीय परिषद् को सौंपे गये अधिकारों के परिणाम के बारे में कहा है कि उन पूर्णाधिकारियों के द्वारा बहुत मात्रा तक संविधान निलम्बित हो गया। सरकार ही वस्तुतः विधायिनी शक्ति बन गयी, बहुत सी जनतांत्रिक संस्थाओं को बाधा पहुँची तथा संघीय परिषद् के अधिकारों का इतना अधिक प्रसार हो गया है कि जिसकी कल्पना भी नहीं की जा सकती थी।

निष्कर्ष रूप में लॉवेल के कथनानुसार संघीय परिषद् को मुख्य शक्ति-स्रोत कहा जा सकता है और निश्चित रूप से यह राष्ट्रीय सरकार का संतुलन चक्र है। व्यवस्थापिका, कार्यपालिका और न्यायपालिका सरकार के तीन अंग हैं। सरकार के तीनों अंगों में सबसे महत्वपूर्ण व्यवस्थापिका है। यही विभाग कानून का निर्माण करती है। जिसके



अनुसार कार्यपालिका शासन करती है तथा व्यवस्थापिका न्याय का कार्य करती है व्यवस्थापिका का सरकार के संगठन में सर्वोच्च स्थान है, प्रजातांत्रिक राज्यों में यह जानता का प्रतिनिधित्व करती है और लोकतंत्र का दर्पण होती है।

4.5 अपनी प्रगति जांचें (Check your progress)

- 1.....सरकार की इच्छा या विधायिका के कानूनों को अमली जामा पहनाने वाला अंग है।
- 2.साधारण अर्थ में कानूनों का क्रियान्वयन करने वाली संस्था..... कहलाती है।
- 3.जहां पर शासन की सारी शक्तियां एक ही व्यक्ति में निहित रहती हैं,..... वह होती है।
- 4.सैद्धान्तिक दृष्टि से ब्रिटिश संसद में 1.....2.....3 तीनों आ जाते हैं।
- 5.प्रधानमंत्री शब्द का प्रयोग प्रथम बार 1878 में में प्रयोग हुआ।
- 6.अमेरिका में संसदीय प्रणाली के स्थान पर प्रणाली को अपनाया गया है।
- 7.राज्य परिषद चीन की संस्था है।

4.6 सारांश (Summary)

साधारण अर्थ में कानूनों का क्रियान्वयन करने वाली संस्था कार्यपालिका कहलाती है। आज इसका अर्थ सीमित और व्यापक दोनों अर्थों में किया जाता है। सीमित अर्थ में तो राज्य के प्रधान तथा उसके मन्त्रिमण्डल को ही कार्यपालिका कहा जाता है। व्यापक अर्थ में कार्यपालिका के अन्तर्गत नीति को अमली जामा पहनाने वाले प्रशासकीय अंग भी शामिल हो जाते हैं। ब्रिटिश संसद (British Parliament):— सैद्धान्तिक दृष्टि से ब्रिटिश संसद में राजकुट (The Crown), लार्ड सभा (House of Loard) को कॉमन्स सभा (House of Commons) तीनों आ जाते हैं। लार्ड सभा को उच्च सदन, कॉमन्स सभा का निम्न सदन कहा जाता है। कॉमन्स सभा की शक्तियां और कृत्य लार्ड सभा की तुलना से अधिक विस्तृत और महत्त्वपूर्ण कॉमन्स सभा को ब्रिटिश संसद का पर्यायवाची समझा जाता है क्योंकि इसके सदस्यों का चुनाव जनसाधारण के द्वारा किया जाता है, इसी सदन को विधि-निर्माण की आंतिक शक्ति प्राप्त है, और मन्त्रिमण्डल अपने अस्तित्व के लिए इसी सदन के विश्वास पर आश्रित है।

इंग्लैंड के कानून के अंतर्गत किसी ऐसे व्यक्ति या संस्था को मान्यता नहीं दी गई है जिसे संसद के द्वारा बनाए गए कानून को रद्द करने या उससे ऊंचा कानून बनाने का अधिकार हो। ब्रिटिश संसद का प्रभुसत्तासंपन्न मानने का मुख्य कारण यह है कि संसद से अधिनियम कानून की दृष्टि से सर्वोपरि है। इसके माध्यम से प्रथाओं को भी बदला जा सकता है, या रद्द किया जा सकता है। न्यायपालिका को यह अधिकार नहीं है कि वह किसी भी संसद के अधिनियमों का विधि-बाह्य घोषित कर दे, अर्थात् वह निर्णय दे सके कि प्रस्तुत अधिनियम का निर्माण संसद



की शक्ति से बाहर है। ब्रिटेन में राजतन्त्र की जड़ें बहुत गहरी व पुरानी हैं। 1688 की क्रान्ति ने राजतन्त्र को सीमित अवश्य कर दिया, लेकिन यह भी राजतन्त्र को समाप्त नहीं कर सकी। यह ब्रिटिश लोगों की रूढ़िवादिता और स्वस्थ राजनीतिक परम्पराओं का ही परिणाम है, जो आज तक भी ब्रिटेन में राजतन्त्र को बनाए रखे हुए है। राजतन्त्र और लोकतन्त्र विरोधाभासी होते हुए भी आज तक ब्रिटेन में सामंजस्यपूर्ण तरीके से कर रहे हैं। स्विस् संविधान की मुख्य विशेषता बहुल कार्यपालिका का होना है। शासन व्यवस्था के संचालन के लिए कार्यपालिका का संगठन एकल होता है। लेकिन स्विस् संविधान इस संदर्भ में भिन्न है। स्विस् कार्यपालिका शक्ति एक संघीय परिषद् को प्रदान की गयी है जिसमें 7 सदस्य सहयोग के रूप में काम करते हैं और एक ही पार्टी से न लिये जाकर विभिन्न दलों का प्रतिनिधित्व करते हैं। इसमें से बारी-बारी से कार्यकारिणी का अध्यक्ष चुन लिया जाता है। संघीय परिषद् के किसी भी सदस्य की स्थिति अमरीकन राष्ट्रपति या ब्रिटिश प्रधानमंत्री के समान नहीं होती। स्विट्जरलैंड की शासन व्यवस्था न तो संसदीय शासन के अनुकूल है और न ही अध्यक्षतात्मक शासन के अनुकूल है। इसलिए इसे संसदात्मक और अध्यक्षतात्मक शासन प्रणाली में समन्वय कहा जा सकता है। संयुक्त राज्य अमेरिका का राष्ट्रपति अमेरिका का सर्वोच्च सत्ता धारी एवं कार्यपालिका का वास्तविक स्वामी होता है। उसका कार्यकाल 4 वर्ष का होता है। अमरीकी संविधान के अनुच्छेद 2 (4) के मुताबिक अमेरिका के राष्ट्रपति को महाभियोग द्वारा ही हटाया जा सकता है। राष्ट्रपति पर महाभियोग देशद्रोह, भ्रष्टाचार या किसी घोर अपराध पर ही लगाया जा सकता है।

संयुक्त राज्य अमेरिका का राष्ट्रपति होने के नाते वह विश्व का भी विशेष नेता बन जाता है। अमेरिका के राष्ट्रपति की कार्यपालिका शक्तियाँ असीम होती हैं। वह देश की विदेश नीति का निर्धारण एवं विदेशों में देश का प्रतिनिधित्व करता है। आपातकाल की स्थिति में वह और भी असीम शक्तियों का स्वामी बन जाता है।

चीन का राष्ट्रपति 'राष्ट्र का प्रधान' है, तथा उसे संविधान द्वारा व्यापक शक्तियाँ प्रदान की गई हैं लेकिन व्यवहार में जनवादी चीन का राष्ट्रपति मात्र एक वैधानिक अधिकारी है, जिसकी स्वतंत्र रूप में कोई शक्ति नहीं है। वास्तविक शक्ति तो राष्ट्रीय जनवादी कांग्रेस की 'स्थायी समिति' में निहित है। इस तरह से राष्ट्रपति तो वैधानिक रूप से नाममात्र का अधिकारी है, जो स्वतंत्र रूप में कुछ नहीं कर सकता। लेकिन व्यवहारतः राष्ट्रपति पर पर साम्यवादी दल के शीर्षस्थ नेता प्रतिष्ठित होते रहे हैं। अतः राष्ट्रपति की राज्य के नीति-निर्माण में अहम भूमिका रहती है। निष्कर्षतः सैधान्तिक रूप में वह केवल 'नाममात्र का शासक' है, परन्तु इस पद की शक्ति व्यवहारतः उस व्यक्ति के व्यक्तित्व पर निर्भर करती है तो इस पद को धारण करता है।

4.7 सूचक शब्द (Key Words)

संविधानिक –संविधान या किसी संस्था के नियमों से संबंध रखने वाला।

तुलनात्मक –जिसमें दो या अधिक चीजों की समानता और असमानता दिखाई गई हो।

निर्वाचक –अनेक वस्तुओं में से कुछ वस्तुओं का प्रतिनिधि के रूप में चयन करना।



कूटनीति—लोगों को ठेस पहुँचाए या नाराज किए बिना अपने व्यवहार के कौशल से अपने हितों की रक्षा की नीतिय व्यवहार कुशलता ।

4.8 स्वयं मूल्यांकन हेतु प्रश्न (Self- Assessment Questions)

1. कार्यपालिका का अर्थ और परिभाषा का वर्णन करें।
2. संघीय परिषद् के अधिकार एवं कृत्य का वर्णन करें।
3. चीनी गणराज्य के राष्ट्रपति के कार्यों व शक्तियों का वर्णन करें।
4. अमेरिकन राष्ट्रपति की शक्तियां, कार्य व भूमिका की व्याख्या करें।

4.9 अपनी प्रगति की जांच करने के लिए उत्तर (Answers to check your progress)

1.कार्यपालिका 2.कार्यपालिका 3.एकलकार्यपालिका 4 राजकुटु, लार्ड सभा, कॉमन्स सभा, 5.बर्लिन सन्धि 6. अध्यक्षात्मक शासन 7.सर्वोच्च प्रशासनिक

4.10 सन्दर्भ ग्रन्थ/निर्देशित पुस्तकें (References / Suggested Readings)

1. तुलनात्मक राजनीति की रूपरेखा— ओम प्रकाश गाबा ,मयूर पेपर बैक्स , नोएडा ।
2. तुलनात्मक शासन एवं राजनीति — डॉ. बीरकेश्वर प्रसाद सिंह, ज्ञानदा प्रकाशन (पी.एण्ड डी.) 24, दरियागंज, अंसारी रोड, दिल्ली ।
3. तुलनात्मक राजनीति एवं राजनीतिक संस्थाएँ — सी.बी. गेना, विकास पब्लिशिंग हाउस प्रा.लि. अंसारी रोड, दिल्ली ।
4. तुलनात्मक राजनीति — जे.सी . जौहरी , स्टर्लिंग पब्लिशर्ज प्रा.लि. , दिल्ली ।



Subject : Political Science (Comparative Constitutions of UK & USA (Optional-I))	
Course Code : POLS-303	Autor : Dr. Parveen Sharma
Lesson No. 5	
संवैधानिक संरचना— न्यायपालिका Constitutional Structure - Judiciary	

अध्ययन की संरचना

5.1 अधिगम (Learning Objectives)

5.2 प्रस्तावना (Introduction)

5.3 अध्ययन के मुख्य बिन्दु (Main Points of Text)

5.3.1 न्यायपालिका का अर्थ व परिभाषा (Meaning and definition of Judiciary)

5.3.3 न्यायपालिका के कार्य (Functions of judiciary)

5.3.4 न्यायपालिका की स्वतन्त्रता (Independence of judiciary)

5.3.5 विधायिका, कार्यपालिका तथा न्यायपालिका में अन्तर्सम्बन्ध

5.4 पाठ के आगे का मुख्य भाग (Further main body of the text)

5.4.1 ब्रिटिश न्याय व्यवस्था (The British Judicial System)

5.4.2 ब्रिटिश न्याय व्यवस्था का संगठन (Organisation of the British Judicial System)

5.4.3 ब्रिटिश न्याय व्यवस्था की विशेषताएं (Features of British Judicial System)

5.4.4 ब्रिटिश न्याय-व्यवस्था का मूल्यांकन (Evaluation of the British Judicial System)

5.4.5 कानून का शासन (Rule of Law)

- कानून के शासन का अर्थ (Meaning of Rule of Law)
- कानून के शासन की उत्पत्ति और विकास (Origin and Development of Rule of Law)
- कानून के शासन की विशेषताएं (Features of Rule of Law)



- कानून के शासन पर डॉयसी के विचार (Dicey's Views on Rule of Law)
- कानून के शासन की सीमाएं (Limitations of Rule of Law)

5.4.6 संयुक्त राज्य अमेरिका की न्याय-व्यवस्था (Judicial System of U.S.A.)

- सर्वोच्च न्यायालय : रचना, क्षेत्राधिकार व कार्य (Supreme Court : Composition, Jurisdiction and Functions)
- अमेरिका में न्यायिक पुनरावलोकन (Judicial Review in America)

5.4.7 स्विस् न्यायपालिका (Swiss Judiciary):-

- स्विस् न्यायपालिका का संगठन (Organisation of the Swiss Judiciary)
- संघीय न्यायालय की स्थिति (Position of the Federal Court)

5.4.8 चीन में न्यायपालिका (Judiciary in China)

- चीन में न्यायपालिका का संगठन (Organisation of the Judiciary in China)
- चीनी न्यायपालिकों के कार्य (Functions of the Chinese Judiciary)
- चीनी न्याय – व्यवस्था का मूल्यांकन (Evaluation of Chinese Judicial System)

5.5 अपनी प्रगति जांचें (Check your progress)

5.6 सारांश (Summary)

5.7 सूचक शब्द (Key Words)

5.8 स्वयं मूल्यांकन हेतु प्रश्न (Self- Assessment Questions)

5.9 अपनी प्रगति की जांच करने के लिए उत्तर (Answers to check your progress)

5.10 सन्दर्भ ग्रन्थ/निर्देशित पुस्तकें (References / Suggested Readings)

5.1 अधिगम उद्देश्य (Learning Objectives)

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् विद्यार्थी योग्य होंगे—

- अमरीकी सर्वोच्च न्यायालय ,ब्रिटेन और चीन की न्यायिक व्यवस्था के विवेचन करने में।



- स्विट्जरलैण्ड की संघीय न्यायिक व्यवस्था की व्याख्या करने में।
- न्यायिक पुनर्विलोकन की व्याख्या करने में।

5.2 प्रस्तावना (Introduction)

राजनीतिक शक्ति की स्वेच्छाचारिता से नागरिक स्वतन्त्रताओं व अधिकारों की रक्षा के लिए सभी लोकतन्त्रीय देशों में स्वतन्त्र व निष्पक्ष न्यायपालिका की व्यवस्था की गई है। यह सरकार का ऐसा अंग है जो विधायिका और कार्यपालिका को अपने अधिकार क्षेत्र का अतिक्रमण करने से रोकता है। न्यायपालिका किसी भी सभ्य समाज का आधार है। सभ्य समाज में प्रत्येक नागरिक और समाज यह आशा करता है कि उसके साथ कोई अन्याय न हो और उसका जीवन सुचारु ढंग से चलता रहे। इसके लिए वह स्वतन्त्र व निष्पक्ष न्यायपालिका की कामना रखता है। यह निष्पक्ष न्यायपालिका ही कानून का शासन स्थापित करके नागरिक स्वतन्त्रताओं व अधिकारों की रक्षा करती है और सम्पूर्ण सामाजिक व राजनीतिक जीवन को नियन्त्रित भी रखती है। यह सरकार का तीसरा अंग होने के नाते शासन की कार्यकुशलता में वृद्धि करने का साधन भी है।

5.3 अध्ययन के मुख्य बिन्दु (Main Points of Text)

5.3.1 न्यायपालिका का अर्थ व परिभाषा (Meaning and definition of Judiciary)

साधारण अर्थ में न्यायपालिका सरकार का वह अंग है जिसका प्रमुख कार्य संविधान की व्याख्या करना तथा कानूनों को भंग करने वालों को दण्ड देना है। इस तरह कानूनों की व्याख्या करने व उनका उल्लंघन करने वाले व्यक्तियों को दण्डित करने की संस्थागत व्यवस्था को न्यायपालिका कहा जाता है। यह उन व्यक्तियों का समूह है जिन्हें न्याय करने का अधिकार प्राप्त है। यह राजनीतिक प्रक्रिया का एक ऐसा अंग भी है जो सरकार के हाथों में राजनीतिक शक्ति के अत्यधिक केन्द्रीकरण की रोकथाम और लोकतन्त्र की धांधलियों या बहुमत के निरंकुश शासन से नागरिकों की स्वतन्त्रता व अधिकारों की सुरक्षा करती है। ब्राईस ने इसे राज्य के लिए एक आवश्यकता ही नहीं, बल्कि उसकी क्षमता से अधिक सरकार की उत्तमता की कसौटी माना है। कुछ विद्वानों ने न्यायपालिका को निम्न रूप में परिभाषित भी किया है:—

1. वाल्टन एच० हेमिल्टन के अनुसार— “न्यायिक प्रक्रिया न्यायधीशों के द्वारा मुकद्दमों का निर्णय करने की मानसिक प्रविधि है।”

2. लास्की के अनुसार— “न्यायपालिका अधिकारियों का ऐसा समूह है, जिसका कार्य, राज्य के किसी कानून विशेष के उल्लंघन की शिकायत, जो विभिन्न नागरिकों व राज्य के बीच एक दूसरे के खिलाफ होती है, का समाधान व फैसला करना है।”



3.रॉले के अनुसार—“न्यायपालिका सरकार का वह अंग है जिसका कार्य अधिकारों का निश्चय और उन पर निर्णय देना, अपराधियों को दण्ड देना तथा निर्बलों की अत्याचार से रक्षा करना है।”

4.ब्राइस के अनुसार—“न्यायपालिका किसी सरकार की उत्तमता को जांचने की कसौटी है।”

इस प्रकार कहा जा सकता है कि न्यायपालिका सरकार का ऐसा अंग है जो सरकार की निरंकुशता से नागरिकों को बचाता है, कानून की व्याख्या करता है और गलत कार्य करने वालों को दण्ड देता है। गार्नर ने इसे सभ्य समाज का मेरुदण्ड कहा है।

5.3.3 न्यायपालिका के कार्य (Functions of judiciary)

न्यायपालिका किसी भी सरकार का प्रकाश स्तम्भ है। राजनीतिक व्यवस्था की प्रकृति ही इसके कार्यों की नियामक होती है। संघात्मक शासन-प्रणालियों में तो यह संतुलक का काम करती है। कानून व संविधान की व्याख्याकार होने के नाते यह नागरिक स्वतन्त्रता व अधिकारों का सुरक्षा कवच मानी जाती है। लार्ड ब्राइस ने इसे अच्छे शासन की कसौटी कहा है। गार्नर ने भी कहा है कि यदि न्याय विभाग न हो तो सभ्य समाज का निर्माण नहीं हो सकता। न्यायपालिका आधुनिक सभ्य समाज का आधार स्तम्भ है। न्यायपालिका ही हमें सरकार की निरंकुशता से बचाती है। किसी भी देश में न्यायपालिका के कार्य हो सकते हैं :-

- (i) **न्याय करना** :- न्यायपालिका का प्रमुख कार्य न्याय करना है। जो व्यक्ति कानूनों का उल्लंघन करता है, उसे कार्यपालिका द्वारा पकड़कर न्यायालयों के सामने पेश किया जाता है। न्यायपालिका फौजदारी और दीवानी दोनों प्रकार के मुकद्दमों में न्याय करती है। दीवानी झगड़े प्रायः नागरिकों के बीच में होते हैं, जबकि फौजदारी मुकद्दमों में एक तरफ सरकार तथा दूसरी तरफ नागरिक होते हैं। गवाही के आधार पर न्यायपालिका सभी झगड़ों में कानून के अनुसार अपराधी को उचित दण्ड देती है और प्रभावित व्यक्ति के साथ न्याय करती है।
- (ii) **कानून की व्याख्या करना**:- न्यायपालिका कार्यपालिका तथा विधायिका द्वारा बनाए गए कानूनों की व्याख्या करती है। कई बार कानून अस्पष्ट व संविधान के विरुद्ध होते हैं। उनकी व्याख्या किए बिना उनको लागू करने का अर्थ होगा दृ मानव अधिकार व स्वतन्त्रताओं पर कुठाराघात। न्यायपालिका ही सर्वोच्च शक्ति की स्वामी होने के नाते ऐसे कानूनों की अन्तिम व्याख्याकार होती है। भारत तथा अमेरिका में न्यायपालिका को यह अधिकार प्राप्त है कि यदि कोई कानून स्पष्ट न हो तो न्यायधीश अपनी बुद्धि, विवेक और नैतिकता के आधार पर निर्णय दे। न्यायालयों द्वारा कानूनों के स्पष्टीकरण के लिए दी गई व्याख्याएं सामान्य कानूनों की तरह ही महत्वपूर्ण होती हैं। निर्णयमूलक कानून के रूप में ये कानून भी संविधान का अंग बन जाते हैं।



- (iii) **संविधान की रक्षा करना:**— संविधान की प्रमुख संरक्षक भी न्यायपालिका ही होती है। संविधान की मर्यादा और पवित्रता को बचाए रखने के लिए वह विधायिका तथा कार्यपालिका द्वारा निर्मित कानूनों को संविधान के विरुद्ध होने पर असंवैधानिक घोषित कर सकती है। भारत तथा अमेरिका में न्यायपालिका को न्यायिक पुनरावलोकन का अधिकार प्राप्त है। इसके तहत वह संविधान की निष्पक्षता व प्रभावशीलता को बनाए रखने के लिए असंवैधानिक निणयों को पलट देती है। अतः न्यायपालिका संविधान की रक्षक भी है।
- नागरिक अधिकारों व स्वतन्त्रताओं की रक्षा:**— प्रत्येक देश में न्यायपालिका ही नागरिक स्वतन्त्रता व अधिकारों की रक्षक मानी जाती है। न्यायपालिका इनकी रक्षा के लिए सरकार को निरंकुशता को रोकती है और किसी भी नागरिक या संस्था द्वारा मौलिक अधिकारों को हानि पहुंचाने के प्रयास में दण्डित करती है। इनकी सुरक्षा के लिए वह न्यायादेश भी जारी कर सकती है। यदि किसी व्यक्ति के अधिकारों व स्वतन्त्रता को कोई हानि पहुंचती है तो वह न्यायपालिका की शरण ले सकता है। मौलिक अधिकारों की स्वतन्त्रता की रक्षा के लिए न्यायपालिका कार्यपालिका तथा विधायिका द्वारा निर्मित कानूनों को भी अवैध घोषित करने का अधिकार रखती है। अतः न्यायपालिका नागरिक स्वतन्त्रता व अधिकारों का सुरक्षा कवच है।
- (iv) **संघ की संरक्षक:**— संघात्मक शासन प्रणाली वाले देशों में केन्द्र व राज्यों में शक्तियों का विभाजन होने के कारण उनके शक्तियों के प्रयोग तथा व्याख्या को लेकर आपसी झगड़े होने की संभावना अधिक होती है। इन झगड़ों का निपटारा न्यायपालिका ही करती है। शक्ति विभाजन की उचित व्याख्या संविधान के अन्तर्गत न्यायपालिका ही करती है और राज्य व केन्द्र को अपने अधिकार क्षेत्र का अतिक्रमण करने से रोकती है। इस तरीके वह संघ की संरक्षक भी मानी जाती है। संघात्मक शासन प्रणाली वाले देशों में जो न्यायपालिका की केन्द्र व राज्यों के विवादों को सुलझाने में महत्वपूर्ण भूमिका है।
- (v) **सलाहकारी कार्य:**— कई देशों में न्यायपालिका सरकार को परामर्श भी देती है। लेकिन न्यायपालिका की सलाह मानना या न मानना सरकार की इच्छा पर निर्भर करता है। इसके लिए न्यायपालिका सरकार को बाध्य नहीं कर सकती। इंग्लैण्ड में सलाहकारी भूमिका ने न्यायपालिका का अधिक सम्मान बढ़ाया है। भारत में भी राष्ट्रपति ने कई मामलों में सर्वोच्च न्यायालय की सलाह ली है। रामजन्म भूमि-बाबरी मस्जिद विवाद पर केन्द्र सरकार ने कई बार सर्वोच्च न्यायालय की ही सलाह ली है। कनाडा, आस्ट्रेलिया, स्वीडन, पनामा आदि में भी न्यायपालिका की सलाह ली जाती है।
- (vi) **राजनीतिक व्यवस्था को स्थायित्व व शांति कायम रखना:**— राजनीतिक व्यवस्था में विघटनकारी ताकतों के विरुद्ध न्यायपालिका ही कड़ा रुख अपनाती है। जो व्यक्ति या संस्था राजनीतिक व्यवस्था के स्थायित्व से छेड़छाड़ करता है, वह देशद्रोह का अपराधी माना जाता है। सरकार का तीसरा अंग होने



के नाते राजनीतिक स्थायित्व को कायम रखने का प्रमुख उत्तरदायित्व न्यायपालिका का ही बनता है। न्यायपालिका ही सरकार के कार्यों को औचित्यता प्रदान करके सरकार के प्रति जनता का विश्वास कायम रखती है। इसके लिए न्यायपालिका विधायिका व कार्यपालिका के कानूनों की जांच-परख करती रहती है। न्यायिक सक्रियतावाद के माध्यम से आज न्यायपालिका जनहित के कार्य भी करने लगी है। इससे राजनीतिक स्थायित्व में वृद्धि होना स्वाभाविक ही है। राजनीतिक स्थायित्व के लिए देश में शांति कायम रखने में न्यायपालिका ही महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। इसके लिए वह पुलिस व सेना तक की मदद लेती है। कानून का शासन लागू रखने के लिए न्यायपालिका अपराधी को उसके अपराध के अनुसार ही दण्ड देती है। अतः राजनीतिक व्यवस्था में स्थायित्व तथा समाज में शान्ति कायम रखने में भी न्यायपालिका महत्वपूर्ण भूमिका अदा करती है।

(vii) **प्रशासनिक कार्य** :- न्यायपालिका को अपना प्रशासन चलाने के लिए अधीनस्थ कर्मचारी वर्ग को भी आवश्यकता पड़ती है। इसके लिए वह स्थानीय पदाधिकारियों और अधीनस्थ कर्मचारियों की नियुक्ति करती है जो प्रशासन में न्यायपालिका का सहयोग करते हैं और सभी आवश्यक कागजात व अभिलेख सुरक्षित रखते हैं ताकि आवश्यकता पड़ने पर उन्हें न्यायपालिका को उपलब्ध कराया जा सके।

(viii) **अन्य कार्य** :- उपरोक्त कार्यों के अतिरिक्त भी न्यायपालिका अनेक दूसरे महत्वपूर्ण कार्य भी करती है। सार्वजनिक सम्पत्ति के प्रत्यासियों यज्जनेजममेद्ध को नियुक्त करना, अल्पव्यस्कों के संरक्षकों को नियुक्त करना, वसीयतनामे तैयार करना, मृतक व्यक्तियों की सम्पत्ति का प्रबन्ध करना, नागरिक विवाह की अनुमतिदेना, विवाह विच्छेद की अनुमति देना, शस्त्र लाईसेंस जारी करना, निर्वाचन सम्बन्धी अपीलें सुनना, उच्च अधिकारियों को शपथ दिलवाना आदि कार्य भी न्यायपालिका द्वारा ही सम्पन्न किए जाते हैं। उपरोक्त विवेचन के बाद कहा जा सकता है कि न्यायपालिका नागरिक अधिकारों व स्वतन्त्रता का रक्षक है। संविधान की व्याख्याकार होने के नाते वह सरकार के अन्य दो अंगों पर नियन्त्रण रखने का प्रभावी साधन भी है। न्यायिक पुनरावलोकन द्वारा न्यायपालिका ने जो शक्ति अर्जित की है, उससे उसका जनहितकारी स्वरूप उभरा है। आज न्यायिक सक्रियतावाद के द्वारा न्यायपालिका करोड़ों व्यक्तियों के दिल की धड़कन बन गई है। भारत में न्यायपालिका राजनीतिक शक्ति से त्रस्त लोगों के लिए प्रकाश पुंज का कार्य करती है। अनेक राष्ट्रीय स्तर की समस्याओं पर सरकारें न्यायपालिका से ही सलाह करती हैं ताकि संविधान व कानून की मर्यादा का उल्लंघन न हो और देश में शांति कायम रहे। ब्राइस का यह कथन सर्वथा सही है कि न्यायपालिका ही शासन की उत्तमता जांचने की कसौटी है। आज न्यायपालिका को समाज में जो स्थान प्राप्त है, वह कार्यपालिका या विधायिका को नहीं। आज केवलमात्र जनता के लिए दुःख की घड़ी में न्याय प्राप्त करने के लिए न्यायपालिका ही एकमात्र आशा की किरण है।



5.3.4 न्यायपालिका की स्वतन्त्रता

न्यायपालिका राजनीतिक प्रक्रिया का एक ऐसा अंग है जो सरकार या राजनीतिक शक्ति का दुरुपयोग से नागरिक स्वतन्त्रता व अक्ताकारों को बचाता है। इसी कारण स्वयं न्यायपालिका का भी निष्पक्ष व स्वतन्त्र रहना आवश्यक है ताकि उसके कारण जनता को कोई कष्ट न हो और नागरिक स्वतन्त्रता व अधिकारों की रक्षा के काम में उसे कोई बाधा न आए। न्यायपालिका की स्वतन्त्रता लोकतन्त्र की सफलता का मूलाधार है। संघात्मक तथा अध्यक्षात्मक शासन प्रणाली वाले देशों के साथ-साथ एकात्मक सरकारों या तानाशाही शासन व्यवस्था वाले राज्यों में भी न्यायपालिका की स्वतन्त्रता बहुत आवश्यक है। हैमिल्टन ने लिखा है— “किसी भी देश का कानून कितना ही अच्छा क्यों न हो, एक स्वतन्त्र और निष्पक्ष न्याय विभाग के बिना प्राणहीन है।” संघीय शासन प्रणालियों में तो न्यायपालिका की स्वतन्त्रता का महत्व और भी अधिक होता है। केन्द्र व राज्यों के झगड़े निष्पक्ष व स्वतन्त्र न्यायपालिका ही सही ढंग से सुलझा सकती है। गार्नर ने न्यायपालिका की स्वतन्त्रता को आवश्यक बताते हुए लिखा है—“यदि न्यायधीशों में प्रतिभा, सत्यता और निर्णय देने की स्वतन्त्रता न हो तो कार्यपालिका का समस्त ढांचा खोखला प्रतीत होगा और ऊँचे लक्ष्य की सिद्धि नहीं होगी जिसके लिए उसका निर्माण किया गया है।” इसी कारण राजनीतिक व्यवस्था के स्थायित्व और देश में शांति कायम रखने के लिए न्यायपालिका का स्वतन्त्र व निष्पक्ष होना जरूरी है।

(i) न्यायपालिका की स्वतन्त्रता का अर्थ न्यायपालिका की स्वतन्त्रता से हमारा तात्पर्य है कि न्यायधीश अपना निर्णय देते समय अपने विवेक से काम लें और बाहरी दबावों से मुक्त रहें, अर्थात् कार्यपालिका तथा विधायिका के हस्तक्षेप से मुक्त रहें। सी0एफ0 स्ट्रांग ने न्यायपालिका की स्वतन्त्रता को परिभाषित करते हुए लिखा है—“न्यायपालिका की स्वतन्त्रता का अर्थ है कि न्यायधीशों में भ्रष्टाचार नहीं होना चाहिए और उन पर विधानमण्डल तथा कार्यकारिणी का नियन्त्रण नहीं होना चाहिए।” न्यायपालिका की स्वतन्त्रता ही न्यायिक निष्पक्षता का आधार है। इस प्रकार न्यायपालिका की स्वतन्त्रता का अर्थ दृ न्यायधीशों को कानूनों की व्याख्या करने में और न्याय प्रदान करने में अपने विवेक का निर्बाध प्रयोग करने, व्यवस्थापिका और कार्यपालिका के प्रभावों व शक्तियों से, राजनीतिक दलों व अन्य किसी प्रकार के राजनीतिक या गैर-राजनीतिक संगठन तथा समूह या व्यक्ति विशेष के प्रभाव से बचाना है

5.3.5 विधायिका, कार्यपालिका तथा न्यायपालिका में अन्तर्सम्बन्ध

आज का युग कल्याणकारी सरकारों का युग है। आज आर्थिक विकास व राजनीतिक स्थायित्व का प्रश्न विकासशील देशों को कचोट रहा है। ऐसी अवस्था में शक्ति पृथक्करण का सिद्धान्त लागू करके सरकार के तीनों अंगों को एक दूसरे का विरोधी बनाना प्रासंगिक नहीं है। व्यवहार में कार्यपालिका और विधायिका की पारस्परिक निर्भरता को नजरअन्दाज नहीं किया जा सकता। आज यह कहना बिल्कुल गलत है कि सरकार का कौन सा अंग



अधिक महत्वपूर्ण है ? इसी कारण राबर्ट सी०. बोन ने संसदीय तथा अध्यक्षात्मक शासन व्यवस्थाओं में कार्यपालिका तथा विधायिका के सहमिलन की बात पर जोर दिया है। लेकिन अनेक विद्वान इस बात पर भी जोर देने लगे हैं कि व्यवस्थापिका के कार्यों का हास हुआ है और कार्यपालिका की शक्तियां बढ़ी हैं। यदि कार्यपालिका तथा विधायिका की शक्तियों का तुलनात्मक अध्ययन किया जाए तो कार्यपालिका को अधिक शक्तिशाली बना दिया है। लेकिन हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि व्यवस्थापिकाएं भी आज नई नई भूमिकाएं अदा कर रही हैं। आज कार्यपालिका, विधायिका तथा न्यायपालिकाएं कार्य करने लगी हैं जो पहले उनके द्वारा नहीं किए जाते थे। उनके शक्ति संतुलन की बात करने की बजाय उनके द्वारा राजनीतिक व्यवस्था को गतिशील बनाए रखने के लिए किए जाने वाले कार्यों पर चर्चा करना अधिक प्रासंगिक होगा। आज मुख्य विवाद कार्यपालिका, विधायिका व न्यायपालिका के बीच न होकर राजनीतिक शक्ति के दुरुपयोग को लेकर है। कार्यपालिका, विधायिका व न्यायपालिका राजनीतिक शक्ति के रूप में जन इच्छा को अमली जामा पहनाने वाली संस्थाएं हैं। कार्यपालिका तो विधायिका की इच्छा का संचालन करती है और विधायिका, कार्यपालिका को अपनी इच्छा बताती है। संसदीय शासन प्रणाली वाले देशों में तो इन दोनों में पारस्परिक निर्भरता बहुत अधिक होती है। इसमें कार्यपालिका विधानमण्डल की कृपा पर ही कार्य करती है। यदि उसके खिलाफ संसद में अविश्वास का मत प्राप्त हो जाए तो उसे त्यागपत्र देना पड़ सकता है। लेकिन यदि संसदीय सरकार में प्रधानमंत्री वास्तविक कार्यपालक के रूप में सरकार को विचार करने के लिए नाममात्र के कार्यपालक राष्ट्रपति को प्रार्थना करे तो कार्यपालिका के साथ-साथ विधायिका भी भंग हो जाती है। इसलिए संसदीय देशों में कार्यपालिका तथा विधायिका में आपस में गहरा सम्बन्ध होता है। यहां पर नाममात्र व वास्तविक कार्यपालिका में भेद होने के कारण कार्यपालिका तथा विधायिका का आपस में पड़ने वाले प्रभाव का पता लगाना कठिन होता है। अध्यक्षात्मक देशों में शक्तियों के पृथक्करण के कारण कार्यपालिका, विधायिका तथा न्यायपालिका की स्वतन्त्र भूमिकाओं का पता लगाना आसान होता है। सर्वसत्ताधिकारवादी देशों में तो ये तीनों अंग आपस में इस तरह गुंथे होते हैं कि उनको अलग-अलग पहचानना कठिन होता है। उनमें शक्तियों का केन्द्रीयकरण ही सरकार के तीनों अंगों के सम्बन्धों का निर्धारक होता है। संसदीय तथा अध्यक्षात्मक शासन प्रणालियों में न्यायपालिका को शेष दोनों अंगों से कुछ पृथक् सा अस्तित्व प्रदान किया जाता है ताकि विधायिका और कार्यपालिका में शक्ति के प्रयोग को लेकर होने वाले टकराव को रोका जा सके। वास्तव में कार्यपालिका और विधायिका तो जन इच्छा को अमली रूप देती है और न्यायपालिका इस कार्य में उनकी मदद करती है। आज प्रदत्त व्यवस्थापन की व्यवस्था न तो कार्यपालिका तथा विधायिका को काफी निकट ला दिया है और न्यायिक शक्ति ने उनके कार्यों को औचित्यपूर्ण बनाने में सहयोग दिया है। आज समस्या विधायिका और कार्यपालिका के बीच टकराव की न होकर नौकरशाही के बढ़ते प्रभाव की है, जिससे कार्यपालिका व विधायिका दोनों चिन्तित हैं। यदि ध्यानपूर्वक देखा जाए तो प्रजातन्त्र में सर्वोच्च शक्ति व्यवस्थापिका में ही निहित रहती है। विधि-निर्माण के साथ-साथ विधानपालिका, कार्यपालिका पर नियन्त्रण भी रखती है। वह प्रश्नों, वाद-विवाद, मन्त्रिमण्डलीय नीति की आलोचना, नीति को अस्वीकृत करने,



कटौती प्रस्ताव, स्थगन प्रस्ताव, निन्दा प्रस्ताव, अविश्वास प्रस्ताव आदि विधियों से कार्यपालिका पर अपना दबाव बनाने का प्रयास करती रहती है। अध्यक्षतात्मक शासन प्रणालियों में भी व्यवस्थापिका शक्ति पृथक्करण के बावजूद भी कार्यपालिका पर नियन्त्रण स्थापित करने का प्रयास करती है। इनके लिए वह अनुमानित बजट को स्वीकृति देती हैय नीति पर भी व्यापक वाद-विवाद के बार स्वीकृति देती हैय राष्ट्रपति द्वारा की गई नियुक्तियों पर जांच आयोग नियुक्त कर सकती है विभागीय कार्यों सम्बन्धी मांगों पर विस्तृत स्वीकृति देती है। लेकिन इसका अर्थ यह नहीं है कि कार्यपालिका, विधायिका के हाथ की कठपुतली है। आज दलीय व्यवस्था के कारण स्थिति काफी पलट गई है। जब तक मन्त्रिमण्डल का संसद में बहुमत है तब तक संसद मन्त्रिमण्डल पर नियन्त्रण करने की नहीं सोच सकती। दलीय बहुमत कार्यपालिका को स्वामी बना देता है। वह अपने दलीय बहुमत के कारण ही अपनी नीति और कार्यों पर संसदीय स्वीकृति प्राप्त करने में सफल रहती है। सरकार का दलीय बहुमत विरोधी दल की इच्छा को भी धूल में मिला देता है। संसदीय व्यवस्था में संसद के अधिवेशनों के समय, उसमें किए जाने वाले कार्यों, उसका अवसान व विघटन सभी कार्य मन्त्रिमण्डल (कार्यपालिका) ही निश्चित करता है। इस प्रणाली में यदि संसद को अविश्वास प्रस्ताव द्वारा मन्त्रिमण्डल का अस्तित्व नष्ट करने की छूट है तो मन्त्रिमण्डल को भी वह अधिकार है कि वह निम्न सदन को भंग कराकर नए चुनाव करा सकता है। इसलिए विधायिका और कार्यपालिका पारस्परिक सामंजस्य बनाए रखने का ही प्रयास करते हैं। इसी तरह वित्तीय क्षेत्र में भी वास्तविक शक्ति कार्यपालिका के पास ही है। मन्त्रिमण्डल ही बजट तैयार करवाता है, उसे पारित करवाता है और लागू करता है तथा समस्त आर्थिक नियोजन पर अपना नियन्त्रण रखता है। वित्त पर संसदीय नियंत्रण तो नाममात्र का है। संसद तो केवल वित्त विधेयक की आलोचना ही कर सकती है, न कोई नया कर लगा सकती है और न ही खर्च की सीमा में वृद्धि कर सकती है। इस प्रकार कार्यपालिका विधायिका से भारी पड़ती है। अध्यक्षतात्मक देशों में कार्यपालिका और विधायिका की पृथक् शक्तियां होने के बावजूद भी दोनों का आपस में सम्बन्ध बना रहता है। विधायिका और कार्यपालिका के बाद न्यायपालिका की बारी आती है। न्यायपालिका इन दोनों से सर्वोच्च व स्वतन्त्र मानी जाती है। न्यायपालिका को भारत तथा अमेरिका की शासन प्रणालियों में यह अधिकार है कि वह कार्यपालिका तथा विधायिका के असंवैधानिक निर्णयों व कानूनों को अवैध घोषित कर दे। इस न्यायिक पुनरावलोकन की शक्ति द्वारा न्यायपालिका, कार्यपालिका तथा विधायिका पर अपना नियन्त्रण कायम रखने में सफल रहती है। न्यायपालिका मौलिक अधिकारों तथा नागरिक स्वतन्त्रताओं की रक्षा करके, अपराधिक तत्वों पर रोक लगाकर, कानूनों की व्याख्या करके कार्यपालिका तथा विधायिका दोनों के काम को आसान बना देती है। कई बार महत्वपूर्ण प्रश्नों पर सरकार न्यायपालिका से परामर्श भी लेती है। इसी तरह न्यायपालिका कार्यपालिका तथा विधायिका के अतिक्रमण से नागरिकों की रक्षा भी करती है। लेकिन कई बार संसदीय शासन प्रणाली में संसद की सर्वोच्चता के कारण विधायिकाएं तथा कार्यपालिकाएं न्यायिक निर्णयों को पलट देती हैं और संविधान में संशोधन का नया अध्याय जोड़ देती है। इससे न्यायिक सर्वोच्चता व स्वतन्त्रता में कमी आती है। लेकिन ऐसा सदा नहीं होता। संसद न्यायधीशों के वेतन व भत्ते भी निर्धारित करती है।



आवश्यकता पड़ने पर उन सुविधाओं में कटौती भी कर सकती है। इस तरह न्यायपालिका और अन्य दोनों अंगों में घनिष्ठ सम्बन्ध है। उपरोक्त विवेचन के बाद कहा जा सकता है कि विधायिका, कार्यपालिका तथा न्यायपालिका सरकार के प्रमुख अंग हैं। इनके आपसी सहयोग के बिना कोई भी सरकार अपने उद्देश्यों में कामयाब नहीं हो सकती। इन अंगों के पारस्परिक सामंजस्यपूर्ण सम्बन्ध ही सरकार को सफलता दिला सकते हैं। इसी आवश्यकता को महसूस करते हुए आज कार्यपालिका तथा विधायिका में सामंजस्यपूर्ण ढंग से कार्य करने के तरीकों पर विचार किया जाने लगा है। संसदीय सरकारों की सफलता के लिए यह आवश्यक है कि वह लोकतन्त्र के समानता व सहयोग के आदर्श पर चले और न्यायपालिका के आदेशों व निर्णयों का सम्मान करे।

विभिन्न देशों में न्यायपालिका की संरचना व कार्य आदि में अंतर मिलता है। इस अध्याय में ब्रिटेन, चीन, अमेरिका, सर्विर्जलैंड की न्यायपालिका की व्यवस्था का अध्ययन किया गया।

5.4 पाठ के आगे का मुख्य भाग (Further main body of the text)

5.4.1 ब्रिटिश न्याय व्यवस्था (The British Judicial System)

ब्रिटिश न्याय व्यवस्था का विकास भी राजतन्त्र तथा जनवादी राजतन्त्र के विकास के साथ ही हुआ है। ब्रिटिश न्याय प्रणाली में सामान्य कानून में कोई अन्तर नहीं है। इसका प्रमुख कारण यह है कि वहां कानून विकसित कानून के रूप में है जो परम्पराओं पर आधारित होने के साथ-साथ ब्रिटिश लोक जीवन से भी बंधा हुआ है। इसी कारण ब्रिटेन में सरकार का शासन न होकर कानून का शासन है जो समस्त राजनीतिक समाज को क्रियाशीलता प्रदान करता है। ब्रिटेन के लोगों के लिए कानून ही संविधान है और यही सरकार व शासन है।

5.4.2 ब्रिटिश न्याय व्यवस्था का संगठन (Organisation of the British Judicial System)

ब्रिटिश संसद ने न्यायपालिका के कार्य क्षेत्र को स्पष्ट करने के लिए तथा देश की समस्त न्याय-व्यवस्था को एक सूत्र में बांधने के लिए 'जुडिकेचर अधिनियम' पास किए। आज ब्रिटेन में दो तरह के न्यायालय हैं:-

(I) फौजदारी न्यायालय (Criminal Courts)

(II) दीवानी न्यायालय (Civil Courts)

यह अपराधी की 6 महीने की कैद तथा 100 पाउंड तक जुर्माना अदा करने का आदेश दे सकती है। तीसरे स्थान पर कोर्ट ऑफ क्वार्टर सेशन है। इसमें जस्टिस ऑफ पीस तथा पैटी सेशनल कोर्ट्स के निर्णयों के विरुद्ध अपील की जाती है। इस न्यायालय में मुकद्दमों का निपटारा जूरी व्यवस्था के माध्यम से होता है। इसके बाद कोर्ट ऑफ अपील है जो उच्च न्यायालय का ही एक भाग है। यह न्यायालय गम्भीर मामलों जैसे हत्या, डकैती, भ्रष्टाचार तथा राजद्रोह जैसे मुकद्दमे सुनता है। देशद्रोह के मुकद्दमे भी इसी न्यायालय में आते हैं। इसके बाद पांचवे स्थान पर कोर्ट ऑफ क्रिमिनल अपील है। इसमें कोर्ट ऑफ क्वार्टर सेशन तथा कोर्ट ऑफ अपील के निर्णयों



के विरुद्ध अपील सुनी जाती है। यह न्यायालय कानून का व्याख्याकार होता है और इसका निर्णय अन्तिम होता है। इसके बाद सबसे सर्वोच्च शिखर पर हाऊस है। फौजदारी मुकद्दमों की अन्तिम अपील लार्ड सभा सुनती है जो फौजदारी तथा दीवानी दोनों तरह के मुकद्दमों की सुनवाई कर सकती है।

5.4.3 ब्रिटिश न्याय व्यवस्था की विशेषताएं (Features of British Judicial System)

ब्रिटिश न्याय-व्यवस्था अपनी निष्पक्षता व कार्यकुशलता के लिए विश्व में जानी जाती है। इसी कारण स्वयं ब्रिटिश जनता भी अपनी न्याय-प्रणाली पर गर्व महसूस करती है। इस न्याय-प्रणाली की प्रमुख विशेषताएं निम्नलिखित हैं:—

- (1) **विधि का शासन (Rule of Law) :-** ब्रिटिश न्याय प्रणाली की सबसे महत्वपूर्ण विशेषता कानून का शासन है। ब्रिटेन में कानून ही सर्वोच्च है और जनता व शासक दोनों उसका सम्मान करते हैं। कानून का शासन ही राज्य व नागरिकों के पारस्परिक सम्बन्धों का निर्धारण करता है और शासन व्यवस्था को सुचारु ढंग से चलाता है। ब्रिटेन में कानून के सामने सब समान हैं और किसी को भी उसका अतिक्रमण करने की अनुमति नहीं है।
- (2) **न्यायपालिका की स्वतन्त्रता (Independence of Judiciary) :-** ब्रिटिश न्याय प्रणाली अपनी स्वतन्त्रता व निष्पक्षता के लिए सम्पूर्ण विश्व में प्रसिद्ध है। ब्रिटेन में न्यायधीशों को स्वतन्त्र व निष्पक्ष बनाए रखने के लिए न्यायधीशों की नियुक्ति योग्यता एवं अनुभव के आधार पर लार्ड चान्सलर द्वारा की जाती है। इन न्यायधीशों का कार्यकाल काफी लम्बा है। इन्हें केवल कदाचार का आरोप लगाकर ही हटाया जा सकता है। इन्हें अच्छा वेतन व भत्ते दिये जाते हैं जो संचित निधि पर भारित होते हैं। पद की सुरक्षा के कारण सभी न्यायधीश निष्पक्ष व स्वतन्त्र होकर कार्य करते हैं। इसी कारण न्यायपालिका स्वतन्त्र बनी रहती है।
- (3) **जूरी व्यवस्था (The Jury System) :-** ब्रिटेन में न्यायपालिका का सम्मान बढ़ाने में जूरी प्रथा का महत्वपूर्ण योगदान है। जूरी व्यवस्था के अन्तर्गत जनमत और मानवता का पूरा ध्यान रखा जाता है। जूरी में कम से कम 10 सदस्य होते हैं जो समाज के प्रतिष्ठित व अनुभवी व्यक्ति होते हैं।
- (4) **एकरूपता का अभाव (Lack of Uniformity) :-** ब्रिटेन में न्याय व्यवस्था का ढांचा सभी जगह समान नहीं है। इंग्लैण्ड तथा वेल्स के न्यायालयों का संगठन तो एक समान है, जबकि स्काटलैण्ड तथा उत्तरी आयरलैण्ड में यह ढांचा अलग-अलग तरह का है।
- (5) **प्रशासकीय न्यायालय का अभाव (Lack of Administrative Court) :-** ब्रिटेन में फ्रांस की तरह प्रशासकीय न्यायालय नहीं है। जब राज्य व नागरिकों में कोई विवाद उत्पन्न होता है तो केस साधारण न्यायालय में ही आता है।



- (6) **विकेन्द्रित न्याय व्यवस्था (Decentralized Judicial System) :-** ब्रिटेन में सर्किट न्यायालय हैं जो जगह-जगह जाकर मुकद्दमों की सुनवाई करते हैं। इससे न्याय-व्यवस्था विकेन्द्रित हो गई है और न्याय प्रणाली जन आकांक्षाओं पर खरी उतरती है। चलते-फिरते न्यायालयों ने ब्रिटिश न्यायपालिका को विकेन्द्रित बना दिया है जो भारत की लोक अदालतों के कार्य-व्यवहार से मेल खाती है।
- (7) **न्यायिक पुनरावलोकन का अभाव (Lack of Judicial Review) :-** न्यायिक पुनरावलोकन न्यायपालिका की वह शक्ति है जिसका प्रयोग वह विधायिका तथा कार्यपालिका द्वारा निर्मित कानून की संवैधानिकता जांचती है। ब्रिटेन में न्यायपालिका के पास यह शक्ति नहीं है कि वह किसी संसदीय कानून की वैधानिकता जांच सके। ब्रिटिश न्यायपालिका को किसी भी कानून को अवैध घोषित करने का अधिकार प्राप्त नहीं है चाहे वह कितना भी असंवैधानिक क्यों न हो।
- (8) **दो तरह के वकील (Two Types of Lawyers) :-** ब्रिटेन में दो तरह के वकील हैं। प्रथम श्रेणी उन वकीलों की है जो कानून के बारे में सलाह देते हैं। इन्हें सोलिसिटर (Solicitors) कहा जाता है। ये अपने कार्यालय में ही रहते हैं और केस तैयार करते हैं। केस लड़ने का अधिकार इनके पास नहीं होता। यह कार्य तो दूसरी तरह के वकील करते हैं जिन्हें बैरिस्टर कहा जाता है।
- (9) **ब्रिटिश में साधारण कानून और संवैधानिक कानून में कोई अन्तर नहीं है।**
- (10) **ब्रिटिश न्यायपालिका जनता के अधिकारों व स्वतन्त्रता की रक्षक है। यह कार्य वह कानून के शासन की स्थापना करके करती है।**

(13) मुकद्दमे की सुनवाई सार्वजनिक होती है।

5.4.4 ब्रिटिश न्याय-व्यवस्था का मूल्यांकन (Evaluation of the British Judicial System)

उपरोक्त विवेचन से ऐसा प्रतीत होता है कि ब्रिटिश न्याय-व्यवस्था में कोई दोष नहीं है। आलोचकों का कहना है कि ब्रिटेन में साधारण कानून व संवैधानिक कानून के बीच अन्तर न होने पर न्यायिक कार्यकुशलता पर असर पड़ता है। इसी तरह प्रशासकीय कानून का अभाव भी नौकरशाही को निरंकुश बना सकता है। इसी तरह एकरूपता का दोष तथा जटिल न्यायिक संगठन भी आम व्यक्ति के लिए ब्रिटिश न्याय व्यवस्था का बहुत बड़ा दोष है। सबसे बड़ा दोष न्यायिक पुनरावलोकन की कमी है। इस व्यवस्था के बिना ब्रिटेन में कानून के शासन की बात करना बेईमानी है, क्योंकि न्यायिक पुनरावलोकन की शक्ति या व्यवस्था से सरकार को अपनीभूल सुधारने का अवसर मिलता है और वह व्यवहार में कभी भी निरंकुश नहीं बन सकती। आलोचकों का मानना है कि गरीबों के लिए निःशुल्क न्याय की बात करना एक धोखा है। ब्रिटेन में कानून के शासन की आड़ में कई बार न्यायपालिका ने गलत व्याख्याएं दी हैं। वे कानून की व्याख्या इस प्रकार करते हैं, मानो वे ही कानून के स्वामी हों न कि सम्प्रभु



विधानमण्डल। लेकिन इसका अर्थ यह भी नहीं है कि ब्रिटिश न्याय व्यवस्था अपना आधार खो चुकी है। सत्य तो यह है कि ब्रिटिश न्याय की देन आज भी एक अमर विचार है।

5.4.5 कानून का शासन (Rule of Law)

यह मान्यता राजनीतिक शक्ति को निरंकुश बनाने से रोकती है और समाज में सुव्यवस्था भी बनाए रखने में मदद करती है। यह शासन सरकार की स्वेच्छाचारिता को रोककर जनकल्याण में वृद्धि करता है।

• कानून के शासन का अर्थ (Meaning of Rule of Law)

कानून के शासन का अर्थ है किसी देश में कानून ही सर्वोच्च है और कानून के ऊपर कोई नहीं है। इसका अर्थ यह भी है कि सरकार की समस्त शक्तियां कानून द्वारा सीमित हैं और जनता पर कानून का शासन है न कि किसी स्वेच्छापूर्ण इच्छा का। कानून के शासन के अर्थ को स्पष्ट करने के लिए कुछ विद्वानों ने इसे निम्न प्रकार से परिभाषित किया है :-

(1) वेड और फिलिप्स ने कानून के शासन को परिभाषित करते हुए कहा है – “सरकार की शक्तियों का प्रयोग कानून की मर्यादा के अनुसार होता है, न कि शासन की स्वेच्छाचारी इच्छा के कारण, कानून का शासन कहलाता है।”

(2) लार्ड ह्यूवर्ट ऑफ बरी के अनुसार :- “कानून के शासन का अर्थ है केवल निरंकुशता के स्थान पर कानून की श्रेष्ठता तथा सर्वोच्चता।”

(3) ऑग के अनुसार – “कानून के शासन के अधीन राज्य की तरफ से कानूनी विधि तथा कानूनी शक्ति के अतिरिक्त अन्य किसी तरीके से उत्तरदायित्व सौंपे जाते हैं, न कि सम्पत्ति में हस्तक्षेप किया जाता है और न ही व्यक्तिगत स्वतन्त्रता का हास किया जाता है।”

• कानून के शासन की उत्पत्ति और विकास (Origin and Development of Rule of Law)

लेकिन एक व्यवस्थित विचार के रूप में इस सिद्धान्त का सर्वप्रथम प्रयोग डॉयसी ने ही किया है। डॉयसी इंग्लैण्ड का निवासी था। वही इसका प्रभावित व्याख्याकार है। 1689 में इंग्लैण्ड की संसद ने ‘बिल ऑफ राइट्स’ (Bill of Rights) पास किया। इसके परिणामस्वरूप इंग्लैण्ड में संसदीय सर्वोच्चता तथा कानून के शासन की सर्वोच्चता का जन्म हुआ। धीरे-धीरे वहां पर इस सिद्धान्त को महत्व प्राप्त होने लगा। बिना संविधान के भी इंग्लैण्ड में कानून ही शासन को अन्य देशों की तुलना में आज भी एक महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त है, जिसे ब्रिटिश सरकार की आधारशिला माना जाता है।



• कानून के शासन की विशेषताएं (Features of Rule of Law)

कानून के शासन की प्रमुख विशेषताएं निम्नलिखित हैं :-

1. कानून का शासन कानून की सर्वोच्चता के सिद्धान्त पर आधारित है। इसमें कानून को बहुत अधिक महत्व दिया जाता है, क्योंकि कानून को सर्वोच्चता प्राप्त होती है।
2. कानून का शासन सामाजिक न्याय की स्थापना करता है।
3. कानून का शासन राजनीतिक समानता की स्थापना भी करता है।
4. कानून का शासन नागरिक अधिकारों व स्वतन्त्रताओं की रक्षा करता है।
5. कानून का शासन सरकार की निरंकुशता को रोकता है तथा संविधानिक सरकार की स्थापना करता है।
6. कानून का शासन राजनीतिक व्यवस्था में सुव्यवस्था बनाए रखता है।
7. कानून का शासन प्रशासन में नौकरशाही की स्वेच्छारिता रोकता है।
8. कानून का शासन राजनीतिक विकास का मार्ग प्रशस्त करता है।
9. कानून का शासन संविधानिक आदर्शों व मूल्यों की रक्षा करता है और इनकी प्राप्ति में सरकार की सहायता करता है।
10. कानून का शासन न्याय प्रणाली को चुस्त-दुरुस्त बनाता है व न्यायपालिका की कार्यक्षमता में वृद्धि करता है।

इस प्रकार कहा जा सकता है कि कानून का शासन सरकार की निरंकुशता पर रोक लगाकर नागरिकों के अधिकारों व स्वतन्त्रताओं की रक्षा करता है। कानून के शासन से बढ़कर सामाजिक न्याय की स्थापना का कोई अन्य विकल्प नहीं हो सकता। अतः सरकार को संविधानिक बनाने में कानून का शासन बहुत महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

• कानून के शासन पर डॉयसी के विचार (Dicey's Views on Rule of Law)

(I) कानून ही सर्वोच्च है (Law is Supreme) :- किसी भी व्यक्ति को कानून तोड़ने का ही दण्ड मिलता है और किसी कारण से नहीं। अपराध साबित हुए बिना किसी व्यक्ति को न तो सम्पत्ति से बेदखल किया जा सकता है और न ही उसे दण्ड दिया जा सकता है। मुकद्दमे की कार्यवाही के बाद दोष साबित होने पर सजा से बचने का कोई प्रावधान नहीं है। किसी भी अन्य संस्था को अपराधी की सजा कम करने या माफ करने का अधिकार नहीं है। इस प्रकार इंग्लैण्ड में कानून का शासन सरकार की बजाय कानून की सर्वोच्चता स्थापित करता है ताकि सरकार की परम्परागत स्वविवेकी और तानाशाही शक्तियों का अन्त किया जा सके। अतः कानून के शासन का प्रथम अर्थ है कि कानून ही सर्वोच्च है, उससे ऊपर कोई नहीं हो सकता।



(II) कानून के सामने सब समान हैं (All people are equal before law) :- कानून के शासन का दूसरा अर्थ है— कानून के समक्ष समानता। डॉयसी का कहना है— “कोई भी व्यक्ति कानून से ऊपर नहीं है बल्कि प्रत्येक व्यक्ति यदि उसकी पदवी या स्थिति कितनी भी बड़ी या महान हो इस देश के शासन के सामान्य कानून को मानने के लिए बाध्य है तथा देश के सामान्य न्यायालय के अधिकार क्षेत्र की परिधि में आता है। जो कानून एक के लिए है वह सबके लिए है।” डॉयसी का कहना है कि सरकारी कर्मचारी या अन्य शासकीय अधिकार और स्वयं राजा भी कानून के अधीन है। उस पर आम नागरिकों की तरह मुकद्दमा चलाया जा सकता है। एक प्रभावशाली व्यक्ति को भी समान अपराध के लिए वही सजा मिलती है जो साधारण व्यक्ति को उसी अपराध के लिए मिलती है।

इस प्रकार कहा जा सकता है कि डॉयसी ने कानून के शासन की विस्तार से व्याख्या की है। उसकी दृष्टि में कानून ही सर्वोच्च है। कानून से ऊपर कोई नहीं है। कानून का शासन नागरिक अधिकारों का स्रोत भी है। इंग्लैण्ड में लिखित संविधान का अभाव होने के कारण वहां पर सरकार की शक्तियों को मर्यादित करने और न्यायिक निर्णयों के द्वारा नागरिक स्वतन्त्रताओं को विकसित करने में कानून के शासन का महत्व अधिक हो जाता है।

• कानून के शासन की सीमाएं (Limitations of Rule of Law)

कानून के शासन की सीमाएं (Limitations of Rule of Law) आज बदलते परिवेश व राष्ट्रीय आवश्यकताओं के अनुरूप कानून के शासन का अर्थ भी बदल गया है । आज कानून के शासन को चुनौती देने वाली व्यवस्थाएं जन्म ले चुकी हैं । डॉयसी ने कानून के शासन के सिद्धान्त का प्रतिपादन करते समय इन सीमाओं पर ध्यान ही नहीं दिया था । इसी कारण आज कानून के शासन का डॉयसी द्वारा बताया गया अर्थ कुछ अप्रासांगिक सा होने लगा है । इसके कुछ अपवाद या सीमाएं निम्नलिखित हैं :

(1) प्रदत्त व्यवस्थापन (Delegated Legislation) : – डॉयसी ने कानून का अर्थ साधारण रूप में लिया था । उसकी दृष्टि कानून से अभिप्राय संसदीय कानूनों से था । आज सरकार के इतने कार्य बढ़ गये हैं कि सभी के लिए पूर्ण कानून बनाना असम्भव है । विधायिका के पास कार्यभार की अधिकता के कारण आज कुछ मामलों में कानून बनाने का अधिकार कार्यपालिका के पास भी आ गया है । आज कानूनों को विस्तृत व व्यापक रूप कार्यपालिका ही देती है । जो कानून पहले संसद बनाती थी , आज कार्यपालिका बनाती है । यही व्यवस्था प्रदत्त व्यवस्थापन कहलाती है । इस प्रकार कानून संसद के हाथों से निकलकर कार्यपालिका के पास आ चुका है ।

1. प्रशासकीय न्याय व कानून (Administrative Justice and Law) : – प्रशासकीय न्याय कानून के शासन का विरोधी है , परन्तु आज प्रत्येक देश में प्रशासकीय कानून किसी न किसी रूप में



विद्यमान हैं । आज इंग्लैण्ड में भी भी विभागों को अपने कर्मचारियों के मामलों में निर्णय लेने का अधिकार है और न्याय करने का भी अधिकार प्राप्त है । इन निर्णयों के विरुद्ध किसी न्यायालय में अपील नहीं की जा सकती । आज किसी विभाग को अपने कर्मचारियों के विरुद्ध कार्यवाही करने व सजा देने की पूरी छूट है । इसके लिए उसे किसी के सामने पूरी जानकारी देने की आवश्यकता नहीं है ।

2. सैनिक कानून (**Military Laws**) : – आज अनेक देशों में सैनिक व्यवस्था को पूर्णतया: स्वतन्त्र दर्जा दिया गया है । सेना के अपने न्यायालय व बोर्ड होते हैं जो सैनिकों द्वारा किए गए अपराधों की जाँच करते हैं व सजा देते हैं । सैनिक न्यायालयों के नियमों के विरुद्ध किसी तरह की अपील साधारण न्यायालयों में कहीं भी नहीं की जा सकती है । भारत में सैनिक न्यायालयों को अलग व स्वतन्त्र दर्जा प्राप्त है । इस तरह के प्रावधान पाकिस्तान, बंगलादेश, श्रीलंका, अमेरिका आदि देशों में भी है । इस व्यवस्था ने कानून के शासन के सिद्धान्त को अप्रासांगिक बना दिया है । सैनिकों पर सेवा के दौरान सैनिक कानून लागू होते हैं , साधारण कानून नहीं । इस कानूनों को संविदा कानून कहा जाता है ।
3. मौलिक अधिकार (**Fundamental Right**) : – डॉयसी का यह कहना गलत है कि इंग्लैण्ड में नागरिकों को अधिकार व स्वतन्त्रताएं कानूनी निर्णयों से प्राप्त हुए हैं । वहां पर कई अधिकार तो मेगनाकार्टा तथा 'बिल ऑफ राइट्स' द्वारा प्राप्त किए हैं और इनकी रक्षा कानून के शासन की बजाय प्रत्यक्षीकरण कानून द्वारा की जाती है । इस प्रकार इंग्लैण्ड में तो यह सिद्धान्त सीमित हुआ है , लेकिन लिखित संविधानों वाले देशों में बिल्कुल अमान्य है। भारत, अमेरिका आदि देशों में नागरिक अधिकारों व स्वतन्त्रताओं का जन्म संविधानिक प्रावधानों की देन है , न कि न्यायिक निर्णयों की ।
4. विशेषाधिकार व उन्मुक्तियां (**Privileges and Immunities**) :- ब्रिटेन के राजा या रानी को कुछ विशेषाधिकार व उन्मुक्तियां प्राप्त हैं। उस पर कानून की सीमाएं नहीं लगाई जा सकती हैं। अपने गलत कार्यों के लिए विशेषाधिकार प्राप्त व्यक्तियों पर मुकद्दमा विशेष परिस्थितियों में चलाया जा सकता है। इंग्लैण्ड में न्यायाधीशों को भी अपने कार्यों के मामलों में उन्मुक्तियां प्राप्त हैं। यदि राजदूत या विदेशी शासक विदेशी धरती पर कोई अपराध कर दे तो उसे उसके देश वापिस भेजा जा सकता है, मुकद्दमा नहीं चलाया जा सकता। इसी तरह इंग्लैण्ड में पासपोर्ट जारी करना या न करना राजा का विशेषाधिकार है ।
5. मौलिक अधिकार (**Fundamental Rights**) :- डॉयसी का यह कहना गलत है कि इंग्लैण्ड में नागरिकों को अधिकार व स्वतन्त्रताएं कानूनी निर्णयों से प्राप्त हैं। वहां पर कई अधिकार तो मेगनाकार्टा



तथा 'बिल ऑफ राईटज' द्वारा प्राप्त किए हैं और इनकी रक्षा कानून के शासन की बजाय प्रत्यक्षीकरण कानून द्वारा की जाती है। इस प्रकार इंग्लैण्ड में तो यह सिद्धान्त सीमित हुआ है, लेकिन लिखित संविधानों वाले देशों में बिल्कुल अमान्य है। भारत, अमेरिका आदि देशों में नागरिक अधिकारों व स्वतन्त्रताओं का जन्म संविधानिक प्रावधानों की देन है, न कि न्यायिक निर्णयों की।

6. इंग्लैण्ड में कानून के शासन के अपवाद (Exceptions of Rule of Law in England) :—
इंग्लैण्ड में कानून के शासन का सिद्धान्त ट्रेड यूनियन तथा सामाजिक संस्थाओं के मामले में लागू नहीं होता। 1906 के 'Trade Dispute Act' के अनुसार यदि कोई मजदूर संघ व अन्य सामाजिक संघ अपने सदस्यों को हानि पहुंचाता है तो उसके विरुद्ध न्यायालय में नहीं जाया जा सकता। ये संस्थाएं कानून से ऊपर हैं। इंग्लैण्ड में 'Trade Board' तथा 'Public Health Act' के मामलों में भी न्यायिक प्रक्रिया प्रशासकीय है। वहां न्यायधीशों व राजदूतों को भी सामान्य कानून से छूट है। राजा को कुछ विशेषाधिकार प्राप्त हैं। राजा पर मुकद्दमा साधारण न्यायालय में नहीं चलाया जा सकता।

इस प्रकार कहा जा सकता है कि आज इंग्लैण्ड में इतने प्रशासकीय व राजनीतिक परिवर्तन हो चुके हैं जिन्होंने कानून के शासन का परम्परागत अर्थ सीमित कर दिया है। आज इंग्लैण्ड में प्रशासकीय न्याय व कानून का विकास हो चुका है। प्रदत्त व्यवस्थापन की व्यवस्था ने इस सिद्धान्त का कार्यक्षेत्र सीमित कर दिया है। लेकिन यह कहना सर्वथा गलत है कि इंग्लैण्ड में कानून का शासन नहीं है। आज कानून के शासन का सिद्धान्त कम या आंशिक रूप से विश्व के अन्य सभ्य देशों में कार्य कर रहा है।

5.4.6 संयुक्त राज्य अमेरिका की न्याय-व्यवस्था (Judicial System of U.S.A.)

किसी भी संघात्मक शासन प्रणाली वाले देश में निष्पक्ष व स्वतन्त्र न्यायपालिका का होना बहुत जरूरी है। अमेरिका में भी संघात्मक शासन प्रणाली अपनाने के कारण एक ऐसी स्वतन्त्र व निष्पक्ष न्यायपालिका की व्यवस्था की गई है जो केन्द्र व इकाइयों के विवादों को सुलझाने के साथ कार्यपालिका तथा विधायिका के असंवैधानिक कार्यों पर भी रोक लगाती है। अमेरिका में एक ऐसी संघीय न्यायपालिका है जो संघ व राज्यों के न्यायालयों के कार्य व्यवहार को एकरूपता प्रदान करती है। अमेरिकन न्यायपालिका सरकार के अन्य दोनों अंगों पर न्यायिक पुनरावलोकन की शक्ति द्वारा संतुलन कायम रखती है।

- सर्वोच्च न्यायालय : रचना, क्षेत्राधिकार व कार्य

(Supreme Court : Composition, Jurisdiction and Functions)



1. **न्यायाधीशों की नियुक्ति (Appointment of the Judges) :-** सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीशों की नियुक्ति सीनेट की अनुमति से राष्ट्रपति द्वारा की जाती है। यदि सीनेट चाहे तो राष्ट्रपति द्वारा की गई नियुक्तियों की पुष्टि करने से इन्कार भी कर सकती है।
2. **न्यायाधीशों की योग्यताएं (Qualifications of the Judges) :-** अमेरिकन संविधान इस बारे में मौन है कि सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीशों को नियुक्त करते समय किन-किन योग्यताओं का ध्यान रखा जाए। न्यायाधीशों की नियुक्ति राष्ट्रपति ही करता है। सीनेट की स्वीकृति से राष्ट्रपति किसी भी व्यक्ति को न्यायाधीश बना सकता है। राष्ट्रपति न्यायाधीशों की नियुक्ति करते समय उनके अनुभव व योग्यता को ध्यान में रखता है।
3. **संविधान का संरक्षक तथा अभिभावक (Protector and Guardian of the Constitution) :-** अमेरिका का सर्वोच्च न्यायालय जनका के अधिकारों, स्वतन्त्रताओं तथा संविधान का रक्षक एवं संघीय व्यवस्था का अभिभावक है। उसे निर्देश, आदेश, परमादेश, प्रतिषेध, अधिकार प्रच्छा आदि जारी करने का अधिकार है। ऐसा करके वह नागरिकों के अधिकारों व स्वतन्त्रताओं का संरक्षक बन जाता है। वह किसी भी व्यक्ति को नागरिक स्वतन्त्रताओं व अधिकारों का अतिक्रमण करने की अनुमति नहीं दे सकता। अमेरिकन संविधान के कानून की उचित प्रक्रिया का अनुपालन किए बिना किसी भी व्यक्ति को उसके नैतिक अधिकारों से वंचित नहीं किया जा सकता। अतः सर्वोच्च न्यायालय अधिकारों का संरक्षक व संविधान का अभिभावक है।
4. **कानून निर्माण में भूमिका (Role in Law Making) :-** अमेरिका के सर्वोच्च न्यायालय को संविधान की व्याख्या करने का पूरा अधिकार है। कई बार उसके सामने सरकार द्वारा स्पष्टीकरण सम्बन्धी कई केस आते हैं। वह अस्पष्ट बातों को स्पष्ट करता है और ये नियम ही कालान्तर में स्थायित्व प्राप्त करके संविधान का अभिन्न अंग बन जाते हैं। उनका महत्व भी मूल कानून जैसा ही होता है।
5. **अमेरिका के सर्वोच्च न्यायालय की स्थिति (Position of the American Supreme Court):-** उपरोक्त व्याख्या से यह स्पष्ट हो जाता है कि अमेरिकन शासन प्रणाली में सर्वोच्च न्यायालय की स्थिति काफी महत्वपूर्ण है और वह संविधान की व्याख्या व नागरिक अधिकारों के संरक्षक के रूप में है।

● **अमेरिका में न्यायिक पुनरावलोकन (Judicial Review in America)**

अमेरिका में भी संघात्मक शासन प्रणाली अपनाई गई है। केन्द्र तथा इकाईयों में तालमेल रखने के लिए शक्तियों के पृथक्करण के बावजूद भी संविधान की सर्वोच्चता कायम रखी गई है और संविधान की व्याख्या करने का अधिकार



सर्वोच्च न्यायालय को प्राप्त है। इसी अधिकार का प्रयोग करते समय सर्वोच्च न्यायालय न्यायिक पुनरावलोकन की शक्ति का अधिकारी बन गया है। यद्यपि संविधान में स्पष्ट रूप से किसी भी अनुच्छेद में न्यायिक पुनरावलोकन की कोई व्यवस्था नहीं है, फिर भी न्यायाधीशों की योग्यता व संविधान की व्याख्या की शक्ति ने सर्वोच्च न्यायालय को न्यायिक पुनरावलोकन का अधिकार प्रदान किया है।

न्यायिक पुनरावलोकन को न्यायिक समीक्षा तथा न्यायिक पुनर्निरीक्षण भी कहा जाता है। साधारण अर्थ में यह न्यायपालिका की वह शक्ति है जिसकी सहायता से सर्वोच्च न्यायालय कार्यपालिका तथा विधायिका के उन कानूनों तथा आदेशों को अवैध घोषित कर सकती है जो संविधान के मूल ढांचे या आदर्शों के विपरीत हो। अमेरिका का सर्वोच्च न्यायालय इस शक्ति के अधीन संविधान की व्याख्या करता है और कांग्रेस तथा राज्यों की व्यवस्थापिकाओं के कानूनों एवं अन्य प्रशासकीय आदेशों की वैधानिकता एवं अवैधानिकता का निर्णय करता है। सर्वोच्च न्यायालय के इस निर्णय के विरुद्ध कहीं भी कोई अपील नहीं की जा सकती।

अमेरिका के न्यायाधीश गारबरी मार्शल ने इसे परिभाषित करते हुए कहा है कि “यह सर्वोच्च न्यायालय की ऐसी शक्ति है जिनमें यह किसी कानूनी या सरकारी कार्य को असंवैधानिक घोषित कर सकती है जिसे यह देश की मूल विधि या संविधान के विपरीत समझती है।”

मुनरों ने न्यायिक पुनरावलोकन को परिभाषित करते हुए कहा है कि – “न्यायिक पुनरावलोकन वह शक्ति है जिसके अन्तर्गत कांग्रेस द्वारा पारित किसी कानून या राज्य के संविधान की किसी व्यवस्था या कानून के सम्बन्ध में यह निर्णय लिया जाता है कि वह संयुक्त राज्य के संविधान के अनुकूल है या नहीं।”

एम०वी० पॉयली के अनुसार – “न्यायिक समीक्षा सर्वोच्च न्यायालय की वह क्षमता है जिससे वह व्यवस्थापन कार्यों की वैधानिकता या अवैधानिकता को घोषित करती है।”

1. अमेरिका में न्यायिक पुनरावलोकन की उत्पत्ति व विकास (Origin and Development of Judicial Review in America)

अमेरिका में न्यायिक व्यवहार के अन्तर्गत पुनरावलोकन की उत्पत्ति 1803 में मारबरी बनाम मेडिसन नाम विवाद से मानी जाती है। इस विवाद में ही सर्वप्रथम न्यायाधीश मार्शल ने इस शक्ति का प्रयोग किया था। उसने 1803 में मारबरी बनाम मेडिसन के केस में अपना प्रसिद्ध ऐतिहासिक निर्णय सुनाते हुए कहा था— “न्यायिक पुनर्निरीक्षण न्यायालयों द्वारा अपने सामने पेश विधायी कानूनों तथा कार्यपालिका अथवा प्रशासकीय कार्यों का वह निरीक्षण है जिसके द्वारा यह निश्चित किया जाता है कि क्या ये एक लिखित संविधान द्वारा निषिद्ध किए गए हैं अथवा उन्होंने अपनी शक्ति से बढ़कर कार्य किया है या नहीं।” यहीं से न्यायिक पुनरावलोकन की परम्परा मानी जाती है।

2. न्यायिक पुनरावलोकन का प्रभाव (Impact of Judicial Review)



आज वहां पर न्यायिक पुनर्निरीक्षण के द्वारा ही संविधान की व्याख्या की जाती है, कांग्रेस तथा राज्यों की व्यवस्थापिकाओं के कानूनों तथा प्रशासकीय कानूनों को वैधानिकता-अवैधानिकता की जांच की जाती है। इस शक्ति के कारण न्यायालय व्यवस्थापन की शक्ति बन चुका है। इस शक्ति ने संविधान को देश का सर्वोच्च कानून बना दिया है। न्यायिक पुनरावलोकन में वहां के पुलिस अधिकारों को सर्वाधिक प्रभावित किया है। आज पुलिस अधिकारों में सार्वजनिक सुरक्षा, जन-कल्याण, स्वास्थ्य, नैतिकता आदि विषयों का भी समावेश हो चुका है। अपनी इस शक्ति के कारण आज सर्वोच्च न्यायालय राजनीति व्यवस्था का एक आधार-स्तम्भ तथा कांग्रेस का तीसरा सदन माना जाता है। आज बदलते परिवेश में भी न्यायपालिका अपनी इस शक्ति के कारण अपनी स्वतन्त्रता व निष्पक्षता को कायम रखने की दिशा में कार्यरत है।

3. न्यायिक पुनरावलोकन की आलोचना (Criticisms of Judicial Review)

सर्वोच्च न्यायालय ने कई बार वैध व उचित कानूनों को भी अवैध ठहराया है। न्यायिक पुनरावलोकन न्यायिक निरंकुशता को जन्म देता है। इस शक्ति का अमेरिका के संविधान में उल्लेख नहीं है। इसलिए न्यायालयों द्वारा इसका प्रयोग अपने आप में असंविधानिक है। इससे न केवल कानून ही रद्द होता है, बल्कि नीति को भी नुकसान पहुंचाता है। नीति-निर्माण करना सरकार का कार्य है न कि न्यायालयों का। यह बहुमत ही निरंकुशता पर आधारित है। इसमें किसी कानून को अवैध घोषित करने के लिए न्यायधीशों का बहुमत होना जरूरी है। यदि किसी कानून की वैधता जांचने के लिए 10 न्यायधीशों का पैनल बैठता है तो उसमें से 6 के बहुमत से कानून वैध या अवैध माना जाता है। शेष 4 की राय का कोई महत्व नहीं है। इसमें एक मत से कानून को अवैध घोषित किया जाना लोकतन्त्रीय आस्थाओं पर करारा प्रहार है। अतः यह अल्पमत के हितों का विरोधी है। इससे कार्यपालिका, विधायिका व न्यायपालिका में गतिरोध उत्पन्न होता है। अच्छे शासन के लिए इन तीनों में तालमेल होना बहुत ही आवश्यक है।

आज सर्वोच्च न्यायालय अमेरिका में नीति-निर्माता बन गया है। वह कानूनों की व्याख्या की बजाय उनकी औचित्यता की जांच करने लगा है। इसने कई महत्वपूर्ण निर्णयों को प्रभावित करके राजनीतिक विवादों को जन्म दिया। तीसरे सदन के रूप में उभरकर इसने न्यायिक निरंकुशता को जन्म दिया है। लेकिन अनेक विवादों से घिरे रहने के बाद भी आज अमेरिका में न्यायिक पुनरावलोकन की शक्ति का विकास जारी है। यह संविधान के चौथे स्तम्भ तथा कांग्रेस के तीसरे सदन के रूप में अपना स्थान बना चुका है। अमेरिका के संविधान को व्यवहारिक बनाने में इसकी महत्वपूर्ण भूमिका है।

5.4.7 स्विस् न्यायपालिका (Swiss Judiciary)

स्विस् न्यायपालिका के पास न्यायिक पुनरावलोकन की शक्ति भी नहीं है। स्विस् न्यायालय अनुच्छेद 113 के अन्तर्गत संघीय व्यवस्थापिका या कार्यपालिका द्वारा निर्मित कानून को मान्यता देने पर विवश है। स्विट्जरलैण्ड में



कानून की सर्वोच्चता के स्थान पर जन-सम्प्रभुता की सर्वोच्चता का सिद्धान्त अपनाए जाने के कारण जनमत संग्रह द्वारा किसी भी कानून को बनाया भी जा सकता है और बिगाड़ा भी जा सकता है।

(i) स्विस् न्यायपालिका का संगठन (Organisation of the Swiss Judiciary):— यह न्यायालय चार विभागों में बंटा हुआ है। इसके दो विभाग दीवानी झगड़ों का निपटारा करते हैं, तीसरा सार्वजनिक या सामान्य कानून सम्बन्धी झगड़ों का हल करता है और चौथा दीवालियों तथा ऋणों से सम्बन्धित केसों पर विचार करता है। इसी तरह फौजदारी झगड़ों का निपटान करने के लिए भी संघीय न्यायालय को फरियाद विभाग, फौजदारी विभाग, संघीय दण्ड विभाग तथा संविधानिक चार विभागों में बांटा गया है। फौजदारी केसों का निपटारा करते समय जूरियों की मदद ली जाती है। इन जूरियों का चुनाव जनता द्वारा 6 वर्ष के लिए किया जाता है।

(ii) संघीय न्यायालय के न्यायाधीशों की नियुक्ति (Appointment of the Judges of the Federal Court) :— स्विट्जरलैण्ड में न्यायपालिका का संगठन सर्वाधिक प्रजातन्त्रीय है। इसके न्यायाधीशों की नियुक्ति संघीय सभा द्वारा की जाती है जो स्विस् की सर्वोच्च व्यवस्थापिका है। इसमें संघीय व्यवस्थापिका के दोनों सदन मिलकर कार्य करते हैं।

(iii) न्यायधीशों की योग्यताएं (Qualifications of the Judges)

न्यायधीशों के वेतन व भत्ते (Salary and Allowances of the Judges) :— स्विस् न्यायपालिका के न्यायधीशों का वेतन निर्धारित करने का अधिकार संघीय सभा को दिया गया है। वर्तमान में संघीय न्यायपालिका के न्यायधीशों को 53,000 फ्रैंक प्रतिवर्ष वेतन मिलता है। न्यायपालिका के अध्यक्ष को 36,000 फ्रैंक अतिरिक्त भत्ता भी मिलता है। उप-न्यायधीशों को केवल दैनिक भत्ता ही मिलता है। सेवानिवृत्ति पद 60 वर्ष के बाद न्यायधीशों को पेन्शन भी मिलती है।

● संघीय न्यायालय की स्थिति (Position of the Federal Court)

यद्यपि स्विस् न्यायपालिका को दीवानी तथा फौजदारी मुकद्दमों में प्रारम्भिक व अपीलीय दोनों क्षेत्राधिकार प्राप्त हैं, लेकिन स्विस् न्यायालयों से स्वतन्त्रता व निष्पक्षता की आशा करना बेकार है। न्यायधीशों की नियुक्ति, वेतन, कार्यकाल आदि की समस्त व्यवस्थाएं संघीय सभा के हाथों में हैं। संघीय सभा जब चाहे न्यायधीशों को हटा सकती है। स्विट्जरलैण्ड में कहने को तो प्रशासनिक न्यायालय है, लेकिन उनकी शक्तियों का प्रयोग संघीय न्यायालय ही करता है। स्विस् न्यायपालिका को विधायिका तथा कार्यपालिका द्वारा निर्मित कानूनों की संवैधानिकता जांचने की शक्ति भी नहीं है। स्विस् न्यायपालिका में न्यायधीशों की संख्या इतनी कम है कि न्यायिक व्यवहार की कार्यकुशलता पर विपरीत असर पड़ता है। न्यायधीशों का कम कार्यकाल तथा जनता को न्यायधीशों को वापिस बुलाने का अधिकार न्यायपालिका पर ऐसा निरंकुश प्रतिबन्ध है कि न्यायधीश स्वतन्त्र व निष्पक्ष रहकर कार्य कर ही नहीं



सकते। लेकिन इसका अर्थ यह नहीं है कि स्विस् न्यायपालिका की कोई प्रासंगिकता नहीं है। सत्य तो यह है कि स्विस् न्यायपालिका ने न्यायिक पुनरावलोकन के अभाव व विधायिका के दबाव में रहकर भी जनसम्प्रभुता को व्यावहारिक रूप देने का कार्य किया है। सिद्धान्त में तो स्विस् न्यायपालिका की स्थिति चाहे कम महत्व की हो, लेकिन व्यवहारिक तौर पर स्विस् न्यायपालिका की प्रगतिशील भूमिका की उपेक्षा करना गलत है।

5.4.8 चीन में न्यायपालिका (Judiciary in China)

चीन एक साम्यवादी देश है। सोवियत संघ की तरह उसमें भी शक्तियों के पृथक्करण तथा विकेन्द्रीकरण की बजाय केन्द्रीयकरण पर जोर दिया गया है। चीन में शासन की वास्तविक शक्तियां साम्यवादी दल में ही निहित हैं। साम्यवादी देश होने के नाते न्यायपालिका को भी सरकार के स्वतन्त्र अंग के रूप में मान्यता न देकर साम्यवाद के लक्ष्यों की पूर्ति व प्राप्ति के साधन के रूप में ही न्यायपालिका को मान्यता मिली हुई है। पीटर एस ० एच ० टांग ने लिखा है कि “ चीनी न्यायपालिका का उद्देश्य नई व्यवस्था की स्थापना करना है। ” शासन के अन्य अंगों की तरह न्यायपालिका का उद्देश्य भी नागरिकों में अपने देश के प्रति भक्ति भाव पैदा करना तथा समाजवाद के सिद्धान्त की शिक्षा देना है। चीनी न्यायपालिका को स्विस् न्यायपालिका की तरह न्यायिक समीक्षा का अधिकार भी प्राप्त नहीं है। वहां तो न्यायपालिका की भूमिका क्रांतिकारी समाज के उद्देश्यों की पूर्ति के लिए बनाई गई नीतियों को कार्य रूप देने वाले यन्त्र के रूप में ही है। चीन में संविधान की व्याख्या का अधिकार न्यायपालिका के पास न होकर राष्ट्रीय जन कांग्रेस व उसकी स्थायी समिति के पास है जो अन्त में साम्यवादी दल के प्रति वचनबद्ध होती हैं। सिद्धान्त में तो चीनी न्यायपालिका स्वतन्त्र व निष्पक्ष है, लेकिन व्यवहार में वह साम्यवादी दल के कठोर नियन्त्रण में है। वस्तुतः चीन में न्यायपालिका पाश्चात्य न्यायपालिका से भिन्न है और उसका उद्देश्य जनता के लिए न्याय करने की बजाय साम्यवादी व्यवस्था की रक्षा करना तथा साम्यवाद के शत्रुओं का नाश करना है।

• चीन में न्यायपालिका का संगठन (Organisation of the Judiciary in China)

चीन में न्यायपालिका सरकार का एक भाग न होकर नियमित प्रशासन का ही एक अंग है जो राष्ट्रीय जनकांग्रेस तथा जन – प्रतिनिधियों के नियन्त्रण में ही कार्य करती है। 1982 के चीनी संविधान के अनुच्छेद 123 में लिखा है कि चीनी गणतन्त्र के लोक न्यायालय राज्य के न्यायिक अंग हैं। अनुच्छेद 124 में यह व्यवस्था है कि चीन में न्यायिक शक्ति का प्रयोग सर्वोच्च जन न्यायालय, स्थानीय जन न्यायालयों तथा विशेष न्यायालयों द्वारा किया जाता है। चीनी न्यायपालिका का संगठन भी सोवियत संघ के न्यायिक संगठन से मेल खाता है।

चीन में न्यायपालिका के दो भाग (i) जन – न्यायालय तथा (ii) जन – प्रोक््यूरेटर हैं। ये दोनों भाग कांग्रेस के प्रति उत्तरदायी हैं।



1. जन – न्यायालय (Peoples Courts) : – जन – न्यायालयों में सबसे ऊपर के स्तर पर सर्वोच्च न्यायालय हैं । संविधान के अनुच्छेद 42 के अन्तर्गत सर्वोच्च न्यायालय जनवादी चीन का उच्चतम न्यायिक संगठन है । इसमें एक अध्यक्ष , कुछ उपाध्यक्ष , विभिन्न विभागों के मुख्य न्यायधीश एवं सहायक मुख्य न्यायधीश तथा कुछ अन्य न्यायधीश शामिल होते हैं । सर्वोच्च न्यायालय का अध्यक्ष राष्ट्रीय जन कांग्रेस की स्थायी समिति द्वारा नियुक्त किये जाते हैं । सर्वोच्च न्यायालय के अध्यक्ष व अन्य न्यायधीशों को पदच्युत करने का अधिकार भी राष्ट्रीय जन कांग्रेस व उसकी स्थायी समिति के पास है । सर्वोच्च जन न्यायालय के अध्यक्ष का कार्यकाल राष्ट्रीय जन कांग्रेस के कार्यकाल पर निर्भर करता है । अध्यक्ष को दो से अधिक बार इस पद के लिए चुना जाना वर्जित है । सामान्य तौर पर संविधान की मर्यादा का निर्वहन करते हुए अध्यक्ष को 5 वर्ष के लिए ही चुना जाता है । अध्यक्ष व अन्य न्यायधीश अपने कार्यों के लिए राष्ट्रीय जन कांग्रेस के प्रति ही जवाबदेह हैं । इस न्यायालय के प्रमुख कार्य अधीनस्थ न्यायालयों पर नियन्त्रण व निरीक्षण रखना है । इसे प्रारम्भिक तथा अपीलीय दोनों क्षेत्राधिकार प्राप्त हैं । इस न्यायालय के भी दो भाग – दीवानी तथा फौजदारी हैं ।

चीनी संविधान की धारा 127 में सर्वोच्च न्यायालय की शक्तियों के बारे में लिखा हुआ है—“सर्वोच्च जन – न्यायालय सबसे बड़ा न्यायालय है । यह विभिन्न स्तरीय स्थानीय जन – न्यायालयों और विशेष जन – न्यायालयों पर निगरानी रखता है । ” जन – न्यायालयों की दूसरी श्रेणी स्थानीय जन – न्यायालयों की है जो सर्वोच्च न्यायालय के अधीन कार्य करते हैं । स्थानीय जन – न्यायालय भी तीन प्रकार के हैं . उच्च जन – न्यायालय , मध्य जन – न्यायालय तथा प्रारम्भिक न्यायालय । इनमें से अन्य जन न्यायालयों के न्यायधीशों या प्रमुख व उप प्रमुख की नियुक्ति व पदच्युति प्रान्त की जन कांग्रेस कर सकती है । यह न्यायालय प्रत्येक प्रान्त में एक ही होता है और यह दीवानी तथा फौजदारी विभागों में बटा होता है । यह अपने क्षेत्राधिकार में पड़ने वाले मुकद्दमों के विरुद्ध अपील सुन सकता है । इसके बाद मध्य जन न्यायालय हैं जिनकी स्थापना प्रान्तों , स्वशासित क्षेत्रों , केन्द्रीय शासन के अधीन नगरपालिकों , प्रांतीय नगरपालिकों आदि में की जाती है । ये न्यायालय उच्च न्यायालय के अधीन कार्य करते हैं । इन न्यायालयों में एक अध्यक्ष , उपाध्यक्ष व अन्य न्यायधीश होते हैं । इन न्यायालयों में भी दीवानी तथा फौजदारी दोनों केस आते हैं । यह न्यायालय प्रारम्भिक जन न्यायालयों के विरुद्ध अपील सुन सकता है । इसे प्रारम्भिक न्यायालयों द्वारा स्थानान्तरित मुकद्दमों के बारे में तथा अपने क्षेत्राधिकार में आने वाले मुकद्दमों के बारे में प्रारम्भिक तथा अपीलीय क्षेत्राधिकार प्राप्त हैं । स्थानीय जन न्यायालयों की सबसे निम्न श्रेणी प्रारम्भिक न्यायालयों की है । इसमें भी एक अध्यक्ष , उपाध्यक्ष तथा अन्य न्यायधीश होते हैं । ये न्यायालय सभी काऊंटी , स्वशासित काऊंटी नगरपालिका और जिलों में स्थापित किए जाते हैं और ये अपने स्तर की जन कांग्रेस के प्रति उत्तरदायी होते हैं । इन्हें भी दीवानी तथा फौजदारी मुकद्दमों सुनने का अधिकार है । चीन में जन – न्यायालयों की एक विशिष्ट श्रेणी भी है । इसके अन्तर्गत सैनिक न्यायालय , रेलवे न्यायालय , यातायात न्यायालय , जल परिवहन न्यायालय शामिल हैं । इन न्यायालयों का संगठन गणराज्य की राष्ट्रीय जन कांग्रेस द्वारा निश्चित किया जाता है । इन न्यायालयों के



निर्णयों के विरुद्ध सर्वोच्च न्यायालय में अपील की जा सकती है । (ii) जन – प्रोक्यूरेटर अथवा न्यायवादी (Peoples Procurator) : – चीन में जन – प्रोक्यूरेटर या जन – समाहर्ताओं की भी व्यवस्था है । जन – प्रोक्यूरेटरों की व्यवस्था सोवियत संघ के संविधान के आधार पर की गई है । समस्त देश के लिए एक प्रोक्यूरेटर होता है और उसके अधीन अनेक प्रोक्यूरेटर होते हैं । सर्वोच्च जन प्रोक्यूरेटर का चयन राष्ट्रीय जन कांग्रेस द्वारा 5 वर्ष के लिए समिति करती है । इसी तरह उनकी पदच्युति भी की जाती है । स्थानीय जन प्रोक्यूरेटरों की नियुक्ति उसी स्तर की जन कांग्रेस करती है और वे उसी के प्रति उत्तरदायी होते हैं । चीनी प्रोक्यूरेटर व्यवस्था का अन्तिम स्तर विशेष जन – प्रोक्यूरेटरों का है । चीनी न्याय व्यवस्था में सभी स्तर के प्रोक्यूरेटरों व विशेष महत्व जन – प्रोक्यूरेटरों के कार्य (functions of the People's Procurators) : चीन में जन प्रोक्यूरेटर सभी सरकारी अंगों व न्यायालयों को कानून के अनुसार कार्य करने का निर्देश देते हैं । संविधान के अनुच्छेद 4 में सर्वोच्च जन – प्रोक्यूरेटर का प्रमुख कार्य यह देखना बताया है कि राज्य परिषद के विभिन्न विभागों , विभिन्न स्तर के स्थानीय निकायों , राज्य कर्मचारियों तथा नागरिकों द्वारा संविधान एवं अन्य कानूनों का समुचित पालन किया जा रहा है या नहीं । इसी तरह के उत्तरदायित्व स्थानीय व विशेष जन प्रोक्यूरेटरों को सौंपे गए हैं । प्रोक्यूरेटर जनरल तथा उसके अधीन प्रोक्यूरेटरों को अपने से अधीनस्थ अधिकारियों व नागरिकों द्वारा संविधान की पालना सुनिश्चित की जाती है । उन्हें किसी भी राजकीय अंग या सरकारी कर्मचारी के विरुद्ध अपील सुनने का अधिकार है । ये उन सभी अपराधों और मामलों की जांच करते हैं जिनका सम्बन्ध साम्यवाद विरोधी तत्वों से होता है । ये अपराधी की सन्देह के आधार पर बन्दी बनाने का आदेश दे सकते हैं । ये न्यायालयों के निर्णयों की संवैधानिकता को परख सकते हैं और गलत निर्णयों के विरुद्ध अपील भी कर सकते हैं । लेकिन व्यवहार में न्यायपालिका का यह अंग भी साम्यवादी दल के कठोर नियन्त्रण में ही है । वास्तव में चीनी प्रोक्यूरेटरवादी व्यवस्था भी सोवियत प्रोक्यूरेटरालयों की तरह साम्यवादी तानाशाही को निर्देशित करने वाले यन्त्र है । फिर भी शासन का अभिन्न अंग होने के नाते चीनी समाज में उनका महत्वपूर्ण स्थान है , परन्तु उतना नहीं जितना सोवियत प्रोक्यूरेटरों को है

● चीनी न्यायपालिकों के कार्य (Functions of the Chinese Judiciary)

चीन में न्यायिक सिद्धान्त और व्यवहार में काफी अन्तर है । चीनी न्यायपालिका को प्रारम्भिक तथा अपीलिय दोनों क्षेत्राधिकार प्राप्त हैं । परन्तु व्यवहार में न्यायपालिका साम्यवादी हितों का पोषण ही करती हैं । सिद्धान्त तौर पर चीनी न्यायपालिका के प्रमुख कार्य निम्नलिखित हैं :

1. फौजदारी व दीवानी झगड़ों का निपटारा करना !
2. अपराधियों को सजा देना ।
3. जनवादी प्रजातन्त्रीय प्रणाली के हितों की सुरक्षा करना ।
4. विवादों का निराकरण करना ।



5. सार्वजनिक सम्पत्ति की सुरक्षा करना
6. नागरिक अधिकारों व स्वतन्त्रताओं की सुरक्षा करना
7. सार्वजनिक शान्ति की व्यवस्था करना ।
8. समाजवादी कार्यक्रमों को लागू करना तथा उन्हें स्थायित्व प्रदान करना । चीन में न्यायपालिका को जो अधिकार व शक्तियां सिद्धान्त तौर पर प्राप्त हैं , वे किसी भी प्रजातन्त्रीय देश से कम नहीं हैं । लेकिन दुर्भाग्य की बात यह है कि न्यायिक व्यवहार के सिद्धान्त और व्यवहार की वास्तविकता कुछ और ही है । चीनी न्यायपालिका की विशेषताएं (Features of Chinese Judiciary) चीनी न्यायपालिका की प्रमुख विशेषताएं निम्नलिखित हैं :
1. चीनी न्यायपालिका सरकार या शासन का स्वतन्त्र अंग न होकर नियमित प्रशासन का ही एक भाग है और उस पर भी साम्यवादी दल का कठोर नियन्त्रण रहता है ।
2. चीनी न्यायालयों को न्यायिक पुनरावलोकन की शक्ति प्राप्त नहीं है । उसे भारत तथा अमेरिका की तरह विधायिका व कार्यपालिका द्वारा निर्मित कानूनों की संवैधानिकता जांचने का अधिकार नहीं है ।
3. सभी न्यायालयों के न्यायधीश व अध्यक्ष सम्बन्धित स्तर की जन कांग्रेसों द्वारा नियुक्त पदच्युत किए जाते हैं। अर्थात् न्यायालयों पर जन कांग्रेस का नियन्त्रण रहता है । अतः चीन में न्यायपालिका का जनतांत्रिकरण किया गया है ।
4. चीन में न्यायपालिका का लक्ष्य समाजवादी क्रान्ति की रक्षा व उसको स्थायित्व प्रदान करना है ।
5. चीन में न्यायपालिका की प्रकृति राजनीतिक है , वैधानिक नहीं ।
6. चीन में न्यायालयों की कार्यविधि बहुत आसान व खुली है । केवल विशेष अपराधों में ही कार्यवाही गुप्त रखी जाती है ।
7. चीन में न्यायधीशों की योग्यता का अभाव है । चीन में साम्यवादी दल के समर्थक व्यक्ति ही न्यायपालिका में नियुक्त किया जाते हैं ।
8. चीन में एक संगठित न्याय प्रणाली है । देश में एकल न्यायपालिका है और सभी न्यायालय सर्वोच्च न्यायालय के माग –दर्शन में ही कार्य करते हैं ।
9. चीन में न्यायधीशों का कार्यकाल निश्चित नहीं है । न्यायधीशों का कार्यकाल राष्ट्रीय जन कांग्रेस व प्रांतीय जनकांग्रेसों के कार्यकाल पर निर्भर है और अन्त में साम्यवादी दल की इच्छा पर निर्भर है ।
10. चीनी न्यायपालिका स्वतन्त्र व निष्पक्ष नहीं है , क्योंकि वह साम्यवाद विरोधियों को कुचलने के लिए साम्यवादी दल के कठोर नियन्त्रण में कार्य करती है ।
11. चीन में मुकदमों की सुनवाई खुली होती है और उसमें आम नागरिक भी सुनवाई के समय उपस्थित रह सकता है ।



12. चीन में सामूहिक दण्ड की भी व्यवस्था है । प्रायः अपराधियों को सार्वजनिक स्थान पर सामूहिक दण्ड दिया जाता है ।
13. चीनी न्यायपालिका में सर्वोच्चता व कानून के शासन का अभाव है । चीन में संवैधानिक कानून के स्थान पर साम्यवादी सहयोग देने वाली संस्था है ।
14. चीन में जन – निर्धारकों की नियुक्ति भी की जाती है जो केवल मुकद्दमों की सुनवाई के समय ही कार्य करते हैं । प्रत्येक केस की सुनवाई प्रायः एक न्यायाधीश या दो जन – निर्धारकों द्वारा की जाती है और समस्त निर्णय बहुमत से लिये जाते
15. चीन में निजी वकीलों का अभाव है । कोई भी अभियुक्त सरकार द्वारा जनमत तैयार की गई सूची में से किसी भी व्यक्ति को अपना वकील नियुक्त करने को बाध्य होता है ।
16. चीन में किसी भी व्यक्ति को न्यायालय की कार्यवाही के दौरान अपनी राष्ट्रीयता की भाषा प्रयोग करने का अधिकार है । यदि कोई अभियुक्त क्षेत्रीय भाषा से अनभिज्ञ हो तो वह दुभाषिए का सहारा ले सकता है ।
17. चीन की न्यायपालिका सुधारक न्याय पर आधारित है । वहां अराजनीतिक अपराधों के लिए कठोर दण्ड देने की बजाय अपराधी को भूल सुधार का मौका दिया जाता है , लेकिन , भ्रष्टाचार व समाजवादी क्रान्ति विरोधी कार्यों के लिए मृत्यु – दण्ड का भी प्रावधान है ।
18. चीन में प्रशासकीय न्यायालय भी नहीं हैं ।

• चीनी न्याय – व्यवस्था का मूल्यांकन (Evaluation of Chinese Judicial System)

यदि चीन की न्यायिक प्रणाली का गहराई से अवलोकन किया जाए तो वह रूस की न्याय – व्यवस्था से मिलती – जुलती है । साम्यवादी देश होने के नाते चीन में भी न्यायपालिका का संगठन लगभग उसी तरह का है जैसा रूस में रहा है । चीनी न्यायपालिका का उद्देश्य नागरिक स्वतन्त्रताओं व अधिकारों का संरक्षण करना न होकर सर्वहारा के शत्रुओं का विनाश और साम्यवाद की नीतियों व कार्यक्रमों का क्रियान्वयन करना है । चीन में कानून के शासन की जगह कानून के सामने समानता का सिद्धान्त अवश्य अपनाया गया है , मुकद्दमों की सुनवाई भी खुली होती है और प्रतिवादी को अपने बचाव का पुरा अवसर भी दिया जाता है लेकिन फिर भी न्यायिक समीक्षा की शक्ति का अभाव . न्यायाधीशों का राजनीतिक होना , विधायिका के प्रति उनका उत्तरदायित्व , न्यायिक स्वतन्त्रता का अभाव आदि दोषों के कारण न्यायपालिका को यह सम्मान प्राप्त नहीं है जो भारत तथा अमेरिका में है ।

5.5 अपनी प्रगति जाँचें (Check your progress)

1. अमरीकी सर्वोच्च न्यायालय में वर्तमान में और सहन्यायाधीश हैं
2. संयुक्त राज्य अमरीका में न्यायाधीशों का कार्यकाल..... है ।



3. सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीशों का वेतन.....द्वारा निर्धारित किया जाता है ।
4. अमरीकी सर्वोच्च न्यायालय का सत्र प्रतिवर्ष..... के प्रथम सोमवार से प्रारम्भ होता है
5. न्यायिक पुनर्विलोकन ने अमरीकी सर्वोच्च न्यायालय को..... बना दिया है ।
6. ब्रिटिश न्यायिक संगठन में सबसे ऊपरी पायदान पर है
(क) लार्ड सभा (ख) क्वार्टर सेशंस का न्यायालय (ग) कोर्ट आफ क्रिमिनल अपील (घ) काउन्टी न्यायालय
7. यू.के. में विधि के प्रकार प्रचलित हैं
(क) दो (ख) तीन (ग) चार (घ) पाँच
8. न्यायपालिका को मूलतः प्रशासकीय अंग माना गया है
(क) ब्रिटेन में (ख) अमेरिका में (ग) फ्रांस में (घ) स्विट्जरलैण्ड में
9. फ्रांस के सर्वोच्च न्यायालय राज्य परिषद् में कितने सदस्य होते हैं ?
(क) 120 (ख) 135 (ग) 149 (घ) 171
10. स्विस् संघीय न्यायालय में न्यायाधीशों एवं उप – न्यायाधीशों का कार्यकाल होता है
(क) 5 वर्ष (ख) 6 वर्ष (ग) 8 वर्ष (घ) 10 वर्ष

5.6 सारांश (Summary)

राजनीतिक शक्ति की स्वेच्छाचारिता से नागरिक स्वतन्त्रताओं व अधिकारों की रक्षा के लिए सभी लोकतन्त्रीय देशों में स्वतन्त्र व निष्पक्ष न्यायपालिका की व्यवस्था की गई है। यह सरकार का ऐसा अंग है जो विधायिका और कार्यपालिका को अपने अधिकार क्षेत्र का अतिक्रमण करने से रोकता है। न्यायपालिका किसी भी सभ्य समाज का आधार है। सभ्य समाज में प्रत्येक नागरिक और समाज यह आशा करता है कि उसके साथ कोई अन्याय न हो और उसका जीवन सुचारु ढंग से चलता रहे। इसके लिए वह स्वतन्त्र व निष्पक्ष न्यायपालिका की कामना रखता है। यह निष्पक्ष न्यायपालिका ही कानून का शासन स्थापित करके नागरिक स्वतन्त्रताओं व अधिकारों की रक्षा करती है और सम्पूर्ण सामाजिक व राजनीतिक जीवन को नियन्त्रित भी रखती है। यह सरकार का तीसरा अंग होने के नाते शासन की कार्यकुशलता में वृद्धि करने का साधन भी है। ब्रिटिश न्याय व्यवस्था का विकास भी राजतन्त्र तथा जनवादी राजतन्त्र के विकास के साथ ही हुआ है। ब्रिटिश न्याय प्रणाली में सामान्य कानून में कोई अन्तर नहीं है। इसका प्रमुख कारण यह है कि वहां कानून विकसित कानून के रूप में है जो परम्पराओं पर आधारित होने के साथ-साथ ब्रिटिश लोक जीवन से भी बंधा हुआ है। इसी कारण ब्रिटेन में सरकार का शासन न होकर कानून का



शासन है जो समस्त राजनीतिक समाज को क्रियाशीलता प्रदान करता है। ब्रिटेन के लोगों के लिए कानून ही संविधान है और यही सरकार व शासन है।

5.7 सूचक शब्द (Key Words)

- प्रवीणता : दक्षता , प्रभावशीलता ।
- सदाचारपर्यंत : आजीवन सुचितापूर्ण व्यवहार ।
- कार्यपरायणता : ईमानदारीपूर्ण कार्य करना ।
- निर्वचन : कानून की व्याख्या करना ।

5.8 स्वयं मूल्यांकन हेतु प्रश्न (Self Assessment Questions)

1. अमेरिकी सुप्रीम कोर्ट और न्यायिक पुनर्विलोकन की व्याख्या कीजिए ।
2. ब्रिटेन , फ्रांस और स्विट्जरलैंड में न्यायिक पुनर्विलोकन सिद्धांत की विवेचना कीजिए ।
3. ब्रिटेन , फ्रांस और स्विट्जरलैंड की न्यायिक व्यवस्थाओं का विश्लेषणात्मक वर्णन कीजिए ।
4. अमेरिका और स्विट्जरलैंड की संघीय व्यवस्था की व्याख्या कीजिए ।

5.9 अपनी प्रगति की जांच करने के लिए उत्तर (Answer- check your progress)

(1) एक मुख्य न्यायाधीश और 8 (2) आजीवन (3) कांग्रेस (4) अक्टूबर (5) संविधान का संरक्षक एवं अभिभावक (6) क (7) ख (8) ग (9) ग

5.10 सन्दर्भ ग्रन्थ/निर्देशित पुस्तकें (References / Suggested Readings)

1. तुलनात्मक राजनीति की रूपरेखा— ओम प्रकाश गाबा, मयूर पेपर बैक्स, नोएडा ।
2. तुलनात्मक शासन एवं राजनीति — डॉ. बीरकेश्वर प्रसाद सिंह, ज्ञानदा प्रकाशन (पी.एण्ड डी.) 24, दरियागंज, अंसारी रोड, दिल्ली ।
3. तुलनात्मक राजनीति एवं राजनीतिक संस्थाएँ — सी.बी. गेना, विकास पब्लिशिंग हाउस प्रा.लि. अंसारी रोड, दिल्ली ।
- 4- तुलनात्मक राजनीति — जे.सी . जौहरी , स्टर्लिंग पब्लिशर्स प्रा.लि. , दिल्ली ।



Subject : Political Science(Comparative Constitutions of UK & USA (Optional-I))	
Course Code : POLS-303	Autor : Dr. Parveen Sharma
Lesson No. 6	
राजनीतिक दल और दल-प्रणालियां (Political Parties and Party Systems)	

अध्ययन की संरचना

- 6.1 अधिगम उद्देश्य (Learning Objectives)
- 6.2 प्रस्तावना (Introduction)
- 6.3 अध्ययन के मुख्य बिन्दु (Main Points of Text)
 - 6.3.1 राजनीतिक दल का अर्थ और परिभाषा (Meaning and Definition of Political Party)
 - 6.3.2 राजनीतिक दल की विशेषताएं (Features of Political Party)
 - 6.3.3 लोकतन्त्र में राजनीतिक दलों की भूमिका व कार्य (Role and Function of Political Parties in Democracy)
 - 6.3.4 दलीय-व्यवस्थाओं का वर्गीकरण
 - 6.3.5 दल-प्रणाली का मूल्यांकन
- 6.4 पाठ के आगे का मुख्य भाग (Further main body of the text)
 - 6.4.1 ब्रिटिश दल-प्रणाली (The British Party-System)
 - ब्रिटेन में राजनीतिक दलों की उत्पत्ति व विकास (Origin and Development of Political Parties in Britain)
 - ब्रिटेन के प्रमुख राजनीतिक दल : संगठन व कार्यक्रम (Major Political Parties of Britain : Organisation and Programmes)
 - ब्रिटिश दलीय-व्यवस्था की विशेषताएं (Features of British Party System)
 - 6.4.2 संयुक्त राज्य अमेरिका में राजनीतिक दल (Political Parties in America)



- अमेरिका के प्रमुख राजनीतिक दल : कार्यक्रम व संगठन (Major Political Parties of America : Programmes and Organisation)
- अमेरिकन दल प्रणाली की विशेषताएँ (Features of American Party System)
- अमेरिकन दल प्रणाली का मूल्यांकन (Evaluation of American Party System)

6.4.3 स्विस दल प्रणाली (Swiss Party System)

- स्वित्जरलैण्ड में दलीय प्रणाली (Party System in Switzerland)
- स्विस राजनीतिक दलों की विशेषताएँ (Charactersitics of Swiss Political System)
- स्वित्जरलैण्ड के प्रमुख राजनीतिक दल : कार्यक्रम व संगठन (Major Political Parties of Switzerland : Programmes and Organisation)

6.4.4 चीनी दल प्रणाली (Chinese Party System)

- चीन में राजनीतिक दल (Political Parties in China)
- चीनी दलीय-प्रणाली की विशेषताएँ (Features of Chinese Party System)
- चीनी साम्यवादी दल की वास्तविक स्थिति (Actual Position of the Chinese Communist Party)

6.5 अपनी प्रगति जांचें (Check your progress)

6.6 सारांश (Summary)

6.7 सूचक शब्द (Key Words)

6.8 स्वयं मूल्यांकन हेतु प्रश्न (Self- Assessment Questions)

6.9 अपनी प्रगति की जांच करने के लिए उत्तर (Answers to check your progress)

6.10 सन्दर्भ ग्रन्थ/निर्देशित पुस्तकें (References / Suggested Readings)

6.1 उद्देश्य (Learning Objectives)

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् विद्यार्थी योग्य होंगे :-

1. राजनीतिक दल के अर्थ , परिभाषा और महत्त्व को समझने में ।
2. यू.के , यू.एस.ए.स्वित्जरलैण्ड और चीनी में राजनीतिक दलों की स्थिति और पार्टी की भूमिका का विवेचन करने में ।



6.2 प्रस्तावना (Introduction)

दल-प्रणाली किसी भी शासन व्यवस्था का आवश्यक अंग है। दलीय व्यवस्था ही वह ताना-बाना है जिसके चारों ओर राजनीतिक व्यवस्था गति करती है। लोकतन्त्र और तानाशाही शासन व्यवस्था वाले देशों में राजनीतिक दलों का बराबर महत्व है। लोकतन्त्रीय देशों में जहां राजनीतिक दल जनइच्छा की अभिव्यक्ति का साधन हैं, वहीं तानाशाही देशों में वे शासक वर्ग के हितों का सम्पादन करने वाले प्रभावशाली यन्त्र हैं। साम्यवादी देशों में भी दली-प्रणाली का उतना ही महत्व है, जितना भारत व अमेरिका जैसे लोकतन्त्रीय देशों में है। साम्यवादी देशों में तो व्यवहार में राजनीतिक दल ही सब कुछ है।

6.3 पाठ के आगे का मुख्य भाग (Further main body of the text)

6.3.1 राजनीतिक दल का अर्थ और परिभाषा (Meaning and Definition of Political Party)

राजनीतिक दल (Political party) लोगों का एक ऐसा संगठित गुट होता है जिसके सदस्य किसी साँझी विचारधारा में विश्वास रखते हैं या समान राजनैतिक दृष्टिकोण रखते हैं। यह दल चुनावों में उम्मीदवार उतारते हैं और उन्हें निर्वाचित करवा कर दल के कार्यक्रम लागू करवाने का प्रयास करते हैं। राजनैतिक दलों के सिद्धान्त या लक्ष्य प्रायः लिखित दस्तावेज के रूप में होता है। विभिन्न देशों में राजनीतिक दलों की अलग-अलग स्थिति व व्यवस्था है। कुछ देशों में कोई भी राजनीतिक दल नहीं होता। कहीं एक ही दल होता है। कहीं मुख्यतः दो दल होते हैं। किन्तु बहुत से देशों में दो से अधिक दल होते हैं। लोकतान्त्रिक राजनैतिक व्यवस्था में राजनैतिक दलों का स्थान केन्द्रीय अवधारणा के रूप में अत्यन्त महत्वपूर्ण है। राजनैतिक दल किसी समाज व्यवस्था में शक्ति के वितरण और सत्ता के आकांक्षी व्यक्तियों एवं समूहों का प्रतिनिधित्व करते हैं। वे परस्पर विरोधी हितों के सारणीकरण, अनुशासन और सामंजस्य का प्रमुख साधन रहे हैं। इस तरह से राजनैतिक दल समाज व्यवस्था के लक्ष्यों, सामाजिक गतिशीलता, सामाजिक परिवर्तनों, परिवर्तनों के अवरोधों और सामाजिक आन्दोलनों से भी सम्बन्धित होते हैं। राजनैतिक दलों का अध्ययन समाजशास्त्री और राजनीतिशास्त्री दोनों करते हैं, लेकिन दोनों के दृष्टिकोणों में पर्याप्त अन्तर है। समाजशास्त्री राजनैतिक दल को सामाजिक समूह मानते हैं जबकि राजनीतिज्ञ राजनीतिक दलों को आधुनिक राज्य में सरकार बनाने की एक प्रमुख संस्था के रूप में देखते हैं।

साधारण शब्दों में राजनीतिक दल एक ऐसा संगठन है जो सम्पूर्ण देश या समाज के व्यापक हित के सन्दर्भ में अपने सेवार्थियों के हितों को बढ़ावा देने के लिए निश्चित सिद्धान्तों, नीतियों और कार्यक्रम का समर्थन करता है और उन्हें कार्यान्वित करने के उद्देश्यसे राजनीतिक शक्ति प्राप्त करना चाहता है। राजनीतिक दल को अनेक विद्वानों ने निम्न प्रकार से परिभाषित किया है :—

मसलदान के अनुसार — “एक राजनीतिक दल उस स्वेच्छिक समूह को कहते हैं जो कुछ सामान्य राजनीतिक व सामाजिक सिद्धान्तों के आधार पर तथा कुछ सामान्य लक्ष्यों और आदर्शों की पूर्ति के लिए शासन चलाने का प्रयत्न



करता है तथा अपने सदस्यों को सत्तारूढ़ करने की चेष्टा करता है और उसके लिए चुनाव तथा अन्य साधनों का भी प्रयोग करता है।”

फ्रेडरिक के अनुसार – “एक राजनीतिक दल उन व्यक्तियों का समूह है जो अपने नेताओं के लिए शासकीय नियन्त्रण प्राप्त करने अथवा उसे बनाए रखने के उद्देश्यों से स्थायी रूप से संगठित होते हैं और आगे अनुशासित रहकर लाभ प्राप्त करने के प्रयास करते हैं।”

मैकाइवर के अनुसार – “राजनीतिक दल वह समुदाय है जिसका संगठन किसी भी विशेष सिद्धान्त या नीति के समर्थन के लिए हुआ और वह संविधानिक साधनों द्वारा सरकार बनाने के लिए इस सिद्धान्त या नीति का सहारा लेता हो।”

गिलक्राइस्ट के अनुसार – “राजनीतिक दल व्यक्तियों के उस समुदाय को कहते हैं जिसके सदस्यों के राजनीतिक विचार एक से होते हैं और जो एक राजनीतिक इकाई की तरह कार्य करके सरकार पर नियन्त्रण करने की चेष्टा करते हैं।”

मक्स वेबर के अनुसार—“राजनीतिक दल स्वेच्छा से बनाया हुआ वह संगठन है जो शासन शक्ति को अपने हाथ में लेना चाहता है और इसको हस्तगत करने के लिए प्रचार तथा आन्दोलन का सहारा लेता है। इस शासन शक्ति को हाथ में लेने के पीछे एक ही उद्देश्य हो सकता है जो या तो वस्तुनिष्ठ लक्ष्य की प्राप्ति है या व्यक्तिगत स्वार्थ या दोनों हैं।”

गैटल के अनुसार—“राजनीतिक दल नागरिकों का वह समुदाय है जो एक राजनीतिक इकाई के रूप में कार्य करता है और अपने मतदान की शक्ति का प्रयोग करके सरकार को नियन्त्रित करना तथा अपनी सामान्य नीति की पूर्ति करना चाहता है।”

लीकाक के अनुसार—“राजनीतिक दल संगठित नागरिकों के उस समुदाय को कहते हैं जो एक जगह मिलकर एक राजनीतिक इकाई के रूप में कार्य करते हैं। उनके विचार सार्वजनिक प्रश्नों पर एक जैसे होते हैं और वे सामान्य उद्देश्य की पूर्ति के लिए मतदान की शक्ति का प्रयोग करके सरकार पर अपना आधिपत्य स्थापित करना चाहते हैं।”

रेने तथा केन्डल के अनुसार—“राजनीतिक दल संगठित स्वायत्त समूह है जो सरकार की नीतियों एवं कर्मचारियों पर अन्तःनियन्त्रण प्राप्त करने की आशा में चुनाव में उम्मीदवारों का नामांकन करता है और चुनाव लड़ता है।”

राबर्ट सी० बोन के अनुसार—“राजनीतिक दल व्यक्तियों का ऐसा संगठन है जो अपने उद्देश्यों को सरकार पर औपचारिक नियन्त्रण प्राप्त करके, समाज में मूल्यों के अधिकारिक वितरण में प्राथमिकता के प्रकरण बनाकर, प्राप्त करता है।”



पालोम्बरा के अनुसार—“राजनीतिक दल एक औपचारिक संगठन है जिसका स्व-चेतन व प्रमुख उद्देश्य ऐसे व्यक्तियों कोसार्वजनिक पदों पर पहुंचाना तथा उन पर नियन्त्रण बनाए रखना है जो अकेले या किसी से मिलकर शासन तन्त्र पर अपनानियन्त्रण करेंगे।”

कोलमेन के अनुसार—“राजनीतिक दल वे समुदाय हैं जो औपचारिक रूप से इस उद्देश्य से संगठित होते हैं कि उन्हें वास्तविकअथवा सम्भावित सम्प्रभु राज्य सरकार की नीति और उसके सेवीवर्ग के ऊपर वैधानिक नियन्त्रण प्राप्त करना और बनाए रखनाहै, चाहे अकेले या मिलकर या वैसे ही अन्य समुदायों के साथ चुनाव प्रतियोगिता करके।”

इस प्रकार राजनीतिक दल के बारे में अनेक विद्वानों ने अलग-अलग परिभाषाएं दी हैं जो राजनीतिक दल के सिद्धान्त, संगठन, कार्यक्रम, प्रकृति आदि पर प्रकाश डालती हैं।

6.3.2 राजनीतिक दल की विशेषताएं(Features of Political Party)

1. राजनीतिक दल विशिष्ट सिद्धान्तों के आधार पर संगठित व्यक्तियों का समूह है।
2. राजनीतिक दल बहुत सारे व्यक्तियों का स्थायी संगठन है।
3. राजनीतिक दल अपने सदस्यों के हितों को ध्यान में रखते हुए समाज के व्यापक हित को बढ़ावा देना चाहता है।
4. राजनीतिक दल के सदस्यों में सामान्य लक्ष्यों व सिद्धान्तों पर आम सहमति पाई जाती है।
5. राजनीतिक दल का कार्यक्रम स्पष्ट होता है।
6. राजनीतिक दल अपने सिद्धान्तों, नीतियों व कार्यक्रम को कार्यान्वित करने के लिए राजनीतिक शक्ति प्राप्त करना चाहता है।
7. राजनीतिक दल राजनीतिक सत्ता प्राप्त करने के लिए चुनावों में भाग लेता है।
8. राजनीतिक दल अपने उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए शान्तिपूर्ण तथा संविधान व कई बार असंविधानिक साधन अपनाता है।
9. राजनीतिक दल राजनीतिक सत्ता की प्राप्ति के बाद अपने सिद्धान्तों को व्यवहारिक रूप देना शुरू कर देता है।

6.3.3 लोकतन्त्र में राजनीतिक दलों की भूमिका व कार्य (Role and Function of Political Parties in Democracy) राजनीतिक दलों के कार्य व भूमिकाएं निम्नलिखित हैं :—

जनमत तैयार करना (To mould Public Opinion) :— लोकतन्त्रीय देशों में राजनीतिक दल ही जनमत का निर्माण करते हैं। साधारण जनता को तो देश की समस्याओं का ज्ञान नहीं होता, राजनीतिक दल उन समस्याओं का स्पष्टीकरण करके जनता को अपने पक्ष में करने के प्रयास करते रहते हैं। इससे जनता धीरे-धीरे संगठित होकर मजबूत जनमत का निर्माण कर देती है।



जनता की राजनीतिक शिक्षा देना (To Impart Political Education to the Citizen) :- राजनीतिक दल लोगों में राजनीतिक चेतना के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। इसके लिए वे जनता को राजनीतिक रूप से शिक्षित करने का प्रयास करते हैं। जनता से देश की समस्याओं की जानकारी देते चुनावों के समय वे अपना घोषणापत्र लेकर जनता के बीच में जाते हैं। इससे जनता को राजनीतिक समस्याओं का ज्ञान भी हो जाता है और राजनीतिक दलों की नीतियों और कार्यक्रमों का ज्ञान भी प्राप्त हो जाता है। इस तरह जनता राजनीतिक रूप से शिक्षित हो जाती है।

जनता तथा सरकार के बीच कड़ी का कार्य करना (To serve as a link between the people and the Government) :- राजनीतिक दल जनता और सरकार के मध्य एक कड़ी का काम करते हैं। जिस दल की सरकार होती है, वह जनता में सरकार की नीति का प्रचार करता है और जनता को सरकार के साथ सहयोग करने की अपील भी करता है। राजनीतिक दल निर्वाचक समूह ही जानकारी देने, प्रशिक्षित करने और सक्रिय बनाने का कार्य करते हैं जिससे जनता में सरकार की नीतियों के प्रति जागरूकता पैदा होती है। वे नीतियों के बारे में जनता को ज्ञान देने के साथ-साथ जनता की भावनाएं और सरकार तक पहुंचाते हैं और उन्हें दूर करवाने का प्रयास भी करते हैं।

चुनाव लड़ना व सरकार बनाना (To fight election and to form Government) :- लोकतन्त्र में जनता अपने प्रतिनिधियों के आधार पर ही शासन करती है। चुनावों में जीतकर उनका एक ही ध्येय होता है – सत्ता व शासन पर नियन्त्रण। जिस दल को चुनावों में बहुमत प्राप्त होता है, वही सरकार बनाता है और जनता के साथ किए गए वायदे को पूरा करने के लिए व्यावहारिक कार्यक्रम प्रस्तुत करता है।

सरकार की आलोचना करना (To oppose the Government) :- संसदीय शासन प्रणाली में एक दल तो सरकार चलाता है और दूसरा सरकार की नीतियों पर नजर रखता है ताकि गलत कार्य करने की दशा में सरकार की आलोचना की जा सके। विरोधी दल की आलोचना रचनात्मक होने के कारण सत्तारूढ़ दल जनता के प्रति अपने उत्तरदायित्व का सदा ध्यान रखता है। संसदीय सरकार में कार्यपालिका का विधानमण्डल के प्रति उत्तरदायी होना विरोधी दल को महत्वपूर्ण बना देता है। यदि अविश्वास का मत पारित हो जाए तो सत्तारूढ़ सरकार का स्थान विरोधी दल भी ले सकता है। इसलिए विरोधी दल की उपस्थिति लोकतन्त्र को मजबूत आधार प्रदान करती है तथा इससे सरकार की निरंकुशता पर रोक लग जाती है।

6.3.4 दलीय-व्यवस्थाओं का वर्गीकरण

आधुनिक समय में दल-व्यवस्थाओं का राजनीतिक समाज में महत्वपूर्ण स्थान है। विश्व का शायद ही कोई ऐसा देश हो जहां दल नहीं है। विश्व के सभी देशों में किसी न किसी रूप में दलीय प्रणाली अवश्य विद्यमान है। राजनीतिक व्यवस्था के स्वरूप व संरचना तथा राजनीतिक दलों की प्रकृति, उद्देश्यों, संरचना आदि के आधार पर



विश्व में अनेक दलीय—प्रणालियां विद्यमान हैं। अनेक विद्वानों ने राजनीतिक दलों की विशेषताओं, दलों के पारस्परिक सम्बन्ध, दल का इतिहास, राजनीतिक व्यवस्था की संरचना, सामाजिकसंरचना व संस्कृति, दलों की विचारधारा, दलों की संख्या, दलों के संगठन आदि के आधार पर दलीय—व्यवस्थाओं का अनेक भागों में वर्गीकरण किया है। आज अनेक विद्वानों ने दलों की संख्या के आधार पर दलीय—व्यवस्थाओं को निम्नलिखित तीन भागों में बांटा गया है:—

- एकदलीय प्रणाली (Single Party System)
- द्विलीय प्रणाली (Bi-Party System)
- बहु-दलीय प्रणाली (Multi-Party System)
- **एकदलीय प्रणाली (Single Party System):**— एकदलीय प्रणाली ऐसी राजनीतिक व्यवस्था है जिसमें शासन का सूत्र एक ही राजनीतिक दल के हाथों में रहे। कर्टिस ने इसको परिभाषित करते हुए कहा है—“एकदलीय पद्धति की यह विशेषता है कि इसमें सत्तारूढ़ दल का या तो सभी अन्य गुटों पर प्रभुत्व होता है जो सभी राजनीतिक विरोधों को अपने में समा लेने का प्रयास करता है, या वह बहुत ही अतिवादी स्थिति में उन सभी विरोधीगुटों का दमन कर देता है जिन्हें प्रति क्रांतिकारी या शासन के प्रति तोड़फोड़ करने वाला दल समझा जाता है, क्योंकि उनमें राष्ट्रीय इच्छा को विभाजित करने वाली शक्तियां होती हैं।” इस व्यवस्था के अन्तर्गत केवल एक ही दल को कार्य करने की अनुमति प्राप्त होती है और सरकार पर उसी का वर्चस्व लम्बे समय तक भी बना रह सकता है। यह व्यवस्था सर्वाधिकारवादी और लोकतन्त्रीय दो प्रकार की होती है। भारत में 1967 तक लोकतन्त्रीय व्यवस्था का प्रचलन रहा। अन्य दलों के होते हुए भी वहां पर केन्द्रसरकार स्वतन्त्रता के बाद 1967 तक कांग्रेस की ही रही। इस प्रकार की दल व्यवस्थाएं भारत, जापान, मैक्सिको, कीनिया, ब्राजील आदि देशों में हैं। इसके विपरीत सर्वाधिकारवादी एक-दलीय व्यवस्थाएं इटली, जर्मनी, पुर्तगाल, चीन, सोवियत संघ, पोलैण्ड, हंगरी, वियतनाम, उत्तरी कोरिया, क्यूबा, पूर्वी जर्मनी, बुल्गारिया, चौकोस्लोवाकिया, अल्बानिया, स्पेन आदि देशों में रही हैं और कुछ में तो अब भी विद्यमान हैं।

एकदलीय प्रणाली के गुण—विभिन्न दलों के संघर्ष के अभाव में यह राष्ट्रीय एकता को कायम रखती है, क्योंकि सभी नागरिक एक ही विचारधारा से बंधे रहते हैं। एक ही दल की कार्यपालिका तथा मन्त्रिमण्डल होने के कारण सह स्थायी सरकार की जनक है। किसी दूसरे दल के प्रभाव के बिना इसमें सुदृढ़ व मजबूत शासन की स्थापना होती है। लम्बे समय तक एक ही सरकार के रहने के कारण इसमें दीर्घकालीन योजनाओं को लागू करना संभव है। सरकार के सदस्यों में पारस्परिक विरोध न होने के कारण शासन के निर्णय शीघ्रता से लिए जाते हैं जिससे शासन में दक्षता आती है। ये गुटबन्दी की कमियों से सर्वथा दूर है।

एकदलीय प्रणाली के दोष— यह प्रणाली नागरिकों की स्वतंत्रता का हनन करने वाली होने के कारण अलोकतांत्रिक है। यह प्रणाली निरंकुशता की जनक है। इसमें सभी वर्गों को प्रतिनिधित्व नहीं मिल सकता। इसमें



मनुष्यों के व्यक्तित्व का विकास नहीं हो सकता। यह लोगों को राजनीतिक शिक्षा देने में असमर्थ है। इसमें विरोधी दल को सकारात्मक भूमिका की अनुपस्थिति है। इसमें चुनाव एकमात्र ढोंग है। यह बहुमत पर आधारित प्रणाली नहीं है।

उपरोक्त विवेचन के बाद कहा जा सकता है कि एकदलीय प्रणाली एक तरह से तानाशाही शासन व्यवस्था की ही परिचायक है। जिन देशों में यह विद्यमान है, वहां नागरिकों की स्वतन्त्रता का हनन हो रहा है, अधिकसारां के नाम पर नागरिकों पर कर्तव्य थोपे जा रहे हैं। इस प्रणाली की तानाशाही ने ही सोवियत संघ को बिखेर दिया था। तानाशाही के बल पर शासन को चलाना और वैधता बनाए रखने का प्रयास कदापि सफल नहीं हो सकता। जिस देश में जनतन्त्रीय भावनाओं के साथ खिलवाड़ किया जाता है, वहांपर थोड़ी सी भी ढील मिल जाने पर जनता उस शासन का तखता ही पलट देती है। निरन्तर शक्ति बनाए रखना ही इस शासनप्रणाली के अस्तित्व का एक मात्र आधार है। विश्व में चीन ही एकमात्र ऐसा देश है जहां यह प्रणाली लम्बे समय से कार्य कर रही है। आज आइवरी कोस्ट, केन्या, मलावी, जांबिया, लाइबेरिया, गिनी, सोवियत संघ, घाना आदि देशों में इस शासन प्रणाली के विनाशका उदाहरण हमारे सामने यह तर्क प्रस्तुत करता है कि जनसहभागिता के अभाव में एकदलीय प्रणालियां अधिक दिन तक चलने वाली नहीं हैं, देर-सवेर इनका अन्त अवश्यम्भावी है।

- **द्वि-दलीय प्रणाली (Bi-Party System) :-** द्वि-दलीय राजनीतिक व्यवस्था एक ऐसी व्यवस्था है जिसमें शासन का सूत्र दो दलों के हाथ में रहता है। ये दोनों राजनीतिक दल इतने सशक्त होते हैं कि किसी तीसरे दल को सत्ता में नहीं आने देते। इन दो दलों के अतिरिक्त अन्य दलों की राजनीतिक व्यवस्था में कोई महत्वपूर्ण भूमिका नहीं होती। ब्रिटेन तथा अमेरिका द्वि-दलीय व्यवस्था के सर्वोत्तम उदाहरण हैं। ब्रिटेन में लम्बे समय से कंजर्वेटिव पार्टी तथा लेबर पार्टी ही कार्यरत है। इसी तरह अमेरिका में लम्बे समय से दो ही दलों दृष्टि डेमोक्रेटिक तथा रिपब्लिकनका वर्चस्व है। इंग्लैण्ड में साम्यवादी दल तथा उदारवादी दल भी हैं, लेकिन उनका कोई महत्व नहीं है, अमेरिका और ब्रिटेन में इन दो दलों को छोड़कर कभी किसी अन्य दल को सरकार बनने का अवसर नहीं मिला है। इनमें से एक दल तो सत्तारूढ़ रहता है, जबकि दूसरा दल अल्पमत में होने के कारण विरोधी दल की भूमिका अदा करता है। राजनीतिक शक्ति का द्वि-दलीय विभाजन होने के कारण ही इसे द्वि-दलीय प्रणाली कहा जाता है। बेल्जियम, आयरलैण्ड तथा लक्जमबर्ग, पश्चिमी जर्मनी, कनाडा आदि देशों में भी द्वि-दलीय व्यवस्थाएं ही प्रचलित हैं।

द्वि-दलीय प्रणाली के गुण – इसमें सरकार स्थिर होती है, क्योंकि इसमें मन्त्रिमण्डल और विधानमण्डल दोनों में एक ही दल का बहुमत होता है। कठोरदलीय अनुशासन के कारण न तो मन्त्रिमण्डल के विरुद्ध अविश्वास प्रस्ताव पास किया जा सकता है और न ही समय पूर्व चुनाव कराए जा सकते हैं।



इसमें सरकार बहुमत पर आधारित होने के कारण अधिक दृढ़ या शक्तिशाली होती है। इसी कारण वह अपनी नीति को आसानी से लागू कर सकती है। बिलों पर वाद-विवाद करते समय मन्त्रिमण्डल को बहुमत के कारण अधिक कठिनाई से बिन पासकरवाने नहीं पड़ते। प्रत्येक बिल सरलता से पास हो जाता है।

इसमें स्थायी सरकार होने के कारण दीर्घकालीन योजनाएं लागू की जा सकती हैं और नीति को भी प्रभावी रखा जा सकता है। इसमें सरकार अच्छे या बुरे शासन के लिए पूर्ण रूप से उत्तरदायी ठहराया जा सकता है, क्योंकि मन्त्रिमण्डल में एक ही दल के सदस्य होते हैं। अतः यह प्रणाली उत्तरदायी सरकार को जन्म देती है।

यह जनमत की भावना पर आधारित प्रणाली है। इसमें जनता प्रत्यक्ष रूप से सरकार का चुनाव करती है। जनता की इच्छा के अनुसार ही कोई राजनीतिक दल सत्तारूढ़ होता है। स्पष्ट बहुमत के कारण इसमें सरकार बनाना आसान होता है। इसी कारण यह बहुदलीय प्रणाली की तरह भ्रष्ट तरीकों से सरकार बनाने के दोषों से जनता को राजनीतिक शिक्षा भी मिलती है। इसमें संगठित विरोधी दल होता है जो सरकार की रचनात्मक आलोचना करके सरकार को जनता की इच्छा का ध्यान दिलाता रहता है। इससे सरकार जन-इच्छा के प्रति जागरूक बनी रहती है। इसमें निरंकुशता की भावना नहीं है। शासन का संचालन जनतंत्रीय भावनाओं को ध्यान में रखकर ही किया जाता है।

द्वि-दलीय प्रणाली के दोष— इसमें मन्त्रिमण्डल की तानाशाही की स्थापना हो जाती है, क्योंकि विधानमण्डल में मन्त्रिमण्डल का बहुमत रहने के कारण हर बिल को पास कराने में सुविधा रहती है। इसमें विधानमण्डल मन्त्रिमण्डल के हाथों का खिलौना बनकर रह जाता है, क्योंकि बहुमत के नशे में मन्त्रिमण्डल विधानमण्डल पर हर अनुचित व उचित दबाव डाल सकता है। इसमें मतदाताओं की स्वतन्त्रता सीमित हो जाती है, क्योंकि उनके सामने दो ही दल होते हैं, जिनमें से एक को ही वे चुन सकते हैं। यद्यपि इसमें सभी वर्गों को उचित प्रतिनिधित्व नहीं मिलता, क्योंकि जटिल सामाजिक संरचना में जन-प्रतिनिधित्व के लिए कई दलों का होना आवश्यक होता है।

इसमें सारा देश दो परस्पर विरोधी गुटों या विचारधाराओं में बंट जाता है, जिससे राष्ट्रीय एकता को खतरा उत्पन्न हो सकता है।

इस प्रकार कहा जा सकता है कि इस प्रणाली में निर्वाचकों की स्वतन्त्रता सीमित हो जाती है और संसद की स्थिति मन्त्रिमण्डल के हाथों में एक खिलौने जैसी हो जाती है। लेकिन फिर भी यह प्रणाली सर्वोत्तम मानी जाती है। संसदीय व अध्यक्षात्मक सरकारों की सफलता के लिए इसका होना बहुत आवश्यक है। स्थिर प्रशासन व उत्तरदायी सरकार के रूप में आज यह प्रणाली अमेरिका और ब्रिटेन में सफलतापूर्वक कार्य कर रही है। अतः निःसंदेह रूप से यह प्रणाली बहुत ही महत्वपूर्ण है।

- **बहुदलीय प्रणाली (Multi-Party System)** :- जिस देश में दो से अधिक राजनीतिक दल ऐसी स्थिति में हों कि चुनाव में उनमें से किसी को स्पष्ट बहुमत न मिल पाए, वहां बहुदलीय प्रणाली मिलती है।



इससे सरकार एक दल की भी बन सकती है और कई दलों को मिलाकर सांझा सरकार भी बन सकती है। सांझा सरकार बनने का प्रमुख कारण यह होता है कि इसमें किसी भी दल को स्पष्ट बहुमत प्राप्त नहीं होता, क्योंकि वोट विभिन्न हितों का प्रतिनिधित्व बल करने वाली पार्टियों में वितरित हो जाते हैं। ऐसी दल प्रणाली विश्व के अनेक देशों में पाई जाती हैं। भारत इसका सर्वोत्तम उदाहरण है। यह दल प्रणाली—स्थायी और अस्थायी दो तरह की होती है। स्थायी बहुदलीय प्रणाली वह है जिसमें अनेक दल सत्ता के लिए संघर्ष तो करते हैं, लेकिन उनका ध्येय सरकार चलाने के साथ-साथ यह भी रहता है कि राजनीतिक व्यवस्था में अस्थिरता न आए। स्विट्जरलैंड में ऐसी ही प्रणाली है। वहां पर सोशल डेमोक्रेट्स, रेडिकल डेमोक्रेट्स, लिबरल डेमोक्रेट और साम्यवादी दल राजनीतिक विघटन की स्थिति पैदा किए बिना ही सत्ता प्राप्ति का संघर्ष करते हैं। इसके विपरीत अस्थायी बहुदलीय प्रणाली में राजनीतिक अस्थिरता की राजनीतिक दलों को कोई चिन्ता नहीं होती है, उनका लक्ष्य तो सत्ता प्राप्त करना है। भारत तथा फ्रांस में ऐसी ही प्रणालियां हैं।

बहुदलीय प्रणाली के गुण— इसमें सभी वर्गों को प्रतिनिधित्व मिल जाता है, क्योंकि विभिन्न वर्गों के हितों का प्रतिनिधित्व करने वाले अनेक राजनीतिक दल राजनीतिक व्यवस्था में विद्यमान रहते हैं। इसमें जन-साधारण को विचारों की स्वतंत्रता प्राप्त होती है और राष्ट्र दो विरोधी गुटों या विचारधाराओं में नहीं बंटता। इसमें मतदाताओं को चुनाव की स्वतंत्रता रहती है। वे किसी एक दल को अच्छा मानकर उसका समर्थन कर सकते हैं।

इसमें मन्त्रिमण्डल की तानाशाही स्थापित नहीं होती, क्योंकि कई बार कई दल मिलाकर ही सरकार बनती है, जिसका संसद में मिला-जुला ही बहुमत रहता है। इसमें विधानमण्डल मन्त्रिमण्डल के हाथों का खिलौना नहीं बनता, क्योंकि इसमें मन्त्रिमण्डल को विधानमण्डल में एक दल के बहुमत पर निर्भर न रहकर विधानमण्डल के ही बहुमत पर निर्भर रहना पड़ता है। इसमें सरकार जनता के प्रति उत्तरदायी होती है। यदि सरकार जनहित विरोधी कार्य करती है तो वह समय से पूर्व भी टूट सकती है। इसमें स्थानीय स्वशासन की भावना का विकास होता है।

इस प्रणाली का स्वरूप प्रजातांत्रिक है। इसमें राष्ट्रीय सरकार की परिकल्पना सम्भव है।

बहुदलीय प्रणाली के दोष— इसमें सरकार कई दलों से मिलकर बनी होने के कारण निर्बल और अस्थायी होती है, जो किसी भी समय टूट सकती है। इसमें सरकार दीर्घकालीन योजनाओं को लागू नहीं कर सकती और न ही दृढ़ नीतियों का निर्माण करके उन्हें लागू कर सकती है। इसमें सरकार का निर्माण करने में काफी मुसीबतें आती हैं। सरकार बनाने के लिए विभिन्न राजनीतिक दलों में जो सौदेबाजी होती है, वह राजनीतिक भ्रष्टाचार का ही उन्नत रूप है। इसमें दल-बदली को बढ़ावा मिलता है और अनुशासनहीनता बढ़ती है। इसमें प्रायः संगठित विरोधी दल का अभाव रहता है। इसमें विभिन्न दलों के सदस्यों को मिलाकर मन्त्रिमण्डल का निर्माण होता है जो दल शासन का निर्माण नहीं कर सकता। इसमें शासनाध्यक्ष या प्रधानमंत्री की स्थिति बहुत कमजोर होती है। किसी एक दल द्वारा समर्थन वापिस ले लेने पर सरकार गिर जाती है। सांझा-सरकार होने के कारण इसमें उत्तरदायित्व का अभाव पाया



जाता है। यह अवसरवादिता और सिद्धान्तहीनता की जनक है। यह अस्थिर सरकार की जनक होने के कारण देश पर चुनावी बोझ लादने वाली है।

उपरोक्त विवेचन के बाद कहा जा सकता है कि बहुदलीय प्रणाली किसी भी देश में अधिक सफल नहीं रही है। निर्बल व अनुत्तरदायी सरकार के रूप में इसकी निरन्तर आलोचना होती रही है। इसमें कभी भी स्थिर सरकारों का निर्माण नहीं हुआ है। यद्यपि भारतमें वर्तमान वाजपेयी सरकार ने अपना पूरा कार्यकाल निकाला है। सांझी-सरकार होते हुए भी ऐसी स्थिरता देना अपने आप में एक अनूठा उदाहरण है। लेकिन फ्रांस में 1870 से 1914 तक 88 सरकारों का निर्माण हुआ। बहुदलीय प्रणाली का इतिहास बताता है कि सांझा सरकारें कभी अधिक सफल नहीं रही हैं। ऐसे अवसर बहुत ही कम आए हैं जब बहुदलीय प्रणाली में किसी एक दल को स्पष्ट बहुमत मिलने पर सरकार बनाई गई हो। भारत में 1967 तक ही बहुदलीय प्रणाली अधिक सफल रही है। आज कम ही ऐसे देश हैं जहां बहुदलीय प्रणाली के अन्तर्गत स्थिर सरकारों का निर्माण हुआ है। यदि बहुदलीय प्रणाली के दोषों में से कुछ का भी निवारण कर दिया जाए तो यह प्रणाली स्थिर सरकारों के मार्ग पर चल सकती है। भारतीय संसद ने हाल ही में दल-बदल विरोधी कानून पास करके निर्धारित अवधि तक किसी भी विधायक को विधानमण्डल में दूसरे दल का प्रतिनिधित्व करने पर रोक लगा दी है। इससे सांझा सरकार का आधार मजबूत होने के प्रबल आसार हैं और बहुदलीय प्रणाली की सफलता के भी। लेकिन वर्तमान में तो यह अस्थिर सरकारों की जनक ही है।

6.3.5 दल-प्रणाली का मूल्यांकन

दलीय-व्यवस्था का उपरोक्त विवरण इस बात की तरफ हमारा ध्यान आकृष्ट करता है कि प्रजातन्त्रीय देशों में तो दल-प्रणाली का स्वरूप लोकतन्त्रीय है, लेकिन सर्वाधिकारवादी देशों में राजनीतिक दल अलोकतांत्रिक तरीके से काम करते प्रतीत होते हैं। कुछ विद्वानों ने तो लोकतन्त्र सहित सभी राजनीतिक व्यवस्थाओं के संचालन के लिए राजनीतिक दलों के महत्व पर विचार किया है। मुनरो ने तो दलीय शासन को ही लोकतन्त्रीय शासन कहा है। मार्क्सवादियों की दृष्टि में दलीय प्रजातन्त्र विकृत प्रजातन्त्र है। सर्वोदयी विचारधारा दल विहीन प्रजातन्त्र की बात करती है। इस तरह दल-प्रणाली प्रशंसा उसके अन्तर्निहित गुणों के आधार पर की जाती है और आलोचना उसके दोषों के आधार पर।

दल प्रणाली के गुण—

लोकतन्त्र की रक्षक— लोकतन्त्र में दलों का बहुत महत्व होता है। जनता को राजनीतिक शिक्षा देने व उनमें राजनीतिक चेतना का विकास करने, जनता को सार्वजनिक नीति के निर्माण में भागीदार बनाने, जनमत का निर्माण करने, चुनाव लड़ने, सरकार बनाने तथा किसी दल के रूप में सरकार की आलोचना करने का कार्य लोकतन्त्र में राजनीतिक दल ही करते हैं। यदि राजनीतिक दल न हों तो यह पता लगाना कठिन हो जाएगा कि किस व्यक्ति को विधानमण्डल में बहुमत प्राप्त है। यदि बहुमत का पता न होगा तो राष्ट्रपति सरकार बनाने के लिए किसे



आमन्त्रित करेगा। इसलिए लोकतन्त्र के मूल सूत्र की दृष्टि से कार्य करने के लिए सरकार को राजनीतिक दलों की ही सहायता लेनी पड़ती है। लीकॉक का कथन सही है—“लोकतन्त्र और दल प्रणाली में कोई विरोध नहीं है, वरन् उसी से लोकतन्त्र सम्भव है।” अतः सरकार को व्यवहारिक रूप देकर लोकतन्त्र की रक्षा राजनीतिक दल ही करते हैं।

दृढ़ सरकार की स्थापना में सहायक — राजनीतिक दलमतदाताओं को संगठित करके चुनावों में बहुमत प्राप्त करके सरकार बनाते हैं। जिस दल की सरकार होती है, वह सदा बहुमतको बनाए रखने के लिए जन-भावना का ख्याल रखता है। जब सरकार को पता होता है कि उसे विधानमण्डल में बहुमतप्राप्त है तो वह निर्भय होकर नीतियों का निर्माण करते उन्हें लागू कर सकती है। यदि जनमत बिखरा हुआ हो और उसे संगठित करने वाले राजनीतिक दल न हों तो सरकार बनाना और चलाना दोनों कठिन होता है। दलीय अनुशासन ही सुदृढ़ सरकारका आधार है। राजनीतिक दल ही सरकार को शक्ति प्रदान करते हैं और उसकी वैधता की परीक्षा चुनावों में करा देते हैं। वास्तव में राजनीतिक दल ही जनमत को संगठित करके स्थिर सरकार को जन्म देते हैं।

जनमत का निर्माण — लोकतन्त्र में बहुमत का शासन होता है। इसलिए जनमत को संगठित करना बहुत जरूरी होता है। इस संगठित जनमत का निर्माण करने में राजनीतिक दल ही बहुत महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। इसके लिए वे जनता के बीच में विभिन्न कार्यक्रम लेकर जाते हैं। पत्र-पत्रिकाएं छपवाते हैं, नए नेताओं की भर्ती करते हैं, कर्मठ सदस्यों को संगठन में लेते हैं, विचार-गोष्ठियों का आयोजन करते हैं, सरकार की नीतियों में जनता को परिचित करवाते हैं और सरकार की गलत नीतियों पर आलोचना करने के लिए जनमत की सहायता लेते हैं। इस तरह वे बिखरी हुई जनताको सामान्य सिद्धान्त पर सहमति के निकट लाकर रख देते हैं।

सरकार पर नियन्त्रण — लोकतन्त्रीय देशों में राजनीतिक दलों का भविष्य लोकमत पर टिका होता है। इसलिए वे सरकार की समस्त गतिविधियों पर नजर रखते हैं। विरोधी दल के रूप में दल ही सरकार की निरंकुशता रोकते हैं। सरकार की गलत नीतियों की आलोचना करके वे सरकार को चेता देते हैं और सरकार की मनमानी नहीं करने देते हैं। संसद सत्र के दौरान राजनीतिक दलों के द्वारा ही सरकार की गलत नीतियों पर हंगामा किया जाता है और उनमें बदलाव लाने के लिए बाध्य भी कर दिया जाता है। भारत में सांझा-सरकार होने के कारण इस नियन्त्रण में कुछ कमी अवश्य आ जाती है, क्योंकि संगठित विरोधी दल का प्रायः अभाव ही रहता है। लेकिन यह बात तो सत्य है कि लोकतन्त्र में प्रत्येक राजनीतिक दल जनता के भावी कोप से बचने के लिए जनविरोधी कार्यों से दूर ही रहता है।

जनता को राजनीतिक शिक्षा देकर, राजनीतिक चेतना पैदा करना — राजनीति दल जनता की उदासीनता दूर करके उसमें सरकार के प्रति रुचि पैदा करते हैं। इसके लिए जनता के बीच में जाते हैं और आम जनता का ध्यान राष्ट्रीय समस्याओं की तरफ खींचते हैं। सरकार की नीति पर जन-सहमति प्राप्त करने के लिए वे नीति पर



अपने तर्क रखते हैं। इसके लिए वे जनसम्पर्क के साधनोंका भी प्रयोग करते हैं। चुनावी प्रचार के द्वारा राजनीतिक दल आम जनता को भी राजनीति में जोड़ लेते हैं। इससे लोगोंमें देश की समस्याओं के प्रति चिन्ता उत्पन्न होती है और राजनीतिक चेतना का विकास होता है।

जनता और सरकार के बीच कड़ी का कार्य करना – राजनीतिक दल जनता और सरकार को जोड़ते हैं। सत्तारूढ़ दल जनता को अपने पक्ष में करने के लिए अपनी नीतियों की प्रशंसा करता है और जनता को सरकार का सहयोग करने की अपील करता है। अपनी नीतियों को जनता तक पहुंचाने के साथ-साथ वे जनता की समस्याओं को भी सरकार तक पहुंचाते हैं और दूर करवाने के प्रयास भी करते हैं। एकात्मक सरकारमें केन्द्रीय सरकार को प्रादेशिक समस्याओं से राजनीतिक दल ही परिचित कराते हैं। इस तरह राजनीतिक दल ही जनता और सरकार को जोड़ते हैं।

राष्ट्रीय एकता की भावना पैदा करना – लावेल का कहना है कि राजनीतिक दल विचारों के व्यापारी हैं। एक दल में अनेक धर्मों, भाषाओं, वर्गों, जातियों के लोग होते हैं। साथ रहकर कार्य करने से उनमें आपसी एकता बढ़ती है और पारस्परिक द्वेष की भावना का अन्त होता है। जो दल आर्थिक और राजनीतिक आधार पर बने होते हैं उनमें राष्ट्रीय एकता उत्पन्न करने की शक्ति बहुत ज्यादा होती है। समान राजनीतिक और आर्थिक समस्याओं को लेकर आन्दोलन करने से राष्ट्रीय एकता मजबूत होती है।

सामाजिक और आर्थिक सुधार – राजनीतिक दल राजनीतिक समस्याओं के साथ-साथ सामाजिक व आर्थिक समस्याओं के सुधार के प्रयास भी करते हैं। राजनीतिक दलों का ध्येय आधुनिकीकरण को क्रियान्वित करना होता है। इसके लिए वे परम्परागत मूल्यों को छोड़ने का प्रयास करना चाहते हैं और प्रचलित गलत रीति-रिवाजों को समाप्त करना चाहते हैं। भारत में छुआछूत के विरुद्ध कांग्रेस ने ही जोरदार आवाज उठाई थी। जाति-प्रथा, जमींदारी प्रथा, दहेज प्रथा, नारी शिक्षा, नारी की स्वतन्त्रता आदि समस्याओं पर राजनीतिक दलों ने ही आन्दोलन चलाए हैं।

कार्यपालिका तथा विधायिका में सहयोग पैदा करना – गिलक्राइस्ट का कहना है कि “दलीय-व्यवस्था ने ही अमेरिकन संविधान की जटिलता को तोड़ा है।” इसका तात्पर्य यह है कि अमेरिका में शक्ति पृथक्करण के कारण कार्यपालिका और विधायिका स्वतन्त्र शक्तियों की स्वामी होने के कारण अपने-अपने क्षेत्रों में सर्वोच्च हैं। इससे प्रशासनिक एकरूपता का ह्रास होता है। अमेरिका में कार्यपालिका और विधायिका को साथ चलकर कार्य करने के लिए राजनीतिक दलों ने ही तैयार किया है। दलों की समन्वयकारी भूमिका सरकार की सफलता के लिए आवश्यक मानी जाती है। कार्यपालिका और विधायिका का आपसी सहयोग ही अच्छे शासन का आधार है। संसदीय सरकार में भी एक दल का विधायिका व मन्त्रिमण्डल में बहुमत रहने पर सरकार ठीक कार्य करती रहती है।

इस प्रकार कहा जा सकता है कि दल-व्यवस्था के कारण ही नागरिकों में राजनीतिक चेतना का विकास होता है, शासन में लोचशीलता आती है, अच्छे कानूनों का निर्माण होता है, जनता की इच्छा का संचालन होता है, राष्ट्रीय



एकता में वृद्धि होती है, सामाजिक-आर्थिक विकास होता है, सभी वर्गों को शासन में प्रतिनिधित्व मिलता है और निरंकुश होने में बची रहती है। सार रूपमें यह कहना गलत नहीं होगा कि दल-पद्धति ही सच्चे लोकतन्त्रीय शासन का मेरुदण्ड है।

दल प्रणाली के दोष— दल प्रणाली समाज को विभिन्न वर्गों व गुटों में बांटकर राष्ट्रीय एकता को भंग करती है। इससे देशभक्ति की भावना कम होने लगती है। दल प्रणाली लोगों को दलीय-स्वार्थ से बांधकर राष्ट्रीय हितों को नुकसान पहुंचाती है। कठोर दलीय अनुशासन व्यक्ति की स्वतन्त्रता को कुचल देता है। राजनीतिक दल भ्रष्टाचार के वाहक हैं। बहुमत हासिल करके सरकार बनाने के चक्कर में जनता को तरह तरह के प्रलोभन देकर वोट खरीदे जाते हैं। इससे समाज में नैतिकता का पतन होता है। बहुदलीय प्रणाली के कारण राजनीतिक अस्थिरता पैदा होती है और संकटकाल में भी सरकार दृढ़ निर्णय नहीं ले पाती, क्योंकि विरोधी दल प्रायः टकराव की स्थिति में ही रहते हैं। राजनीतिक दल समाज में साम्प्रदायिकता का जहर फैलाते हैं। राजनीतिक दल देश व समाज का संकीर्ण क्षेत्रीय विभाजन कर देते हैं। क्षेत्रवाद ही राष्ट्रीय एकता के मार्ग में सबसे बड़ा खतरा होता है। विरोधी दल आलोचना में ही अधिक समय नष्ट करते हैं, इससे जनहित की हानि होती है। कई बार तो वे जनता को इस कदमगुमराह कर देते हैं कि उससे समाज के विघटन की स्थिति पैदा हो जाती है। चुनाव जीतने के बाद राजनीतिक दल नागरिक हितों की बलि दे देते हैं। उनकी सर्वोच्च प्राथमिकता तो अपने सदस्यों को खुश करने की ही होती है। दल-प्रणाली में आम जनता की बजाय पूंजीपति वर्ग का ही अधिक फायदा होता है। सरकार पूंजीपति वर्ग की कठपुतली की तरह ही कार्य करती है। दल-पद्धति योग्य व ईमानदार व्यक्तियों को शासन से दूर कर देती है। बहुदलीय व्यवस्था में तो प्रायः धूर्त व्यक्ति ही सत्ता में पहुंचते हैं। इससे समाज में अवसरवादिता, लालचीपन, बेईमानी, घूसखोरी जैसे अनैतिक साधनों को अधिक शक्ति मिलने लगती है, क्योंकि राजनीतिक दल अनैतिकता के सबसे बड़े पोषक होते हैं।

उपरोक्त विवेचन के बाद कहा जा सकता है कि दल-प्रणाली में अनेक दोष हैं, लेकिन फिर भी दलों को समाज से समाप्त करना तो सम्भव है और न ही उचित। आज सम्पूर्ण राजनीतिक व्यवस्था का ताना-बाना दल-प्रणाली पर ही आधारित है। दलों के बिना तो देश का भला हो सकता है और न समाज का। आज आवश्यकता इस बात की है कि दलीय व्यवस्था के दोषों को दूर किया जाए। इसके लिए जनता का जागरूक होना और सरकार का दल-व्यवस्था के दोषों को हटाने के प्रति वचनबद्ध होना जरूरी है। आज दल हमारे समाज का आवश्यक अंग बन चुके हैं। यह बात भी सही है कि सभी देशों में दल प्रणाली दोषयुक्त नहीं है। अमेरिका तथा ब्रिटेन में दल-व्यवस्था का आधार काफी मजबूत है, क्योंकि वहां की जनता और सरकार इसको सफल बनाने के लिए वचनबद्ध हैं। भारत में दलीय-प्रणाली ने समाज को जो हानि पहुंचायी है, उसको देखकर जनता को राजनीतिक दलों के लिए देश-हित एक तुच्छ वस्तु है। आज दलीय-व्यवस्था की दोषपूर्ण व्यवस्था पर देश-हित में प्रतिबन्ध लगाना अपरिहार्य है। दल-विहीन प्रजातन्त्र की धारणा न तो सम्भव है और न ही उचित। दल समाज का अभिन्न अंग है, इसलिए इसके दोषों को दूर करके इसे समाज में बनाए रखना ही उचित है।



6.4 पाठ के आगे का मुख्य भाग (Further main body of the text)

6.4.1 ब्रिटिश दल—प्रणाली (The British Party-System)

ब्रिटिश राजतन्त्र को प्रजातन्त्रीय राजतन्त्र की दिशा में जोड़ने का प्रमुख कार्य राजनीतिक दलों का ही सम्पन्न हुआ है। आज ब्रिटिश शासन—प्रणाली में राजनीतिक दल इतनी महत्वपूर्ण भूमिका अदा कर रहे हैं कि उनके बिना ब्रिटिश प्रजातन्त्र एक कदम भी आगे नहीं चल सकता।

• ब्रिटेन में राजनीतिक दलों की उत्पत्ति व विकास (Origin and Development of Political Parties in Britain) :—

ब्रिटेन के इतिहास में सबसे महत्वपूर्ण गृहयुद्ध गुलाबों का युद्ध दलों की उत्पत्ति का प्रथम प्रयास माना जाता है। इस दौरान लैन्केस्टर तथा यार्क कुल के समर्थकों ने अपने अलग गुट बना लिए। इनमें लैन्केस्टर गुट के समर्थक लाल गुलाब को धारण करते थे जबकि यार्क गुट के समर्थक सफेद गुलाब को धारण करते थे। सत्ता के लिए लम्बे समय तक इन दोनों गुटों में चलने वाला युद्ध गुलाबों का युद्ध कहलाता है। राजनीतिक दलों की उत्पत्ति के वास्तविक संकेत स्टुअर्ट काल में दिखाई दिये। इस काल में राजा और संसद समर्थकों के बीच संघर्ष हुआ। जनता द्वारा राजा के विरुद्ध किया गया यह प्रथम संघर्ष था। इस संघर्ष में भाग लेने वाले राजा के समर्थक कैवेलियर कहलाए तथा संसद के समर्थक राउण्डहेड के नाम से जाने गए। इसके बाद 1688 की क्रान्ति में ब्रिटेन में दो राजनीतिक दलों का जन्म दिया। जो लोग राजा के समर्थक थे, वे टोरी कहलाए तथा उन्होंने कैवेलियर्स की परम्पराओं का ही निर्वहन किया। संसद का समर्थन करने वाले हिवग कहलाए। जिन्होंने राउण्डहेड्स के मार्ग का ही अनुसरण किया। कालान्तर में इन दोनों दलों का स्थान अनुदार दल तथा उदार दल ने ले लिया। टोरी से अनुदार दल (Conservative Party) तथा हिवग से उदार दल (Liberal Party) का जन्म हुआ। 1832, 1867 तथा 1864 के सुधार अधिनियमों ने मताधिकार को उदार बना दिया जिसके परिणामस्वरूप एक नया श्रमिक दल (Labour Party) उभर आया। धीरे-धीरे इस दल की भी शासन में भागीदारी हुई और उदार दल का महत्व कम होने लगा। 1924 में ब्रिटेन में प्रथम बार श्रमिक दल की सरकार बनी और उसने धीरे-धीरे उदारवादी दल का स्थान ले लिया। आज ब्रिटेन में दो ही प्रमुख दल हैं :— अनुदारवादी दल (Conservative Party) तथा श्रमिक दल (Labour Party)।

• ब्रिटेन के प्रमुख राजनीतिक दल : संगठन व कार्यक्रम

(Major Political Parties of Britain : Organisation and Programmes)

(I) अनुदारवादी दल (Conservative Party) :— इस दल का सर्वोपरि नेता ही दलीय नेता है। उसका संसद के बाहर व अन्दर दोनों जगह दल के सदस्यों पर पूरा नियन्त्रण रहता है। जब वह दल विरोधी दल का कार्य करता



है तो यह नेता या दल का नेता ही छाया मन्त्रिमण्डल का निर्माण करता है। इसकी एक कार्यकारिणी समिति भी होती है। इसमें एक दल सचेतक भी होता है जो सदस्यों को अनुशासन में शासन रखता है। लार्ड सदन में इस दल की स्थिति अधिक महत्वपूर्ण नहीं है। इस दल का सार्वजनिक संगठन ही संसदीय संगठन का आधार है। इसके सार्वजनिक संगठन में निर्वाचन क्षेत्रीय संघ सबसे निम्न इकाई है। उसके बाद प्रान्तीय परिषद, प्रान्तीय परिषद के बाद राष्ट्रीय संगठन होता है। स्थानीय स्तर से लेकर राष्ट्रीय स्तर तक इस दल पर अध्यक्ष का ही पूरा नियन्त्रण रहता है। इसकी एक केन्द्रीय समिति या परिषद भी होती है जो दल को पदाधिकारियों का चुनाव करती है और कार्यकारिणी समिति के प्रतिवेदन पर विचार करती है। दल के संसदीय तथा प्रमुख संगठनों के कार्यकर्ता कार्यकारिणी समिति के सदस्य होते हैं। इसके अतिरिक्त इस दल का एक सामान्य उद्देश्य समिति तथा कई राष्ट्रीय समितियां भी होती हैं। दल की प्रमुख स्थानीय इकाई निर्वाचन क्षेत्रीय संघ है जो अपने क्षेत्र में दल के समर्थकों, सिद्धान्तों तथा सदस्यों का विकास अपनी कार्यकारिणी समिति के द्वारा करता है। इसके ऊपर प्रान्तीय परिषद है जो केन्द्र व स्थानीय क्षेत्र के बीच की कड़ी है। इंग्लैण्ड तथा वेल्स को प्रांतीय संगठन के आधार पर 12 भागों में बांटा गया है। इस संगठन पर राष्ट्रीय संगठन की केन्द्रीय परिषद का पूरा नियन्त्रण रहता है। दल के प्रत्येक संगठनात्मक स्तर पर दल का पदाधिकारी व समितियां होती हैं जिससे दलीय एकता व अनुशासन केन्द्रीयकरण के मार्ग पर चलता है। दल का लन्दन में स्थित एक प्रधान संचालक होता है। दलीय संगठन के बारे में सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि यह दल एक नेता के अधीन रहकर एक अनुशासनबद्ध तरीके से कार्य करता है।

(II) श्रमिक दल (Labour Party) :- इस दल की स्थापना 1906 में ट्रेड यूनियन कांग्रेस से हुई है। इस दल में 70 प्रतिशत सदस्य श्रमिक वर्ग से है। इसके संसदीय संगठन में कुछ अनौपचारिक समूह भी शामिल होते हैं। इनमें श्रमिक संघीय समूह तथा वामपंथी समूह शामिल हैं। इसके सार्वजनिक संगठन में सबसे ऊपर एक दलीय सम्मेलन होता है जो दल के कार्य का निर्देशन व नियन्त्रण करता है। उसके बाद एक कार्यकारिणी समिति होती है जिसके द्वारा केन्द्रीय कार्यालय का संचालन व नीति निर्धारण का कार्य किया जाता है। इसका मुख्यालय अनुदार दल के केन्द्रीय कार्यालय की तरह ही होता है। मुख्यालय में एक महासचिव होता है जिसकी नियुक्ति राष्ट्रीय कार्यकारिणी समिति द्वारा की जाती है। इसके बाद इसकी क्षेत्रीय परिषदें होती हैं जो क्षेत्र विशेष में कार्य करती हैं। संगठन के सबसे निम्न स्तर पर निर्वाचन क्षेत्रीय परिषद होती है जिनमें युवा समाजवादी, स्थानीय श्रमिक संघ आदि शामिल होते हैं। इसके संगठन में दल के नेता की नियुक्ति दलीय सम्मेलन में की जाती है। 1997 में ब्रिटेन में इसी दल की सरकार बनी और इस सरकार ने राष्ट्रीयकरण की बजाय समाजीकरण पर बल दिया है। इस दल के लोकप्रिय नेता टोनी ब्लेयर हैं। 1924 में इस दल की प्रथम सरकार बनी थी। उसके बाद 1946 से 1950, 1964 से 1970 तथा 1974 से 1979 तक इसी दल की सरकारें रही। 18 वर्ष के लम्बे अन्तराल के बाद जब 1997 में टोनी ब्लेयर प्रधानमंत्री बने तो इस दल ने अपनी नीतियों व कार्यक्रमों को ईमानदारी व निष्पक्षता के साथ लागू किया।



(III) अन्य दल (Miscellaneous Parties) :- उपरोक्त दोनों दलों को छोड़कर ब्रिटेन में कुछ अन्य दल भी हैं। इनमें प्रमुख रूप से उदार दल (Liberal Party), सोशल डेमोक्रेटिक दल, फासिस्ट दल, नेशनल फ्रंट और सोशलिस्ट वर्कर्स दल शामिल हैं। इनमें उदार दल का तो ब्रिटेन में लम्बे समय तक प्रभाव रहा, लेकिन श्रमिक दल की उत्पत्ति के साथ यह दल अपना प्रभाव खो बैठा और इसकी नीतियां व कार्यक्रम श्रमिक दल के सिद्धान्तों का एक भाग बन गए। आज ब्रिटेन में उदारवादी दल को छोड़कर शेष किसी भी छोटे दल का प्रभाव नहीं है। वास्तविक स्थिति तो यह है कि यह दल भी अब निकट भविष्य में सरकार बनाने के दायरे से काफी दूर है।

• ब्रिटिश दलीय-व्यवस्था की विशेषताएं (Features of British Party System)

ब्रिटिश दलीय-प्रणाली की निम्नलिखित विशेषताएं हैं :-

द्वि-दलीय प्रणाली (Two Party System):- वहां लम्बे समय से अनुदारवादी दल तथा श्रमिक दल की ही सरकार गठित होती आ रही है। उदारवादी तथा अन्य दलों के होते हुए भी वहां प्रमुख रूप से दो ही दल सत्ता का सुख भोग रहे हैं। यही द्वि-दलीय प्रणाली ब्रिटेन की संसदीय सरकार व शासन की सफलता का प्रमुख कारण है।

दलीय अनुशासन (Party Discipline):- ब्रिटेन में राजनीतिक दलों के सदस्य कठोर दलीय अनुशासन में रहकर कार्य करते हैं। दल के नेता का अपने सदस्यों पर पूर्ण नियन्त्रण रहता है। वहां कोई भी सदस्य दलीय अनुशासन भंग नहीं कर सकता। यदि कोई ऐसा करता है तो उसका राजनीतिक जीवन समाप्त हो जाता है। वहां दल का नेता इसका फैसला करता है कि किस विधेयक के पक्ष में मतदान करना है या किसके विपक्ष में। वहां संसद के अधिवेशन के दौरान दलीय सचेतक (Party Whip) मौजूद रहते हैं। कोई भी सदस्य अपने दल के सचेतक की आज्ञा का उल्लंघन नहीं कर सकता। यदि कोई ऐसा करता है तो उसे दल से निकाल दिया जाता है।

केन्द्रीयकृत दलीय संगठन (Centralised Party Organisation) :- ब्रिटेन में दलीय ढांचा नीचे से ऊपर तक इस आधार पर संगठित होता है कि अन्त में वह एक जगह पर आकर मिल जाता है। दलीय एकता का पाया जाना ही केन्द्रीयकृत ढांचे की पहचान है। वहां दल के नेताओं का सम्पूर्ण दलीय संगठन पर पूरा नियन्त्रण बना रहता है।

सुसंगठित विरोधी दल (Well Organised Opposition):- ब्रिटेन में विपक्ष का अत्यन्त महत्वपूर्ण स्थान है। वहां विरोधी दल दलीय व्यवस्था का आवश्यक व अपरिहार्य अंग माना जाता है। इसका प्रमुख कार्य सत्तारूढ़ दल की नीतियों पर नजर रखना है।

लूट-प्रथा का अभाव (Lack of Spoil System):- वहां पर सरकारें बदलती रहती हैं, लेकिन नौकरशाही वहीं रहती है जो पहले थी। ब्रिटेन में स्थायी लोक सेवा की परम्परा है।



वर्ग, प्रकृति एवं सैद्धान्तिक मतभेद (Class, Nature and Ideological Differences) :- ब्रिटेन में राजनीतिक दल विभिन्न आर्थिक वर्गों पर आधारित है। श्रमिक दल मजदूरों का प्रतिनिधि है और वह मध्यम वर्ग से भी समर्थन की आशा करता है। उसका ध्येय पूंजीपति वर्ग को कमजोर बनाना है। इसके विपरीत अनुदार दल धनिक व कुलीन वर्गों का प्रतिनिधि है। इन दलों के मतभेद सैद्धान्तिक है। मजदूर दल समाजवाद का पोषक है तो अनुदार दल निजी उद्योगों का समर्थक है।

नेता का महत्व (Importance of the Leader):- ब्रिटिश दलीय प्रणाली में दल का नेता, दल की शक्ति व दल का प्रतीक होता है। उसका व्यक्तित्व दल का व्यक्तित्व होता है। दलीय नेता का सम्पूर्ण दल पर पूरा नियन्त्रण रहता है। उसकी आलोचना करने का अर्थ है अपना राजनीतिक जीवन दांव पर लगाना।

दल साहचर्य (Party Brotherhood):- ब्रिटेन में प्रत्येक राजनीतिक दल का अपना गौरवमय अतीत है। इससे वहां दलीय एकता मजबूत हुई है। सभी सदस्य आपस में एकता की भावना के आधार पर बंधे रहकर कार्य करते हैं।

निरन्तर कार्यशीलता (Continuos Activeness) :- ब्रिटेन में राजनीतिक दल निरन्तर कार्यशील रहते हैं। वहां पर राजनीतिक दल अमेरिका की तरह केवल चुनावी अवसरों पर ही हलचल में अपने की बजाय पूरे वर्ष गतिशील रहते हैं। ब्रिटेन में पूरे वर्ष दल शोध कार्य करने, साहित्य तैयार करने, सभाएं बुलाने, स्थानीय संगठन को मजबूत बनाने तथा जनमत को शिक्षित बनाने में लगे रहते हैं। उन्हें सदा यह भय रहता है कि किसी भी समय अविश्वास का प्रस्ताव होते ही नए चुनावों का सामना करना पड़ता है। इसलिए वहां जनता को अपनीतरफ आकर्षित करने के लिए विरोधी दल तथा सत्तारूढ़ दल दोनों सक्रिय रहते हैं।

संकटकाल में राष्ट्रीय सरकार का गठन(National Government in Emergency):- ब्रिटेन में संकट के समय दोनों राजनीतिक दल एक मंच पर आकर राष्ट्रीय सरकार का गठन करते हैं। उस समय दोनों दलों की विचारधारा राष्ट्रीय हित के एक बिन्दु पर आकर ठहर जाती है।

उदारवादी प्रकृति (Liberal Trend):- ब्रिटेन में राजनीतिक दलों की प्रकृति अधिक उग्रवादी नहीं रही है। दोनों दलों ने चुनावों के बाद अधिक कठोर नीतियां नहीं बनाई हैं। श्रमिक दल ने कभी भी ऐसी नीति नहीं बनाई जिससे पूंजीपतियों की हानि हो और इसी तरह अनुदार दल ने भी श्रमिक हितों पर चोट करने वाली नीति से स्वयं को दूर ही रखा है। दोनों दल सत्ता प्राप्त करने के लिए भी समझौतावादी मार्ग को ही अपनाते हैं। ब्रिटेन में सत्तारूढ़ दल कभी भी चुनावों में या चुनावों के बाद हानि पहुंचाने की नहीं सोचता। इसी कारण आज तक ब्रिटेन में चुनावों में कभी हिंसा नहीं हुई। इसका प्रमुख कारण राजनीतिक दलों की उदारवादी प्रकृति या स्वभाव का होना है। ब्रिटिश दलीय व्यवस्था का झुकाव केन्द्रीयकरण की तरफ है। वहां पर दल के सदस्य कठोर दलीय अनुशासन में रहते हैं और दलीय एकता का परिचय देते हैं। ब्रिटेन में राजनीतिक दलों में विभिन्न वर्गों के प्रतिनिधि और दलों की प्रकृति



समझौतावादी है। दलों के सैद्धान्तिक आधार अलग-अलग होते हुए भी वे राष्ट्रीय हित की दृष्टि से एक बिन्दु पर आकर ही मिल जाते हैं।

6.4.2 संयुक्त राज्य अमेरिका में राजनीतिक दल

(Political Parties in America)

अमेरिका में दलीय-व्यवस्था के बीज फिलाडेल्फिया सम्मेलन (1/89) में ही देखने को मिलते हैं। इस सम्मेलन में भाग लेने वाले प्रतिनिधि संघवादी और संघ-विरोधी दो गुटों में बंट गए थे। संघवादी हैमिल्टन तथा संघ-विरोधी जैफर्सन। आज तक अमेरिका में हैमिल्टन, वेबस्टर, मैक-किनले, इलिज, आइजनहायर, निकसन, फोर्ड, रीगन तथा बुश ने तो रिपब्लिक पार्टी का नेतृत्व किया है और जैफर्सन, जैकसन, रूजवेल्ट, केनेडी, कार्टर तथा बिल क्लिंटन ने डेमोक्रेटिक पार्टी का नेतृत्व किया है।

• अमेरिका के प्रमुख राजनीतिक दल : कार्यक्रम व संगठन

(Major Political Parties of America : Programmes and Organisation)

अमेरिका में दो ही प्रमुख राजनीतिक दल हैं जिन्हें Democratic Party तथा Republic Party के नाम से जाना जाता है।

दलीय संगठन (Party Organisation)

अमेरिका में दोनों दलों का संगठन समान है। यह संगठन केन्द्रीय, राज्य तथा स्थानीय स्तर पर अलग-अलग है। इसका प्रमुख ब्यौरा इस प्रकार है :-

(I) केन्द्रीय अथवा राष्ट्रीय स्तर पर संगठन :- केन्द्रीय स्तर पर दल का सर्वोच्च अंग राष्ट्रीय सम्मेलन है। इसमें राज्यों के निर्वाचित प्रतिनिधि हैं। इसे राष्ट्रपति तथा उप-राष्ट्रपति पद के लिए उम्मीदवार मनोनीत करने, चुनाव के लिए दलीय कार्यक्रम निर्धारित करने, मूलभूत संगठन व दलीय विधान को नियन्त्रित करने का अधिकार होता है। इसके बाद एक राष्ट्रीय समिति होती है जो दल के समस्त कार्य संचालन की कार्यकारिणी समिति है। इसमें प्रत्येक राज्य और क्षेत्र के दो प्रतिनिधि होते हैं। इस समिति के सदस्य राष्ट्रीय सम्मेलन के लिए राज्यों से निर्वाचित प्रतिनिधि मण्डलों द्वारा चुने जाते हैं। यह समिति अपनी दो सहायक कार्यकारिणी समितियों का भी निर्माण करती है। इस समितियों के कार्य राष्ट्रीय सम्मेलन बुलाना, दल के व्यय के लिए कोष-एकत्रित करना, राज्य के प्रतिनिधियों की संख्या निर्धारित करना आदि है। डेमोक्रेटिक दल की राष्ट्रीय समिति में 108 तथा रिपब्लिक दल की समिति में 147 सदस्य हैं। इसके बाद राष्ट्रीय स्तर पर दलीय संगठन का एक राष्ट्रीय अध्यक्ष भी होता है जिसे 4 वर्ष के लिए समिति तथा प्रस्तावित व्यक्ति को राष्ट्रपति चुनता है। इसका प्रमुख कार्य राष्ट्रपति पद के निर्वाचन के अभियान को संचालित करना होता है। इसके बाद राष्ट्रीय स्तर पर एक राष्ट्रीय समिति सचिवालय भी होता है।



इसका प्रमुख कार्य नेताओं द्वारा दिए जाने वाले भाषणों को तैयार करना, दल के लिए धन एकत्रित करना तथा उसका हिसाब-किताब रखना है।

(II) राज्य स्तर का संगठन :- राज्य स्तर भी दोनों दलों का संगठन समान है। इस स्तर पर दोनों दलों की एक-एक केन्द्रीय समिति है जिसका आकार और निर्माण सभी राज्यों में अलग-अलग है। इस समिति में राज्य की काउण्टी समितियों के चेयरमैन होते हैं। इस समिति का प्रमुख कार्य राज्य के दलीय संगठनों पर नियन्त्रण रखना, धन एकत्रित करना तथा छोटे पदों के लिए दलीय उम्मीदवारों का नामांकन करना है। इस समिति की भी एक कार्यकारिणी समिति तथा एक वित्त सचिव होता है।

(III) स्थानीय स्तर पर संगठन :- स्थानीय स्तर पर दलीय संगठन की सबसे छोटी इकाई प्रिसिंकट समिति है। इसके नेता को समिति अधिकारी कहा जाता है। शहरी क्षेत्रों में वार्ड-समितियां होती हैं जो शहरी मतदाताओं के कार्य का संचालन करती है। इसके बाद काउण्टी संगठन है जो अपने से नीचे की इकाइयों को कार्यों का निरीक्षण व नियन्त्रण करती है। इन्हें जिला समिति भी कहा जाता है। प्रत्येक जिले में प्रत्येक दल की एक समिति अवश्य है।

• अमेरिकन दल प्रणाली की विशेषताएं (Features of American Party System)

अमेरिकन दल प्रणाली की प्रमुख विशेषताएं निम्नलिखित हैं :-

(1) द्वि-दलीय प्रणाली (Two Party System) :- अमेरिका में ब्रिटेन की तरह दो दल ही प्रमुख हैं। यद्यपि वहां कुछ छोटे दल भी उभरे हैं, लेकिन उनका कोई विशेष महत्व नहीं है। प्रारम्भ से लेकर अब तक अमेरिका में डेमोक्रेटिक दल तथा रिपब्लिकन दल का ही बार-बार शासन वहां है। इन दलों को छोड़कर अन्य किसी भी दल को आज तक अमेरिकन शासन प्रणाली में भागीदारी निभाने का अवसर प्राप्त नहीं हुआ है। अतः अमेरिका में दल प्रणाली द्वि-दलीय है।

• अमेरिकन दल प्रणाली का मूल्यांकन (Evaluation of American Party System)

अमेरिका की दल प्रणाली का विश्लेषण करने से यह बात उजागर होती है कि अमेरिका में कठोर दलीय अनुशासन के अभाव के कारण राजनीतिक दलों के सदस्य दल के कार्यक्रम व नीतियों को उत्तरदायित्वपूर्ण ढंग से पूरे करने के प्रयास नहीं करते। अमेरिका में क्षेत्रवाद का प्रभाव, स्पष्ट नीतियों व कार्यक्रमों का अभाव आदि बातें अमेरिकी राजनीतिक दलों को एक स्वार्थपूर्ण व्यक्तियों का समूह बना देती है। वहां पर सबसे खतरनाक प्रथा लूट-प्रणाली है जो दलीय व्यवस्था की निष्पक्षता को चुनौती देती है। इसके बावजूद भी यह कहना गलत होगा कि अमेरिकन दलीय-व्यवस्था महत्वहीन है। सत्य तो यह है कि द्वि-दलीय प्रणाली अमेरिका के राजनीतिक जीवन में इस कदर



समा चुकी है कि इसे बहुदलीय बनाने में कोई औचित्य दिखाई नहीं देता। लम्बे समय से अमेरिका में द्वि-दलीय प्रणाली सफलता से कार्य कर रही है तो इसके दोषों का कोई आलोचनात्मक आधार महत्वहीन हो जाता है।

6.4.3 स्विस दल प्रणाली (Swiss Party System)

• स्वित्जरलैण्ड में दलीय प्रणाली (Party System in Switzerland)

स्वित्जरलैण्ड की प्रजातांत्रिक व्यवस्था दलीय अवगुणों से मुक्त है। फिर भी राजनीतिक दल देश की सभी राजनीतिक संस्थाएँ संघीय सभा, संघीय परिषद् और अन्य सभी प्रतिनिधि संस्थाएँ अपनी भूमिका का निर्वाह करते हैं। इसके बावजूद स्विस दलीय व्यवस्था को 'दुर्बल दलीय व्यवस्था' की संज्ञा दी जाती है। यहाँ दलीय व्यवस्था उस रूप में कार्य नहीं करती है, जिस तरह से संयुक्त राज्य अमेरिका तथा ग्रेट ब्रिटेन में कार्यरत है। राजनीति दल वे पहिले हैं, जिन पर लोकतन्त्र का रथ चलता है। कदाचित् ही ऐसा कोई लोकतन्त्रात्मक देश होगा जिसके संविधान में राजनीतिक दलों की सत्ता की कोई व्यवस्था की गयी हो। पर फिर भी कोई भी लोकतन्त्रात्मक देश ऐसा नहीं है, जहाँ लोकतन्त्र का संचालन राजीति दलों के माध्यम से न होता हो। राजनीतिक दल वस्तुतः जनता को राजनीति शिक्षा देकर, उसे समयिक समस्याओं के विविध पहलुओं का ज्ञान कराके तथा लोकमत का निर्माण करके लोकतन्त्र के क्रियान्वयन को सफल बनाने में सहायक होते हैं। राजनीतिक दल शासन – सूत्र के अंग नहीं होते, फिर भी शासन – सूत्र के संचालन में वे अत्यन्त ही महत्वपूर्ण योग देते हैं। स्वित्जरलैण्ड के लोकतन्त्र में राजनीतिक दलों का बड़ा महत्व है। ब्राइस का मत है कि "स्वित्जरलैण्ड में राजनीतिक दल ब्रिटेन, फ्रांस या अन्य किसी लोकतांत्रिक देश की अपेक्षा अत्यन्त कम भूमिका निभाते हैं।" स्वित्जरलैण्ड में दुर्बलदलीय व्यवस्था के निम्नांकित कारण उत्तरदायी रहे हैं

1. स्विस कार्यकारिणी, स्विस दलबन्दी की दुर्बलता और अशक्तता का प्रमुख कारण है। अपने कार्यकाल में संघीय परिषद् या फेडरल कोसिल के सदस्य हटाए नहीं जा सकते, अतः वे दलबन्दी के प्रपंच में नहीं पड़ते। साथ ही संघीय परिषद् को हटाने के लिए जनता में भी दलबन्दी की भावनाएँ विकसित नहीं होती।
2. फेडरल कौंसिल (संघीय परिषद्) का निर्माण भी दलीय आधार पर नहीं होता और किसी दलीय पूर्वाग्रहों तथा दुराग्रहों के आधार पर कार्य करने की अपेक्षा नहीं की जा सकती है।
3. संघीय परिषद् के सदस्य प्रायः पुनर्निर्वाचित होते रहते हैं, अतः वहाँ दलबन्दी का सवाल ही पैदा नहीं होता। वहाँ सत्ता की अनुचित स्पर्धा या दौड़ नहीं है।
4. दलबन्दी सदैव भ्रष्ट शासन – व्यवस्था (Corrupt System) में जोर पकड़ती है। लूट – प्रथा में भी इसका 204 तुलनात्मक शासन एवं राजनीति विकास होता है। जहाँ शक्ति प्राप्त करने पर शासक – दल के लोगों को पदों पर भर दिया जाता है। सौभाग्यवश स्वित्जरलैण्ड में यह प्रणाली नहीं है।



प्रथम यहाँ पर नियुक्तियाँ योग्यता के आधार पर की जाती हैं और द्वितीय, पदों की संख्या भी इतनी अधिक नहीं होती कि कोई दल समर्थकों को भर सके। स्विट्जरलैण्ड में पदों के वेतन भी इतने नहीं हैं कि वे महत्वाकांक्षी व्यक्तियों को आकर्षित कर सकें।

5. स्विट्जरलैण्ड में व्यवस्थापिका अर्थात् 'संघीय सभा' की विधायी शक्तियाँ सीमित हैं और इस सीमित क्षेत्र में भी उसकी शक्ति अन्तिम नहीं मानी जा सकती है। वहाँ अन्तिम शक्ति जनता के हाथों में है। लोक – निर्णय, निबन्ध – उपक्रम तथा प्रत्याहरण प्रत्यक्ष प्रजातंत्र के तीन मुख्य उपकरण हैं, जिसके कारण भी दलबन्दी को अनुचित रूप में महत्व नहीं मिल पाता है।
6. स्विट्जरलैण्ड में वैधानिक एवं विदेशी मामलों में कोई मतभेद नहीं होता, अतः दलगत सक्रियता की कोई स्थिति उत्पन्न नहीं हो पाती।
7. स्विस् संघीय सभा का अधिवेशन बहुत थोड़े दिन तक चलता है। वह प्रायः एक महीने से अधिक नहीं चलता। इस अल्प अवधि में संघीय सभा के सदस्य अपने कार्यों में इतने व्यस्त रहते हैं कि उनको दलबन्दी की जटिलताओं में फँसने का अवकाश ही नहीं मिलता।
8. स्विस् नागरिकों में आर्थिक विषमता अथवा असमानता का अभाव पाया जाता है। आर्थिक समानता के इस वातावरण में दलबन्दी की उग्र भावना को विकसित होने का अवसर ही नहीं मिला।
9. स्विस् जनता का उच्च चरित्र, राष्ट्रीय हितों को सुरक्षित रखता है। स्विस् नागरिक दलबन्दी के चक्कर में अपने को मुक्त रखते हैं।
10. स्विस् नागरिकों के उन्नत आर्थिक जीवन स्तर ने भी उन्हें दलबन्दी से बचाया है।
11. पेशेवर या व्यावसायिक प्रवृत्ति के राजनीतिज्ञों के अभाव में भी दलबन्दी बुराइयों को पनपने नहीं दिया है।
12. स्विट्जरलैण्ड द्वारा अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों में स्थायी तटस्थता के सिद्धान्त को अपनाने के कारण इसे प्रबल समस्याओं या चुनौतियों का सामना नहीं करना पड़ा, फलतः देश में उग्र दलबन्दी की भावना का विकास नहीं हो पाया।

- **स्विस् राजनीतिक दलों की विशेषताएँ (Charactersitics of Swiss Political System)** स्विस् राजनीतिक दलों का आधार कैण्टन है न कि संघ अथवा राष्ट्र। इसके दो कारण विशेष रूप से उत्तरदायी रहे हैं— (1) साधारण स्विस् नागरिक का यह विश्वास है कि उसके भाग्य का निर्धारण अधिकांशतः स्थानीय मुद्दों की राजनीति द्वारा होता है, संघीय नीतियों द्वारा नहीं। (ii) दलों के निर्माण और संगठन का आधार प्राथमिक रूप से स्थानीय प्रश्न है। स्विट्जरलैण्ड में राष्ट्रीय चुनाव नहीं होते स्विट्जरलैण्ड में ' बहुदलीय प्रणाली ' के भी कुछ विशेष कारण रहे हैं। प्रथम स्विट्जरलैण्ड में अनेक प्रकार की विविधताएँ हैं। द्वितीय, स्विट्जरलैण्ड में ' आनुपातिक प्रतिनिधित्व पद्धति ' के अनुसार चुनाव होते हैं, जिसके अन्तर्गत छोटे – छोटे दल भी अपना



अस्तित्व बनाये रहते हैं। तृतीय, स्विट्जरलैण्ड में संघीय परिषद् के सदस्य एक दल के नहीं होते। वे कई दलों के सदस्य हो सकते हैं और यह भी आवश्यक नहीं है कि वे एक ही सामान्य कार्यक्रमों को मानने वाले हों। संघीय सभा के दोनों सदनों में भी अनेक दलों के प्रतिनिधि होते हैं। स्विट्जरलैण्ड में अमेरिका एवं अन्य यूरोपीय देशों जैसी विषम एवं कटु दलबन्दी के अभाव है। दलगत भावना का अभाव स्विस दल पद्धति की एक अनुपम विशेषता है। अमेरिका के समान ही स्विट्जरलैण्ड में भी राजनीतिकदलों को संविधान में कोई स्थान नहीं दिया गया है, वरन् समय के साथ उनका विकास हुआ है। कॅण्टनो के संविधान में दलों के विषय में प्रावधान नहीं है। जब से 'आनुपातिक प्रतिनिधित्व प्रणाली' को लागू किया गया है, तब से राजनीतिक दलों को अप्रत्यक्ष रूप से संविधान में स्थान मिल गया है।

स्विट्जरलैण्ड में विभिन्न दलों में पारस्परिक सहयोग, सम्पर्क, सह – अस्तित्व एवं समझौते की भावनाएँ विद्यमान हैं। वे विषमता, विरोध तथा वैमनस्य की भावना से कार्य नहीं करते। संघीय परिषद् और संघीय सभा में सभी दलों के प्रतिनिधियों में स्पष्टतः यही भावना पाई जाती है। यही कारण है कि कुछ लेखकों ने स्विस शासन – व्यवस्था को बहुदलीय की अपेक्षा निर्दलीय कहना अधिक उचित समझा है। यद्यपि स्विट्जरलैण्ड में भाषा, जाति एवं धर्म की विभिन्नताएँ विद्यमान हैं, तथापि राजनीतिक दलों का संगठन (अनुदार कैथोलिक दल को छोड़कर) इनमें से किसी आधार पर न होकर सामाजिक, आर्थिक एवं राजनीतिक सिद्धान्तों के आधार पर हुआ है। तुलनात्मक शासन एवं राजनीति में स्विस दलों में 'करिश्माई नेतृत्व' का अभाव पाया जाता है, जैसा कि इंग्लैण्ड और भारत में है। इसका प्रमुख कारण यहाँ का दुर्बल दलीय संगठन है। स्विस दलों के चुनाव के तरीके औचित्य की सीमा में रहते हैं। वे अनुचित व्यय नहीं करते और राजनीतिक जीवन में शुद्धता का मूल्यों का ध्यान रखते हैं। स्विस जनता पर चुनाव में जितना कम व्यय होता है उतना शायद किसी देश में नहीं होता होगा। स्विट्जरलैण्ड में राजनीतिक दलों की प्रमुख विशेषताएँ इस प्रकार हैं –

1. बहुदलीय व्यवस्था – भिन्न – भिन्न भाषाओं, धर्मों और हितों के कारण स्विट्जरलैण्ड में भारत और फ्रान्स की भाँति बहुदलीय व्यवस्था पाई जाती है। सामान्यतः बहुदलीय व्यवस्था को राजनीतिक अस्थिरता का कारण माना जाता है, किन्तु स्विट्जरलैण्ड में बहुदलीय व्यवस्था राजनीतिक अस्थिरता का कारण न बनकर पूर्ण सफलता के साथ कार्य कर रही है।
2. दुर्बल संगठन – स्विस राजनीतिक दलों का संगठन अत्यधिक लीला – ढाला है। कॅण्टनों के दल भी संघीय संगठनों के आधीन निहं ये दल अधिकतर कॅण्टनो के स्तर पर संगठित हैं तथा उनका कार्यक्रम राशीयता पर आधारित नहीं है। उनकी नीति विभिन्न कॅण्टनों में भिन्न होती है। वे प्रायः स्थानीय चुनावों में अधिक रुचि लेते हैं।
3. विरोधी दल का अभाव – स्विस दलीय पद्धति की एक अन्य विशेषता विरोधी दल का नहीं होना है जबकि भारत, इंग्लैण्ड और कई अन्य देशों में विरोधी दल का विशेष महत्व है। इन देशों में विरोधी



दल की जनता के अधिकारों का रक्षक माना जाता है । इन देशों से भिन्न स्विट्जरलैण्ड में न तो कोई विरोधी दल है और न कोई बहुमत दल । देश का प्रशासन विभिन्न दलों के सहयोग से चलाया जाता है ।

4. दलगत भावना का अभाव – बहुदलीय प्रणाली के अस्तित्व के बावजूद स्विट्जरलैण्ड में संकुचित दलगत भावना का अभाव पाया जाता है । यद्यपि कुछ राजनीतिक दलों का स्रोत जाति भाषा तथा धर्म से सम्बन्धित लोग हैं फिर भी धर्म , जाति या भाषा दलीय विभिन्नता का आधार नहीं है । सभी राजनीतिक दल परस्पर सहयोग के वातावरण में कार्य करते हैं ।
5. संवैधानिक अस्तित्व का अभाव – स्विट्स राजनीतिक दलों का उल्लेख स्विट्जरलैण्ड के संविधान में नहीं मिलता केवल 1919 में जब राष्ट्रीय परिषद के चुनाव के लिए संवैधानिक संशोधन द्वारा आनुपातिक प्रतिनिधित्व प्रणाली को अपनाया गया तो राजनीतिक दलों को अप्रत्यक्ष रूप से संवैधानिक मान्यता प्राप्त हुई ।
6. दलीय नेताओं का अभाव – स्विट्जरलैण्ड में सर्वमान्य दलीय नेताओं का भी अभाव पाया जाता है । दलीय नेताओं की अनुपस्थिति का एक प्रमुख कारण यह है कि स्विट्जरलैण्ड में केन्द्रीय कार्यपालिका तथा राज्यों में कार्यपालिका का गठन दल के आधार पर नहीं होता ।
8. मितव्ययी राजनीति – स्विट्जरलैण्ड में राजनीति विश्व के अन्य देशों की तुलना में बहुत कम खर्चीली है । अन्य देशों से भिन्न यहाँ दलों के अपने कोष नहीं होते । दल को खर्च की आवश्यकता बहुत कम अवसरों पर होती है । राजनीतिक कार्यों पर तभी धन व्यय किया जाता है जबकि उसे किसी सार्वजनिक लाभ की आशा हो ।
9. बुनायादी सिद्धान्तों पर मतैक्य – स्विट्जरलैण्ड में सभी दल जिसमें समाजवादी दल भी सम्मिलित हैं , बुनियादी सिद्धान्तों पर मतैक्य रखते हैं । प्रमुख बुनियादी सिद्धान्तों स्विट्जरलैण्ड की स्वतंत्रता , तटस्थता और उसका व्यापार सम्मिलित है । सभी राजनीतिक दलों का ध्येय लोककल्याण है । स्विट्जरलैण्ड में आर्थिक स्थिरता होने के कारण वहाँ आर्थिक आधार पर भी मतैक्य उत्पन्न नहीं होता ।
10. अनुदारवाद का प्रभाव – स्विट्जरलैण्ड की दलीय व्यवस्था के सम्बन्ध में हूबर ने कहा है कि “ समाजवादी राजनीतिक को छोड़कर शेष सभी राजनीतिक दलों के विकास में अनुदारवाद का प्रभाव रहा है । ” स्विट्स राजनीतिक दल सिद्धान्तों के आकर्षण से प्रभावित नहीं होते न ही वे अपनी विचारधारा को शीघ्रता से परिवर्तित होने देते हैं । ये परिस्थितियों के अनुसार अपनी नीतियों में बड़ी सावधानी से परिवर्तन करते हैं । स्विट्स दलीय व्यवस्था की उपर्युक्त विशेषताओं के आधार पर यह कहा जा सकता है कि स्विट्जरलैण्ड में दलीय महत्ता अन्य देशों की अपेक्षा कम है । स्विट्जरलैण्ड में दलों की इस



प्रकार की स्थिति के अनेक कारण हैं जिसके लिये प्रमुख रूप से स्विस् चुनाव प्रणाली, स्विस् जनता का स्वभाव तथा उसकी आर्थिक स्थिति स्विस् कार्यालिका की प्रकृति, तथा प्रत्यक्ष लोकतंत्र की व्यवस्था उत्तरदायी है।

• **स्विट्जरलैण्ड के प्रमुख राजनीतिक दल : कार्यक्रम व संगठन (Major Political Parties of Switzerland : Programmes and Organisation)**

दल – प्रणाली का संक्षिप्त इतिहास (Brief History of Party System) 1948 ई. के संविधान के निर्माण के समय तक दलीय स्थिति स्पष्टतः दृष्टिगोचर हो चुकी थी। उस समय तीन दलों की नींव पड़ चुकी थी। (i) उदारवादी दल (Liberal Party) (ii) क्रांतिकारी या उग्रवाली दल (Radical Party) (iii) कैथोलिक अनुदार दल (Catholic Conservative Party)। ये तीनों दल आज भी विद्यमान हैं। 'उदार दल' का निर्माण बुद्धिजीवियों, श्रमिकों और किसानों ने मिलकर किया था। ये लोग 1815 के समझौते (**The Pact of 1815**) द्वारा स्थापित 'सामंती व्यवस्था' के विरोध में थे। 1830 के उदार दल के विशेष प्रयासों के फलस्वरूप ही अधिकांश कैंटनों में ऐसी व्यवस्था स्थापित हो सकी जिसमें लगभग सभी को राजनीतिक स्वतंत्रता प्राप्त थी। 1832 ई. में उदार दल वाम – पक्ष दल से अलग हो गया और उसने अपना नाम 'क्रांतिकारी लोकतांत्रिक दल' रख लिया। इस दल का उद्देश्य एक ऐसे लोकतांत्रिक राष्ट्रीय राज्य की स्थापना था जिसमें व्यक्ति को सर्वत्र राजनीतिक स्वतंत्रता प्राप्त हो सके। उदार दल और क्रांतिकारी दल का विरोध करने के लिए एक नवीन 'कैथोलिक अनुदार दल' का अभ्युदय हुआ। सात कैथोलिक बहुमत दल वाले कैंटनों में इस दल के लोगों का पूर्ण प्रभाव था। 1845 ई. में सातों कैथोलिक कैंटनों ने अपना अलग – अलग संघ बनाया जिसका नाम 'साउण्डरबन्द' (Sounderband) रखा गया। इस संघ की स्थापना से गृह – युद्ध का सूत्रपात हुआ, जिसे एक माह में समाप्त कर दिया गया। कैथोलिकों की हार वास्तव में राष्ट्रीय आन्दोलन की विजय थी। 1848 ई. में जब नवीन संविधान का निर्माण हुआ तो उदार दल एवं क्रांतिकारी दल ने मिलकर उसे प्रगति का प्रतीक बनाने का प्रयत्न किया और कैथोलिक दल के उग्र विरोध के बावजूद वे काफी हद तक उस समय सफल भी हुए। परन्तु 1848 ई. के बाद उदारवादी और क्रांतिकारी दलों में सहयोग नहीं रह सका, क्योंकि उदारवादी उन सुधारों का समर्थन नहीं कर सके जिन्हें क्रांतिकारी करना चाहते थे। क्रांतिकारी दल को जनता का समर्थन प्राप्त हुआ और उस समर्थन के आधार पर क्रांतिकारी दल ने 1874 ई. का संविधान संशोधन पारित कराया। तत्पश्चात् 1919 तक क्रांतिकारी दल का प्रभुत्व रहा। यद्यपि इसी मध्य 1890 में देश के राजीतिक मंच पर 'समाजवादी दल' नामक एक नवीन दल का भी अभ्युदय हो गया। 1918 में क्रांतिकारी दल का पुनर्विभाजन हुआ। इसके कुछ सदस्यों ने दल की ग्रामीण नीति से असंतुष्ट होकर एक नए दल 'कृषक दल' का संगठन किया। 1919 में एक जनमत – संग्रह द्वारा जनता ने व्यवस्थापिका में प्रतिनिधित्व के लिए आनुपातिक प्रतिनिधित्व की प्रणाली स्वीकार की। फलस्वरूप 1919 में चुनाव



हुए और उसमें स्विस राजनीतिक दल प्रणाली का रूप परिवर्तित होकर बहुदल प्रणाली का हो गया । उपर्युक्त कैथोलिक , उदारवादी , क्रांतिकारी , समाजवादी व कृषक दलों के अतिरिक्त स्वित्जरलैण्ड में और भी अनेक छोटे – छोटे दल अस्तित्व में आए । 1935 ई . में ' स्वतंत्र दल ' (Independent Party) का जन्म हुआ । इसने कृषक दल से अलग होकर एक पृथक् दल बनाया । 1941 ई . में प्रजातंत्रवादी दल का उदय हुआ । इसके अतिरिक्त ' साम्यवादी दल ' भी अस्तित्व में आया । स्वित्जरलैण्ड की दल – प्रणाली का इस प्रकार जो बहुदलीय रूप बना , वह अब तक चला आ रहा है और किसी भी एक दल का इतना प्रभुत्व प्राप्त नहीं हुआ है कि उसे शासन – सत्ता पर एकाधिकार प्राप्त हो सके ।

सन् 1848 से पहले स्वित्जरलैण्ड में केवल तीन राजनीतिक दल – उदारदल (Liberals) , क्रान्तिकारी दल (Radicals) तथा कैथोलिक (Catholic) थे । उदार दल का निर्माण उन लोगों ने किया था , जो बुद्धिजीवि , श्रमिक तथा किसान थे । ये लोग उस सामन्तिक व्यवस्था के विरोधी थे , जिसकी स्थापना सन् 1815 के समझौते (The Pact of 1815) द्वारा हुई थी । सन् 1830 में उदार दल के प्रयत्नों के फलस्वरूप अधिकांश कैण्टनों में ऐसी व्यवस्था स्थापित हुई , जिसमें सभी को राजीतिक स्वतन्त्रता प्राप्त थी । सन् 1832 में उदार दल का ही एक भाग उससे अलग हो गया तथा उसने अपना संगठन क्रान्तिकारी दल के नाम से एक ऐसे लोकतन्त्रात्मक राष्ट्रीय राज्य की स्थापना के उद्देश्य से किया , जो सर्वत्र व्यक्ति को राजनीतिक स्वतन्त्रता प्रदान कर सके । उदार दल व क्रान्तिकारी दलों का विरोध करने के लिए कैथोलिक दल का संगठन किया गया । वह पारस्परिक विरोध इतना बढ़ा कि उसके परिणामस्वरूप साउण्डरबुन्ड (Sounderbund) का युद्ध हुआ । सन् 1848 में जब नये संविधान का निर्माण हुआ , तो उदार दल तथा क्रान्तिकारी दल दोनों ने मिलकर उसे प्रगति का प्रतीक बनाने का प्रयत्न किया । काफी हद तक वे उसमें सफल भी हुए । पर सन् 1848 के संविधान के निर्माण के पश्चात् उदारवादी व क्रान्तिकारी साथ साथ न रह सके , क्योंकि उदारवादी उन सुधारों का समर्थन न कर सके जिन्हें क्रान्तिकारी करना चाहते थे । सुधारों का समर्थन होने के कारण क्रान्तिकारी दल को जनता का समर्थन मिला तथा उस समर्थन के आधार पर क्रान्तिकारी दल ने संविधान में सन् 1874 का संशोधन कराया । इसके बाद क्रान्तिकारी दल का प्रभुत्व सन् 1919 तक चलता रहा । इसी बीच सन् 1890 में देश के राजनीतिक मंच पर समाजवादी दल का अभ्युदय हुआ । सन् 1919 में एक जनमत संग्रह द्वारा जनता ने व्यवस्थापिका में प्रतिनिधि के लिए आनुपातिक प्रतिनिधित्व (Proportional Representation) की प्रणाली स्वीकार की , जिसके परिणामस्वरूप सन् 1919 के चुनाव हुए । इन चुनावों के परिणामस्वरूप स्वित्जरलैण्ड की राजनीतिक – प्रणाली का रूप बहुदलीय प्रणाली का हो गया तथा कैथोलिक , उदारवादी , क्रान्तिकारी व समाजवादी दलों के अतिरिक्त किसानों , कारीगरों (व नागरिकों) का एक और दल अस्तित्व में आया , जिसका उद्देश्य स्वित्जरलैण्ड के किसानों व श्रमिक वर्ग का उद्धार करना था । इस समय स्वित्जरलैण्ड की दल प्रणाली का जो बहुदलीय रूप बना वह अब तक चला आ रहा है तथा किसी भी एक दल को इतना प्रभुत्व प्राप्त नहीं हुआ है कि उसे शासनसत्ता का एकाधिकार प्राप्त हो सकता । इस बीच में



अन्य दो राजनीतिक दल भी अस्तित्व में आ गये , जिनके कारण स्विट्जरलैण्ड के राजनीतिक दलों की संख्या में दो की वृद्धि और हो गयी है । इन दो नये दलों में एक स्वतन्त्र दल (Independent Party) है । दूसरा दल साम्यवादी दल (Communist Party) है ।

दलों का संगठन (Organisation of Parties)

स्विट्जरलैण्ड में ब्रिटेन , अमेरिका , पूर्व सोवियत संघ आदि का तुलना में राजनीतिक दलों के संगठन अत्यधिक शिथिल व अव्यवस्थित है । यहाँ तक कि कैंटनों के दलीय संगठन भी संघीय संगठन के अदीन नहीं है । केवल समाजवादी दल को छोड़कर स्विट्जरलैण्ड में अन्य दलों के स्वतंत्र राष्ट्रीय संगठन नहीं है । स्विस् मतदाता दलों की अपेक्षा उम्मीदवारों के व्यक्तिगत गुणों को अधिक महत्व देते हैं । अनेक सदस्य संघीय सभा में चुने जाने के पश्चात् यह निश्चय करते हैं कि वे किस दल से सम्बन्धित रहे । इसके अतिरिक्त संघीय सभा के दोनों सदनों में प्रतिनिधियों के बैठने का प्रबंध दल के अनुसार न किया जाकर प्रदेशों के अनुसार किया जाता है । परन्तु यह सब कुछ होते हुए भी आधुनिक समय में दलों के संगठन में कुछ दृढ़ता और नियमितता आने लगी है । संगठन अथवा ढाँचे की दृष्टि से सामान्यतः प्रत्येक दल के तीन प्रमुख अंग हैं (i) डायट (ii) केन्द्रीय समिति (Central Committee) एवं (iii) कार्यकारिणी समिति । डायट , दल की सर्वोच्च सभा होती है । इसकी बैठक वर्ष में प्रायः एक बार की जाती है , जिसमें दल की वार्षिक रिपोर्ट , वार्षिक आय – व्यय , समकालीन समस्याओं आदि पर दल के रुख और दल की नीतियों पर विचार – विमर्श होता है और निर्णय लिए जाते हैं । केन्द्रीय समिति , सदन की कार्यकारिणी समिति होती है , जिसका निर्वाचन प्रत्येक वर्ष डायट द्वारा होता है । परन्तु आकार बढ़ जाने के कारण एक छोटी कार्यकारिणी , समिति का निर्वाचन करती है । दल के प्रमुख अधिकारियों में अध्यक्ष , उपाध्यक्ष तथा कोषाध्यक्ष होते हैं । जिस देश में बहुदलीय प्रणाली होती है , वहाँ दलों की नीतियों में दृष्टिकोण सम्बन्धी अत्यधिक व्यापक अन्तर साधारणतः नहीं होते । स्विट्जरलैण्ड के विविध राजनीतिक दलों के विषय में भी मोटे रूप से यही बात कही जा सकती है , यहाँ भी विभिन्न राजनीतिक दलों का निर्माण दृष्टिकोण सम्बन्धी थोड़े – थोड़े अन्तर को लेकर हुआ है । इसी बात को दर्शाते हुए कोडिंग ने कहा है , “ स्विट्जरलैण्ड के दलों की विचारधारा तथा उनके सामाजिक संगठन में कोई अति उग्र प्रकार के अन्तर नहीं हैं , ‘ ‘ इस सबके बावजूद विभिन्न दलों के बीच नीतियों का अन्तर स्पष्ट है । इस सन्दर्भ में जिन नीतियों का प्रतिपादन वहाँ के विविध दल करते हैं , उनका विवेचन हम निम्न प्रकार कर सकते हैं 6. **कैथोलिक दल (Catholic Party)** इस दल को ‘ कैथोलिक अनुदार ’ या ‘ रूढ़िवादी दल ’ (Catholic Conservative Party) भी कहते हैं । यह स्विट्जरलैण्ड का एक प्रमुख दल है । साउण्डरबन्द के युद्ध के समय से यह दल कैथोलिक चर्च की रीतियों , नीतियों की रक्षा करने के लिए सदैव प्रयत्नशील रहा है । ग्रामीण कैंटनों में कैथोलिक चर्च के प्रभाव को स्थिर रखने के लिए यह दल कैंटनों के अधिकारों का समर्थक और संघीय शक्ति के केन्द्रीयकरण का विरोधी रहा है । इस दल की निरन्तर यह



चेष्टा रही है कि स्विस् संविधान में उन भागों को निकाल दिया जाए जो चर्च के कार्यकलापों पर प्रतिबंध लगाने वाले हैं। दल, सरकार के पारिवारिक मामलों और शिक्षा का प्रसार हो तथा उसका पूरा उत्तरदायित्व चर्च पर हो। कैथोलिक दल, व्यक्ति की स्वतंत्रता के उस रूप का समर्थ है जिसके अन्तर्गत व्यक्तिगत सम्पत्ति के सम्बन्धी अधिकार को असीमित माना जाता है। दल इस बात का विरोधी है कि लोक – कल्याण के नाम पर व्यक्ति को व्यक्तिगत सम्पत्ति अधिकार से वंचित किया जाये और उस पर किसी प्रकार के प्रतिबंध लगाए जाएँ। इस दल में एक समाजवादी वर्ग का अभ्युदय है, जो अधिक प्रगतिशील विचारों का है। इस पक्ष के प्रभाव के कारण कैथोलिक दल ने अब श्रमिकों के सम्बन्ध में उदारवादी दृष्टिकोण अपनाते हुए श्रमिकों के अधिकारों में पारिवारिक मत्ते, सामाजिक सुरक्षाकानूनों तथा श्रमिक संघों को प्रोत्साहन जैसी बातों को अपने कार्यक्रमों में स्थान दिया है। किन्तु इसकी नीति का मूल अब भी रूढ़िवादिता ही है। कृषकों, श्रमिकों एवं छोटे रोजगार पाने वाले लोगों के प्रति इस दल की सहानुभूति शनैः – शनैः बढ़ती जा रही है।

कैथोलिक दल जिसे कैथोलिक – रूढ़िवादी दल (Catholic Conservative Party) भी कहते हैं, स्विट्जरलैण्ड का एक अत्यन्त प्रमुख दल है। साउण्डरवण्ड के युद्ध के समय से यह दल कैथोलिक चर्च की रीतियों व नीतियों की रक्षा करने के लिए सदा प्रयत्नशील रहा है। यह दल सामाजिक सत्ता स्रोत के रूप में समाज के विश्वास का पुंज है, जिसके परिणामस्वरूप राजनीतिक सत्ता भी उसे उतनी ही अधिक प्राप्त है। चूँकि ग्रामीण कैण्टनों में कैथोलिक चर्च का प्रभाव अधिक है, अतः इस प्रभाव को बनाये रखने के लिए यह दल कैण्टनों के अधिकार का समर्थक और संघ में शक्ति के केन्द्रीकरण का विरोधी रहा है तथा कृषक समाज जो इसके समर्थन में रहा है, के मूल्यों व हितों की रक्षा के लिए सदा उद्यत रहा है। इसके अतिरिक्त यह दल सदा इस बात के लिए भी प्रयत्नशील रहा है कि स्विट्जरलैण्ड के संविधान से वे भाग निकल जायें, जो चर्च के क्रियाकलापों पर प्रतिबन्ध लगाते हैं। समाजवाद के आधुनिक युग में कैथोलिक दल व्यक्ति की स्वतन्त्रता के उस रूप का समर्थन करता है, जिसके अन्तर्गत व्यक्तिगत सम्पत्ति सम्बन्धी अधिकार को असीमित माना जाता है। वह उस बात को पसन्द नहीं करता कि लोक – कल्याण के नाम पर व्यक्ति को व्यक्तिगत सम्पत्ति सम्बन्धी अधिकार से वंचित किया जाये तथा उस पर किसी प्रकार के प्रतिबन्ध लगाये जायें। मूल रूप से इस दृष्टिकोण के हाते हुए भी दल को समय की मांग के आसथ चलना पड़ा है तथा श्रमिकों के अधिकार, पारिवारिक भत्ता तथा श्रमिक संघों को प्रोत्साहन जैसी बातों ने भी दल के कार्यक्रम में स्थान पा लिया है। समय की मांग के कारण दल को अपना नाम तक बदलना पड़ा है तथा वह अपने को अब कैथोलिक रूढ़िवादी दल (Catholic Conservative Party) के स्थान पर क्रिश्चियन समाजवादी – रूढ़िवादियों का दल (Christian Social Conservative Party) कहता है। आधुनिकता की ओर कुछ झुकाव होते हुए भी उसकी नीति का मूल रूढ़िवादिता (Conservatism) ही है।

क्रान्तिकारी दल (Radical Party) 1832 ई. में उदारवादी दल से अलग होकर कुछ लोगों ने 'क्रान्तिकारी दल' की स्थापना की। वह दल कुछ मामलों में कैथोलिक दल का समर्थन करता है तो कुछ मामलों में समाजवादी दल



का साथ देता है। इस तरह यह दल न तो अत्यधिक अनुदार है और न अत्यधिक तुलनात्मक शासन एवं राजनीति प्रगतिशील ही। यह तो एक मध्यम – मार्गी राजनीतिक दल है। इस दल का विश्वास है कि राष्ट्रीय एकता को सुदृढ़ बनाने के लिए संघीय सरकार को शक्ति – सम्पन्न बनाया जाए। साथ ही यह कैबिनेटों के अधिकारों को एकदल कम कर देने के पक्ष में भी नहीं है, क्योंकि यह मुख्यतः कैबिनेटों का ही दल है और इसके समर्थक देश के सभी भागों तथा जनता के सभी वर्गों में पाए जाते हैं। इस दल का झुकाव इस ओर है कि जो अधिकार केन्द्र को प्राप्त है उनका प्रयोग यह यथासंभव कैबिनेटों के सहयोग से करें। लेकिन यह सहयोग इस तरह का हो कि संघीय शासन की शक्ति में ह्रास न आ पाए। पर्याप्त राष्ट्रीय प्रतिरक्षा के लिए यह दल 'सैनिक संगठन की स्थापना' पर जोर देता है। धर्म – निरपेक्षता, राजनीतिक स्वतंत्रता और लोकतंत्र में इस दल की पूर्ण आस्था है और विदेशी मामलों में यह निष्पक्षता चाहता है। यह कैथोलिक चर्च की शक्ति की वृद्धि का और धार्मिक स्वतन्त्रता में हस्तक्षेप का विरोधी है। यह दल सम्पत्ति के अधिकार का समर्थक है, किन्तु वह असीमित अधिकार के पक्ष में नहीं है। क्रान्तिकारी दल (त्कंपबंस च्त्तजल) को कैथोलिक व समाजवादी दलों के बीच का दल कहा जा सकता है। मध्यमार्ग होने के कारण इनकी स्थिति ऐसी है कि किन्हीं मामला में यह कैथोलिक दल का साथ देता है, तो किन्हीं मामला में यह समाजवादी दल का साथ देता है। यह दल इस प्रकार न तो अत्यधिक रूढ़िवादिता का और न अत्यधिक प्रगतिशीलता का समर्थक है। प्रारम्भ में इस दल की नीति का मूल यह था कि केन्द्र में सरकार शक्तिशाली हो, व्यवस्थापन समाजवादी हो तथा प्रत्यक्ष लोकतन्त्र का प्रयोग अधिक से अधिक हो। सन् 1874 का संवैधानिक संशोधन मुख्य रूप से इसी दल का कार्य था तब उसके द्वारा उसने अपनी नीति को ही क्रियान्वित किया था। सन् 1919 में आनुपातिक प्रतिनिधित्व प्रणाली की व्यवस्था का संचालन भी इसी दलके शासन – काल में हुआ था, परन्तु तब से यह दल अल्पमत में आ गया है। मध्यवर्ती दल होने से व उदारवादी मूल्यों पर अधिक बल देने से, दल के अपने समर्थकों का उस प्रकार का कोई स्थायी समूह भी नहीं है, जैसा कैथोलिक या समाजवादी दल के स्थायी समर्थकों का है। अतः अन्य वर्गों को विमुख न होने देने के लिए उसकी केन्द्रीयकरण की नीति में कुछ अन्तर आ गया है। मूलरूप से शक्तिशाली केन्द्रीय सरकार का समर्थक होते हुए भी दल अब इस बात के पक्ष में नहीं है कि कैबिनेटों के अधिकार अब और कम किये जायें। वस्तुतः अब दल की नीति यह है कि जो अधिकार केन्द्र को प्राप्त हैं, उनका प्रयोग वह जहाँ तक सम्भव हो कैबिनेटों के साथ करे। प्रत्यक्ष लोकतन्त्र के प्रयोग के क्षेत्र में अब दल की नीति व्यवस्थापन – सम्बन्धी आरम्भक (Legislative Initiative) की व्यवस्था करने की है और उसके लिए वह लगातार प्रयत्नशील है। इस दल ने सदा इस बात का भी समर्थन किया है कि सब को धर्म सम्बन्धी स्वतन्त्रता हो तथा इस कारण सदा ही यह दल कैथोलिक चर्च की शक्ति की बढ़ोत्तरी तथा धार्मिक स्वतन्त्रता में हस्तक्षेप का विरोधी रहा है। वैयक्तिक सम्पत्ति का अधिकार जो महाद्वीपीय उदारवाद (continental liberalism) का एक प्रमुख तत्व है, स्विट्जरलैण्ड में भी बड़ी प्रतिष्ठित दृष्टि से देखा जाता है। क्रान्तिकारी दल इसकी सुरक्षा का समर्थक भी है। इसका तात्पर्य यह नहीं है कि यह किसी प्रकार की वर्ग – व्यवस्था को स्वीकार



करता है , पर इतना अवश्य है कि वह उच्च – मध्यम श्रेणी जो कानून के शासन में विश्वास करती है , इस दल की ओर अत्यधिक आकर्षिक होती है । उच्च – मध्यम श्रेणी वस्तुतः इसका मूल स्तम्भ है । फिर भी कुछ कैण्टनों में अन्य वर्ग भी इसके समर्थक है । ज्यूरिच में इसके समर्थक यदि रूढ़िवादी प्रोटेस्टेण्ट्स हैं तो वॉद (Vaud) में इसके समर्थक कृषक हैं रौ बर्न में यह वेतनभोगी कर्मचारियों का दल है । इस रूप में इस दल का राष्ट्रीय चरित्र अन्य दलों की अपेक्षा अधिक मुखरित है ।

समाजवादी दल (Socialist Party) 1890 ई . में ' समाजवादी प्रजातांत्रिक दल ' की स्थापना की गई । यह दल स्विट्जरलैण्ड ने तीन प्रमुख दलों में से एक है और वर्तमान में संघीय परिषद में इसके दो सदस्य हैं । यह दल सभी उद्योगों का राष्ट्रीयकरण और सभी व्यक्तिगत एकाधिकारों पर सामूहिक अधिकार चाहता । समाजवादी प्रजातांत्रिक दल का स्थापना का गइ । यह दलास्विट्जरलैण्ड न तान प्रमुख दला म स एक ह आर वर्तमान में संघीय परिषद् में इसके दो सदस्य हैं । यह दल सभी उद्योगों का राष्ट्रीयकरण और सभी व्यक्तिगत एकाधिकारों पर सामूहिक अधिकार चाहता है । उसकी नीति में इस बात पर बल नहीं दिया जाता कि राजनीतिक शक्ति प्रमुख रूप से श्रमिकों के हाथ में हो । यह श्रमिकों के लिए अधिक वेतन तथा सामाजिक सुरक्षा व बेकारी में सहायता , सभी को राजगार देने , स्त्रियों को मताधिकार देने और संघीय परिषद् के प्रत्यक्ष निर्वाचन का पक्षपाती है । 1971 ई . में स्विट्जरलैण्ड में स्त्रियों को मताधिकार दिया गया है , उसकी पृष्ठभूमि में इस दल की महत्वपूर्ण भूमिका रही थी । यह दल इस बात का भी समर्थक है कि जहाँ तक संभव हो , श्रमिकों को संगठित वार्ता के द्वारा अपनी दशा सुधारने के लिए प्रयत्न करने की स्वतन्त्रता होनी चाहिए और राज्य को तभी हस्तक्षेप करना चाहिए जब संगठित वार्ता असफल हो जाए । इस दल का मत है कि स्विट्जरलैण्ड को संयुक्त राष्ट्र संघ का सक्रिय सदस्य बनना चाहिए । यह दल इस बात का भी पक्षपाती है कि मिश्रित अर्थव्यवस्था से व्यक्ति और समाज दोनों का ही कल्याण संभव है । 1959 के दलीय कार्यक्रम में यह स्पष्टतः स्वीकार किया गया था कि " बिना किसी वंश और सम्पत्ति सम्बन्धी भेदभाव के प्रत्येक व्यक्ति अपनी प्रतिभा एवं योग्यता का विकास करने के लिए स्वतंत्र है । वस्तुतः यह दल जन – सहयोग , संतुलित अर्थव्यवस्था तथा पूँजीवाद और समाजवाद के समन्वय का पक्षपाती है । अपने उद्देश्यों की पूर्ति के लिए यह दल शांतिपूर्वक संवैधानिक तथा लोकतांत्रिक तरीके अपनाने का समर्थक है । समाजवादी दल का उदय यद्यपि एक ऐसे दल के रूप में हुआ था जो अति उग्रवादी था तथापि अब उसका रूप वैसा नहीं रहा है । अब उसकी नीति में इस बात पर बल नहीं दिया जाता कि समाज समाजवादी हो तथा राजनीतिक शक्ति प्रमुख रूप से श्रमिकों के हाथ में हो । उसकी नीति में अब व्यक्ति की स्वतन्त्रता को मान्यता प्राप्त है तथा वह यह मानता है कि मिश्रित अर्थ – व्यवस्था से व्यक्ति व समाज दोनों का ही कल्याण हो सकता है । कार्यक्रम में दल ने यह स्वीकार किया है कि " वंश तथा सम्पत्ति सम्बन्धी भेदभाव के बिना प्रत्येक व्यक्ति अपनी प्रतिभा व योग्यता का विकास करने : के लिए स्वतन्त्र होगा । " दल के विचार से इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए यह पर्याप्त होगा कि महत्वपूर्ण अर्थ – व्यवस्था सम्बन्धी प्रश्नों के निर्णय में व्यक्ति की इच्छा को उचित आदर प्राप्त हो । दल का उद्देश्य



पूँजीवादी अर्थ – व्यवस्था को समाप्त करने के स्थान पर उसको दोषों से मुक्त करना है तथा इस उद्देश्य की पूर्ति दल के विचार से मिश्रित अर्थ – व्यवस्था के माध्यम से सरलता से हो सकती है । समाजादी दल जो कुछ ऊपर कहा गया है , उसे अपना आधार मानते हुए श्रमिकों के काम के घण्टे कम हों , उन्हें पूरे समय काम करने का अवसर प्राप्त हो , सामाजिक सुरक्षा सबको सुलभ हो , इस प्रकार के कार्यों को अपने कार्यक्रम में स्थान देता है । वह इस बात का भी समर्थन करता है कि संगठन वार्ता द्वारा जहाँ तक सम्भव हो श्रमिकों को अपनी दशा सुधारने के प्रयत्न करने की स्वतन्त्रता होनी चाहिए तथा राज्य का हस्तक्षेप तभी होना चाहिए , जब संगठित वार्ता असफल हो जाये । समाजवादी दल संघ को प्रत्यक्ष कर लगाने , स्त्रियों को मताधिकार देने तथा स्विट्जरलैण्ड संयुक्त राष्ट्रसंघ का सक्रिय सदस्य बने , इन बातों का समर्थन भी करता है । अपनी इन्हीं नीतियों के कारण व्यक्तिगत सम्पत्ति की व्यवस्था वाले स्विट्जरलैण्ड के समाज में , जहाँ आर्थिक वर्गों की अपेक्षा सामाजिक वर्ग अधिक मुखरित और उग्र हं , स्विट्जरलैण्ड का समाजवादी दल अपनी शक्ति को औद्योगिक श्रमिकों से आगे बढ़ा नहीं पाया है तता इस कारण कुछ विद्वान इसे एक दबाव गुट (Pressure Group) से अधिक नहीं मानते हैं । ह्यरुज ने इस विषय में ऐसा ही मत प्रकट किया है और कहा है कि “ इस दल की भाषा सत्तारूढ होने की आकांक्षा रखने वाले दल की भाषा है , पर इसका क्रियाकलाप व दृष्टिकोण एक विरोधी दल जैसा नहीं है , वरन् वह एक असमाजवादी समाज के किसी दबाव – गुट जैसा है । ”

कृषक दल (Farmers Party) कृषक , श्रमिक तथा मध्यवर्गीय दल को संक्षेप में ‘ कृषक दल ’ का नाम दिया जाता है । 1918 में उदार दल के विघटित हो जाने के फलस्वरूप इस दल का जन्म हुआ । यह स्विट्जरलैण्ड के छोट टला में सबसे प्रमुख है । इसका प्रधान ध्येय किसानों , कारीगरों और मध्यवर्गीय जनता की दशा में सुधार करना है । केवल नीति सम्बन्धी घोषणाओं के बजाय यह दल उन कार्यों के करने में अधिक विश्वास करता है जिनमें उपर्युक्त लोगो की दशा में सुधार हो । इस दल का प्रमुख नारा है— “ प्रवल राष्ट्रीय सुरक्षा , महान केन्द्रीयकरण , विशाल संघीय आर्थिक सहायता , अनाज की उत्पत्ति को प्रोत्साहन , अनाज पर सरकार का पूर्ण अधिकार तथा सरकार द्वारा कृषि सम्बन्धी वस्तुओं का मूल्य – निर्धारण । ” उक्त तीन प्रमुख राजनीतिक दलों के अतिरिक्त कृषक दल स्विट्जरलैण्ड के छोटे – छोटे दलो में से है , पर उनमें सबसे प्रमुख है । दल का प्रमुख ध्येय किसानों कारीगरों तता स्विट्जरलैण्ड के छोटे – छोटे दलों में से है , पर उनमें सबसे प्रमुख है । दल का प्रमुख ध्येय किसानों कारीगरों तता स्विट्जरलैण्ड के मध्यम वर्ग की दशा का सुधार करना है । नीति – सम्बन्धी घोषणाओं के बजाय दल उन कार्यों के करने में अधिक विश्वास करता है , जिनके द्वारा कृषकों , कारीगरों श्रमिकों तथा अन्य मध्यम वर्ग के लोगों की दशा सुधर सके । सिद्धान्त : दल यह स्वीकार नहीं करता कि राज्य देश के आर्थिक जीवन में हस्तक्षेप करे फिर भी व्यवहार में उसका सदा यह प्रयत्न रहा है कि किसानों को राज्य की ओर से सहायता प्रदान की जाये , बाहर से आने वाले उत्पादन की वस्तुओं पर भारी कर लगे तथा किसानों को उचित लाभ मिलता रहे , इसके लिए राज्य खेती के उत्पादकों के मूल्यों का निर्धारण करे । राष्ट्रीय सभा दल के सदस्यों



की संख्या सन् 1935 से काफी कम हो गयी है । 30-35 के स्थान पर उसके केवल 20-22 सदस्य राष्ट्रसभा चुने जाते रहे हैं । ऐसा दल में एक पारस्परिक मतभेद के कारण हुआ है । यह मतभेद नाजीवाद के समर्थन को लेकर पैदा हो गया था तथा उसका अन्त दल के विघटन में हुआ था । उस समय कोई व्यक्ति यह दल अभी तक प्राप्त नहीं कर सका है । फिर भी दल को कृषकों का समर्थन प्राप्त है तथा समर्थक समूहों की शक्ति व कार्यों की दृष्टि से उसे कृषकों का दल कहा जा सकता है । इस प्रकार यह दल उन कैबिनेट में दक्षिणपन्थी उग्र प्रोटेस्टेंट लोगों का प्रतिनिधि है , जहाँ उदार – रूढ़िवादी दल (Liberal & Conservative Party) अपनी शक्ति खो चुका है ।

स्वतन्त्र दल (Independent Party) 1935 ई . में स्थापित यह दल आर्थिक क्षेत्र में राज्य – हस्तक्षेप का विरोधी व उपभोक्ताओं के हितों का समर्थक है । कोडिंग्स के मतानुसार “ स्वतंत्र दल अपनी राजनीतिक शक्ति की दुर्बलता को अपनी भाषण – पटुता द्वारा कम कर लेता है । ” स्वतन्त्र दल स्विट्जरलैण्ड के छोटे – छोटे दलों में से एक अन्य दल है । इसकी राजनीतिक शक्ति कुछ अधिक नहीं है , फिर भी इसके नेतागण अपनी वाक्पुंजा द्वारा दल के उद्देश्य को पूरा करने के लिए सदा प्रयत्नशील रहे हैं । जैसा इस सम्बन्ध में कोडिंग ने कहा है , “ स्वतन्त्र दल अपनी वाक्पुंजा द्वारा वास्तविक राजनीतिक शक्ति की कमी को पूरा कर लेता है । ’ दल का प्रमुख उद्देश्य उपभोक्ताओं के हितों की रक्षा करना तथा देश के आर्थिक जीवन में राजकीय हस्तक्षेप का विरोध करना है । दल इस बात के लिए सदा प्रयत्नशील रहता है कि उपभोक्ता के हित का ध्यान अधिकारियों को सदा बना रहे तथा वे उससे विमुख होकर शासक की नीतियों का संचालन न करें । दल को इस नीति के कारण निम्न मध्यम श्रेणी के लोग सदा इसके समर्थक रहे हैं । इसकी लोकप्रियता का आधार नीति की अपेक्षा व्यक्तिगत नेतृत्व अधिक है । हर दुतवीलर

मध्यम श्रेणी का लोग सदा इसका समर्थक रह है । इसका लोकप्रियता का आधार नीति का अपेक्षा व्यक्तिगत नेतृत्व अधिक है । हर दुतवीलर (Herr Duttweiler) दल के एक ऐसे नेता रहे हैं , जिनका व्यक्तित्व दल के सदस्यों व समर्थकों को एक सूत्र में बाँधे रखने में बड़ा सहायक रहा है ।

उदारवादी दल (Liberal Party) उदारवादी दल भी स्विट्स राजनीति में प्रधान स्थान रखता था , जिसने कभी क्रान्तिकारी दल के साथ सन् 1847 के संविधान के श्रीगणेश के समय शासन सम्भाला था । किन्तु धीरे – धीरे इस दल की शक्ति में ह्रास होता गया और आज यह एक शक्तिहीन तथा प्रभावहीन दल है । यह दल ‘ परम्परागत उदारवाद ’ एवं ‘ अहस्तक्षेपवादी नीति ’ का पोषक है और समाजवाद तथा प्रत्यक्ष – संघीय करों का विरोधी है । अधिकांश धनिक प्रोटेस्टेंट्स इसके समर्थक हैं । उदारवादी दल , जिसने क्रान्तिकारी दल के साथ सन् 1848 के संविधान के श्रीगणेश के समय शासन संभाला था , अब एक नगण्य – सादल है । यों क्रान्तिकारी दल भी पहले इसी की वामपंती शाखा के रूप में था । परन्तु बाद में मतभेद होने पर वह अलग हो गया और अब स्विट्जरलैण्ड का एक प्रमुख दल है । दूसरी ओर उदारवादी दल की नीति अब भी प्रोटेस्टेंट समर्थक तथा रूढ़िवादी है , यद्यपि



इसका परिणाम यह हुआ है कि दल की शक्ति लगातार समाप्त हो रही है। दल की शक्ति बिल्कुल समाप्त न हो जाये, इससे बचने के लिए कुछ लोगों ने इसे उदारवादी लोकतन्त्रीय संघ का नाम दिया है। साम्यवादी दल का वर्तमान नाम 'श्रमिक दल' है। यह दल अभी तक कोई विशेष शक्ति प्राप्त नहीं कर सका है। इस दल पर 1936 में और 1940 में प्रतिबंध लगा दिया गया था, जो 1945 से हटा लिया गया। इसकी नीति मुख्यतः पुरातन साम्यवाद पर आधारित रही है और इसलिए इसे देश में महत्वपूर्ण समर्थन नहीं मिल पाया है। इस दल की मुख्य नीतियाँ हैं — बड़े व्यापारों का केन्द्रीयकरण, वृद्धावस्था का बीमा, स्त्री मताधिकार सप्ताह में 40 घंटे कार्य आदि।

साम्यवादी दल (Communist Party) स्विट्जरलैण्ड का एक ऐसा दल है, जो कभी भी अत्यधिक उन्नति नहीं कर सकता है। सन् 1940 से 1945 तक इस पर प्रतिबन्ध रहा तथा उसके बाद इस दल ने अपना नाम श्रमिक दल (Labour Party) रख लिया। इसकी नीति मुख्यतः पुरातन साम्यवाद पर आधारित रही है और यही कारण है कि इस देश में कभी कोई महत्वपूर्ण समर्थन नहीं मिला है।

स्विट्जरलैण्ड में राजनीतिक दलों की वह स्थिति नहीं है जो ब्रिटेन, भारत तथा अमेरिका में है। वहाँ की शासन व्यवस्था में राजनीतिक दलों की महत्वपूर्ण भूमिका नहीं है। स्विस राजनीतिक दलों के चुनाव में हार या जीत से कोई फर्क नहीं पड़ता। वहाँ पर दलीय संघर्ष व दलीय भावना बहुत ही कम है। वहाँ किसी भी राजनीतिक पार्टी के नियमपूर्वक बन्दा देने वाले सदस्य नहीं हैं और न ही दलीय नीति का प्रचार व नियन्त्रण रखने वाली कोई केन्द्रीय संस्था है। इसी कारण स्विस दलीय व्यवस्था को अति दुर्बल दलीय व्यवस्था कहा जाता है।

6.4.4 चीनी दल प्रणाली (Chinese Party System)

साम्यवादी देशों की शासन प्रणाली का संचालन एकमात्र साम्यवादी दल द्वारा ही किया जाता है। यद्यपि वहाँ पर अन्य राजनीतिक दल भी हो सकते हैं, लेकिन उन्हें भी साम्यवादी दल के मार्गदर्शन में साम्यवादी दल की नीतियों व कार्यक्रमों का ही संचालन करना पड़ता है। साम्यवादी देशों में दल प्रणाली की प्रमुख विशेषता उसका संवैधानिक होना है। चीन में भी यही व्यवस्था है। वहाँ साम्यवादी दल एकमात्र शासन व समाज का पथ-प्रदर्शक व निर्देशक है। उसे अपने विरुद्ध किसी भी व्यक्ति, संस्था या समूह द्वारा की गई असहमति पूर्ण रूप से अमान्य है। चीनी साम्यवादी दल ही सर्वोच्च सम्प्रभु है। चीनी संविधान में साम्यवादी दल को ही देश के नेतृत्व का केन्द्र तथा चीनी शासन प्रणाली का हृदय स्वीकार किया गया है। चीन में साम्यवादी दल का एकमात्र सम्प्रभुता 1949 से चली आ रही है और इसी कारण चीन में एक-दलीय प्रणाली है।

• चीन में राजनीतिक दल (Political Parties in China)

चीन में साम्यवादी शासन की स्थापना से पहले चीन में डेमोक्रेटिक लीग, कोओमिन्तांग की क्रान्तिकारी समिति, किसान मजदूर दल, प्रजातांत्रिक चिह-कुंग दल व जनतांत्रिक पुर्ननिर्माण संघ आदि सात छोटे राजनीतिक दल थे।



इनमें से अधिकतर दल आज भी हैं, लेकिन उनकी भूमिका साम्यवादी दल की सहायता करने वाले दलों के रूप में भी मान्य है। साम्यवादी दल ही चीन का प्रमुख व एकमात्र राजनीतिक दल है। चीन में 1920 में एक चीनी प्राध्यापक, चेन-ट्यू-रनू ने मार्क्सवाद के प्रचार व प्रसार के लिए एक संस्था की स्थापना की। इस संस्था को ही 1921 में साम्यवादी दल का रूप दे दिया गया। इसी वर्ष इस दल का प्रथम महासम्मेलन संघाई में हुआ। चेन-ट्यू-रनू को साम्यवादी दल का प्रथम महासचिव नियुक्त किया गया। चीन के क्रान्तिकारी आन्दोलन को गति देने के लिए 1924 में इस दल ने कोमिन्तांग के साथ समझौता किया। लेकिन 1927 में यह दल कोमिन्तांग से अलग हो गया। दोनों में सत्ता प्राप्ति के लिए संघर्ष चलता रहा। 1937 में जापानी आक्रमण के समय साम्यवादी दल फिर से कोमिन्तांग के साथ मिल गया और युद्ध के बाद फिर से दोनों अलग हो गए। द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद माओ-त्से-तुंग का साम्यवादी दल पर पूरा नियन्त्रण हो गया। कोमिन्तांग के साथ सत्ता संघर्ष में माओ-त्से-तुंग के साम्यवादी दल की विजय हुई और समस्त चीन पर साम्यवादी दल का एकाधिकार हो गया। 1949 से लेकर आज तक साम्यवादी दल ही चीन में शासन का एकाधिकारी रहा है।

साम्यवादी दल का संगठन (Organisation of the Communist Party)

चीनी साम्यवादी दल विश्व का सबसे बड़ा दल है। इस दल का संगठन 'लोकतान्त्रिक केन्द्रवाद' (Democratic Centralism) के सिद्धान्त के आधार पर हुआ है। इसका अर्थ है कि इसमें निम्न स्तर के दलीय संगठन, उच्च स्तर के दलीय संगठनों का अप्रत्यक्ष पद्धति के आधार पर निर्वाचन करते हैं। इसका संगठन पिरामिड की तरह है। नीचे से लेकर ऊपर तक सभी अंग श्रृंखलाबद्ध हैं। इस पिरामिड में निम्न स्तर पर स्थानीय दल कांग्रेस है तथा शीर्ष पर राष्ट्रीय दल कांग्रेस है। सबसे निकाय को सैल (Cell) कहा जाता है। सैल के ऊपर जिला समिति, जिला समिति के ऊपर क्षेत्रीय समिति तथा उसके ऊपर प्रान्तीय समिति होती है। सबसे ऊपर राष्ट्रीय कांग्रेस है। साम्यवादी दल में अध्यक्ष के स्थान पर महासचिव का प्रावधान है।

साम्यवादी दल का प्रारम्भिक निकाय सैल (Cell) है। दल के कुछ सदस्य मिलकर किसी भी कृषि फार्म, औद्योगिक संस्थान, सरकारी कार्यालय, शिक्षा संस्थान व जन कम्प्लेक्स से प्रारम्भिक निकायों का गठन कर सकते हैं। कई बार अधिक सदस्य होने पर उच्चतर दलीय संगठन की अनुमति से प्रारम्भ दलीय समितियों का भी गठन किया जा सकता है। प्रारम्भिक निकायों को प्रमुख कार्य-दल के सिद्धान्तों, नीतियों व निर्णयों का प्रचार करना, जनता के सामने आदर्श प्रस्तुत करना। इसके बाद जिला, प्रदेश तथा प्रान्तीय स्तरों पर स्थानीय दलीय कांग्रेस होती है। प्रत्येक स्थानीय कांग्रेस दलीय समिति, स्थायी समिति तथा स्थानीय सचिवालय के सदस्यों की नियुक्ति करती है। इसके बाद दल के संगठन में राष्ट्रीय कांग्रेस का स्थान सर्वोच्च है। इसकी बैठक 5 वर्ष में एक बार अवश्य होती है। विशेष परिस्थितियों में यह अधिवेशन कभी भी बुलाया जा सकता है। राष्ट्रीय कांग्रेस के सदस्यों की संख्या तथा चुनाव का तरीका केन्द्रीय समिति द्वारा निर्धारित किया जाता है। कांग्रेस की शक्तियां व कार्य-केन्द्रीय समिति के



प्रतिवेदनोँ पर विचार करना, दल से सम्बन्धित सभी महत्वपूर्ण विषयों पर विचार करना, दलीय संविधान में परिवर्तन, केन्द्रीय समिति का चुनाव करना, केन्द्रीय परामर्शदात्री तथा अनुशासन आयोग के सदस्यों का चुनाव व उनके प्रतिवेदनोँ पर विचार करना है।

साम्यवादी दल के केन्द्रीय निकायों में दलीय केन्द्रीय समिति का सर्वाधिक प्रमुख स्थान है। इसके सदस्यों का चुनाव राष्ट्रीय दल कांग्रेस द्वारा होता है। इस समिति का चुनाव 5 वर्ष के लिए होता है। यह समिति के अध्यक्ष, केन्द्रीय पोलिट ब्यूरो तथा केन्द्रीय सचिवालय का भी निर्वाचन करती है। इसके बाद साम्यवादी दल का छोटा निकाय पोलिट ब्यूरो है जो एक कार्यकारी निकाय है। इसके बाद स्थायी समिति का स्थान है। यह समस्त दल का मस्तिष्क है। इसमें राष्ट्रीय स्तर के गणमान्य नेता होते हैं। यह समिति राष्ट्रीय नीति निर्माण में सर्वोपरि है। इसके अलावा साम्यवादी दल में सचिवालय है जो दल के विभिन्न कार्यों का सम्पादन करता है। इसके अतिरिक्त कुछ सहायक संगठन व छोटे राजनीतिक दल भी हैं जो साम्यवादी दल के ही अधीन रहकर कार्य करते हैं।

• चीनी दलीय-प्रणाली की विशेषताएं (Features of Chinese Party System)

चीन में 1949 से आज तक एक ही राजनीतिक दल है। यह दल जनवादी चीन की राजनीतिक व्यवस्था में दल, सरकार तथा देश का स्वरूप लिए हुए हैं। यह दल चीनी शासन व समाज का सर्वोपरि सम्प्रभु है। इस दल की विशेषताएं ही चीनी दल की विशेषताएं हैं। ये विशेषताएं निम्नलिखित हैं :-

(1) एक दलीय व्यवस्था (The Single Party System):- चीन की स्वतन्त्रता से लेकर आज तक वहां एक ही दल का शासन रहा है। यह दल साम्यवादी दल ही है। यद्यपि चीन में बहुदलीय पद्धति को मान्यता दी गई है और वहां कई छोटे-छोटे राजनीतिक दल भी हैं। लेकिन सभी अन्य दल साम्यवादी दल के अस्तित्व को स्वीकार करते हैं और उसके मार्गदर्शन में साम्यवादी नीतियों व कार्यक्रमों को लागू करने के लिए ही कार्य करते हैं।

(2) प्रजातांत्रिक केन्द्रवाद (Democratic Centralism):- चीनी दल प्रणाली में साम्यवादी दल का गठन कुछ निश्चित सिद्धान्तों पर हुआ है। इनमें सबसे प्रमुख सिद्धान्त लोकतन्त्रीय केन्द्रवाद का है। इसमें प्रत्येक निम्न स्तर की दल संस्था अपने उच्च स्तर की दल संस्था का निर्वाचन करती है। इसमें प्रत्येक निम्न संगठन अपने से उच्च संगठन के अधीन होता है और दलीय संगठन एक पिरामिड की तरह होता है। सभी अधीनस्थ दलीय संस्थाएं उच्च संस्था के आदेशों के अनुसार ही कार्य करती हैं अर्थात् उच्च संगठन का निम्न संगठनों पर पूरा नियन्त्रण रहता है।

(3) दलीय सर्वोच्चता (Supremacy of Party):- चीनी दल प्रणाली में साम्यवादी ही सर्वोच्च है। देश में महत्वपूर्ण पदों पर सभी नियुक्तियां साम्यवादी दल की सिफारिश पर ही होती हैं। देश के प्रशासन पर इसी का पूर्ण नियन्त्रण है। अतः चीनी दलीय प्रणाली में दल ही सर्वोच्च है।



(4) कठोर दलीय अनुशासन (Strict Party Discipline):— चीन का साम्यवादी दल भी पत्थर के स्तम्भ की तरह कठोर अनुशासन कायम रखता है। दल का स्वरूप पूर्णतया केन्द्रीयकृत तथा एकरूप है। इसमें गुटबन्दी के लिए कोई जगह नहीं है। दल के प्रति बगावत करने वालों को प्राणदण्ड तक दे दिया जाता है। वहां अपने हितों की अपेक्षा दल के हितों को प्राथमिकता दी जाती है। चीनी साम्यवादी दल बहुत ही संगठित, अनुशासनबद्ध तथा सुदृढ़ है।

(6) विश्व का सर्वाधिक विशाल साम्यवादी दल (Largest Communist Party of the World):— चीनी साम्यवादी दल विश्व में सबसे बड़ा साम्यवादी दल है। 1945 में साम्यवादी दल की सदस्य संख्या 12 लाख थी जो आज 6 करोड़ है। इतनी विशाल सदस्यता वाला अन्य कोई दल नहीं है।

(6) साम्यवादी दल की सदस्यता (Membership of the Communist Party):— इसकी सदस्यता सीमित रखी जाती है ताकि दल में एकता तथा अनुशासन कायम रह सके। इसके साथ ही उसकी आयु 18 वर्ष होना भी जरूरी है। दल की सदस्यता उसी व्यक्ति को दी जाती है जो आजीवन साम्यवाद की सेवा करने के लिए तैयार हो, स्वार्थ को लोकहित में छोड़ने को तैयार हो।

(6) दल का सैद्धान्तिक आधार (Fundamental Basis of the Party):— चीन का साम्यवादी दल मार्क्सवाद—लेनिनवाद के उन सिद्धान्तों पर आधारित है।

चीनी साम्यवादी दल के कार्य व भूमिका (Functions and role of the Chinese Communist Party)

जनवादी चीन की राजनीतिक व्यवस्था में इसकी महत्वपूर्ण भूमिका है। इस दल का प्रमुख ध्येय साम्यवादी की पूर्ण स्थापना करना है। इसके प्रमुख कार्य व भूमिका निम्न प्रकार से समझी जा सकती हैं :—

1. यह चीनी क्रान्ति का नियता व रक्षक है। इसका ध्येय साम्यवादी चीन की आन्तरिक तथा बाहरी शत्रुओं से रक्षा करना है।
2. यह जनता का प्रेरक, आदर्श व शिक्षक है। इसका प्रमुख कार्य माओवाद की शिक्षा देना है।
3. यह सभी राजनीतिक दलों व सार्वजनिक संगठनों पर नियन्त्रण रखता है।
4. यह चीनी समाज के विभिन्न वर्गों से निर्मित प्रजातांत्रिक संयुक्त मोर्चे का नेतृत्व करता है।
5. इस दल का प्रमुख उद्देश्य विश्व से पूंजीवाद का नाश करना तथा वहां साम्यवाद की स्थापना करना है।
6. यह देश व समाज का वास्तविक शासक है। देश का सम्पूर्ण प्रशासनिक संगठन इसी के नियन्त्रण में रहकर ही कार्य करता है। देश की सभी कार्यपालक तथा विधायी संस्थाएं इसी के मार्गदर्शन में कार्य करती हैं। इसके सामने सरकार के सभी अंगों की स्थिति रबड़ की मुहर की तरह है।



7. साम्यवादी दल चीन का सर्वोच्च सेनापति है। समस्त सैनिक शक्तियों पर साम्यवादी दल का ही प्रभाव है। चीन की रक्षा परिषद, सेना का प्रधान सेनापति तथा रक्षा मन्त्रालय का अध्यक्ष साम्यवादी दल के ही सदस्य होते हैं।

चीनी साम्यवादी दल की वास्तविक स्थिति (Actual Position of the Chinese Communist Party)

चीन साम्यवादी दल ही चीनी समाज का रक्षक, शिक्षक, माओवाद का अधिष्ठाता, सर्वोच्च सेनापति तथा सर्वोच्च प्रशासनिक अधिकारी व वास्तविक शासक है। सरकार की समस्त संस्थाएं व अंग साम्यवादी दल की इच्छा का ही संचालन करते हैं। उसका चीनी कार्यपालिका तथा विधायिका पर पूर्ण नियन्त्रण है। न्यायपालिका भी उसकी पहुंच से बाहर नहीं है। चीन में सरकार के सभी अंग व अन्य संस्थाएं चीनी साम्यवादी दल की नीतियों व कार्यक्रमों का ही संचालन करते हैं।

दलीय व्यवस्था लोकतन्त्र की आत्मा है। आज विश्व के सभी लोकतन्त्रीय शासन व्यवस्थाओं वाले देशों में राजनीतिक दलों की महत्वपूर्ण भूमिका है। आज लोकतन्त्र और राजनीतिक दल एक दूसरे के पूरक हैं। लोकतन्त्र में जनता का ही शासन होता है और राजनीतिक दल जनमत का निर्माण करके लोकतन्त्रीय सरकार को गति प्रदान करते हैं। सभी स्वतन्त्र देशों ने राजनीतिक दलों को आवश्यक माना है। सर्वसत्ताधिकारवादी देशों में भी एकमात्र राजनीतिक दल ही राजनीति जीवन में अहम् भूमिका अदा करता है। रूस और चीन में भी दल-प्रणाली का उतना ही महत्व है, जितना भारत, ब्रिटेन व अमेरिका में है। आधुनिकता और राजनीतिक चेतना के प्रतीक दल लोकतन्त्रीय और निरंकुश सभी प्रकार की शासन-व्यवस्थाओं में महत्व रखते हैं। जनता और सरकार में कड़ी का काम करके राजनीतिक दल ही किसी राजनीतिक व्यवस्था रूपी गाड़ी को गति देते हैं। जनता को शिक्षा देना व राजनीतिक चेतना का विकास करने, जनमत को तैयार करने, सरकार पर नियन्त्रण रखने तथा उसे निरंकुश बनने से रोकने में राजनीतिक दल ही अहम् भूमिका निभाते हैं। इसी कारण आज राजनीतिक दलों को राजनीतिक व्यवस्था की धुरी कहा जाने लगा है।

6.5 अपनी प्रगति जांचें

1. जनवादी चीन का प्रमुख दल..... है।
2. एक दलीय व्यवस्था है।
3. लोगों का एक ऐसा संगठित गुट होता है जिसके सदस्य किसी साँझी विचारधारा में विश्वास रखते हैं या समान राजनैतिक दृष्टिकोण रखते हैं कहलाता है ।
- 4- ब्रिटेन के प्रमुख दो प्रमुख राजनीतिक दल..... है । श्रमिक दल (Labour Party)
5. अमेरिका के दो प्रमुख राजनीतिक दल हैं जिन्हें..... तथा के नाम से जाना जाता है।
6. सन् 1848 से पहले स्विट्जरलैण्ड में केवल तीन राजनीतिक दल -1.....2.....3..... थे।



7. कृषक दल (Farmers Party) का दल है
8. संगठन अथवा ढाँचे की दृष्टि से सामान्यतः प्रत्येक दल के तीन प्रमुख अंग 1.....2.....3..... हैं

1.6 सारांश (Summary)

दल-प्रणाली किसी भी शासन व्यवस्था का आवश्यक अंग है। दलीय व्यवस्था ही वह ताना-बाना है जिसके चारों ओर राजनीतिक व्यवस्था गति करती है। लोकतन्त्र और तानाशाही शासन व्यवस्था वाले देशों में राजनीतिक दलों का बराबर महत्व है। लोकतन्त्रीय देशों में जहाँ राजनीतिक दल जनइच्छा की अभिव्यक्ति का साधन हैं, वहीं तानाशाही देशों में वे शासक वर्ग के हितों का सम्पादन करने वाले प्रभावशाली यन्त्र हैं। साम्यवादी देशों में भी दली-प्रणाली का उतना ही महत्व है, जितना भारत व अमेरिका जैसे लोकतन्त्रीय देशों में है। साम्यवादी देशों में तो व्यवहार में राजनीतिक दल ही सब कुछ है। 1688 की क्रान्ति में ब्रिटेन में दो राजनीतिक दलों का जन्म दिया। जो लोग राजा के समर्थक थे, वे टोरी कहलाए तथा उन्होंने कवैलियर्स की परम्पराओं का ही निर्वहन किया। संसद का समर्थन करने वाले हिवग कहलाए। जिन्होंने राउण्डहेड्स के मार्ग का ही अनुसरण किया। कालान्तर में इन दोनों दलों का स्थान अनुदार दल तथा उदार दल ने ले लिया। टोरी से अनुदार दल (Conservative Party) तथा हिवग से उदार दल (Liberal Party) का जन्म हुआ। 1832, 1867 तथा 1864 के सुधार अधिनियमों ने मताधिकार को उदार बना दिया जिसके परिणामस्वरूप एक नया श्रमिक दल (Labour Party) उभर आया। धीरे-धीरे इस दल की भी शासन में भागीदारी हुई और उदार दल का महत्व कम होने लगा। 1924 में ब्रिटेन में प्रथम बार श्रमिक दल की सरकार बनी और उसने धीरे-धीरे उदारवादी दल का स्थान ले लिया। आज ब्रिटेन में दो ही प्रमुख दल हैं :- अनुदारवादी दल (Conservative Party) तथा श्रमिक दल (Labour Party)।

अमेरिका की दल प्रणाली का विश्लेषण करने से यह बात उजागर होती है कि अमेरिका में कठोर दलीय अनुशासन के अभाव के कारण राजनीतिक दलों के सदस्य दल के कार्यक्रम व नीतियों को उत्तरदायित्वपूर्ण ढंग से पूरे करने के प्रयास नहीं करते। अमेरिका में क्षेत्रवाद का प्रभाव, स्पष्ट नीतियों व कार्यक्रमों का अभाव आदि बातें अमेरिकी राजनीतिक दलों को एक स्वार्थपूर्ण व्यक्तियों का समूह बना देती है। वहाँ पर सबसे खतरनाक प्रथा लूट-प्रणाली है जो दलीय व्यवस्था की निष्पक्षता को चुनौती देती है। इसके बावजूद भी यह कहना गलत होगा कि अमेरिकन दलीय-व्यवस्था महत्वहीन है। सत्य तो यह है कि द्वि-दलीय प्रणाली अमेरिका के राजनीतिक जीवन में इस कदर समा चुकी है कि इसे बहुदलीय बनाने में कोई औचित्य दिखाई नहीं देता। लम्बे समय से अमेरिका में द्वि-दलीय प्रणाली सफलता से कार्य कर रही है तो इसके दोषों का कोई आलोचनात्मक आधार महत्वहीन हो जाता है। स्विट्जरलैण्ड की प्रजातांत्रिक व्यवस्था दलीय अवगुणों से मुक्त है। फिर भी राजनीतिक दल देश की सभी राजनीतिक संस्थाएँ संघीय सभा, संघीय परिषद् और अन्य सभी प्रतिनिधि संस्थाएँ अपनी भूमिका का निर्वाह करते हैं। इसके बावजूद स्विट्स दलीय व्यवस्था को 'दुर्बल दलीय व्यवस्था की संज्ञा दी जाती है। यहाँ दलीय व्यवस्था



उस रूप में कार्य नहीं करती है, जिस तरह से संयुक्त राज्य अमेरिका तथा ग्रेट ब्रिटेन में कार्यरत है। साम्यवादी देशों की शासन प्रणाली का संचालन एकमात्र साम्यवादी दल द्वारा ही किया जाता है। यद्यपि वहां पर अन्य राजनीतिक दल भी हो सकते हैं, लेकिन उन्हें भी साम्यवादी दल के मार्गदर्शन में साम्यवादी दल की नीतियों व कार्यक्रमों का ही संचालन करना पड़ता है। साम्यवादी देशों में दल प्रणाली की प्रमुख विशेषता उसका संवैधानिक होना है। चीन में भी यही व्यवस्था है। वहां साम्यवादी दल एकमात्र शासन व समाज का पथ-प्रदर्शक व निर्देशक है। उसे अपने विरुद्ध किसी भी व्यक्ति, संस्था या समूह द्वारा की गई असहमति पूर्ण रूप से अमान्य है। चीनी साम्यवादी दल ही सर्वोच्च सम्प्रभु है। चीन साम्यवादी दल ही चीनी समाज का रक्षक, शिक्षक, माओवाद का अधिष्ठाता, सर्वोच्च सेनापति तथा सर्वोच्च प्रशासनिक अधिकारी व वास्तविक शासक है। सरकार की समस्त संस्थाएं व अंग साम्यवादी दल की इच्छा का ही संचालन करते हैं। उसका चीनी कार्यपालिका तथा विधायिका पर पूर्ण नियन्त्रण है। न्यायपालिका भी उसकी पहुंच से बाहर नहीं है। चीन में सरकार के सभी अंग व अन्य संस्थाएं चीनी साम्यवादी दल की नीतियों व कार्यक्रमों का ही संचालन करते हैं।

6.7 सूचक शब्द (Key Words)

राजनीतिक दल—राजनीतिक दल (Political party) लोगों का एक ऐसा संगठित गुट होता है जिसके सदस्य किसी साँझी विचारधारा में विश्वास रखते हैं या समान राजनैतिक दृष्टिकोण रखते हैं।

एकदलीय प्रणाली—ऐसी राजनीतिक व्यवस्था है जिसमें शासन का सूत्र एक ही राजनीतिक दल के हाथों में रहे।

द्वि-दलीय प्रणाली—द्वि-दलीय राजनीतिक व्यवस्था एक ऐसी व्यवस्था है जिसमें शासन का सूत्र दो दलों के हाथ में रहता है

बहुदलीय प्रणाली—राजनीतिक व्यवस्था एक ऐसी व्यवस्था है जिसमें शासन का दो से अधिक राजनीतिक दो दलों के हाथ में रहता है

साम्यवाद—साम्यवाद, सामाजिक-राजनीतिक दर्शन के अंतर्गत एक ऐसी विचारधारा के रूप में वर्णित है, जिसमें संरचनात्मक स्तर पर एक समतामूलक वर्गविहीन समाज की स्थापना की जाएगी। ऐतिहासिक और आर्थिक वर्चस्व के प्रतिमान ध्वस्त कर उत्पादन के साधनों पर समूचे समाज का स्वामित्व होगा।

6.8 स्वयं मूल्यांकन हेतु प्रश्न (Self Assessment Questions)

प्रश्न .1 राजनीतिक दल का अर्थ एवं परिभाषा बताइये।

प्रश्न .2 यूएसए और यूके में राजनीतिक दलों के स्वरूप एवं सांगठनिक ढाँचे का विवेचन कीजिए।

प्रश्न .3 चीनी गणराज्य में साम्यवादी दल की भूमिका का विवेचन कीजिए।



प्रश्न .4 राजनीतिक दल के कार्य की विवेचन कीजिए ।

प्रश्न . स्विट्जरलैण्ड में दलीय प्रणाली की विवेचन कीजिए ।

6.9 अपनी प्रगति की जांच करने के लिए उत्तर (Answer- check your progress)

1. साम्यवादी दल
2. चीन.
3. दल
4. अनुदारवादी दल (Conservative Party)
5. Democratic Party- Republic Party
6. 1. उदारदल (Liberals) 2.क्रान्तिकारी दल (Radicals) 3.कैथोलिक (Catholic)
7. स्विट्जरलैण्ड
8. (i)डायट(ii) केन्द्रीय समिति(iii) कार्यकारिणी समिति

6.10 सन्दर्भ ग्रन्थ/निर्देशित पुस्तकें (References / Suggested Readings)

1. तुलनात्मक राजनीति की रूपरेखा— ओम प्रकाश गाबा, मयूर पेपर बैक्स, नोएडा ।
2. तुलनात्मक शासन एवं राजनीति — डॉ. बीरकेश्वर प्रसाद सिंह, ज्ञानदा प्रकाशन (पी.एण्ड डी.) 24, दरियागंज, अंसारी रोड , दिल्ली ।
3. तुलनात्मक राजनीति एवं राजनीतिक संस्थाएँ — सी.बी. गेना, विकास पब्लिशिंग हाउस प्रा.लि. अंसारी रोड, दिल्ली ।
4. तुलनात्मक राजनीति — जे.सी. जौहरी, स्टर्लिंग पब्लिशर्स प्रा.लि., दिल्ली ।



Subject : Political Science(Comparative Constitutions of UK & USA (Optional-I))	
Course Code : POLS-303	Autor : Dr. Parveen Sharma
Lesson No. 7	
हित समूह व दबाव समूह Interest group and Pressure group	

अध्ययन की संरचना

7.1 अधिगम उद्देश्य(Learning Objectives)

7.2 प्रस्तावना (Introduction)

7.3 पाठ का मुख्य भाग (Main body of the Text)

7.3.1 हितकर समूहों, अर्थ परिभाषा व विशेषताएँ (Meaning, definition and Characteristic of Interest Group)

7.3.2 हितकर समूहों की कार्य प्रणाली (Working System in Interest Group)

7.3.3 दबाव समूहों का अर्थ, परिभाषा (Meaning and definition of pressure groups)

7.3.4 हित समूह व दबाव समूह में अन्तर (Difference between interest group and pressure group)

7.3.5 दबाव समूह व राजनीतिक दल में अन्तर (Difference between Political Party group and pressure group)

7.3.6 दबाव समूहों की विशेषताएं (Characteristic of pressure group)

7.3.7 दबाव समूहों के प्रकार (Types of pressure groups)

7.3.8 दबाव समूहों के कार्यात्मक तरीके (Functional ways of pressure group)

7.3.9 दबाव समूहों के निर्धारक तत्त्व (Defining elements of pressure group)

7.3.10 दबाव समूहों के लक्षण (Characteristics of Pressure group)



7.3.11 दबाव समूहों के कार्य व भूमिका (Function and role of pressure group)

7.3.12 दबाव समूहों की आलोचन (Review pressure group)

7.4 पाठ के आगे का मुख्य भाग (Further main body of the text)

7.4.1 ब्रिटेन में हित व दबाव समूह (Interest and Pressure Groups in Britain)

7.4.2 स्विट्जरलैण्ड में हित व दबाव समूह (Interest and Pressure Groups in Switzerland)

7.4.3 चीन में हित व दबाव समूह (Interest and Pressure Groups in China)

7.5 टपनीप्रगति जांचें (Check your progress)

7.6 सारांश (Summary)

7.7 सूचक शब्द (Key Words)

7.8 स्वयं मूल्यांकन हेतु प्रश्न (Self -Assessment Questions)

7.9 अपनीप्रगति की जांच करने के लिए उत्तर (Answers to check your progress)

7.10 सन्दर्भ ग्रन्थ/निर्देशित पुस्तकें (References / Suggested Readings)

7.1 अधिगम उद्देश्य (Learning Objectives)

- इस अध्याय को पढ़ने के बाद हम निम्नलिखित विषयों को समझ पाएंगे :-
- हितकर समूहों, अर्थ परिभाषा व विशेषता को समझ पाएंगे ।
- दबाव समूहों का अर्थ, परिभाषा व विशेषता को समझ पाएंगे ।
- हित समूह व दबाव समूह में अन्तर को समझ पाएंगे ।
- दबाव समूह व राजनीतिक दल में अन्तर को समझ पाएंगे ।
- दबाव समूहों के प्रकार व कार्य व भूमिका को समझ पाएंगे ।
- ब्रिटेन , अमेरिका , चीन व स्विट्जरलैण्ड के दबाव समूहों व हित समूह के संगठन को समझ पाएंगे ।



7.2 प्रस्तावना (Introduction)

राजनीतिक दल व्यक्ति और शासन के मध्य सम्पर्क सूत्र के रूप में दलों का बड़ा महत्वपूर्ण स्थान है । राजनीतिक दल एक ओर यदि जन भावनाओं एवं आवश्यकताओं को शासन वर्ग तक पहुँचाते हैं तो दूसरी ओर वे शासक वर्ग की नीतियों , कार्यक्रमों तथा इरादों को जनता के समक्ष रखते हैं । यह कार्य वे सदा विशुद्ध निरपेक्ष भाव में नहीं करते तथा इस कार्य को करते समय वे अपने दलगत हित को भी ध्यान में रखते हैं अतः शासन और व्यक्ति के पारस्परिक सम्पर्क के लिए माध्यम के रूप में विभिन्न समूह भी राजनीतिक दलों की ही तरह व्यक्ति और राज्य तथा शासन के बीच के महत्वपूर्ण सूत्र होते हैं । प्रमुख दलों का आकार अत्यन्त बड़ा होने के कारण कतिपय विद्वानों की मान्यता तो अब यह हो गई है कि दलों के माध्यम से व्यक्ति और शासन का सीधा सम्पर्क प्रायः नहीं होता है तथा न तो व्यक्ति ही निर्णय लेने वाली शक्तियों के सम्पर्क कर पाता है और न शासन ही व्यक्ति के हितों के विषय में सोच पाता है । अतः शासन और व्यक्ति के पारस्परिक सम्पर्क के लिए माध्यम के रूप में ऐसे समूहों का प्रयोग किया जाना अति आवश्यक है इस प्रकार के संगठनों को जो अपने – अपने संगठन की शक्ति के द्वारा सार्वजनिक नीतियों तथा शासकीय निर्णयों को प्रभावित करने का प्रयत्न करते हैं उन्हें हितकर समूह व दबाव समूह कहा जाता है ।

7.3 पाठ का मुख्य भाग (Main body of the Text)

7.3.1 हितकर समूहों, अर्थ परिभाषा व विशेषतायें (Characteristic of Interest Group)

वह समूह जो सरकार से कुछ अपेक्षा रखता है हित समूह कहलाता है । हितकर समूह वे हित समूह होते हैं जो शासकीय नीतियों को अपने पक्ष में प्रभावित करने हेतु औपचारिक व अनौपचारिक दोनों ही प्रकार के संगठित प्रयास करते हैं । हितकर समूह की विशेषताओं इस प्रकार हैं:-

1. **गैर सरकारी संगठन**— हितकर समूह गैर सरकारी व्यक्तियों के संगठन होते हैं। अपने समूह विशेष के हितों की साधना करना उनका ध्येय होता है तथा वे उसी के लिये कार्यरत रहते हैं । अनेक समूह , विशेषकर जातीय समूह अपने सदस्यों के सामाजिक व आर्थिक जीवन को उन्नत बनाने के लिए भी प्रयत्नशील रहते हैं तथा इस कारण कुछ क्षेत्रों में यह मान्यता हो चली है कि हितकर समूह प्रायः अराजनीतिक होते हैं । पर उन्हें पूर्णतः अराजनीतिक मानना भी एकांकी है , क्योंकि ये समूह किसी न किसी रूप में राजनीतिक गतिविधियों में भी भाग लेते हैं । क्रियाकलाप की दृष्टि से उनका रूप न तो पूर्णतः राजनीतिक होता है और न पूर्णतः अराजनीतिक , वरन वह दोनों के बीच का होता है ।
2. **बिना उत्तरदायित्व**—हितकर समूहों की एक विशेषता यह भी है कि ये समूह बिना उत्तरदायित्व वहन किए सत्ता के संघर्ष और सत्ता के लाभों के लिए सचेष्ट रहते हैं ।



3. **विशेष उद्देश्य**—हितकर समूह व्यक्तियों के ऐसे संगठन होते हैं , जिनका निर्माण कुछ विशिष्ट उद्देश्यों की प्राप्ति के लिये किया जाता है । ऐसे समूह संगठन औपचारिक रूप से संगठित भी हो सकते हैं और अनौपचारिक रूप से संगठित भी हो सकते हैं ।
4. **लोकतंत्र व औद्योगिक समाज में अधिकता**—हितकर समूहों की एक अन्य विशेषता यह है कि अन्य प्रकार के समाजों की अपेक्षा लोकतन्त्रीय राष्ट्रों एवं औद्योगिक समाजों में इनकी संख्या अधिक होती है, क्योंकि लोकतन्त्र के स्वतन्त्र वातावरण में उनके निर्माण को प्रोत्साहन मिलता है तथा औद्योगिक समाजों में व्यवसायिक वैविध्य के कारण और सम्पर्क साधनों का बाहुल्य होने के कारण ऐसे समूहों के संगठन सहजता से बन जाते हैं ।
5. **विकास का एक क्रम** —हितकर समूहों की एक अन्य विशेषता यह भी है कि इनके विकास का एक क्रम होता है तथा अविकसित अवस्था से विकसित अवस्था की ओर ज्यों—ज्यों समाज बढ़ता जाता है ,त्यों—त्यों सामाजिक या सामुदायिक समूहों की तुलना में संघात्मक समूहों का विस्तार बढ़ता जाता है । दूसरे शब्दों में हितकर समूहों का स्वरूप किसी देश विशेष की सामाजिक व राजीतिक विकासाकी स्थिति के अनुसार परिवर्तनीय होता है ।
6. हित समूह में सार्वजनिक नीतियों को प्रभावित करके कुछ अलग हितों की सुरक्षा करने के लिए काम करते हैं ।
7. हित समूह के द्वारा या माध्यम से ही हमें पता चलता है ,की नीति —निर्माताओं कैसे कुछ विशेष मुद्दों पर जनता को बतलाती है की कैसे उनके हितों के काम किया जा रहा है ।
8. हित समूह के द्वारा ही मतदाताओं को शिक्षित और सूचित करते हैं, ताकि वो अपने मताधिकार का सही उपयोग कर सकें ।
9. हित समूह हमेशा जनता और सरकार के बीच अच्छा सम्बन्ध बना के रखते हैं ।

7.3.2 हितकर समूहों की कार्य प्रणाली (Working System in Interest Group)

राज्य के प्रशासकीय अंगों का सीधा सम्बन्ध अब व्यक्तियों से नहीं वरन् समूहों से हो गया है । जब प्रत्यक्ष सम्पर्क द्वारा सफल होने की आशा नहीं होती , तब वे निर्वाचन , राजनीतिक दल एवं जनमत के माध्यमों के सहारे शासकीय नीतियों व निर्णयों को अप्रत्यक्ष रूप से प्रभावित करने की चेष्टा करते हैं । पर दोनों ही प्रकार से प्रभाव डालने के उनके प्रयास काफी सीमा तक समूहों की सदस्य संख्या , उनके आर्थिक साधनों और लक्ष्यों की प्रकृति आदि पर निर्भर होते हैं और उसी के अनुसार उन्हें सफलता प्राप्त होती है । हितकर समूहों की संख्या व उनके महत्व में हुई वृद्धि के कारण राजनीतिक प्रक्रिया की दृष्टि से उनके क्रियकलाप का बड़ा महत्व हो गया है । राजीतिक प्रक्रिया में इन समूहों की भूमिका वस्तुतः इतनी महत्वपूर्ण रहती है कि शासन के समक्ष प्रस्तुत कोई भी



माँग अथवा कोई भी शासकीय नीति किसी न किसी रूप में किसी एक या एक से अधिक समूहों से सम्बन्धित होती है । अतः उनसे सम्बन्धित परिणामों को अपने पक्ष में करने के लिए प्रत्येक समूह कुछ तकनीको एवं विधियों को अपनाता है । लक्ष्य प्राप्ति हेतु अपनाई गई ये विधियाँ दो प्रकार की हो सकती हैं । पहले प्रकार में वे विधियाँ सम्मिलित हैं जिनके माध्यम से कोई समूह शासकीय नीतियों को सीधे प्रभावित करने की कोशिश करता है तथा दूसरे प्रकार में वे विधियाँ सम्मिलित हैं जिनके माध्यम से कोई समूह शासकीय नीतियों को अप्रत्यक्ष रूप से प्रभावित करने का प्रयत्न करता है । सीधे प्रभाव डालने के लिये समूह व्यवस्थापिका , कार्यपालिका और नौकरशाही से सम्बन्ध स्थापित करते हैं ।

अमरीका में , जैसा डी.एम. बर्मन ने कहा है " काँग्रेस के सदस्य अपने को हितकर समूहों के पंजों में दबा हुआ महसूस करते हैं । अपने दल के आदेशों के मुकाबले इन हितकर समूहों के आदेशों का उन्हें अधिक ध्यान रखना होता है । ब्रिटेन एवं भारत जैसे देशों में जहाँ विधायक पर दल का प्रभाव अधिक होता है , हितकर समूह राजनीतिक दलों को ही प्रभावित करने की कोशिश करते हैं । पूरा दल प्रभाव में न आ सके तो अन्तर्दलीय गुटों या प्रभावशाली नेतृत्व को अपनी ओर किये जाने के प्रयास किये जाते हैं । उनके माध्यम से कोई नया कानून बनाये जाने या निर्माणाधीन कानून में संशोधन के प्रयास किये जाते हैं । अमरीका जैसी अध्यक्षात्मक व्यवस्थाओं में जहाँ दल का अनुशासन उतना कठोर नहीं होता , काँग्रेस सदस्यों को निजी रूप से भी प्रभावित करने के प्रयास किये जाते हैं , जिससे वे दल की इच्छानुसार न चलकर हितकर समूहों की इच्छा मतदान करें । संसदीय शासनों में और कुछ सीमा तक अध्यक्षात्मक शासनों में भी विधेयकों का प्रारूप कार्यपालिका द्वारा तैयार किया जाता है । बजट-निर्माण , कर-प्रस्ताव , महत्वपूर्ण पदों के लिए नियुक्तियाँ आदि से सम्बन्धित विभिन्न कार्यों में भी कार्यपालिका की भूमिका प्रमुख होती है । अतः जो हितकर समूह सीधे सम्पर्क स्थापित कर पाते हैं , वे कार्यपालिका के माध्यम से अपना हित साधन करवाना अधिक पसन्द करते हैं । जो समूह स्वयं कार्यपालिका को प्रभावित करने में असमर्थ होते हैं , वे प्रचार , प्रदर्शन , हड़ताल , विरोधी दलों का आश्रय आदि जैसी तकनीकों के माध्यम से अपने हित साधन का प्रयास करते हैं । व्यवस्थापिका सभाओं में सदस्यों द्वारा प्रश्नों व ध्यानाकर्षण प्रस्तावों आदि के द्वारा भी कभी – कभी कार्यपालिका को प्रभावित करने की कोशिश की जाती है । स्वयं कार्यपालिका भी विधि –निर्माण के समय विभिन्न हितों की स्वाभाविक प्रक्रियाओं का ध्यान रखती है तथा उन्हें जानने के लिए कभी-कभी उन्हें आमन्त्रित कर उनके सुझाव भी माँगती है । ऐसा विशेषतः श्रमिकों , उद्योगपतियों , व्यापारियों और कर्मचारियों के संघों के संदर्भ में किया जाता है , क्योंकि ये समूह बड़े शक्तिशाली होते हैं और किसी कानून के पारित हो जाने के बाद भी वे उसके क्रियान्वयन को असंभव बना देते हैं । विभिन्न मंत्रालयों के साथ सम्बद्ध परामर्शदात्री समितियाँ भी इस दृष्टि से बड़ी सहायक होती हैं । इस सम्बन्ध में हमें यह भी ध्यान रखना चाहिये कि प्रत्येक स्थिति में हितकर समूह ही कार्यपालिका को प्रभावित करते रहते हैं ऐसी बात नहीं है । अनेक अवसरों पर

दबाव समूहों का अर्थ— साधारण शब्दों में दबाव समूह लोगों के उस संगठित समूह को कहा जाता है जो अपने सदस्यों के हितों की सिद्धि के लिए सरकार की निर्णयकारिता को प्रभावित करता है। यद्यपि दबाव समूह के लिए कुछ विद्वान हित समूह का भी प्रयोग करते हैं, लेकिन बिना राजनीतिक प्रक्रिया को प्रभावित किए कोई भी हित समूह दबाव नहीं कहला सकता। हित समूह में प्रभावकारिता की शक्ति आ जाने पर ही वह दबाव समूह का रूप लेता है। यही प्रभावकारिता समूह के हितों को प्राप्त करने में मददगार होती है। दबाव गुट समूह को कई विद्वानों ने इस प्रकार से परिभाषित किया है :-

1. **हेनरी ए० टर्नर के अनुसार**—“दबाव समूह गैर-राजनीतिक संगठन है जो सार्वजनिक नीति को प्रभावित करने का प्रयास करता है।
2. **मैकाइवर के अनुसार**—“दबाव समूह ऐसे संगठित या असंगठित व्यक्तियों का संकलन है जो दबाव के दांव-पेचों का प्रयोग करता है।
3. **ओडिगार्ड के अनुसार**—“दबाव समूह ऐसे लोगों का औपचारिक संगठन है जिसके एक अथवा अधिक सामान्य उद्देश्य एवं स्वार्थ हों और घटनाक्रम को, विशेष रूप से सार्वजनिक नीति के निर्माण और शासन को इसलिए प्रभावित करने का प्रयास करे कि उनके हितों की रक्षा और वृद्धि हो सके।”
4. **मायरन वीनर के अनुसार**—“हित अथवा दबाव समूह ऐसा ऐच्छिक समूह है जो प्रशासकीय ढांचे से बाहर रहकर सरकारी कर्मचारियों के नामांकन अथवा नियुक्ति, सार्वजनिक नीति के निर्माण, उनके प्रशासन और निर्वाचन को प्रभावित करने का प्रयास करता है।”
5. **वी०ओ० की के अनुसार**—“दबाव समूह सरकारी नीति को प्रभावित करने के लिए बनाए जाने वाले संगठन है।”
6. **डेल के अनुसार**—“दबाव समूह राजनीतिक प्रक्रिया के भाग होते हैं और सरकारी नीति की दिशा निर्धारित करने या बदलने का प्रयास करते हैं, लेकिन स्वयं सरकार नहीं बनाना चाहते।”
7. **हिचनर तथा हवाल्ड के अनुसार**—“दबाव समूह सामान्य उद्देश्यों वाला कोई ऐसा व्यक्तियों का समूह है जो सार्वजनिक नीति को प्रभावित करके राजनीतिक गतिविधियों द्वारा अपने उद्देश्य पूरा करना चाहता है।”
8. **बी० के० गोखले के अनुसार**—“दबाव समूह वे निजी समुदाय हैं जो सार्वजनिक नीतियों को प्रभावित करके अपने हितों को बनाए रखना चाहते हैं।”



9. एस0 ई0 फाइनर के अनुसार—“दबाव समूह मुख्य रूप में स्वतन्त्रा और राजनीतिक दृष्टि से तटस्थ संस्थाएं होती हैं जो सत्तारूढ़ सरकार के राजनीतिक स्वरूप की ओर ध्यान दिए बिना ही राजनीतिक दलों और नौकरशाही के साथ सौदा करती हैं।”
10. एच0 जिगलर के अनुसार—“दबाव समूह एक ऐसा संगठित समूह है, जो अपने सदस्य को औपचारिक रूप से सरकारी पदों पर नियुक्त किए बिना ही सरकारी निर्णयों को प्रभावित करने की चेष्टा करता है।”

सी0एच0 ढिल्लों के अनुसार—“हित समूह ऐसे लोगों का समूह है जिनके उद्देश्य समान होते हैं। जब हित समूह अपने उद्देश्यों की पूर्ति के लिए सरकार से कुछ चाहने लगते हैं तो, तब वे दबाव समूह कहलाते हैं।”

इस प्रकार कहा जा सकता है कि दबाव समूह और हित समूह में अन्तर है। अपने प्राथमिक स्वरूप में प्रत्येक दबाव समूह एक हित समूह ही होता है। जब वह अपने संगठित रूप में सरकार की नीतियों को प्रभावित करने में सफल हो जाता है तो वह दबाव समूह की श्रेणी में आ जाता है। अनेक विद्वानों ने दबाव समूह व हित समूह का समान अर्थ में प्रयोग किया है। ऐसा करना बिल्कुल गलत है। समाज में हित समूह तो अनेक हो सकते हैं, लेकिन दबाव समूह की श्रेणी में कम ही आ पाते हैं। चूंकि हित समूह भी सरकार

की नीतियों को प्रभावित करने का प्रयास करते रहते हैं, इसी कारण उनको प्रायः दबाव समूह ही समझ लिया जाता है।

7.3.4 हित समूह व दबाव समूह में अन्तर

यद्यपि कुछ विद्वान हित समूह और दबाव समूह में कोई अन्तर नहीं मानते, लेकिन दोनों में आधारभूत समानताएं होने के बावजूद भी अन्तर है। जब कोई समूह अपने उद्देश्यों की पूर्ति के लिए राजनीति को प्रभावित करने को तैयार हो जाता है तो उसे हित समूह कहा जाता है जब कोई हित समूह अत्यधिक सक्रिय होकर अन्य हित समूहों को पीछे धकेलकर अपने हितों की सिद्धि के लिए सरकार पर अपने दबाव बढ़ा लेता है तो उसे दबाव समूह की संज्ञा दी जाती है। कार्टर और हर्ज ने दबाव समूह और हित समूह में अन्तर बताते हुए लिखा है—“विभिन्न आर्थिक व्यावसायिक, धार्मिक, नैतिक और अन्य समूहों से परिपूर्ण आधुनिक बहुलवादी समाज के सामने अनिवार्य रूप से एक बड़ी समस्या यही है कि इन विभिन्न हितों तथा शासन और राजनीति के बीच में सम्बन्ध कैसे हों एक स्वतन्त्र समाज में हित समूहों को स्वतन्त्र रूप में संगठित होने की अनुमति होती है और जब ये समूह सरकारी तन्त्र और प्रक्रिया पर प्रभाव डालने का प्रयास करते हैं और इस प्रकार कानूनों, नियमों और प्रशासकीय कार्यों को अपने अनुकूल ढालने की चेष्टा करते हैं तो वे हित-समूह, दबाव समूहों में बदलकर सरकार पर दबाव डालने वाले हो जाते हैं।” दबाव समूह और हित समूह में प्रमुख अन्तर हैं :-



1. हित समूह अपनीहित सुरक्षा के लिए अनुनयनी तरीके काम में लाते हैं। अर्थात् वे सरकार से प्रार्थना करते हैं। इसके विपरीत दबाव समूह अपने हितों की पूर्ति के लिए सरकार पर दबाव के तरीके प्रयोग करते हैं।
2. हित समूह राजनीति से प्रत्यक्ष सम्बन्ध नहीं रखते, जबकि दबाव समूह राजनीतिक गतिविधियों से प्रत्यक्ष सम्बन्ध रखते हैं और सदैव राजनीतिक प्रक्रिया को प्रभावित करने की चेष्टा करते रहते हैं।
3. हित समूहों का सम्बन्ध सामाजिक संरचना व प्रक्रिया से होता है। उनका लक्ष्य तो सदैव सामाजिक गतिशीलता है। इसके विपरीत दबाव समूह राजनीतिक प्रक्रिया को प्रभावित करने का प्रयास करते रहते हैं, क्योंकि यही गुण उन्हें हित समूहों से अलग करता है।
4. समाज में हित समूह तो अनेक होते हैं, लेकिन दबाव समूह संख्या में कम होते हैं, क्योंकि सभी हित समूह राजनीतिक प्रक्रिया को प्रभावित करने में सक्षम नहीं होते।
5. हित समूहों का सम्बन्ध सामाजिक गतिशीलता से है, जबकि दबाव समूहों का सम्बन्ध राजनीतिक व्यवस्था को गतिशील बनाने से है।
6. हित समूह अपने लक्ष्य में कम सफल रहते हैं, क्योंकि उनके पास प्रभावशीलता का गुण नहीं होता। इसके विपरीत दबाव समूह प्रभावशीलता के गुण के कारण अपने लक्ष्य को आसानी से प्राप्त कर लेते हैं।

इस प्रकार कहा जा सकता है कि हित समूह और दबाव समूह में कुछ अन्तर है, इसलिए दोनों को एक मानना भारी भूल है। लेकिन फिर भी राजनीतिक अध्ययन में इन दोनों का समानार्थी प्रयोग ही होता आया है। आज तक किसी ने भी हित समूह और दबाव समूह को सर्वथा अलग करके अध्ययन करने की चेष्टा नहीं की, इसी कारण इनके समानार्थी प्रयोग की विसंगति जारी है।

7.3.5 दबाव समूह व राजनीतिक दल में अन्तर

किसी भी राजनीतिक व्यवस्था में दबाव समूह और राजनीतिक दल दोनों ही विद्यमान होते हैं। दोनों ही राजनीतिक गतिशीलता में अपनीअहम् भूमिका निभाते हैं। दोनों आपस में भी घनिष्ठ रूप से सम्बन्ध रखते हैं। दबाव समूह राजनीतिक दलों के साथ सहयोग करते हैं और राजनीतिक दल दबाव समूहों के। इसके बावजूद भी दोनों में अन्तर हैं :-

1. राजनीतिक दल समुदाय के बहुत सारे वर्गों के बहुत सारे हितों का प्रतिनिधित्व करते हैं, यहां तक कि वे पूरे राष्ट्र के हितों की चिन्ता करते हैं। इसके विपरीत हित समूहों या दबाव समूहों के उद्देश्य सीमित होते हैं और वे विशेष समूह के हितों की ही देखरेख करते हैं।



2. राजनीतिक दल अपने विशिष्ट हितों को प्राप्त करने के लिए सत्ता प्राप्त करने का प्रयास करते हैं, जबकि दबाव समूह सत्ताप्राप्त करने या सरकार का निर्माण करने की बजाय सरकार को प्रभावित करने तक ही सीमित रहते हैं।
3. राजनीतिक दलों के संगठन का आधार व्यापक होता है, जबकि दबाव समूह का संगठन सीमित होता है। उसके सदस्यों की संख्या राजनीतिक दल की तुलना में कम होती है।
4. राजनीतिक दलों की स्पष्ट राजनीतिक विचारधारा होती है, जबकि दबाव समूह की कोई राजनीतिक विचारधारा या कार्यक्रम नहीं होता। उसका सम्बन्ध तो हितों की प्राप्ति तक ही सीमित रहता है।
5. राजनीतिक दल चुनावों में अपने प्रत्याशी खड़े करते हैं और उनको सफलता दिलाने के लिए हर सम्भव प्रयास करते हैं। इसके विपरीत दबाव समूह चुनावों में अपने प्रत्याशी खड़े नहीं करते, लेकिन अप्रत्यक्ष रूप से राजनीतिक दलों के प्रत्याशियों की ही मदद करते हैं।
6. राजनीतिक दल एक राजनीतिक संगठन है, जबकि दबाव समूह गैर-राजनीतिक संगठन है।
7. राजनीतिक दलों की सदस्यता अनन्य होती है अर्थात् एक व्यक्ति एक ही समय में केवल एक ही राजनीतिक दल का सदस्य बन सकता है, जबकि एक व्यक्ति एक ही समय में अनेक हित या दबाव समूहों का सदस्य हो सकता है।
9. राजनीतिक दल सरकार के अन्दर तथा बाहर दोनों जगह कार्य करते हैं, जबकि दबाव समूह सरकार के बाहर ही कार्य करते हैं।
10. राजनीतिक दल दीर्घकालिक लक्ष्य रखते हैं जबकि दबाव समूहों के लक्ष्य अल्पकालिक होते हैं। इसी कारण राजनीतिक दलों की तुलना में उनकी प्रकृति कम स्थायी है।
11. राजनीतिक दलों का कार्यक्षेत्र व्यापक होता है, जबकि दबाव समूहों का सम्बन्ध मानव जीवन के किसी विशेष पहलु से होता है। इस तरह राजनीतिक दलों की तुलना में दबाव समूहों का कार्यक्षेत्र संकुचित व विशिष्ट होता है।

इस प्रकार कहा जा सकता है कि दबाव समूह और राजनीतिक दलों में काफी अन्तर है। लेकिन फिर भी राजनीतिक समाज में दोनों की भूमिका महत्वपूर्ण है। दोनों एक दूसरे के पूरक हैं और राजनीतिक व्यवस्था को गतिशील बनाने में समान भागीदार हैं। दबाव समूहों और राजनीतिक दलों में स्पष्ट अन्तर तो विकसित देशों में ही देखने को मिलता है, विकासशील देशों में नहीं, क्योंकि विकासशील देशों में तो दबाव समूह आंतरिक संगठन की दृष्टि से कमजोर है।

7.3.6 दबाव समूहों की विशेषताएं (Features of pressure groups)

1. दबाव समूह औपचारिक रूप से संगठित व्यक्ति समूह होते हैं।



2. दबाव समूह के निर्माण का आधार स्वहित होता है और इसी की प्राप्ति करना इसका ध्येय भी होता है।
3. दबाव समूह सरकार में भाग नहीं लेते, लेकिन अप्रत्यक्ष रूप से सरकार की नीतियों को प्रचारित करते हैं।
4. दबाव समूह सदस्य संख्या, उद्देश्य, चुनाव आदि की दृष्टि से राजनीतिक दल से अलग होता है।
5. दबाव समूहों का कार्यक्षेत्र राजनीतिक दलों की तुलना में सीमित होता है।
6. दबाव समूह सरकार पर अपना प्रभाव राजनीतिक दलों के माध्यम से ही डालते हैं।
7. दबाव समूह सभी प्रकार की राजनीतिक व्यवस्थाओं में पाए जाते हैं। इसी कारण इनकी प्रकृति सर्वव्यापी होती है।
8. दबाव समूहों की सदस्यता ऐच्छिक होती है। एक व्यक्ति एक समय में अनेक दबाव समूहों का सदस्य बन सकता है।
9. दबाव समूहों का कार्यकाल अनिश्चित होता है।
10. दबाव समूहों गैर-राजनीतिक संगठन होते हैं।

7.3.7 दबाव समूहों के प्रकार (Types of pressure groups)

आज विश्व के सभी देशों में दबाव समूहों की संख्या इतनी अधिक है कि उनका वर्गीकरण करना कठिन हो गया है। इनमें से आकार, उद्देश्य, प्रकृति की दृष्टि से सभी दबाव समूह अलग-अलग भागों में बांटे जा सकते हैं।

फ्रेडरिक, राबर्ट्स सी० बोन, ब्लौण्डल, ऑमण्ड आदि विद्वानों ने दबाव समूहों को वर्गीकृत किया है :-

ब्लौण्डल का वर्गीकरण—ब्लौण्डल ने दबाव समूहों के निर्माण के प्रेरक तत्वों के आधार पर इन्हें दो भागों में बांटा है। यह वर्गीकरण (1) साम्प्रदायिक दबाव समूह (2) साहचर्य दबाव समूहों के रूप में है। ब्लौण्डल का कहना है कि साम्प्रदायिक दबाव समूह सामाजिक सम्बन्धों के आधार पर बनते हैं। इनके निर्माण में परिवार, प्रगति, धर्म, वर्ग आदि तत्वों का महत्वपूर्ण योगदान होता है। ऐसे समूहों की सदस्यता जन्म से ही प्राप्त होती है। ब्लौण्डल ने साम्प्रदायिक दबाव समूहों को भी दो भागों 1 प्रथागत तथा संस्थागत दबाव समूहों में बांटी है। प्रथागत दबाव समूह प्रथाओं, रीति-रिवाजों व रुढ़ियों पर आधारित होते हैं। भारत में ऐसे ही दबाव समूह हैं। जब एक धर्म व जाति के लोग औपचारिक रूप से संगठित होकर संस्था का निर्माण कर लेते हैं तो उससे संस्थागत दबाव समूहों का जन्म होता है। भारत में जाति व धर्म के आधार पर अनेक दबाव समूह सरकार की नीति को प्रभावित करते हैं। ब्लौण्डल ने दबाव समूह का दूसरा प्रकार साहचर्य दबाव समूह बताया है। इस प्रकार के दबाव समूहों का लक्ष्य विशिष्ट होता है। औद्योगिक विकास के साथ-साथ ऐसे दबाव समूहों की संख्या में भी वृद्धि हुई है। इन समूहों का विशिष्ट लक्ष्य साधन के रूप में राजनीतिक व्यवस्था में इनकी मांगों को प्रवेश कराने में समर्थ होता है। यह दबाव समूह साम्प्रदायिक दबाव समूहों से सदस्यता की प्रेरणा के दृष्टिकोण से अलग होता है। ये दबाव समूह भी साम्प्रदायिक



दबाव समूहों की तरह 1 संरक्षणात्मक व उत्थानात्मक दबाव समूह, दो तरह के होते हैं। संरक्षणात्मक दबाव समूह अपने सदस्यों के सामान्य हितों की रक्षा करता है, जबकि उत्थानात्मक दबाव समूह विशिष्ट लक्ष्यों के साथ जन्म लेता है। गौर संरक्षण संघ, नारी स्वतन्त्रता संघ इसके प्रमुख उदाहरण हैं। श्रमिक कल्याण संघ संरक्षात्मक दबाव समूह का, हरिजन सेवक संघ प्रथागत का तथा सैनिक-कल्याण परिषद संस्थात्मक दबाव समूह का प्रमुख उदाहरण है।

ऑमण्ड का वर्गीकरण— ऑमण्ड ने संरचना और हित संचारण के आधार पर दबाव समूहों को चार भागों— (1) संस्थात्मक (2) प्रदर्शनात्मक (3) असमुदायात्मक (4) समुदायात्मक में बांटा है। ऑमण्ड ने संस्थागत दबाव समूहों में उनको लिया है जो किसी राजनीतिक दल या अन्य समान हितों वाले वर्गों का भी प्रतिनिधित्व करते हैं। भारत में संसद, नौकरशाही तथा राजनीतिक दलों में ऐसे ही समूह पाए जाते हैं। इसका उद्देश्य सामाजिक और राजनीतिक हितों की पूर्ति करना होता है। ये दबाव समूह विकसित देशों में अधिक पाए जाते हैं। मजबूत संगठन के स्वामी होने के कारण ये हितों का स्पष्टीकरण करने में अधिक सफल रहते हैं। दबाव समूहों का दूसरा प्रकार प्रदर्शनात्मक दबाव समूहों का है जो भीड़, जलूस, दंगों, धरनों, हड़तालों आदि के रूप में अचानक ही राजनीतिक व्यवस्था में प्रवेश कर जाते हैं। इन्हें चमत्कारिक

दबाव समूह भी कहा जाता है। ये दबाव समूह अस्त-व्यस्त प्रकृति के होते हैं। ये शासनतन्त्र को भ्रमग्रस्त करके अपने हितों की प्राप्ति करने में सफल व असफल दोनों हो सकते हैं। भारत, फ्रांस, इटली आदि देशों में इनका बहुत प्रभाव है। तीसरा वर्ग असमुदायात्मक या असाहचर्य दबाव समूहों का है। इनका जन्म, धर्म, रक्त सम्बन्ध, वंशानुगत या हित-संचार आदि तत्वों के आधार पर होता है। ये दबाव समूह धार्मिक नेताओं, विशिष्ट व्यक्तियों आदि द्वारा संगठित व असंगठित होते रहते हैं। इनकी प्रमुख विशेषता यह होती है कि ये हितों के साधन का काम निरन्तर न करके समय-समय पर ही करते हैं। आधुनिक युग में इनका महत्व सीमित है। दबाव समूहों की चौथी प्रकार, समुदायात्मक या साहचर्य दबाव समूहों का है। इस प्रकार के समूह विशेष व्यक्तियों के हितों का प्रतिनिधित्व करने के लिए औपचारिक रूप से संगठित होते हैं। श्रमिक संघ, व्यापारिक संघ इस प्रकार के ही दबाव समूह हैं। इस प्रकार के दबाव समूह नियमों पर आधारित होते हैं और अपने हितों की प्राप्ति के लिए विधि-सम्मत प्रक्रिया अपनाते हैं। भारत व अमेरिका में इस प्रकार के काफी दबाव समूह हैं।

राबर्ट सी० बोन का वर्गीकरण — राबर्ट सी० बोन ने दबाव समूहों को प्रकृति व उद्देश्यों की दृष्टि से दो भागों (प) परिस्थिति-जन्य दबाव समूह (पप) अभिवृत्ति जन्य दबाव समूह में बांटा है। परिस्थिति जन्य

दबाव समूहों का उद्देश्य अपने सदस्यों की वर्तमान आर्थिक और सामाजिक अवस्थाओं को सुधारना होता है। इनकी प्रकृति विशिष्ट होती है और ये अपने सदस्यों के हितों को साधने के लिए वैधानिक प्रक्रिया का ही उपयोग करते हैं। इनका ध्येय दीर्घकालीन हितों को प्राप्त करना होता है। दूसरा वर्ग अभिवृत्ति जन्य समूहों का है जो कुछ मूल्यों



पर आधारित होते हैं। ये समूह परिस्थिति जन्य समूहों से अलग होते हैं। इनका उद्देश्य सामाजिक परिवर्तन को प्राप्त करना है। इसके लिए ये शांतिपूर्ण तथा क्रांतिकारी दोनों साधनों का प्रयोग करते हैं। ये अपने लक्ष्यों को तेज गति की तकनीकों का प्रयोग करके अल्पकाल में ही प्राप्त करने की क्षमता रखते हैं।

कार्ल फ्रेडरिक का वर्गीकरण— कार्ल फ्रेडरिक ने दबाव समूहों को दो श्रेणियों 1 सामान्य और विशिष्ट दबाव समूहों में बांटा है। जो दबाव समूह सामान्य लक्ष्यों को लेकर चलते हैं, वे सामान्य दबाव समूह और जिनके हित विशिष्ट प्रकार के होते हैं, वे विशिष्ट दबाव समूह कहलाते हैं।

उपरोक्त विश्लेषण के आधार पर कहा जा सकता है कि राबर्ट सी० बोन का वर्गीकरण सामान्य होते हुए भी दबाव समूहों की प्रकृति, संगठन, उद्देश्यों तथा कार्यविधि को स्पष्ट करने वाला महत्वपूर्ण वर्गीकरण है। यह वर्गीकरण अन्य की अपेक्षा अधिक सुस्पष्ट तथा सुसंगत है। यह वर्गीकरण अपने आप में कुछ विशेष प्रकार के गुण लिए हुए है। लेकिन इसका अर्थ यह नहीं है कि ऑमण्ड, फ्रेडरिक तथा ब्लौण्डल के वर्गीकरण का कोई महत्व नहीं है। ये सभी वर्गीकरण कुछ न कुछ महत्व अवश्य रखते हैं।

7.3.8 दबाव समूहों के कार्य

दबाव समूह अपने हितों को प्राप्त करने के लिए प्रत्येक राजनीतिक व्यवस्था में अलग-अलग ढंग से कार्य करने के तरीके अपनाते हैं। प्रत्येक दबाव समूह का कार्यात्मक व्यवहार भी अलग-अलग होता है, इसी कारण उनके द्वारा प्रयोग किए जाने वाले हित-साधन भी अलग-अलग प्रकार के हो जाते हैं। अपने हितों की प्राप्ति के लिए दबाव समूहों द्वारा इन साधन या तकनीकों काम में लाई जाती हैं :-

लॉबीइंगब— सार्वजनिक नीति को प्रभावित करने के लिए हित व दबाव समूहों के सदस्य विधानमण्डल के

विधायकों से सांठ-गांठ करते हैं। यही सांठ-गांठ विधायकों को दबाव समूहों के हित में नीति बनाने को बाध्य कर देती है। वे अपने प्रबल समर्थक विधायकों द्वारा विधानमण्डल में अपने हितों की मांग रखते हैं और मजबूत लॉबी के कारण प्रायः सफल भी हो जाते हैं। अपनी लॉबी मजबूत करने के लिए वे विधायकों को रिश्वत देने से भी नहीं चूकते। अमेरिका में इस प्रकार की मजबूत लॉबी वाले हजारों दबाव समूह हैं जो सरकार द्वारा रजिस्टर्ड भी हैं। वहां पर कानून निर्माण में इस लॉबीइंग प्रक्रिया का व्यापक प्रभाव है। भारत में भी इस प्रकार की लॉबीइंग वाले कुछ औद्योगिक घराने हैं जो नीति-निर्माण की प्रक्रिया को सीधे संसद में ही प्रभावित करते हैं।

जनमत को प्रभावित करना— दबाव समूह अपना पक्ष मजबूत करने के लिए जनता से सीधा सम्पर्क बनाए रखते हैं। अपनी वाक्पटुता के बल पर इनके सदस्य जनमानस में अपनी समस्याओं का प्रचार करते

हैं ताकि जनता की सहानुभूति भी प्राप्त की जा सके। इसके लिए वे समाचार-पत्रों, पत्रिकाओं, रेडियो, टीवी, इंटरनेट, सार्वजनिक सभाएं तथा प्रचार आदि के साधन अपनाते हैं। ये जानते हैं कि जनमत यदि उनके पक्ष में हो



गया तो उनके हितों को प्राप्त करने में कोई बाधा नहीं आएगी। लोकतन्त्र में तो जनमत ही एक ऐसा अस्त्र है जो सरकार की नीति को प्रभावित करने की क्षमता रखता है। जनमत को अपने पक्ष में करने के लिए ये प्रतिवर्ष या मासिक रूप में अपनी विशेष रिपोर्ट, पुस्तक, पुस्तिकाएं आदि भी प्रकाशित करवाते रहते हैं।

चुनाव— यद्यपि कोई भी दबाव समूह चुनावों में न तो प्रत्यक्ष रूप से अपने उम्मीदवार खड़े करता है और न ही सरकार में शामिल होने की लालसा रखता है। लेकिन अप्रत्यक्ष रूप से प्रत्येक दबाव समूह चुनावी प्रक्रिया को प्रभावित करने का प्रयास करता है। सभी दबाव समूह चुनावों के समय अपने सहयोगी राजनीतिक दल को आर्थिक मदद भी देते हैं और चुनाव प्रचार में सहयोगी दलों के प्रत्याशियों के पक्ष में प्रचार भी करते हैं। उनकी सदैव यही इच्छा रहती है कि उनके समर्थक दल ही संसद में जाकर सरकार बनाएं ताकि उनके हितों का पूरा सम्मान हो सके। उनका चुनावी कार्यक्रम पर्दे के पीछे से ही चलता है। उन्हें पता होता है कि यदि किसी दल या उम्मीदवार का खुला समर्थन किया गया तो कालान्तर में उस दल का सरकार में प्रभाव समाप्त होते ही उनको ही अधिक हानि होगी। कई बार तो वे टिकट वितरण में अहम् भूमिका निभाते हैं। उनकी यही इच्छा रहती है कि उनके चहेतों को ही टिकट मिले और वे चुनाव जीतकर सरकार बनाएं। कई बार उनकी यह इच्छा पूर्ण हो जाती है, लेकिन कई बार नहीं। लेकिन दबाव समूह हार नहीं मानते। वे अगले चुनावों के लिए सांठ-गांठ कर लेते हैं। इस तरह यह लुका-छुपी का खेल खेलते रहते हैं और अपने हितों को प्राप्त करने का प्रयास जारी रखते हैं।

विधायिका को प्रभावित करना— दबाव समूह चुनावों में राजनीतिक दलों की सहायता इसी कारण करते हैं ताकि विधायिका में उनके हितों का ख्याल रखने वाले पहुंच जाएं। वे संसदीय दल के व्यक्तियों के नामजद होने से सरकार में पहुंचने तक उनका पूरा ख्याल रखते हैं। विधायिका को प्रभावित करने के लिए तरीके प्रत्येक राजनीतिक व्यवस्था में अलग अलग होते हैं। ब्रिटेन जैसे संसदीय शासन प्रणाली वाले देश में ये अनुशासित ढंग से कार्य करते हैं। लेकिन अमेरिका में वे शक्तियों के पृथक्करण के कारण विधायिका का पूरा फायदा उठाने में सफल रहते हैं। वहां पर दल के सचेतकों द्वारा विधायकों पर कठोर नियन्त्रण न होने के कारण वे रिश्वत आदि साधनों द्वारा अपना काम आसानी से निकाल लेते हैं। भारत, इटली तथा फ्रांस में ये समूह संसद से बाहर रहकर ही सक्रिय रहते हैं। वे अपने हितों को प्राप्त करने के लिए विधायिका को प्रभावित करने के चक्कर में कई बार तो असंवैधानिक तरीकों का भी प्रयोग कर लेते हैं। ये दबाव समूह विधायिका की समितियों के आस-पास ही अधिक केन्द्रित रहते हैं। कई देशों में तो विधायी समितियों पर दबाव समूहों का पूरा प्रभाव है।

इस प्रकार दबाव समूह अपने हितों को प्राप्त करने के लिए विधायिका को भी प्रभावित करने का पूरा प्रयास करते रहते हैं।

कार्यपालिका पर दबाव— अनेक देशों में दबाव समूह अपने लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए कार्यपालिका तक हो भी प्रभावित करने का प्रयास करते हैं। अध्यक्षतात्मक देशों में ये राष्ट्रपति के चुनावों में पूरा समर्थन करते हैं और अपना



पैसा पानी की तरह बहा देते हैं। अमेरिका के राष्ट्रपति के चुनावों में दबाव समूहों की अहम् सक्रियता रहती है। संसदीय सरकार वाले देशों में भी ये विधायिका के माध्यम से कार्यपालिका को प्रभावित करने के प्रयास करते हैं। इन देशों में उत्तरदायी सरकार होने के कारण चुने हुए विधायिकों को स्थगन प्रस्तावों, ध्यानाकर्षण प्रस्तावों, निन्दा प्रस्तावों आदि द्वारा मन्त्रियों को प्रभावित करने पर जोर डालते हैं और यहां तक मजबूर कर देते हैं कि उनके हितों को बढ़ावा देने वाली नीति को ही क्रियान्वित करें। यह स्वाभाविक है कि जो व्यक्ति किसी दबाव समूह की कृपा से ही विधायक बना हो, तो उसकी निष्ठा अवश्य ही उस दबाव समूह के प्रति रहेगी। कार्यपालिका की समितियों पर भी ये अपना नियन्त्रण रखने का प्रयास करते हैं। अपने हितों के लिए दबाव समूह कार्यपालिका से निरन्तर सम्पर्क बनाए रखने का प्रयास करते रहते हैं। यदि शांतिपूर्ण ढंग से दबाव समूह कार्यपालिका पर नियन्त्रण व दबाव न बना सकें तो ये अहिंसात्मक तरीकों का प्रयोग करके सरकार पर दबाव बनाने से भी नहीं चूकते। भारत में टाटा समूह, बिड़ला समूह, डालमिया समूह और धीरुभाई अम्बानी समूह का कार्यपालिका पर पूरा प्रभाव है। औद्योगिक नीति के निर्माण में इन औद्योगिक घरानों के हितों का ख्याल अवश्य रखा जाता है।

नौकरशाही को प्रभावित करना – दबाव समूह अपने हितों के लिए अधिकारीतन्त्र से भी सांठ-गांठ रखते हैं। आज राजनीतिक प्रक्रिया में निर्णयों व नीतियों को गति देने में यह नौकरशाही तन्त्र ही अहम् भूमिका निभाता है। विभिन्न सरकारी विभागों द्वारा नीति-निर्माण के लिए भेजी जाने वाली सूचनाएं इस अधिकारीतन्त्र के हाथों से ही गुजरती है। नौकरशाही ही कार्यपालिका व विधायिका को आवश्यक नीति-निर्माण के आंकड़े उपलब्ध कराती है। भारत जैसे देशों में तो नौकरशाही कार्यपालिका के साथ इतनी अधिक उलझी हुई है कि कई बार लोग नौकरशाही को ही कार्यपालिका समझ बैठते हैं। नौकरशाही को अपने वश में करने के लिए दबाव समूह बेइमानी, घूसखोरी, भाई-भतीजावाद जैसे साधनों का प्रयोग भी करते हैं। यद्यपि नौकरशाही पर दबाव समूहों का प्रभाव सभी देशों में बराबर नहीं है। फ्रांस व इटली में एकदलीय व्यवस्था के कारण ये नौकरशाही के साथ ही सांठ-गांठ रखते हैं। इन देशों में दबाव समूह नौकरशाही को खुश करने के लिए साम-दाम-दण्ड-भेद सभी उपायों का सहारा लेते हैं।

न्यायपालिका को प्रभावित करना – दबाव समूह न्यायपालिका को विधायिका तथा कार्यपालिका के माध्यम से प्रभावित करने की बजाय न्यायधीशों की नियुक्ति के समय ही कार्यपालिका पर दबाव बनाना शुरू कर देते हैं। अमेरिका और भारत में कार्यपालिका पर इस तरह का दबाव कई अवसरों पर देखा गया है। न्यायपालिका को दूर से ही प्रभावित करने का अधिक प्रयास रखते हैं, क्योंकि न्यायधीशों का कार्यपालिका तथा विधायिका की तरह चुनाव नहीं होता। अहिंसात्मक साधनों द्वारा न तो न्यायपालिका को प्रभावित करना अपेक्षित है और न ही संविधानिक। इसलिए वे अपने हितों के लिए कार्यपालिका तथा विधायिका द्वारा निर्मित कानूनों को अवैध घोषित करवाने के लिए न्यायपालिका की ही शरण लेते हैं। वे पत्र-पत्रिकाओं में लेख छापकर, समाचार पत्रों में अपने विचार देकर न्यायधीशों के मन को प्रभावित करने के प्रयास भी करते हैं। 1969 में बैंकों के राष्ट्रीयकरण के कानूनों के विरुद्ध



दबाव समूहों ने ही न्यायपालिका के पास अपील की थी। भारत में अनेक जनहितकारी याचिकाएं दबाव समूहों ने ही न्यायपालिका में प्रस्तुत की हैं।

हड़ताल, बन्ध और प्रदर्शन— दबाव समूह जब अपनी बातें मनवाने में असफल हो जाते हैं तो वे अहिंसात्मक साधनों का प्रयोग करने से भी नहीं चूकते। वे हड़ताल करते हैं और आज जीवन को अस्त-व्यस्त कर देते हैं। वे बन्ध की घोषणा भी करते हैं। कई बार तो वे हड़ताल में विपक्षी दल के विधायकों व समर्थकों तक को भी शामिल करते हैं। अपनी बात सरकार से मनवाने के लिए वे व्यापक स्तर पर प्रदर्शन भी करते हैं और कई बार मन्त्रियों तक का भी घेराव करते हैं। इन सभी गैर-कानूनी उपायों का प्रयोग करके वे सरकार पर दबाव बनाना चाहते हैं। इन साधनों के सफल रहने पर वे अपने उद्देश्यों में भी कामयाब हो जाते हैं। भारत में इस तरह के साधन दबाव समूहों द्वारा आमतौर पर प्रयोग किए जाते हैं।

प्रचार करना— दबाव समूह अपने पक्ष में जनमत को तैयार करने के लिए तथा सरकार का ध्यान आकर्षित करने के लिए प्रचार का बहुत सहारा लेते हैं। वे समाचार पत्रों, रेडियो, टी0वी0 आदि संचार साधनों पर अपने विचारों का प्रसारण करवाते रहते हैं। कई बार दबाव समूह पत्र-पत्रिकाएं भी छपवाते हैं और जनमत को प्रभावित करने के लिए उन्हें निःशुल्क जनता में वितरित करते हैं। उनका प्रभावशाली प्रचार तन्त्र शासन-वर्ग को भावी संकटों तक का भी आभास करा देता है। इसी कारण भविष्य में राजनीतिक व्यवस्था को संकट से बचाने के लिए सरकार उनकी बात मान ही लेती है।

अनुनयन— कई बार दबाव समूह सरकार से सीधी बातचीत भी करते हैं और प्रार्थनापूर्वक अपनी समस्याएं भी रखते हैं। सरकार विशाल जनमत के स्वामी होने के नाते उनकी बात को टालने का जोखिम उठाने से बचाने का ही प्रयास करती हैं और प्रायः उनकी मांगें स्वीकार कर ही लेती हैं। इस तरह अनुनयन द्वारा भी दबाव समूह अपने हितों की प्राप्ति के प्रयास करते हैं। यदि इस तरीके से उनकी मांग न मानी जाती है तो वे सीधी कार्यवाही या सौदेबाजी के साधनों का प्रयोग करना शुरू कर देते हैं।

गोष्ठियां करना— अनेक दबाव समूह अपने हितों की प्राप्ति के लिए वाद-विवाद तथा विचार-विमर्श के लिए गोष्ठियों, सेमिनारों, वार्ताओं आदि का आयोजन करके विधायकों तक को भी उनमें बुलाते हैं ताकि अपनी समस्या से उन्हें अवगत कराया जा सके। इससे विधायक व नौकरशाही उनकी मांगों के प्रति जागरूक हो जाती है और नीति-निर्माण करते समय उनकी बातों पर ध्यान देती है। भारत में दबाव समूहों के हितों को लेकर कई बार संसद में प्रश्नकाल के दौरान काफी नोक-झोंक होती है। जो विधायक दबाव समूहों के अनुग्रहित होते हैं, वे उनकी समस्याओं को संसद-सत्र में जोर-शोर से उठाते हैं।

7.3.9 दबाव समूहों के निर्धारक तत्त्व (Defining elements of pressure group)



प्रत्येक देश में दबाव समूहों की यह शाश्वत् इच्छा रहती है कि सार्वजनिक नीति को प्रभावित करके अपने लक्ष्यों की प्राप्ति की जाए। अपने लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए वे अपनी गतिविधियों का संचालन व समायोजन सरकारों को बाह्य संविधानिक संरचना के अनुसार करने की अपेक्षा, सरकारी तन्त्र के भीतर प्रभावी शक्ति-वितरण की व्यवस्था के अनुसार करते हैं। दबाव समूहों की गतिविधियों का संचालन प्रत्येक राजनीतिक व्यवस्था में इसी कारण ही अलग तरह का होता है और उनके द्वारा प्रयोग किए जाने

वाले साधन भी अलग-अलग होते हैं। कई बार तो दबाव समूह एक ही राजनीतिक व्यवस्था में भी अलग-अलग परिस्थितियों में अलग अलग विधियों का प्रयोग करते हुए पाए जाते हैं। इसलिए यह जानना आवश्यक हो जाता है कि वे ऐसा क्यों करते हैं ? इसी में दबाव समूहों की कार्यविधि के निर्धारकों की समस्या छिपी है। एलेन बाल तथा एकसटीन ने दबाव समूहों की राजनीति का व्यापक विश्लेषण करके उसके निर्धारकों का पता लगाया है। एलेन बाल ने तो दबाव समूहों के निर्धारकों का संक्षिप्त ब्योरा ही दिया है, जबकि हैरी एकसटीन ने दबाव समूहों के निर्धारकों पर विस्तार से चर्चा की है। कुछ अन्य विद्वानों ने भी दबाव समूह की राजनीति का विश्लेषण करने के बाद इन निर्धारकों का सामान्यीकरण किया है। दबाव समूहों की राजनीति या उनकी प्रभावशीलता को निर्धारित करने वाले प्रमुख तत्व हैं :-

राजनीतिक संस्थागत संरचना —दबाव समूहों का अस्तित्व राजनीतिक व्यवस्था की संस्थागत संरचना से काफी घनिष्ठ सम्बन्ध रहता है। जिस शासन व्यवस्था में नीति-निर्माण और उसे अमली जामा पहनाने का कार्य प्रशासन की केन्द्र शाखा को करना पड़ता है तो वहां कोई भी दबाव समूह राष्ट्रीय स्तर पर भी महत्वपूर्ण, शक्तिशाली और सुसंगठित स्थान प्राप्त कर सकता है। जिस देश में शक्तियों का केन्द्रीयकरण होता है, उन एकात्मक शासन व्यवस्था वाले देशों के दबाव समूहों की राजनीति का केन्द्र राजधानी होती है। इसके विपरीत संघात्मक शासन प्रणाली वाले देशों में दबाव समूह प्रादेशिक स्तर पर अक्रिधक सक्रिय रहते हैं। केन्द्र तक तो कम ही दबाव समूह पहुंच पाते हैं। दबाव समूहों को यह भी पता होता है कि कौन सी संरचना निर्णय लेने में सक्षम है। इसलिए वे विधायिका या कार्यपालिका की तरफ ही झुकते हैं। संसदीय शासन प्रणालियों में तो दबाव समूह विधायिका या कार्यपालिका की समितियों तक को भी अपनीपहुंच में ले लेते हैं। जिस देश में विधायिका या कार्यपालिका नौकरशाही पर अधिक आश्रित रहती है तो ये दबाव समूह अपना डेरा नौकरशाही के ही इर्द-गिर्द डाल लेते हैं। उदारवादी लोकतन्त्रों में तो शक्ति-विकेन्द्रीयकरण के दबाव समूहों की गतिविधियां अधिक तीव्र हो जाती हैं। सर्वसत्ताधिकारवादी शासन-व्यवस्थाओं में दबाव समूह प्रायः सुप्त अवस्था में रहते हैं, क्योंकि यहां पर इन्हें पैर पसारने की अनुमति नहीं होती।

इसी कारण अमेरिका और ब्रिटेन में अध्यक्षीय व संसदीय शासन प्रणालियों की निर्णयकारी संरचनाओं में पाए जाने वाले अन्तर के कारण दबाव समूहों की प्रकृति में भी अन्तर आ जाता है।



दल पद्धति की संरचना व स्वरूप— दबाव समूहों की राजनीति पर दल-व्यवस्था का भी गहरा प्रभाव पड़ता है। एक दल पद्धति वाले देशों में दबाव समूह अपना प्रभाव नहीं जमा पाते, क्योंकि इनका प्रभाव क्षेत्र तो बहुदलीय व्यवस्था वाले देशों में ही अधिक विकसित होता है। सर्वाधिकारवादी देशों में एकदलीय व्यवस्था के कारण ही दबाव समूहों को घृणा की दृष्टि से देखा जाता है। लोकतन्त्र से अलग प्रकार की सभी शासन व्यवस्थाओं में केवल उसी दबाव समूह को रहने की आज्ञा दी जा सकती है जो सत्तारूढ़ दल का समर्थन करता है। दो दलीय व्यवस्था वाले देशों में भी दबाव समूह को बहुदलीय शासन प्रणाली वाले देशों की तरह स्वतन्त्र ढंग से कार्य करने दिया जाता है। यहां पर वे किसी राजनीतिक दल के छिपे हुए समर्थन के अधीन कार्य करते हैं या राजनीतिक तटस्थता का ढोंग करके सत्तारूढ़ दल से अपना सम्बन्ध बनाए रहते हैं। लोकतन्त्रीय शासन प्रणाली वाली बहुदलीय व्यवस्था के अन्तर्गत ये लुका-छुपी का खेल खेलते हैं। कभी ये किसी दल के साथ रहते हैं तो कभी किसी। इसी तरह दल संरचना का स्वरूप भी दबाव समूहों का नियामक होता है। दल संरचना की कमजोरियां, अनुशासन का अभाव और दलों के बीच विचारधारा सम्बन्धी स्पष्ट अन्तर का होना भी दबाव समूहों की प्रभावशीलता का कारण बन जाता है। इसी कारण अमेरिका में दबाव समूह अधिक सक्रिय है। प्रतिनिधि सभा के चुनावों में अमेरिकी कांग्रेस के प्रतिनिधि स्थानीय हितों के दबावों में रहती है। लेकिन ब्रिटेन में कठोर दलीय अनुशासन के कारण विधायकों पर दबाव समूहों का अधिक प्रभाव नहीं पड़ने पाता है। बहुदलीय व्यवस्था के अन्तर्गत दलीय अनुशासन का अभाव होने के कारण दबाव समूहों की विधायकों पर पकड़ मजबूत होती है।

सरकार की नीतियां व गतिविधियां— दबाव समूहों की क्रियाशीलता सरकार की नीतियों पर ही आधारित होता है। जिस देश में सरकार कल्याणकारी नीतियां अपनाती है और सभी वर्गों को शासन में उचित प्रतिनिधित्व देती है तो वहां पर दबाव समूह आसानी से अपनी घुसपैठ कर जाते हैं। यदि सरकार ऐसी नीतियों व गतिविधियों का संचालन करना शुरू कर दे कि लोकतन्त्रीय आस्थाएं ही धूमिल होने लग जाएं, वहां पर दबाव समूहों के पैर नहीं टिक सकते। प्रत्येक राजनीतिक व्यवस्था में यह बात सरकार ही निश्चित करती है कि किसे क्या देना है, किसे प्रतिबन्धित करना है या किसे अधिक सुविधायें देनी हैं ? इसी तरह दबाव समूहों की कार्यप्रणाली भी सरकार की नीतियों पर ही आधारित होती है। 1947 के समय में और आज के समय में सरकार की नीतियों में आए बदलाव के कारण ही आज दबाव समूह भारत में फल-फूल रहे हैं। आज सरकारें लोक कल्याणकारी नीतियों पर अधिक ध्यान देती हैं, इसलिए दबाव समूह उदारवादी लोकतन्त्रों में अपनी गतिविधियों को बड़े पैमाने पर संचालित करके अपने हितों को प्राप्त करने में सक्षम है।

सरकार की दबाव समूहों के प्रति अभिवृत्ति या रवैया सरकार का दबाव समूहों की प्रति सोच भी दबाव समूहों की प्रभावशीलता की नियामक मानी जाती है। उदार लोकतन्त्रों में समूह व्यवस्था को राजनीतिक व्यवस्था का स्वाभाविक अंग माना जाता है। इसी कारण वहां पर दबाव समूहों की भरमार होती है। सर्वसत्ताधिकारवादी व्यवस्थाओं में



सरकारों का रवैया दबाव समूहों के प्रति कठोर होता है। वहां पर केवल वही दबाव समूह पनप सकता है तो सत्तारूढ़ सरकार की नीतियों का समर्थक बना रहे। सरकार विरोधी समूहों को सर्वाधिकारवादी सरकारें किसी भी कीमत पर बर्दाश्त नहीं कर सकती। लोकतन्त्र शासन प्रणाली ही एकमात्र ऐसी शासन प्रणाली है जो दबाव समूहों की गतिविधियों को झेल सकती है। इसी कारण निरंकुश और लोकतंत्रीय सरकारों का दबाव समूहों के प्रति पाया जाने वाला रवैया दबाव समूहों द्वारा सरकार को प्रभावित करने वाले साधनों में भी भिन्नता ला देता है।

राजनीतिक संचारण—दबाव समूह की प्रभावशीलता का निर्धारण इस बात से भी होता है कि राजनीतिक व्यवस्था में राजनीतिक संचारण का कितना निषेध है तथा कितनी छूट है। कोई राजनीतिक व्यवस्था तो दबाव समूहों की सक्रियता के प्रति सहनशील होती है तो कोई उसे आंशिक तौर पर ही स्वीकार करती है या उनकी सक्रियता को सहन ही नहीं करती। भारतीय शासन व्यवस्था राजनीतिक संचारण की छूट देती है। इसी कारण भारत में असंख्यक दबाव समूह व हित समूह उभरे हैं। कुछ देशों में दबाव समूहों को घृणा की दृष्टि से देखा जाता है, इसी कारण वहां पर राजनीतिक संचारण की छूट इनको प्राप्त नहीं है। चीन तथा जर्मनी में राजनीतिक संचारण की सीमित व्यवस्था होने के कारण वहां पर दबाव समूह अविकसित प्रकृति के हैं। राजनीतिक व्यवस्था की समूह की मांगों को सहन करने की क्षमता प्रत्येक राजनीतिक व्यवस्था में दबाव समूहों की गतिविधियां व मांगें अलग-अलग प्रकार की होती हैं। सभी राजनीतिक व्यवस्थाएं दबाव समूहों की मांगों को पूरा करने में असमर्थ होती हैं। ऐसे में अपनी मांगों को पूरा करवाने के लिए दबाव समूह सरकार पर अनुचित दबाव डालने का प्रयास अवश्य करते हैं। उनकी गतिविधियों से परेशान होकर सरकार उन पर प्रतिबन्ध लगा देती है। 1975 के बाद भारत में अनेक दबाव समूह इस प्रतिबन्ध की श्रेणी में आ गए हैं, क्योंकि ये अपनी मांगें मनवाने के लिए अधिक हिंसक साधनों का प्रयोग करने लगे हैं। सरकार दबाव समूहों की गतिविधियों को वहीं पर स्वतन्त्र छोड़ सकती है, जहां उनकी मांगें राजनीतिक व्यवस्था की क्षमता के अनुरूप हों।

7.3.10 दबाव समूहों के लक्षण (Characteristics of Pressure groups)

एकसटीक मानना है कि दबाव समूहों के स्वयं के लक्षण भी उनकी प्रभावकारिता के नियामक होते हैं। दबाव समूहों की आर्थिक स्थिति, उनका आकार, सदस्यों की लग्न व कर्मठता, संगठन की ठोसता, संगठन

की सामाजिक प्रतिष्ठता आदि कारक भी दबाव समूहों की राजनीतिक व्यवस्था में प्रभावकारिता का कारण होते हैं। आधुनिक जीवन में आर्थिक शक्ति का बहुत महत्व है। आर्थिक शक्ति ही निर्णय-निर्माताओं को प्रभावित कर सकती है। जो दबाव समूह राजनीतिक दलों को अधिक चन्दे देता है, योग्य सदस्यों को भर्ती करता है, वही प्रशासनिक मशीनरी को अपने बारे में सोचने को विवश कर सकता है। दबाव समूह की सामाजिक प्रतिष्ठा भी अनुकूल जनमत तैयार करने में उसका सहयोग करती है और सरकारी पदाधिकारियों पर प्रभाव भी डालती है। जो दबाव समूह



अपने लग्नशील सदस्यों के माध्यम से चुनावी कार्यक्रम में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभाने में सक्षम होता है, वही सरकार के नीति-निर्माण को प्रभावित करने वाली शक्ति बन जाता है।

उपरोक्त विवेचन के बाद कहा जा सकता है कि सरकार की नीति-निर्णय प्रक्रिया की संरचनाएं, दल पद्धति का स्वरूप, सरकार की नीतियां, सरकार की दबाव समूह के प्रति अभिवृत्ति, राजनीतिक संचारण, राजनीतिक व्यवस्था की क्षमता, दबाव समूहों की सामाजिक-आर्थिक स्थिति व राजनीतिक संस्कृति आदि तथ्य दबाव समूहों की राजनीतिक व्यवस्था में प्रभावकारिता के निर्धारक हो सकते हैं। राजनीतिक व्यवस्थाओं की प्रकृति में अन्तर आने के कारण दबाव समूहों की प्रभावकारिता में भी अन्तर आना स्वाभाविक ही है, क्योंकि सभी राजनीतिक व्यवस्थाओं में दबाव समूह अपने हितों के सम्वर्द्धन के समान तरीके नहीं अपना सकते। संसदीय व्यवस्थाओं में तो दबाव समूहों की प्रभावकारिता अधिक से अधिक विकेंद्रित होती है, जबकि अध्यक्षतात्मक में यह केन्द्रित होती है। सर्वसत्ताधिकारवादी राजनीतिक व्यवस्थाओं में दबाव समूहों की प्रभावकारिता सीमित व संकुचित होती है, जबकि लोकतन्त्रीय व्यवस्थाओं में यह अधिक व्यापक और विकेंद्रित होती है। विकासशील देशों में तो सरकार की नीति-निर्णय प्रक्रिया की संरचना, दल पद्धति का स्वरूप तथा राजनीतिक संचारण के प्रतिमान अनिश्चित होने के कारण दबाव समूह के निर्धारक भी अस्पष्ट है।

7.3.11 दबाव समूहों के कार्य व भूमिका

आज प्रत्येक देश की राजनीतिक व्यवस्था में दबाव समूहों का विशेष स्थान है। सभी लोकतन्त्रीय देशों में तो इसका महत्व और अधिक है। पहले तो दबाव समूहों को घृणा की दृष्टि से देखा जाता था, लेकिन आज स्थिति बदल चुकी है। आज दबाव समूह को प्रत्येक राजनीतिक समाज, राजनीतिक क्रियाशीलता के लिए एक आवश्यक बुराई के रूप में स्वीकार करने लगा है। आज नीति-निर्माण की प्रक्रिया पर इनका प्रभाव इतना अधिक बढ़ गया है कि इन्हें अदृश्य साम्राज्य कहा जाने लगा है। सरकार की विधायी कार्यों पर इनके बढ़ते प्रभाव के कारण इन्हें विधानमण्डल के पीछे विधानमण्डल भी कहा जाता है। अपने हितों के सम्वर्द्धन

के लिए इनका राजनीतिक दलों से घनिष्ठ रूप से जुड़ा रहने के कारण फ्रेडरिक ने इन्हें 'दल के पीछे सक्रिय जन' तक कह दिया है। आज अमेरिका, भारत, इंग्लैण्ड, स्विट्स, फ्रांस आदि देशों में ये समूह किसी न किसी रूप में राजनीतिक गतिशीलता में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका अदा कर रहे हैं। किसी राजनीतिक व्यवस्था में इनकी भूमिका इन कारणों से महत्वपूर्ण हो सकती है :-

लोकतन्त्रीय प्रक्रिया की अभिव्यक्ति—प्रजातन्त्रीय शासन प्रणालियां ही दबाव समूहों के पोषण के लिए अनुकूल परिस्थितियां प्रदान करती हैं। इन देशों में दबाव समूह अपने लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए जनमत का अधिक सहारा लेते हैं। यहां पर जनमत तैयार करने के लिए वे विचार-गोष्ठियों, पत्र-पत्रिकाओं, सभाओं आदि का पूरा सहारा लेते हैं। प्रजातन्त्र में अपनी बात मनवाने के लिए यह जरूरी होता है कि जनमत को साथ लेकर चला जाए।



इसलिए प्रजातन्त्र में दबाव समूहों द्वारा मजबूत जनमत को तैयार करना लोकतन्त्रीय प्रक्रिया की ही अभिव्यक्ति है। जनमत को शिक्षित करके आंकड़े एकत्रित करके, कानून निर्माताओं के पास पहुंचाकर वे अपने लक्ष्यों की प्राप्ति करने के लिए सदैव प्रयत्नशील रहते हैं। इस प्रकार दबाव समूह लोकतन्त्रीय प्रक्रिया को अभिव्यक्त करने का कार्य करते हैं।

सरकार की निरंकुशता पर रोक—आधुनिक युग में शक्तियों का झुकाव केन्द्र की तरफ ज्यादा बढ़ रहा है। आज आर्थिक विकास और सुरक्षा की आवश्यकता ने शक्तिशाली केन्द्रीय सरकार के विचार को जन्म दिया है। ऐसे में यह संभावना बढ़ जाती है कि सरकार अपनी शक्तियों का निरंकुश प्रयोग भी कर सकती है। परन्तु दबाव समूह किसी न किसी रूप में हर समय सरकारी तन्त्र पर नजर रखते हैं। अपने हितों के संरक्षण की आड़ में सरकार की निरंकुशता से आज जनता की रक्षा भी करते हैं। जिस देश में अधिकारी-तन्त्र (ठनतमनबतंबल) पर दबाव समूहों की दृष्टि हो, वह कभी निरंकुश नहीं बन सकता।

नीति-निर्माण में सहायक— लोकतन्त्रीय देशों में तो दबाव समूह शासन-तन्त्र के इर्द-गिर्द ही चक्कर काटते रहते हैं। चाहे कार्यपालिका हो या विधायिका, शासन-तन्त्र के अंग के रूप में उनकी सदा यह जानने की इच्छा रहती है कि लोगों की आवश्यकताएं क्या हैं ? इन आवश्यकताओं का ज्ञान दबाव समूहों को ही अधिक होता है। इस बारे में सभी आवश्यक सूचनाएं व आंकड़े दबाव समूह ही सरकार को उपलब्ध कराते हैं। वर्ने ने लिखा है—“समूह ही व्यक्ति-ज्ञान के क्षेत्र में विशेष है जो कानून के निर्माण और क्रियान्वयन के लिए आवश्यक है।” इस प्रकार सरकार गैर-सरकारी स्रोत के रूप में दबाव समूहों

से नीति-सम्बन्धी आवश्यक सूचनाएं प्राप्त कर लेती हैं। इससे विवेकपूर्ण नीति व कानून निर्माण करना संभव हो जाता है। यद्यपि दबाव समूहों द्वारा एकत्रित सूचनाएं व आंकड़े उनके स्वयं के हितों से अधिक सरोकार रखते हैं, लेकिन नीति निर्माण में जो महत्व उन आंकड़ों का होता है, वह अन्य स्रोतों से एकत्रित किए गए आंकड़ों का नहीं हो सकता। अतः दबाव समूह सरकार को नीति-सम्बन्धी आवश्यक कच्ची सामग्री उपलब्ध कराने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

शासन-तन्त्र को प्रभावित करना—दबाव समूह लोकतान्त्रिक देशों में तो इतने संगठित हो जाते हैं कि वे सरकारी-तन्त्र को प्रभावित करने की क्षमता भी रखते हैं। अपने लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए विधायिका, कार्यपालिका तथा नौकरशाही तन्त्र को सार्वजनिक नीति में परिवर्तन लाने के लिए दबाव डालते हैं। बहुदलीय व्यवस्था वाले देशों में ये राजनीतिक दलों के साथ सांठ-गांठ करके अपने हितों के लिए सरकार पर दबाव बनाए रखते हैं। द्विदलीय प्रणाली वाले देशों में ये मुख्य कार्यपालिका के आस-पास या विधायिका के इर्द-गिर्द ही चक्कर लगाते रहते हैं। अमेरिका में इनकी पहुंच राष्ट्रपति तक भी होती है। भारत में दबाव समूह अपने हितों की प्राप्ति के लिए राजनीतिक दलों या विधायकों के माध्यम से हर नीति-निर्णय को प्रभावित करने की चेष्टा करते रहते हैं। अपने



हितों के लिए ये न्यायपालिका तक की भी शरण ले लेते हैं। इनका मुख्य लक्ष्य ही अपने हितों के लिए शासन-तन्त्र को अपने प्रभाव में रखना है।

समाज के विभिन्न वर्गों के हितों में सामंजस्य प्रत्येक समाज में किसान, श्रमिक, व्यापारी, मजदूर, जातीय समुदाय, धार्मिक समुदाय, विद्यार्थी, स्त्रियों आदि के अपने अपने हित होते हैं, जिनकी प्राप्ति के लिए ये समूह आपस में प्रतियोगिता करते रहते हैं। प्रत्येक समूह एक दूसरे पर नियन्त्रक का कार्य करता है और अपने से विपरीत समूह को इतना शक्तिशाली नहीं होने देता कि वह निजी-स्वार्थों का केन्द्र ही बन जाए। इस प्रतियोगी-व्यवस्था में समाज में संतुलनकारी प्रवृत्तियाँ पनपने लगती हैं और समाज के सभी वर्गों के हितों में सामंजस्य बना रहता है। दबाव समूहों की उपस्थिति समाज में संतुलन के साथ-साथ प्रशासन और समाज में भी संतुलन कायम कर देती है। इससे समाज विघटनकारी शक्तियों से निपटने में सक्षम हो जाता है।

जनता व सरकार में कड़ी का काम करना— दबाव समूह जनता और सरकार को जोड़ने वाली कड़ी है। जनता की मांगों को समूहीकरण के रूप में दबाव समूह ही सरकार तक पहुंचाते हैं। नीति-निर्माण करते समय दबाव समूहों द्वारा उपलब्ध सूचनाओं पर ही अधिक ध्यान दिया जाता है। इस तरह दबाव समूह जनता व सरकार को जोड़ने का कार्य भी करते हैं।

उपरोक्त विवेचन के बाद कहा जा सकता है कि दबाव समूह सार्वजनिक नीति को प्रभावित करने के लिए अपना महत्वपूर्ण योगदान देते हैं। आधुनिक समाज में उनके बढ़ते प्रभाव को देखकर कहा जा सकता है कि दबाव समूह ही वास्तविक राजनीतिक दल है, जो सरकार और जनता को जोड़ने का कार्य करते हैं। लोगों को राजनीतिक शिक्षा देना, जनमत को तैयार करना, सार्वजनिक नीति को प्रभावित करना, सरकार को जनता की मांगें समूहीकरण के रूप में पेश करना आज राजनीतिक दलों की बजाय दबाव समूहों के ही कार्य हो गए हैं। इसी कारण आज कहा जाने लगा है कि दबाव समूह शासकों को बनाने वाले हो गए हैं। आज अमेरिका, भारत, ब्रिटेन, स्विट्जरलैण्ड, फ्रांस, पूर्वी जर्मनी, पोलैंड आदि देशों में कम या अधिक मात्रा में दबाव समूह कार्यरत हैं। अमेरिका में तो इनका विशेष प्रभाव है। वहां पर ये समूह जितने संगठित तरीके से कार्य कर रहे हैं, अन्यउद्देश में नहीं। इसी कारण अमेरिका के राष्ट्रपति वुडरो विल्सन ने इन समूहों की शक्ति की ओर संकेत करते हुए लिखा है—“संयुक्त राज्य अमेरिका की सरकार एक ऐसा शिशु है जो विशेष हितों की देख-रेख में पला है।” इस प्रकार प्रत्येक राजनीतिक व्यवस्था को गतिशील बनाने में इनकी महत्वपूर्ण भूमिका है।

7.3.12 दबाव समूहों की आलोचना— यद्यपि दबाव समूह प्रत्येक राजनीतिक व्यवस्था को गतिशील बनाने, सरकार की निरंकुशता को रोकने, जनता और सरकार में कड़ी का काम करने जैसे महत्वपूर्ण कार्य करते हैं और प्रत्येक राजनीतिक समाज इन्हें आवश्यक बुराई के रूप में स्वीकार भी करने लगा है, लेकिन फिर भी इनकी भूमिका की आलोचना की जाती है। आलोचकों का मत है कि दबाव समूह विशिष्ट हित को लेकर ही सरकार के पास जाते



हैं। उनका सामान्य हित से कोई लेना देना नहीं होता। कई बार दबाव समूह अहिंसक साधनों का प्रयोग करके राष्ट्रीय सम्पत्ति को हानि पहुंचाते हैं और समाज की एकता व शांति को भंग करने से भी नहीं चूकते। विधायकों को अनैतिक साधनों से प्रभावित करके वे राजनीतिक भ्रष्टाचार को जन्म देते हैं। अपने लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए तो वे न्यायपालिका जैसे पवित्र संगठन को भी नहीं छोड़ते। अपने स्वार्थों के लिए वे साम-दाम-दण्ड-भेद सभी नीतियों का प्रयोग निर्बाध रूप से करते हैं। अपने अनैतिक कारनामों द्वारा वे समाज में अनैतिकता का प्रसार कर देते हैं। उनकी बढ़ती भूमिका ने राजनीतिक दलों तक की भूमिका व महत्व को भी सीमित कर दिया है। इसलिए समय की यह मांग है कि दबाव समूहों की निरंकुशता की प्रवृत्ति पर रोक लगाई जाए अन्यथा ये समाज और सरकार दोनों के लिए गंभीर खतरे उत्पन्न कर देंगे

7.4 पाठ के आगे का मुख्य भाग (Presentation of further Contents)

ब्रिटेन में हित व दबाव समूह (Interest and Pressure Groups in Britain)

ब्रिटेन में हित व दबाव समूह औद्योगिक क्रांति की उपज हैं। औद्योगिक क्रांति के परिणामस्वरूप ब्रिटेन में सर्वप्रथम मजदूर वर्ग की उत्पत्ति के साथ ही श्रमिक हित समूहों का रूप उभरने लगा और सुधार आन्दोलनों ने इसके विकास को गति प्रदान की। यह माना जाता है कि आज ब्रिटेन में 50 प्रतिशत जनता किसी-न-किसी संगठन से जुड़ी हुई है। आज ब्रिटेन में भी अमेरिका की तरह हजारों हित समूह हैं। द्वितीय विश्व युद्ध के बाद से लेकर आज तक निरन्तर इनकी संख्या में वृद्धि हो रही है और ये दबाव समूह ब्रिटिश संसदीय प्रणाली का स्वाभाविक अंग बन चुके हैं। ये दबाव समूह भी अमेरिका की तरह प्रभावशाली तो नहीं हैं, लेकिन फिर भी कानून निर्माण की प्रक्रिया को किसी-न-किसी रूप में प्रभावित अवश्य करते हैं। प्रारम्भ में ब्रिटेन में Chartist Movement व The Anti-Corn Law League दो ही दबाव समूह थे। लेकिन द्वितीय विश्व युद्ध के बाद श्रमिक दल के सत्ता सम्भालते ही अनेकों दबाव समूह उभर आए। आज ब्रिटेन में किसान – मजदूरों के हितों का प्रतिनिधित्व करने वाले अनेक हित समूह हैं। इनमें National Farmers Union ' अर्थात् राष्ट्रीय कृषक संघ किसानों के हितों का वक्ता है और National Union of Mine Workers तथा The Transport and General Workers Union श्रमिक हितों के प्रतिनिधि समूह हैं। Tradd Union Congre मजदूरों के हितों का प्रतिनिधित्व करने वाला सबसे बड़ा संगठन है जो 90 प्रतिशत मजदूरों का प्रतिनिधित्व करता है। ब्रिटेन में कई ऐसे हित समूह भी हैं जो एक साथ कई हितों की पूर्ति करते हैं। उदाहरण के लिए ' सड़क सुधार परिषद ' ' Roads Campaign Council जनता की सुविधा और यातायात कम्पनियों के हितों को एक साथ पूरा करती है। इसके अतिरिक्त ब्रिटेन में—

1-The British Medical Association

2-National Union of Teachers



3-The British Bankers Association

4-The Federation of British Industries

5-National Council of Social Service

6 -Association of Metropolitan Authorities

7-National Education Council

8-Conservative Society अपने-अपने वर्गों के हितों की प्राप्ति के लिए प्रयासरत् हैं । अमेरिका की तरह ब्रिटेन में लॉबिंग व्यवस्था द्वारा दबाव व हित समूह विधायिका पर दबाव तो नहीं बना सकते , लेकिन फिर भी वे अन्य साधनों का प्रयोग करके अपने हितों के संवर्द्धन अवश्य करते हैं । ब्रिटेन में दलीय अनुशासन ने इनकी भूमिका को कुछ सीमित कर रखा है । दबाव समूह राजनीतिक दल से ही अपना सम्बन्ध जोड़कर उसके नेताओं का ध्यान अपनीतरफ तुलनात्मक शासन एवं राजनीति खींचने का प्रयास अवश्य करते हैं । ब्रिटेन में किसी भी बिल को पास करने से पहले संसद समितियां उस बिल से प्रभावित होने वाले वर्गों के हित प्रतिनिधियों से अवश्य विचार – विमर्श करती है । 1947 के कृषि एक्ट के अन्तर्गत आज भी कृषि नीति का निर्माण National Farmers Union से सलाह करके ही किया जाता है । ये दबाव समूह चुनावों में राजनीतिक दलों की हर सम्भव सहायता करते हैं । जनमत को अपने पक्ष में करने के लिए हित व दबाव समूहों द्वारा अनेक प्रयास किए जाते हैं । राजनीतिक दलों से प्रत्यक्ष सम्पर्ग बनाए रखना ही हित व दबाव समूहों द्वारा अधिक श्रेयकर समझा जाता है । इसी कारण आज ' ब्रिटिश उद्योग संघ ' तो अनुदारवादी दल से जुड़ा है और Trade Union Congress ' अतिमक दल से जुड़ा है । दबाव समूहों की हलचल राष्ट्रीय स्तर के साथ – साथ क्षेत्रीय या स्थानीय स्तर पर भी देखी जा सकती है । सारांश रूप में कहा जा सकता है कि ब्रिटेन में भी अमेरिका की तरह ही हित व दबाव समूह अपने – अपने वर्गों का प्रतिनिधित्व करते हैं । लेकिन दोनों देशों में इनके कार्यात्मक व्यवहार के तरीकों में कुछ – न – कुछ अन्तर आ ही जाता है । जहां ब्रिटेन में कठोर दलीय अनुशासन इन्हें विधायिका को प्रभावित करने का कम अवसर प्रदान करता है , वहीं अमेरिका में दलीय अनुशासन का अभाव इन्हें विधायिका के कार्य व्यवहार को प्रभावित करने में सफल बना देता है । फिर भी ब्रिटेन में हित व दबाव समूह किसी – न – किसी रूप में अपने हितों का सम्वर्द्धन कर ही लेते हैं ब्रिटिश दबाव समूहों का असर कभी – कभी इतना अधिक पाया जाता है कि उससे जनहित को खतरा दिखाई देने लगता है । उदाहरण के लिए 1958 तक नेशनल फार्मर्स यूनियन का कृषि मंत्रालय पर बहुत ज्यादा प्रभाव था , जिसके चलते सरकार ऐसी अन्य मूल्य नीति को अपनाये रही , जो आम लोगों के हितों के खिलाफ थी । मूल्य – नीति में किसी प्रकार के परिवर्तन के लिए संघ तैयार नहीं था । इसमें शक नहीं कि समय – समय पर सरकार शक्तिशाली गुट समूहों के प्रभाव को रोकने की कोशिश करती रही है । फिर भी गुट समूहों की मांग के आगे सरकार को प्रायः झुकना ही पड़ता है ।



स्विट्जरलैण्ड में हित व दबाव समूह (Interest and Pressure Groups in Switzerland) स्विट्जरलैण्ड में प्रत्यक्ष प्रजातन्त्र तथा बहुदलीय प्रणाली ने विभिन्न हित व दबाव समूहों का पोषण किया है। स्विट्जरलैण्ड में बहुदलीय प्रणाली ने अनेकों हित समूहों को जन्म दिया है। अपने राजनीतिक, सामाजिक तथा आर्थिक विचारों में विभिन्नता रखने वाले राजनीतिक दल अपने विशेष विचारों व हितों का प्रतिनिधित्व हित व दबाव समूहों के माध्यम से ही करते हैं। कई विचारकों का मानना है कि स्विट्जरलैण्ड की बहुदलीय व्यवस्था, संसदात्मक प्रणाली, विधायी प्रक्रिया तथा जनमत संग्रह की व्यवस्था आदि ने ही हित समूहों को प्रोत्साहन दिया है। स्विस् विधायकों के वेतन इतने कम हैं कि उन्हें व्यापारिक या औद्योगिक संघों की तरफ झांकना ही पड़ता है। धीरे धीरे उनका स्थान ये हित समूह ही ले लेते हैं। इसकी पुष्टि इस बात से होती है कि आज भी स्विट्जरलैण्ड में राजनीतिक पद की प्राप्ति उसके व्यावसायिक, खेतीहर और श्रमिक संघों तथा व्यक्तिगत जीवन में सफलता पर निर्भर करती है। स्विट्जरलैण्ड में विधायी प्रक्रिया ने भी हित समूहों को बढ़ावा दिया है। संघीय परिषद नये कानून का निर्माण करते समय उन हित समूहों से परामर्श करती है जिस पर उस कानून का प्रभाव पड़ने की संभावना होती है। संविधान में भी संघीय परिषद तथा हित समूहों के बीच विचार – विमर्श को अनिवार्य बताया गया है। स्विस् प्रजातन्त्र में जनमत – संग्रह की व्यवस्था ने तो हित समूहों को पूरा संरक्षण प्रदान किया है। संविधान में स्विस् जनता को आरम्भण का अधिकार दिया गया है। इस अधिकार का प्रयोग करते समय जनता हित – समूहों के हितों का ख्याल अवश्य रखती है। स्विट्जरलैण्ड में अमेरिका व ब्रिटेन की तरह हजारों दबाव समूह नहीं हैं। यहां तो केवल गिने-चुने ही दबाव समूह हैं। इनमें

1- The Swiss Peasants Union

2-The Swiss Federation of Trade Unions

3-The Swiss Union of Commerce and Industry

4-The Swiss Association of Arts and Crafts |

स्विट्जरलैण्ड में दबाव समूहों की प्रकृति व कार्य विधि अन्य देशों से भिन्न है। विधि निर्माण में प्रत्यक्ष भूमिका होने के कारण स्विस् राजनीतिक व्यवस्था में जनता द्वारा हित समूहों का महत्व स्वीकार किया गया है।

चीन में हित व दबाव समूह (Interest and Pressure Groups in China) चीन एक साम्यवादी देश है और साम्यवादी देशों में एक ही हित को मान्यता दी जाती है, वह है सर्वहारा का हिता उसे व्यक्त करने का अधिकार केवल साम्यवादी दल को ही प्राप्त होता है। वहां स्वाधीन हित समूहों को पनपने की छूट नहीं होती। वहां हित स्पष्टीकरण की प्रक्रिया में व्यावसायिक साहचर्य (Professional Association), मजदूर संघ, युवा दल सभी मिलकर साम्यवादी दल के सहयोगी और सहायक की भूमिका अदा करते हैं। साम्यवादी शासन के आरम्भिक दौर में तो हित समूहों पर पूरी तरह नियन्त्रण रहा, लेकिन उदारवाद की लहर के बढ़ते प्रभाव ने साम्यवादी देशों को



भी हितों की अभिव्यक्ति के द्वार खोलने पर साम्यवादी देशों को मजबूर कर दिया । 1970 के दशक में कुछ देशों में साम्यवादी दल के झण्डे तले हित समूहों को पनपने का अवसर दिया गया । चीन में भी साम्यवादी झण्डे के तले इन हित समूहों को पनपने का अवसर दिया गया है । लेकिन इन हित समूहों को तकनीकी मुद्दों पर ही मतभेद प्रकट करने की अनुमति है , नीति या विचारधारा के मुद्दे पर नहीं । चीन में कुछ हित संगठन हैं जो साम्यवादी दल के यन्त्र के रूप में कार्य करते हैं । इनमें—

1-All Chinese Association of Trade Unions

2-All Chinese Association of Co-operative Societies

3-All Chinese Association of Republican Youths

4-All Chinese Association of Republican women

ये सभी संगठन साम्यवादी दल के मार्ग – दर्शन में ही कार्य करते । इनका कोई स्वतन्त्र अस्तित्व नहीं है । इनमें प्रथम संगठन का कार्य अमिक अधिकारों की रक्षा करना तथा उनमें साम्यवादी दल की नीतियों को लोकप्रिय बनाना है , दूसरे का उद्देश्य सहकारिता आन्दोलन को गति देना , अन्तिम दोनों का उद्देश्य चीनी युवक , युवतियों व महिलाओं में साम्यवादी आदर्शों के प्रति निष्ठा का प्रचार करना है । आधुनिक युग में भी चीन में किसी भी राजनीतिक असहमति की सजा मौत है । व्यवहार में सरकार पर साम्यवादी दल का ही एकाधिकार है । ऐसे में वहा किसी हित समूह को स्वतन्त्र रूप में पनपने की आज्ञा नहीं दी जा सकती ।

अमेरिका में हित व दबाव समूह (Interest and Pressure Groups in america) संयुक्त राज्य अमेरिका में दबाव – समूहों ने देश की सक्रिय राजनीति में जिस प्रकार योगदान दिया है , वह विश्व में अन्यत्र कहीं नहीं मिलता है । यहाँ सचमुच में उन्होंने अदृश्य साम्राज्य का रूप ले लिया है । इस देश में हित – समूह काँग्रेस के सदस्यों को व्यक्तिगत रूप से बहुत अधिक प्रभावित करते हैं । यहीं पर सबसे पहले ' लॉबिंग ' (Lobbying) की प्रथा आरम्भ हुई । इसी प्रक्रिया के दौरान प्रत्येक विधेयक के पक्ष अथवा विपक्ष में मतदान करने के लिए सदस्यों पर दबाव डाला जाता है । इंग्लैंड , भारत , कनाडा जैसे देशों की तुलना में अमेरिकी हित – समूह बहुत अधिक शक्तिशाली और ताकतवर है । इन देशों के विपरीत उनका सम्बन्ध शासन और विधानमंडल दोनों से प्रत्यक्ष रूप से रहता है । उन्हें अपने प्रभाव के लिए राजनीतिक दलों का सहारा नहीं लेना पड़ता है उल्टे दलों के नेता ही उनका सहयोग पाने का प्रयास करते हैं ।

ग्रिफीथ ने अमेरिकी दबाव – समूहों को चार वर्गों में बाँटा है – व्यापारिक , कृषि सम्बन्धी , श्रम सम्बन्धी तथा बुद्धिजीवी । यह वर्गीकरण अब पुराना पड़ गया है । आजकल तरह – तरह के नये गुट – समूह पैदा हो गये हैं उनकी संख्या बड़ी तेजी से बढ़ रही है । अब न केवल वृहत् हितों से सम्बन्धित दबाव – समूह ही रह गये बल्कि



तरह – तरह के हितों की रक्षा के लिए नए – प्रकार के गुट पैदा हो गये । उदाहरण के लिए वयोवृद्धों का अपना गुट है सरकारी कर्मचारियों का अलग है , नीग्रो अनुदार विचार वाले उपभोक्ताओं अन्तर्राष्ट्रीय सहयोगवादियों और देशभक्तों ने अपने गुट बनाए हैं । व्यावसायिक आधार पर तरह – तरह के गुटों का निर्माण हुआ है , वकीलों , डॉक्टरों और शिक्षकों के अपने – अपने हित – समूह हैं । इसी प्रकार व्यापारियों और कृषकों में भी तरह – तरह के गुट पैदा हो गए हैं । मजदूर गुटों में तो अनेक प्रतिद्वन्द्वी गुटों ने जन्म लिया है । शहरी और देहाती हितों की रक्षा के लिए भी गुटों का निर्माण किया गया है । इस प्रकार आज अमेरिका में अनगिनत दबाव – समूह पाये जाते हैं । इनकी संख्या इतनी अधिक है कि उनकी पूरी सूची तैयार कर पाना मुश्किल है । फिर भी बड़े गुट – समूह मुख्यतः आर्थिक हितों से संबन्धित हैं , खासकर व्यापार से । इनका सम्बन्ध विनिर्माण , परिवहन , बिजली और गैस की सेवाएँ , खदानों और कुछ हद तक क्रय – विक्रय सेवा उद्योगों और कृषि से सम्बन्धित हैं । थोड़े में , व्यावसायिक वर्ग मजदूर और कृषि से सम्बन्धित है , लेकिन अपने – अपने आर्थिक हितों की रक्षा के लिए बड़े पैमाने पर दबाव – समूहों की स्थापना किये हुए हैं । उदाहरण के लिए , कृषक दबाव – समूहों में नेशनल गेज , अमेरिकन फारम ब्यूरो फेडरेशन , फारमर्स , एजुकेशन एण्ड कोओपरेटिव यूनियन , टीनेन्टस् पुण्ड शेयर कापर्स यूनियन आदि गुटों के नाम लिये जा सकते हैं । इसी तरह श्रमिकों के भी अनेक संघ या गर हैं जिनमें पमस्व अमेरिक आदि गुटों के नाम लिये जा सकते हैं । इसी तरह श्रमिकों के भी अनेक संघ या गुट हैं जिनमें प्रमुख अमेरिकन फेडरेशन ऑफ लेबर , काँग्रेस ऑफ द इंडस्ट्रियल आर्गेनिजेशन तथा विभिन्न रेल मजदूर संगठन हैं । दबाव समूहों का एक दूसरा बड़ा वर्ग देशभक्त और समाजसेवी संगठनों का है जैसे डॉटर्स ऑफ अमेरिकन रिवोल्युशन (Daughters of American Revolution) , अमेरिकन लिजन्स (American Legions) वेटर्नस ऑफ फॉरन वार्स (Vetarns of Foregin Wars) , तथा नेवी लीग (Navy League) आदि । तीसरा वर्ग सुधारक गुटों का है , जैसे – वीमेन्स क्रिश्चियन टेम्परेस यूनियन (‘वउमदे’ बितपेजपंद जमउचमतमदबम न्दपवद) , नेशनल सिविलज सर्विसेज (National Civil Service) , रिफार्म लीग (Reform League) , लीग ऑफ वीमेन्स वोटर्स (League of Womens Voters) आदि । नोट जैसा कि ऊपर कहा जा चुका है , अमेरिका में बड़े और छोटे दबाव – समूहों तथा हित – समूहों की संख्या अनगिनत हैं । उनके स्वभाव तथा उद्देश्य भिन्न – भिन्न हैं । वे नैतिक मानव कल्याण के उद्देश्य को लेकर राजनीतिक तथा आर्थिक हितों की प्राप्ति के लिए कायम किये गये हैं । तकनीक – आमतौर पर सभी देशों में दबाव – समूहों द्वारा अपनाए गई तकनीकें एक समान होती हैं । फिर भी देश , काल और परिस्थितियों के अनुसार वे विशेष प्रकार की तकनीक भी अपनाते हैं । अमेरिका में दबाव – समूहों द्वारा अपनाये गए तकनीक कई प्रकार के हैं । दबाव – समूहों का पहला तकनीकी निर्वाचनों से भाग लेकर देश की राजनीति को प्रभावित करना है । वे प्रतिनिधियों के चुनाव में सक्रिय भाग लेते हैं । अपनी इच्छा के अनुसार उम्मीदवारों का चयन कराना और उन्हें विजयी बनाना उनका एक मुख्य काम है । अमेरिका में यह कार्य इतना व्यापक और इतनी तत्परता से किया जाता है कि हित – समूह यह चिन्ता नहीं करते कि उनका उम्मीदवार



रिपब्लिकन है या डेमोक्रेट । उम्मीदवार किसी भी दल का हो , जिससे उनका हित सधता हो , उसे हित – समूह चुनाव में मदद करते हैं । उम्मीदवारों को चुनाव में विजयी बनाना दबाव – समूह की सदस्य संख्या और उसके प्रभाव पर निर्भर करता है । उदाहरण के लिए , अमरीकी श्रमिक संघ अपने आकार और सदस्य संख्या के कारण किसी भी सदस्य को विजयी बनाने की क्षमता रखता है , जिसकी सहानुभूति मजदूरों के प्रति हो । निर्वाचित सदस्य आमतौर पर विशेष दबाव – समूह के प्रभाव में काम करते हैं । अगले चुनाव को भी ध्यान में रखकर उसे ऐसा करना पड़ता है । अमरिकी दबाव – समूहों का इससे भी बड़ा तकनीकी लॉबी (Lobby) तैयार करना है । लॉबी की पद्धति अमेरिकी शासन – व्यवस्था की विशेष देन है । पहले लौबी शब्द से भ्रष्टाचार , दुराग्रह , बेईमानी जैसे अवगुणों से भरे हुए गन्दगी के छोटे – छोटे समूह जाते थे , लेकिन अब लॉबी अमेरिकी शासन – पद्धति की एक मान्य और सम्मानित व्यवस्था कब बन गयी है । इसे अब बुरे दृष्टिकोण से नहीं देखा जाता है । इस व्यवस्था के अन्तर्गत दबाव – समूह अपने एजेण्ट्स को धन देकर राजधानी में इसलिए छोड़ देते हैं कि वे उनके हितों के संरक्षण के लिए आँकड़े तैयार करें और प्रतिनिधियों को काँग्रेस में बोलने के लिए तैयार करें और प्रतिनिधियों के बोलने के लिए सामग्री तैयार करें । एजेण्ट्स को ' लॉबिस्ट ' (Lobbyist) कहा जाता है । चूंकि अधिकांश विधायक बोलने के लिए स्वयं सामग्री जुटाने का कष्ट नहीं उठाना चाहते हैं इसलिए उनके द्वारा लॉबिस्ट की सहायता ली जाती है । नए प्रतिनिधियों को लॉबिस्ट खिला – पिला कर तथा अन्य सुविधाएँ देकर अपने पक्ष में करने का निरन्तर प्रयास करते रहते हैं । सभी महत्वपूर्ण गुट अपनीलॉबियाँ वाशिंगटन में चलाते हैं । यूनाइटेड स्टेट्स चेम्बर ऑफ कॉमर्स की लॉबी तो उसके राष्ट्रीय कार्यालय का एक विभाग है , जो बड़े पैमाने पर चलायी जाती है । कुछ लॉबियाँ स्थायी होती है कुछ अस्थायी । केवल महत्वपूर्ण दबाव – समूह ही राष्ट्रीय स्तर रूप से संगठित लॉबियाँ रखते हैं । छोटे – छोटे हित समूह केवल समय – समय पर जरूरत के अनुसार लॉबी चलाते हैं । प्रत्येक लॉबी में साधारणतः कम-से-कम एक विधायी कार्य सम्बन्धी एजेण्ट , और अनुसंधान कार्य करने वाले कुछ दक्ष कर्मचारी होते हैं । इन लॉबी प्रचारकों पर दूर-दूर देश में फैले हुए गुटों को निर्भर रहना पड़ता है । लॉबी प्रचारक राजनीति में बहुत ही महत्वपूर्ण स्थान रखते हैं । वे विधेयकों की बड़ी संख्या की जाँच – परख करते हैं , वे काँग्रेस के सदस्यों को समझाते हैं कि किस विधेयक को पारित करने में किसी विशेष लक्ष्य की प्राप्ति हो सकती है और उनसे सम्बन्धित विधेयकों को पारित करने से किस प्रकार आम जनता का कल्याण हो सकता है । लॉबी प्रचारक का यह एक मुख्य काम है कि वह काँग्रेस को ऐसा अनुभव कराये कि जिन विधेयकों का उसका संगठन पारित कराना चाहता है , उसके पीछे सम्पूर्ण " जनता " है । केवल रिश्वत , मुफ्त पास और चुनाव में खर्च से ही काँग्रेस के सदस्यों को प्रभावित नहीं किया जा सकता है । उन्हें सोचने पर मजबूर किया जाता है कि लॉबी प्रचारक जो चाहता है , जनता भी वही चाहती है । इस प्रकार लॉबी प्रचारक का मुख्य काम अपने गुट के हित में जनहित को ही बदलना है ।



काँग्रेस को प्रभावित करने के लिए लॉबी प्रचारक प्रत्यक्ष और परोक्ष साधनों का प्रयोग करते हैं । वे स्वयं तो काँग्रेस के सदस्यों को प्रभावित करते ही हैं , साथ ही उन पर परोक्ष रूप से प्रभाव डालने का भी प्रयास करते हैं । उदाहरण के लिए वे काँग्रेस के सदस्यों से इस ढंग से अपील करते हैं कि वे किसी विधेयक के विरुद्ध मत दें क्योंकि वह नोट साम्यवादी अथवा समाजवादी है और इसलिए गैर अमेरिकी है । वे यह प्रयत्न करते हैं कि लोकमत को अपने पक्ष में तैयार करें जिससे मतदाताओं का दबाव सदस्यों पर पड़े । लॉबी की पद्धति के विकास के कारण ही हित समूहों को मतदाताओं का संगठित समूह कहा जाने लगा है । राजनीतिक दलों के प्रभाव में ह्रास होने के कारण मतदाताओं पर दबाव – समूहों का प्रभाव पड़ा है । अब प्रायः चुनाव के समय और उसके बाद भी दोनों के व्यवहार को बहुत कुछ इन गुटों के माध्यम से समझा जा सकता है । चुनाव – अभियान में दलीय प्रत्याशी विभिन्न गुटों का समर्थन पाने की कोशिश करता है । यह ठीक ही कहा गया है कि “ राजनीतिक दल अब जिस आवाज को सुनते हैं , वह जनता की ओर से बोलने का दावा करने वाले राजनीतिक नेताओं की आवाज की अपेक्षा समूहों और प्रभावक गुटों की आवाज है । यह आवाज वाशिंगटन तक भी पहुँचती है । कारण यह है कि काँग्रेस के सदस्य दलों द्वारा चुने जाते हैं , परन्तु मतदान में वे साधारणतः दल की अपेक्षा गुटों की आवाज पर अधिक ध्यान देते हैं । यही कारण है कि लॉबियाँ और उनके गुट विधायी कार्य और पदों पर नियंत्रण करने लगते हैं । लॉस्की ने ठीक ही इन गुटों और लॉबियों का “ काँग्रेस के पीछे एक प्रकार की काँग्रेस ” कहा है । यह कहना गलत नहीं है कि प्रभावक गुट और लॉबियाँ विधानमण्डल के तीसरे स्थान के रूप में काम करने लगे हैं । प्रभावक गुटों की तीसरी कार्यविधि समितियों के माध्यम से काँग्रेस के सदस्यों को प्रभावित करना है । वे काँग्रेस सदस्य को यह विश्वास दिलाने का भरसक प्रयत्न करते हैं कि उन्हें उसके निर्वाचन क्षेत्र का पूरा समर्थन प्राप्त है और अमुक विधि पारित होने अथवा रुकने से उसके निर्वाचकों को समान लाभ होगा , तथा वे सब यही चाहते हैं , जिसकी वकालत गुट कर रहा है । इस कठिन कार्य को वे बड़ी चतुराई से करते थे । कभी – कभी तो दबाव – समूह अपने वांछित विधेयक का प्रारूप भी स्वयं तैयार करते हैं और सम्बद्ध समिति में उसे प्रस्तुत करके उसी को सदन में अग्रिम कार्यवाही के लिए भेजते हैं । चूँकि प्रभावक गुट अधिकारियों से मधुर संबंध बनाये रखते हैं इसलिए विधेयक के कार्यवाही के लिए भेजते हैं । चूँकि प्रभावक गुट अधिकारियों से मधुर संबंध बनाये रखते हैं इसलिए विधेयक के प्रारूप को तैयार करने का काम भी वे उन्हीं से लेते हैं । समितियों की बैठकों के समय वे काफी तत्पर रहते हैं और सदस्यों को खिला – पिलाकर तथा अन्य तरीकों से अपने पक्ष में करने का प्रयास करते रहते हैं । दबाव – समूह की अन्तिम महत्वपूर्ण तकनीक लोकमत का निर्माण करना है । वे जैसा चाहते हैं , उसी के अनुसार लोकमत को मोड़ने की कोशिश करते हैं । यह कार्य भाषणों , पुस्तकों , लेखों , रेडियो , टेलीविजन आदि के माध्यम से निरन्तर और सघनता से किये जाते हैं । प्रभावक गुट प्रचार के साधनों पर काफी खर्च करते हैं । यह कहना गलत है कि दबाव-समूह केवल भ्रष्टाचार , रिश्वत और अन्य गन्दे माध्यमों का ही सहारा लेते हैं । दबाव – समूह के कार्य-आजकल अमेरिका में दबाव-समूह का महत्त्व पहले की अपेक्षा बहुत ही अधिक बढ़ गया है । शुरु



में इस देश में ऐसे गुटों को शंका की दृष्टि से देखा जाता था । लोग इन्हें लोकतन्त्र के लिए खतरनाक समझते थे । कार्ल जे . फ्रेडरिक ने लिखा है कि " गत पीढ़ी में इन गुटों को नैतिक क्रोध और भय की दृष्टि से देखा जाता था । गन्दे राजनीतिज्ञ तथा राजनीतिक शास्त्र के प्रबुद्ध विद्यार्थी दोनों ही इन्हें घृणास्पद समझते थे । इन्हें और पापी शक्ति समझा जाता था जो आधुनिक लोकतन्त्र और सरकार की जड़ उखाड़ने को उद्यत थे । लेकिन आज बात कुछ और ही है । इन्हें लोकतन्त्र का आधार माना जाने लगा है । एक और श्रमिक वर्ग संगठित गुटों के माध्यम से शोषण विरुद्ध आवाज उठाने लगे हैं , तथा सरकार से अपने अधिकारों की मांग करने लगे हैं , दूसरी ओर पूँजीपति एवं उद्योगपति आपस में गुट बनाकर अपने हितों की रक्षा करने लगे हैं । अब ऐसे गुटों को जीवन और समाज का अस्तित्व बनाए रखने के लिए अनिवार्य माना जाने लगा है ।

7.5 अपनी प्रगति जांचें (Check your progress)

प्रश्न .1 . ब्रिटेन के दबाव समूहों को दो वर्गों में बाँटा जा सकता है..... और.....

प्रश्न .2.....को पुनः दो भागों में बाँटा जा सकता है – उत्पादन समूह और उपभोक्ता समूह ।

प्रश्न .3. सबसे पहले लॉबिंग की प्रथा..... में आरम्भ हुई ।

प्रश्न .4. अमेरिका में हित समूह..... का रूप ले चुका है ।

7.6 सारांश (Summary)

साधारण शब्दों में दबाव समूह लोगों के उस संगठित समूह को कहा जाता है जो अपने सदस्यों के हितों की सिद्धि के लिए सरकार की निर्णयकारिता को प्रभावित करता है। यद्यपि दबाव समूह के लिए कुछ विद्वान हित समूह का भी प्रयोग करते हैं, लेकिन बिना राजनीतिक प्रक्रिया को प्रभावित किए कोई भी हित समूह दबाव नहीं कहला सकता। हित समूह में प्रभावकारिता की शक्ति आ जाने पर ही वह दबाव समूह का रूप लेता है। यही प्रभावकारिता समूह के हितों को प्राप्त करने में मददगार होती है। ब्रिटेन में हित व दबाव समूह औद्योगिक क्रांति की उपज हैं । औद्योगिक क्रांति के परिणामस्वरूप ब्रिटेन में सर्वप्रथम मजदूर वर्ग की उत्पत्ति के साथ ही श्रमिक हित समूहों का रूप उभरने लगा और सुधार आन्दोलनों ने इसके विकास को गति प्रदान की । ये दबाव समूह भी अमेरिका की तरह प्रभावशाली तो नहीं हैं , लेकिन फिर भी कानून निर्माण की प्रक्रिया को किसी—न—किसी रूप में प्रभावित अवश्य करते हैं ।

स्विट्जरलैण्ड में प्रत्यक्ष प्रजातन्त्र तथा बहुदलीय प्रणाली ने विभिन्न हित व दबाव समूहों का पोषण किया है। स्विट्जरलैण्ड में बहुदलीय प्रणाली ने अनेकों हित समूहों को जन्म दिया है। अपने राजनीतिक , सामाजिक तथा आर्थिक विचारों में विभिन्नता रखने वाले राजनीतिक दल अपने विशेष विचारों व हितों का प्रतिनिधित्व हित व दबाव



समूहों के माध्यम से ही करते हैं। स्विट्जरलैण्ड में दबाव समूहों की प्रकृति व कार्य विधि अन्य देशों से भिन्न है। विधि निर्माण में प्रत्यक्ष भूमिका होने के कारण स्विस् राजनीतिक व्यवस्था में जनता द्वारा हित समूहों का महत्व स्वीकार किया गया है। चीन में सभी संगठन साम्यवादी दल के मार्ग – दर्शन में ही कार्य करते हैं। इनका कोई स्वतन्त्र अस्तित्व नहीं है। इनमें प्रथम संगठन का कार्य अमिक अधिकारों की रक्षा करना तथा उनमें साम्यवादी दल की नीतियों को लोकप्रिय बनाना है, दूसरे का उद्देश्य सहकारिता आन्दोलन को गति देना, अन्तिम दोनों का उद्देश्य चीनी युवक, युवतियों व महिलाओं में साम्यवादी आदर्शों के प्रति निष्ठा का प्रचार करना है। आधुनिक युग में भी चीन में किसी भी राजनीतिक असहमति की सजा मौत है। व्यवहार में सरकार पर साम्यवादी दल का ही एकाधिकार है। ऐसे में वहाँ किसी हित समूह को स्वतन्त्र रूप में पनपने की आज्ञा नहीं दी जा सकती।

7.7 सूचक शब्द

- **औचित्य** : उपयुक्तता
- **वैचारिक समूह** : ये समूह भौतिक फायदे के लिए नहीं कुछ वैचारिक फायदे को बढ़ावा देने के लिए जाने जाते हैं।
- **हितकर** : वह जो हित करता या चाहता हो।

7.8 स्वयं मूल्यांकन हेतु प्रश्न (Self Assessment Questions)

- प्रश्न .1 दबाव समूह की परिभाषा को स्पष्ट कीजिए।
- प्रश्न .2 लोकतंत्र में इनकी भूमिका को लिखें।
- प्रश्न .3 दबाव समूहों के कार्य का उल्लेख करें
- प्रश्न 4. हितकर समूह की परिभाषा को स्पष्ट कीजिए।
- प्रश्न 5. हितकर समूहों की विशेषताओं का वर्णन कीजिए।
- प्रश्न 6 दबाव समूह के महत्व का वर्णन कीजिए

7.9 अपनी प्रगति की जांच करने के लिए उत्तर (Answers to check your progress)

1. हित और वैचारिक समूह 2. हित समूह 4. अदृश्य साम्राज्य ।

7.10 सन्दर्भ ग्रन्थ/निर्देशित पुस्तकें (References / Suggested Readings)

1. तुलनात्मक राजनीति की रूपरेखा— ओम प्रकाश गाबा, मयूर पेपर बैक्स, नोएडा।



2. तुलनात्मक शासन एवं राजनीति – डॉ . बीरकेश्वर प्रसाद सिंह, ज्ञानदा प्रकाशन (पी.एण्ड डी.) 24, दरियागंज, अंसारी रोड, दिल्ली।
3. तुलनात्मक राजनीति एवं राजनीतिक संस्थाएँ – सी.बी. गेना, विकास पब्लिशिंग हाउस प्रा.लि. अंसारी रोड, दिल्ली।
4. तुलनात्मक राजनीति – जे.सी . जौहरी, स्टर्लिंग पब्लिशर्स प्रा.लि., दिल्ली।



Subject : Political Science(Comparative Constitutions of UK & USA (Optional-I))	
Course Code : POLS-303	Author : Dr. Parveen Sharma
Lesson No. 8	
राजनीतिक संस्कृति व राजनीतिक समाजीकरण (Political Culture and political socialization)	

अध्ययन की संरचना

- 8.1 अधिगम उद्देश्य (Learning Objectives)
- 8.2 प्रस्तावना (Introduction)
- 8.3 पाठ का मुख्य भाग (Presentation of main Content)
 - 8.3.1 राजनीतिक संस्कृति का अर्थ व परिभाषा (Meaning and Definition of Political Culture)
 - 8.3.2 राजनीतिक संस्कृति के संघटक (Components of Political Culture)
 - 8.3.3 राजनीतिक संस्कृति की प्रकृति व विशेषतायें (Nature and Features of Political Culture)
 - 8.3.4 राजनीतिक संस्कृति के प्रकार (Types of Political Culture)
 - 8.3.5 राजनीतिक संस्कृति के निर्धारक तत्व (Determinants of Political Culture)
- 8.4 पाठ के आगे का मुख्य भाग (Further main body of the text)
 - 8.4.1 राजनीतिक समाजीकरण (Political socialization)
 - 8.4.2 राजनीतिक समाजीकरण का अर्थ व परिभाषा (Meaning and Definition of Political socialization)
 - 8.4.3 राजनीतिक समाजीकरण की प्रकृति (Nature of Political socialization)
 - 8.4.4 राजनीतिक समाजीकरण की विशेषताएँ (Features of Political socialization)



- 8.4.5 राजनीतिक समाजीकरण के प्रकार
- 8.4.6 राजनीतिक समाजीकरण के सिद्धान्त (Theories of Political Socialisation)
- 8.4.7 राजनीतिक समाजीकरण के उद्देश्य (Objectives of Political Socialisation)
- 8.4.8 राजनीतिक समाजीकरण का महत्त्व (Importance of Political Socialisation)
- 8.4.9 राजनीतिक समाजीकरण के अभिकरण (Agency of Political Socialisation)
- 8.4.10 राजनीतिक समाजीकरण व राजनीतिक व्यवस्था में सम्बन्ध (Relations in the social system of political socialization)
- 8.4.11 राजनीतिक समाजीकरण व राजनीतिक संस्कृति में सम्बन्ध (Relations of political culture to political socialization)
- 8.4.12 राजनीतिक समाजीकरण की अवधारणा का मूल्यांकन (Evaluation of the concept of political socialization)
- 8.5 अपनी प्रगति जांचें (Check your progress)
- 8.6 सारांश (Summary)
- 8.7 सूचक शब्द (Key Words)
- 8.8 स्वयं मूल्यांकन हेतु प्रश्न (Self -Assessment Questions)
- 8.9 अपनी प्रगति की जांच करने के लिए उत्तर (Answers to check your progress)
- 8.10 सन्दर्भ ग्रन्थ/निर्देशित पुस्तकें (References / Suggested Readings)

8.1 अधिगम उद्देश्य (Learning Objectives)

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् विद्यार्थी योग्य होंगे

1. राजनीतिक संस्कृति के अर्थ और त्रिस्तरीय मूल्यांकन को समझने एवं समकालीन राजनीतिक प्रवृत्तियों की व्याख्या करने में ।



2. राजनीतिक समाजीकरण को समझने व व्याख्या करने में ।

8.2 प्रस्तावना

द्वितीय विश्व युद्ध के बाद राजनीतिक विश्लेषकों ने यह पता लगाने का प्रयास किया कि समान राजनीतिक संरचनात्मक ढांचे वाली राजनीतिक व्यवस्था के व्यवहार में अन्तर क्यों आ जाता है तथा राजनीतिक विकास की दिशाएं भी अलग-अलग क्यों हो जाती हैं ? इसके लिए राजनीतिक विश्लेषकों ने विकसित व विकासशील देशों की राजनीतिक व्यवस्थाओं को तुलनात्मक अध्ययन शुरू किया और अन्त में यह तथ्य उभरकर हमारे सामने आया कि राजनीतिक विकास के विभिन्न दिशाओं में जाने का कारण इन देशों की राजनीतिक संस्कृति का स्वरूप है। पराधीन राजनीतिक संस्कृति के कारण विकासशील देशों का राजनीतिक विकास राजनीतिक व्यवस्था के मार्ग में बाधा बन रहा है, जबकि विकसित व सहभागी राजनीतिक संस्कृति विकसित देशों में राजनीतिक विकास को राजनीतिक विकास के अनुकूल बना रही है। इस प्रकार धीरे-धीरे राजनीतिक संस्कृति की अवधारणा राजनीति विज्ञान की लोकप्रिय अवधारणा बन गई। आज राजनीतिक संस्कृति ही एकमात्र ऐसी अवधारणा है जो राजनीति विज्ञान में तुलनात्मक अध्ययन का विकसित दृष्टिकोण प्रस्तुत करने में सक्षम है।

8.3 अध्ययन के मुख्य बिन्दु (Main Points of Text)

8.3.1 राजनीतिक संस्कृति का अर्थ व परिभाषा (Meaning and Definition of Political Culture)

फाईनर के अनुसार, “राजनीतिक संस्कृति मुख्यतः शासकों, राजनीतिक संस्थाओं तथा प्रक्रियाओं की वैधता से सम्बन्धित है।”

राय मैक्रीडस के अनुसार, “राजनीतिक संस्कृति का अर्थ एक मानव-समूह के द्वारा स्वीकृत सामान्य लक्ष्यों और सामान्य नियमों से होता है।”

नेटल के अनुसार – “राजनीतिक संस्कृति का अर्थ राज्यसत्ता से सम्बन्धित ज्ञान मूल्यांकन और संचारण के प्रतिमान या प्रतिमानों से है।”

राज एवं डोगन के अनुसार – “राजनीतिक संस्कृति की अवधारणा ऐसे मूल्यों, विश्वासों और मनोभावों को संक्षेप में व्यक्त करने की सुविधाजनक रीति है, जो राजनीतिक जीवन को अर्थ प्रदान करती है।”

8.3.2 राजनीतिक संस्कृति के संघटक (Components of Political Culture)

राजनीतिक संस्कृति राजनीतिक समाज के लोगों की राजनीतिक व्यवस्था के प्रति अभिरुचियों, मूल्यों व विश्वासों पर आधारित है। राजनीतिक संस्कृति में आत्मपरकता का गुण होने के कारण यह व्यक्तिगत अभिविन्यास या अनुकूल



का हिस्सा होती है। यह अनुकूलन ज्ञानात्मक, भावनात्मक तथा मूल्यात्मक होता है। ज्ञानात्मक अनुकूल का सम्बन्ध लोगों की राजनीतिक व्यवस्था के प्रति जानकारी से, भावनात्मक अनुकूलन का सम्बन्ध लोगों का राजनीतिक व्यवस्था के प्रति लगाव से तथा मूल्यांकन अनुकूलन का सम्बन्ध लोगों के द्वारा राजनीतिक व्यवस्था के मूल्यों व निर्णयों से होता है। इस अनुकूलन की दृष्टि से राजनीतिक व्यवस्था के तीन घटक होते हैं— मूल्य, विश्वास और संवेदात्मक अभिवृत्तियां। प्रत्येक देश की राजनीतिक संस्कृति का निर्माण इन्हीं घटकों से होता है। इन घटकों की अनुक्रिया ही किसी राजनीतिक व्यवस्था का सामान्य या विशिष्टता की तरह ले जाती है। इसी कारण राजनीतिक संस्कृति को राजनीतिक व्यवस्था का प्रकृति का नियात्मक कहा जाता है। राजनीतिक संस्कृति के घटकों का मूल्यांकन करके ही राजनीतिक संस्कृति की प्रकृति का भी निर्धारण किया जा सकता है। ये घटक निम्नलिखित हैं:—

(i) मूल्य अभिवृत्तियां (Value Preferences) :- प्रत्येक राजनीतिक व्यवस्था में राजनीतिक बातों में रुचि रखने वाले सदस्य व्यवस्था के मूल्यों से अवश्य प्रभावित होते हैं। ये अभिवृत्तियां राजनीतिक समाज के सार्वजनिक लक्ष्यों से सम्बन्धित विश्वास व आस्थाएं होती हैं। प्रत्येक राजनीतिक समाज में कुछ राजनीतिक मूल्य होते हैं, जैसे एक निश्चित अवधि के बाद निर्वाचन होने चाहिए; जनता का विश्वास खो देने पर सरकार को अपना पद छोड़ देना चाहिए। लेकिन यह आवश्यक नहीं है कि सभी लोगों की रुचि इन मूल्यों में समान हो। किसी की रुचि तो सामाजिक न्याय व समानता में हो सकती है, किसी की रुचि राजनीतिक स्थिरता में हो सकती है तथा किसी की कानून के शासन में हो सकती है। इसलिए राजनीतिक संस्कृति के आधार पर राजनीतिक व्यवस्थाओं की कार्यप्रणाली या व्यवहार में भिन्नता का कारण मूल्य अभिरुचियों में पाया जाने वाला अन्तर है। जब जनता तथा शासक वर्ग की मूल्य अभिवृत्तियां असमान हो जाती हैं तो राजनीतिक व्यवस्था पर संकट के बादल छा जाते हैं।

(ii) विश्वास अभिवृत्तियां (Belief Preferences) :- जनता की राजनीतिक व्यवस्था के प्रति विश्वास की अभिवृत्तियां राजनीतिक मूल्यों से घनिष्ठ सम्बन्ध रखती हैं। इसके अन्तर्गत वे अभिरुचियां हैं कि लोगों का राजनीतिक व्यवस्था के प्रति विश्वास की मात्रा तथा प्रकृति क्या है। किसी व्यक्ति को वोट डालने में विश्वास हो सकता है तथा किसी का नहीं। इस विश्वास के आधार पर ही शासक व शासित को पारस्परिक सम्बन्ध स्थापित होते हैं। इसी विश्वास में अन्तर आ जाने पर राजनीतिक संस्कृतियों में मात्रात्मक अन्तर आ जाता है और जनता का राजनीतिक व्यवस्था के प्रति विश्वास का स्वरूप भी बदल जाता है। इसी से राजनीतिक व्यवस्था का संचालन प्रभावित होता है। अतः राजनीतिक विश्वास ही राजनीतिक संस्कृति के माध्यम से राजनीतिक व्यवस्था का नियात्मक व संचालन बना रहता है।

(iii) संवेदनात्मक अभिवृत्तियां (Sentimental Preferences) :- इसका सम्बन्ध लोगों की राजनीतिक व्यवस्था के प्रति मनोवृत्तियों या मनोभावों से होता है। किसी व्यक्ति को तो अपने देश या व्यवस्था पर गर्व हो



सकता है तो किसी को घृणा भी हो सकती है। संवेदनात्मक अभिवृत्तियों में पाया जाने वाला अन्तर, राजनीतिक संस्कृति के घटकों में पाया जाने वाला अन्तर राजनीतिक संस्कृति में मात्रात्मक भेद पैदा करता है और यही भेद आगे चलकर राजनीतिक व्यवहार की भिन्नता के रूप में प्रकट होता है।

8.3.3 राजनीतिक संस्कृति की प्रकृति व विशेषतायें (Nature and Features of Political Culture)

इसकी प्रमुख विशेषताएं निम्नलिखित हैं :

- राजनीतिक संस्कृति एक व्यक्तिपरक धारणा है, क्योंकि इसमें लोगों के विचारों, विश्वासों व मूल्यों का अध्ययन किया जाता है।
- राजनीतिक संस्कृति एक व्यापक धारणा है, क्योंकि यह राजनीतिक व्यवहार के अनेक तत्वों को अपने में समेटे रहती है।
- राजनीतिक संस्कृति सामान्य संस्कृति का ही एक अंश होती है, क्योंकि इसमें लोगों के राजनीतिक मूल्य व विश्वास ही शामिल होते हैं।
- राजनीतिक संस्कृति का स्वरूप प्रत्येक राजनीतिक व्यवस्था में अलग-अलग होता है, क्योंकि राजनीतिक संस्कृति के घटकों का प्रत्येक देश में अन्तर पाया जाता है।
- राजनीतिक संस्कृति एक अमूर्त नैतिक अवधारणा है।
- राजनीतिक संस्कृति एक गत्यात्मक व परिवर्तनशील अवधारणा है।
- राजनीतिक संस्कृति व राजनीतिक विकास में गहरा सम्बन्ध होता है।
- राजनीतिक संस्कृति राजनीतिक समाजीकरण व आधुनिकीकरण की प्रक्रिया को भी प्रभावित करती है। अड़ियल प्रकार की राजनीतिक संस्कृति राजनीतिक आधुनिकीकरण, समाजनीकरण व विकास का मार्ग अवरुद्ध कर देती है।
- भूगोल, परम्पराएं, इतिहास, आदर्श, जीवन मूल्य, जलवायु, सामाजिक तथा आर्थिक तत्व, राष्ट्रीय प्रतीक आदि तत्व राजनीतिक संस्कृति के निर्माण में योगदान देते हैं।
- राजनीतिक संस्कृति जन-सामान्य के राजनीतिक व्यवहार को प्रभावित करती है।

8.3.4 राजनीतिक संस्कृति के प्रकार (Types of Political Culture)

प्रत्येक राजनीतिक व्यवस्था में लोगों का राजनीतिक व्यवस्था के प्रति लगाव, विश्वास व मूल्य अलग अलग ढंग का होता है। कहीं पर तो राजनीतिक व्यवस्था के प्रति गहरा लगाव रखते हैं और राजनीतिक प्रक्रिया में सक्रिय सहभागिता रखते हैं तो कहीं पर इसका सर्वथा अभाव पाया जाता है। राजनीतिक समाज के सदस्यों की राजनीतिक



सहभागिता ही प्रायः राजनीतिक संस्कृति की प्रकृति का निर्धारण करती है। निरन्तरता या सातत्य की दृष्टि से राजनीतिक संस्कृति परम्परागत व आधुनिक दो प्रकार की हो सकती है। जहां परम्परा व आधुनिकता में संघर्ष चलता रहता है वहां पर राजनीतिक संस्कृति का नवीन रूप भी अस्तित्व में आ जाता है जिसे मिश्रित संस्कृति कहा जा सकता है। विचारवादियों की दृष्टि में राजनीतिक संस्कृति प्रजातंत्रीय, साम्यवादी, समाजवादी व एकतन्त्रवादी हो सकती है। एकरूपता की दृष्टि से इसे संकुचित, प्रजाभागी तथा सहभागी संस्कृति में बांटा जाता है। एस०ई०फाइनर ने राज-संस्कृति को प्रौढ, विकसित, निम्न तथा पूर्व-फ्रांसीसी क्रान्ति सम-न्यूनतम चार भागों में बांटा है। ऑमण्ड ने भी राजव्यवस्थाओं में जनसहभागिता के सन्दर्भ में इसे तीन भागों में बांटा है। उसने आगे राजनीतिक संस्कृति के तीन अन्य प्रकार भी बताये हैं। इससे स्पष्ट हो जाता है कि राजनीतिक संस्कृति विभिन्न आधारों पर अनेक प्रकार की होती है।

(1) संख्या व शक्ति के आधार पर

(2) निरन्तरता व सातत्य की दृष्टि से

(3) राजनीतिक सहभागिता के आधार पर

(4) गुणात्मक स्वरूप के आधार

(5) शासन व्यवस्था जनित संवेगों के आधार

(1) संख्या व शक्ति के आधार पर इस आधार पर राजनीतिक संस्कृति के दो भेद माने जाते हैं:-

(i) अभिजनात्मक संस्कृति (Elitist Culture) :- यह संस्कृति इस मान्यता का परिणाम है कि प्रत्येक शासन में गिने-चुने लोग ही सत्ता के वास्तविक धारक होते हैं और उनका राजनीतिक व्यवस्था तथा लोगों की जीवन शैली पर व्यापक प्रभाव होता है।

(ii) जनसंस्कृति (Mass-Culture) :- यह संस्कृति लोकतन्त्रीय आस्थाओं को समेटे हुए है। यह जन आस्था एवं रचनात्मक वृत्तियों का द्योतक है। इसमें राजनीतिक प्रक्रिया में जनसाधारण की उपेक्षा नहीं की जा सकती और प्रत्येक स्तर पर जनता की भावनाओं का ख्याल रखा जाता है।

(2) निरन्तरता व सातत्य की दृष्टि से

इस आधार पर राजनीतिक संस्कृति को तीन भागों में बांटा जा सकता है :-

(i) परम्परागत राजनीतिक संस्कृति (Traditional Political Culture)

(ii) आधुनिक राजनीतिक संस्कृति (Modern Political Culture)



(iii) मिश्रित राजनीति संस्कृति (Mixed Political Culture)

परम्परावादी संस्कृति का सम्बन्ध जन सामान्य से होता है, जबकि आधुनिक राजनीतिक संस्कृति का सम्बन्ध विशिष्ट वर्गीय शासकों से होता है। ब्रिटेन तथा भारत में मिश्रित संस्कृति पाई जाती है। क्योंकि यहां पर परम्परा व आधुनिकता का सुन्दर मिश्रण है। ब्रिटेन में कुलीनतन्त्रीय राजनीति ढांचे का तादात्म्य ऐसे सामाजिक व आर्थिक ढांचे के साथ किया गया है कि उसमें विशिष्ट वर्ग व जनसाधारण दोनों के हितों का पोषण हो जाता है। विकासशील देशों में इसी प्रकार की संस्कृति है। सर्वाधिकारवादी देशों में विशिष्ट वर्गीय हितों की पोषक आधुनिक व परम्परावादी दोनों संस्कृतियां पाई जाती हैं। आमण्ड-कॉलमैन का मानना है कि सभी राजनीतिक समाजों में राजनीतिक संस्कृति का मिश्रित रूप ही पाया जाता है।

(3) राजनीतिक सहभागिता के आधार पर :- इस आधार पर वर्गीकरण करने वाले प्रमुख विद्वान ऑमण्ड व वर्बा हैं। उनका कहना है कि प्रत्येक राजनीतिक व्यवस्था में जनता सहभागिता चाहती है। लेकिन सभी व्यवस्थाओं में पूर्ण व सक्रिय सहभागिता का होना आवश्यक नहीं है। इसलिए इस आधार पर कि जनसहभागिता का स्तर क्या है। लोग राजनीति के प्रति उदासीन हैं या सक्रिय, इस आधार पर राजनीतिक संस्कृति को शुद्ध रूप में तीन भागों में बांटा जाता है :-

(i) संकीर्ण राजनीतिक संस्कृति (Parochial Political Culture) :- इस प्रकार की राजनीतिक संस्कृति कम विकसित तथा परम्परागत राजनीतिक समाजों में पाई जाती है। इसका प्रमुख कारण यह होता है कि इस समाजों में कम विशेषीकरण के कारण सभी भूमिकाएं शासन वर्ग द्वारा ही अदर की जाती है। इसमें जनता राजनीति के प्रति प्रायः उदासीन ही रहती है। राजनीतिक नेता ही धार्मिक, सामाजिक, आर्थिक व राजनीतिक भूमिकाओं का एक साथ निर्वहन करते हैं। इसमें जनता की तरफ से राजनीति के प्रति कोई मांग या निवेश नहीं होता और न ही निर्मतों की तरफ उसका ध्यान रहता है।

(ii) पराधीन राजनीतिक संस्कृति (Subject-Political Culture) :- इस प्रकार की राजनीतिक संस्कृति का जन्म उन समाजों में भी होता है, जहां जनता राजनीति के प्रति अर्कमण्य रहती है और वह शासकीय आदेशों को विवशतावश चुपचाप सहन करती है और उनका पालन करती रहती है। यह राजनीतिक संस्कृति आश्रित उपनिवेशों में ही विद्यमान थी। इस प्रकार की संस्कृति में जनता निवेशों से दूर रहती है, लेकिन निर्गतों पर यह ध्यान रखती है।

(iii) सहभागी राजनीतिक संस्कृति (Participant-Political Culture) :- इस प्रकार की राजनीतिक संस्कृति उन समाजों में पाई जाती है, जहां जनता को राजनीतिक सहभागिता के पूरे अवसर प्राप्त किये जाते हैं। इस संस्कृति में जनता निवेशों व निर्गतों पर समान नजर रखती है। इस प्रकार की संस्कृति विकसित देशों में पाई



जाती है। इसमें लोगों का राजनीतिक व्यवस्था के प्रति लगाव व विश्वास उच्च स्तर का बना रहता है। इसमें जनता अपने अधिकारों व कर्तव्यों के प्रति जागरूक बनी रहती है। इसे प्रजातन्त्रीय राजनीतिक संस्कृति भी कहा जाता है। उपरोक्त शुद्ध रूपों के अतिरिक्त भी मिश्रित रूप में ऑमण्ड व वर्बा ने राजनीतिक संस्कृति को तीन भागों में बांटा है :-

(i) संकीर्ण—पराधीन राजनीतिक संस्कृति।

(ii) पराधीन—सहभागी राजनीतिक संस्कृति।

(iii) संकीर्ण—सहभागी राजनीतिक संस्कृति।

(i) संकीर्ण—पराधीन राजनीतिक संस्कृति (Parochial-Subject Political Culture) :- यह संस्कृति मिश्रित प्रकृति की होती है। इसमें दोनों प्रकार की राजनीतिक संस्कृतियों की विशेषताएं पाई जाती हैं। इसमें दोनों प्रकार के व्यक्ति पाए जाते हैं।

(ii) पराधीन—सहभागी राजनीतिक संस्कृति (Subject-Participant Political Culture) :- यह संस्कृति पराधीन राजनीतिक संस्कृति तथा सहभागी राजनीतिक संस्कृति के गुणों से परिपूर्ण रहती है। यह संस्कृति इन समाजों में पाई जाती है जहां लोगों का राजनीतिक व्यवस्था के प्रति लगाव होता है। इसमें कुछ लोग ऐसे भी होते हैं, जो केवल निवेशों और निर्गतों के प्रति ही रुचि रखते हैं। इस संस्कृति का उदय राजनीतिक व्यवस्था में जनसहभागिता की वृद्धि की शुरुआत के साथ हुआ।

(iii) संकीर्ण—सहभागी राजनीतिक संस्कृति (Parochial Participant Political Culture) :- इस प्रकार की संस्कृति में शासक वर्ग ही जनता को प्रभावित नहीं करता बल्कि जनता भी शासकीय नीतियों को प्रभावित करती है। इसमें जनइच्छा का पूरा सम्मान किया जाता है। यह संस्कृति संकीर्ण व सहभागी राजनीतिक संस्कृति दोनों की विशेषतायें समेटे रहती हैं।

(4) गुणात्मक स्वरूप के आधार

एस०ई० फाइनर ने अपनी पुस्तक 'The Man on Horse Back' में राजनीतिक संस्कृति के चार प्रकार बताये हैं:-

(i) प्रोढ या परिपक्व राजनीतिक संस्कृति।

(ii) विकसित राजनीतिक संस्कृति।

(iii) निम्न राजनीतिक संस्कृति।



(iv) पूर्व-फ्रांसीसी क्रान्ति-सम अल्पस्तरीय राजनीतिक संस्कृति।

(i) प्रोढ राजनीतिक संस्कृति (Mature Political Culture) :- यह संस्कृति ब्रिटेन, आस्ट्रेलिया तथा नीदरलैंड में पाई जाती है। इसमें राजनीतिक सर्वसम्मति व संगठन की मात्रा बहुत ऊँची होती है।

(ii) विकसित राजनीतिक संस्कृति (Developed Political Culture) :- यह संस्कृति मिस्त्र, अल्जीरिया और क्यूबा जैसे देशों में पाई जाती है। इस प्रकार की राजनीतिक स्थिरता के साथ-साथ सैनिक खतरों में भी भयभीत रहती है।

(iii) निम्न राजनीतिक संस्कृति (Low Political Culture) :- यह संस्कृति उन राजनीतिक समाजों में पाई जाती है, जहाँ लोकमत सशक्त नहीं होता। इसी कारण इसमें जन-विरोध की भावना का अभाव पाया जाता है। इसकी संस्कृति वाले देशों में राजनीतिक संस्थाएं बहुत ही कमजोर स्थिति में रहती हैं।

(iv) पूर्व-फ्रांसीसी क्रान्ति-सम अल्पस्तरीय राजनीतिक संस्कृति (Like Pre-French Revolutions Minimal Political Culture) :- यह संस्कृति उन देशों में पाई जाती है, जहां सरकार जनता के विचारों की मनकानी अवहेलना कर सकती है। फ्रांसीसी क्रान्ति से पहले फ्रांस में यह संस्कृति विद्यमान थी। आज इस संस्कृति के लिये कोई स्थान नहीं है।

(5) शासन व्यवस्था जनित संवेगों के आधार

इस आधार पर ऑमण्ड ने राष्ट्रों की राजनीतिक व्यवस्था, भौगोलिक प्रणाली, विकासशील प्रवृत्ति आदि के आधार पर राजनीतिक संस्कृति को चार भागों में बांटा है:-

(i) आंग्ल-अमेरिकी राजनीतिक व्यवस्था।

(ii) महाद्वीपीय यूरोपीय राजनीतिक व्यवस्था।

(iii) अपश्चिमी एवं आंशिक रूप से पूर्व-औद्योगिक राजनीतिक व्यवस्था।

(iv) सर्वाधिकारवादी राजनीतिक व्यवस्था।

(i) आंग्ल-अमेरिकी राजनीतिक व्यवस्था (Anglo-American Political Culture) :- यह संस्कृति ब्रिटेन और अमेरिका में पाई जाती है। इसमें राजनीतिक साध्यों व साधनों पर आम सहमति पाई जाती है। इस संस्कृति से सम्बन्धित देशों में वैयक्तिक मान्यताओं का सुन्दर मेल होता है। संस्कृति से सम्बन्धित देशों में वैयक्तिक स्वतन्त्रता, अधिकार व सुरक्षा को विशेष महत्व दिया जाता है।



(ii) **महाद्वीपीय यूरोपीय राजनीतिक व्यवस्था (Continental European Political Culture)**

:- यह राजनीतिक संस्कृति फ्रांस, इटली, स्वीडन, नार्वे, जर्मनी आदि कम विकसित देशों में पाई जाती है। इस राजनीतिक संस्कृति में न तो जनता अपने नेताओं के प्रति पूर्ण आश्वस्त होती है और न ही नेतागण अपने लोगों पर पूर्ण रूप से निर्भर रहते हैं। इस प्रकार की संस्कृति में जनता की बजाय राजनीतिक प्रक्रिया में दबाव समूहों की भूमिका अधिक रहती है।

(iii) **अपश्चिमी एवं आंशिक रूप से पूर्व-औद्योगिक राजनीतिक व्यवस्था (Non-Western or Partially Pre-Industrial Political System)**

:- इस प्रकार की राजनीतिक संस्कृति पूर्व उपनिवेशों व औद्योगिक रूप से पिछड़े देशों में देखने को मिलती है। विकासशील देशों की राजनीतिक संस्कृति इसी प्रकार की राजनीतिक संस्कृति है। जो व्यवस्थाएं इस प्रकार की राजनीतिक संस्कृति से युक्त होती है, वहां सदैव अस्थिरता का माहौल बना रहता है। इस संस्कृति में शासक-वर्ग की इच्छा को जनता पर थोप दिया जाता है। एशिया व अफ्रीका के सभी विकासशील देश इसकी श्रेणी में आते हैं। भारत में भी यही राजनीतिक संस्कृति है।

(iv) **सर्वाधिकारवादी राजनीतिक व्यवस्था (Totalitarian Political System)**

:- इस प्रकार की व्यवस्था में शासन प्रणाली पर एक ही दल का प्रभुत्व रहने के कारण राजनीतिक संस्कृति की एकता परिलक्षित होती है। इसमें शक्ति के आधार पर सत्ता व शासन को औचित्यपूर्ण बनाए रखा जाता है। इस प्रकार की संस्कृति चीन व अन्य साम्यवादी देशों में पाई जाती है।

8.3.5 राजनीतिक संस्कृति के निर्धारक तत्व(Determinants of Political Culture)

प्रत्येक देश की राजनीतिक संस्कृति अलग प्रकार की होती है। इसका प्रमुख कारण इसके निर्धारक तत्वों में मिलने वाला अन्तर होता है। राजनीतिक संस्कृति से भी घनिष्ठ सम्बन्ध रहता है। इसी कारण सामान्य संस्कृति के निर्धारक तत्व राजनीतिक संस्कृति को भी प्रभावित करते हैं। ये निर्धारक तत्व ही राजनीतिक संस्कृति की प्रकृति के निर्धारक होते हैं। ये तत्व निम्नलिखित हो सकते हैं :-

1. **इतिहास (History)** :- किसी भी राजनीतिक व्यवस्था की राजनीतिक संस्कृति की जड़ें इतिहास के अन्दर गड़ी होती हैं।
2. **भूगोल (Geography)** :- भौगोलिक स्थिति भी किसी देश की राजनीतिक संस्कृति को प्रभावित करता है। राष्ट्र के अस्तित्व के लिए विभिन्नताओं में एकता होना अनिवार्य होता है।
3. **सामाजिक तथा आर्थिक विकास (Social and Economic Development)** :- राजनीतिक संस्कृति का विकास भी सामाजिक व आर्थिक विकास के सापेक्ष होता है। जिस देश में सामाजिक



समरसता या एकता का गुण पाया जाता है, वहां की राजनीतिक संस्कृति भी प्रवाहमान व सहज होती है। वहां पर राजनीतिक अस्थिरता आना असम्भव होता है। इसी तरह आर्थिक विकास के पर्याप्त अवसर भी राजनीतिक व्यवस्था को सशक्त बनाकर संस्कृति को भी विशेष तरह की बना देते हैं।

4. **विचारधाराएं (Ideologies)** :- राजनीतिक विचारधाराएं भी राजनीतिक संस्कृति को निर्धारित करने वाली होती हैं। विकासशील देशों में तो विचाराधाराओं के अनुकूल राजनीतिक संस्कृति का निर्माण किया जाने लगा है।
5. **सामान्य संस्कृति (General Culture)** :- राजनीतिक संस्कृति सामान्य संस्कृति पर ही आधारित होती है। सामान्य संस्कृति का प्रमुख नियतात्मक तत्व माना जाता है। राजनीतिक संस्कृति को सामान्य संस्कृति से अलग नहीं किया जा सकता। सामान्य संस्कृति को ही राजनीतिक संस्कृति का नैतिक तथा स्थाई आधार माना जाता है।
6. **राष्ट्रीय प्रतीक (National Symbols)** :- जिस देश में लोगों का राष्ट्रीय प्रतीकों – राष्ट्रीय गान व गीत, राष्ट्रीय ध्वज, राष्ट्रीय त्यौहार, राष्ट्रीय स्मारक, राष्ट्रभाषा, राष्ट्रीय विरासत आदि के प्रति गहरा लगाव होगा, वहां की राजनीतिक संस्कृति भी उच्च-स्तरीय होगी। इससे राजनीतिक संस्कृति में एकता का गुण पैदा होगा जो राजनीतिक स्थिरता में सहायक होगा।
7. **धर्म (Religion)** :- जिस देश की राजनीति में धर्म का अधिक प्रभाव होता है, वहां की राजनीतिक संस्कृति में भी सहिष्णुता का गुण आ जाता है।
8. **राजनीतिक स्थिरता (Political Stability)** :- राजनीतिक स्थिरता के परिवेश में ही उन्नत प्रकार की राजनीतिक संस्कृति का निर्माण हो सकता है। विकासशील देशों में राजनीतिक अस्थिरता के कारण ही यहां पर राजनीतिक संस्कृति अधिक उच्च कोटि की नहीं बन पाई है।

इस प्रकार कहा जा सकता है कि राजनीतिक संस्कृति के आधार को मजबूत बनाने वाले तथा राजनीतिक संस्कृति का निर्माण व निर्धारण करने वाले तत्व इतिहास, भूगोल, सामाजिक-आर्थिक विकास, धर्म, राजनीतिक स्थिरता, राष्ट्रीय प्रतीक, विचारधारायें आदि हैं।

8.3.6 समकालीन राजनीतिक संस्कृतियों की प्रवृत्ति (Trends in contemporary Political Culture)

आमंड राजनीतिक व्यवस्थाओं का प्रारूपात्मक चिह्न प्रस्तुत करते हैं जिसका इस प्रकार, संक्षेप में, वर्णित किया जा सकता है: ँग्लो-अमरीकी व्यवस्थाँ उन्नत पश्चिमी देशों जैक ब्रिटेन और अमरीका में मौजूद यह पहली किस्म है जिसके मुख्य लक्षणों का इस प्रकार वर्णन किया जा सकता है : (क) इन व्यवस्थाओं की विशेषता बहुमूल्यधारी राजनीतिक संस्कृतियाँ हैं जो सजातीय अर्थ में सजातीय और सातत्वपूर्ण है कि उन्हें प्राप्त करने के बारे में



राजनीतिक साध्यों और साधनों के बारे में आम सहमति पाई जाती है। (ख) राजनीति एक खेल की तरह है जिसमें कई खिलाड़ी भाग लेते हैं, यद्यपि वे एक दूसरे के प्रतिस्पर्धी होते हैं, वे अपनी भूमिका अदा करते हैं, लेकिन वे अपने अन्तर्गत् को इतना अधिक नहीं बढ़ा लेते जिसके खेल का माहौल ही लड़ाई के मैदान का माहौल हो जाए। (ग) राजनीतिक बाजार की तरह है। जिस जगह पर निर्णय निर्माता मत प्राप्त करने एवं अपने लिए लोगों का समर्थन प्राप्त करने के लिए नियमों के रूप अपना मतव्य प्राप्त करते हैं। इस प्रकार शासकों व शक्तियों, निर्वाचकों व निर्वाचितों और नेताओं व उनके अनुयायियों के बिच सोदे बाची की प्रक्रिया आरंभ हो जाती है। (घ) समाज की बहुलवादी सत्यप्य होता है। जिसमें कई दक्ष और हितबाद समुह इस लिए कार्यरत रहते हैं। कि अपने अपने हितों की अनुक्रिया में निर्णय निर्वता प्रक्रिया को प्रभाविक कर सके। (ङ) यहां सता और प्रभाव विवरण होता है इस लिए वहां नियंत्रण और अनसुलन का पुर्ण और सुचारु ढंग के कार्य करने वाली व्यवस्था पाई जाती है। विधि संस्थाओं पर जनसंचार और सर्वजानिक शिक्षा के माध्यमों के नियंत्रण रखा जाता है। जिसके सतवादी शासन की सम्भावनाएँ कम या समाप्त कर दी जाती है। और (च) अतः में, यहां विभिन्न भूमिकाओं का स्थायित्व होता है। अलग अलग संस्थाएँ अपनीअलग अलग कार्य करती है। वे अन्य संस्थाओं के कार्य भी कर सकती है। जिसके परिणामस्वरूप प्रशासक उक स्थिति में विमायक और दूसरी में न्याय-निर्णायक बन जाते हैं अथवा नौकरशाह एक लिहाज वेफ विमायक और दूसरे लिहाज के न्याय-निर्णायक हो जाते हैं, और इसी तरह इनकी भूमिकाओं में परिवर्तन होता रहता है।

यूरोपीय महाद्वीप की राजनीतिक व्यवस्थाएँ: यह दूसरी किस्म है जो नंस, इटली, स्वीडन, नार्वे आदि यूरोप के कम

विकसित पश्चिमी लोकताम्कि देशों में कार्यरत है। इसके मुख्य लक्षणों का उल्लेख इस बकार किया जा सकता है।

(क) जहा! समाज के विभिन्न वर्ग सांस्थतिक विकास के विभिन्न बतिमानों की स्थापना करते हैं, वहा! राजनीतिक संस्थतिक खंडित हो जाती है, क्योंकि कई वर्ग अन्य वगो-द्व की अपेक्षा अमिक विकसित होते हैं। इसी कारण, राजनीति संस्थति वेफ साथ कई राजनीतिक उपसंस्थतियों का एक सिलसिला बन जाता है जो या तो वैज्ञानिक और प्रौद्योगिक नवोन्मेशों के प्रभावित होता है जो अब तक एक आश्रित देश के लोग थे। ऐसी संस्कृति का अधिकांश अतीत सामंतवादी युग के होता है और वह उपर्युक्त वर्ग के देशों के उच्चतर मूल्यों का अनुसरण करने का प्रयास करता है। (ख) हरेक राजनीतिक उपसंस्कृति भूमिकाओं की अलग उपव्यवस्था का विकास कर लेती है जिसके परिणामस्वरूप विभिन्न संस्कृतियाँ सम्पूर्ण व्यवस्था का केन्द्र बिन्दु बन जाती है। अतः विधि-संस्थानगताव ढाँचे का अध्ययन करने के पश्चात् यह भी आवश्यक है कि इसकी अवसंरचना पर एक नजर डाली जाए। (ग) राजनीतिक सौदेबाजी की बव्या वास्तव में विद्यमान नहीं होती। इसके ऐसी स्थिति पैदा हो जाती है जिसमें



राजनीति एक खिलवाड़ बन जाती है। इसका परिणाम यह होता है कि कई उपसंस्कृतियाँ आपस में युद्धरत हो जाती हैं अथवा एक दूसरे की अपेक्षा अपने को वरिष्ठ समझती है और इस प्रकार अपने मानकों को अन्य उप-संस्कृतियों के मानकों पर आरोपित करने का प्रयास करती है। इस प्रकार, सौदेबाजी की बजाए यहाँ शक्ति के लिए विभिन्न बतियोगी गुटों में युद्ध होने लगता है।

औद्योगीकरण के पूर्व की या आंशिक रूप में औद्योगीकृत राजनीतिक व्यवस्थाएँ : इस वर्ग में उन देशों की बहुत बड़ी संख्या आती है जो लम्बे अरके तक उप-निवेशी आधिपत्य में रहने के बाद अब स्वतन्त्र रूप में सामने आए हैं। ऐसी राजनीतिक व्यवस्था में शासक की राजनीतिक संस्कृति को शासितों की राजनीतिक संस्कृति पर आरोपित कर दिया जाता है। इसकी मुख्य विशेषताएँ! इस बकार हैं।

(क) स्वामियों की राजनीतिक संस्कृति को अधीनस्थ (प्रजा) की राजनीतिक संस्कृति पर आरोपित कर दिया जाता है। इसके परिणामस्वरूप, शासित लोगों की राजनीतिक संस्कृति समाप्त हो जाती है और शासकों की राजनीतिक संस्कृति, जिसे हर हालत में वरिष्ठ समझा जाता है, को उसके स्थान पर आरोपित कर दिया जाता है। (ख) नेतागण पुराने और नए के बीच सामंजस्य स्थापित करने की कोशिश कर सकते हैं और इस प्रकार उसमें ऐसी विशेषताओं का विकास कर सकते हैं कि इस व्यवस्था को औचित्यपूर्णता का नया स्रोत मिल सके।

बहरहाल, इस बात की सम्भावना होती है कि हिंसा भड़क उठे और अगर चमत्कारी नेताओं का कच्चा चिमवा खोल दिया जाए या उनका स्थान पर उसी बकार वेफ और नेतागण आ जाए! तो उसवेफ सारी व्यवस्था ही अस्थायी हो जाती है।

(ग) भूमिकाओं की एक ही संरचना के भीतर यहाँ दो या इसके भी अमिक राजनीतिक संस्थितियाँ! कार्यरत हो सकती हैं। उदाहरण के लिए, विशेष परम्पराओं का सम्मान एवं पश्चिमी लोकतंत्र के तरीकों का अनुसरण करते

हुए एक विशेष परिवार अथवा विशेष जाति सनारूढ़ रह सकती है। दिया है। 1. परिपक्व राजनीतिक संस्कृति : जिस रूप में यह ब्रिटेन, आस्ट्रेलिया और नीदरलैंड्स में उपलब्ध है, उसके पता चलता है कि राजनीतिक सर्वसम्मति और इसके संगठन की माध बहुत ऊँची है — इस बात की आवश्यकता बहुत कम होती है कि सरकार सशस्त्र कर्नाओं के समर्थन पर निर्भर रहे — और इस परिस्थिति के बहुत देर तक अभ्यस्त होने के कारण न केवल जनता ने, बल्कि सशस्त्र केनाओं ने भी असैनिक सत्ता की सर्वोच्चता के सि(ंत में पूर्ण विश्वास करना आरम्भ कर दिया है।

2. विकसित राजनीतिक संस्कृति : यह ऐसे समाज की ओर निर्देश करती है जहाँ जनता सुसंगठित है, लेकिन समय पर यह या तो इसकी संस्थाओं और प्रक्रियाओं की औचित्यपूर्णता पर या जो इनके कारण पदों पर आसीन व्यक्ति होते हैं, विचारात्मक दृष्टि के बंट जाते हैं। हम देखते हैं कि सैनिक दबावों के कारण असैनिक सरकारों को या तो खतरा बना रहता है या कई बार उन्हें नुकसान भी पहुँचाया जाता है और जनसाधारण को या तो शस्त्रों की



ताकत के खामोश कर दिया जाता है या वे राजनीतिक दृष्टि के बहिष्कृत समझे जाने में सुख समझते हैं। मिडु, अलजीरिया और क्यूबा जैसे देशों को इस वर्ग में रखा जा सकता है। 3. निम्न राजनीतिक संस्कृति : यह उन देशों में पाई जाती है जहाँ की जनता संकीर्णमना और अल्पगठित होती है।

8.4 पाठ के आगे का मुख्य भाग (Further main body of the text)

8.4.1 राजनीतिक समाजीकरण (Political socialization)

विश्व की राजनीतिक व्यवस्थाओं का अवलोकन करने से जो महत्वपूर्ण बात हमारे सामने आती है, वह राजनीतिक व्यवहार की विभिन्नता है। इसका प्रमुख कारण राजनीतिक संस्कृतियों में पाए जाने वाले अन्तर को माना जाता है। राजनीतिक संस्कृति की विभिन्नता के कारण ही भारत और ब्रिटेन में संसदीय व्यवस्थाओं का कार्य-व्यवहार आपस में काफी प्रतिकूल है। राजनीतिक संस्कृति का सम्बन्ध राजनीतिक समाज के लोगों के राजनीतिक व्यवस्था के प्रति पाए जाने वाले विचारों व धारणाओं से होता है। इन विचारों और धारणाओं में पाया जानेवाला अन्तर ही विभिन्न राजनीतिक व्यवस्थाओं के राजनीतिक व्यवस्था के प्रति विचार और धारणाओं में अन्तर का प्रमुख कारण राजनीतिक व्यवहार में अन्तर ला देते हैं। लोगों की राजनीतिक संस्कृति या अमुक राजनीतिक व्यवस्था के प्रति विचार और धारणाओं में अन्तर का प्रमुख कारण राजनीतिक समाजीकरण ही है, क्योंकि यह राजनीतिक संस्कृति व राजनीतिक व्यवस्था दोनों का नियामक होता है।

राजनीतिक संस्कृति को राजनीतिक व्यवस्था के अनुरूप बनाने में राजनीतिक समाजीकरण का ही विशेष योगदान होता है। राजनीतिक समाजीकरण ही राजनीतिक विकास व राजनीतिक आधुनिकीकरण का भी महत्वपूर्ण उपकरण है। मनुष्य को राजनीतिक मानव बनाने में इसकी भूमिका सबसे बढ़कर है। इसी कारण राजनीतिक समाजीकरण की अवधारणा राजनीति विज्ञान की एक अति महत्वपूर्ण अवधारणा बन गई है।

8.4.2 राजनीतिक समाजीकरण का अर्थ व परिभाषा (Meaning and Definition of Political socialization)

राजनीतिक समाजीकरण की अवधारणा समाजीकरण पर आधारित है। समाजीकरण वह प्रक्रिया है जो मनुष्य को बाल्यकाल से अन्तिम क्षणों तक जीवन के सभी क्षेत्रों का ज्ञान उपलब्ध कराती रहती है। यह एक सतत् प्रक्रिया है। इसका सर्वप्रथम अभिकर्ता परिवार है। मनुष्य जैसे जैसे बड़ा होता जाता है, वैसे-वैसे उसके समाजीकरण का क्षेत्र भी बढ़ता जाता है। संसार में ऐसी कोई औपचारिक संस्था नहीं है, जहाँ समाजीकरण की विशेष शिक्षा दी जाती हो। मनुष्य परिस्थितियों से सीखता है। यमनुष्य का समाज के कार्यों के प्रति रुझान बहुमुखी प्रकृति का होता है, इसी कारण समाजीकरण की प्रक्रिया भी बहुमुखी है। समाजीकरण को परिभाषित करते हुए जॉनसन ने



लिखा है—“समाजीकरण एक प्रशिक्षण है जो प्रशिक्षार्थी को समाज में उसकी भूमिका निभाना सिखाता है।” गिलिन और गिलिन ने कहा है—“समाजीकरण वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा व्यक्ति समूह के स्तरों के अनुसार समूह की गतिविधियों के अनुकूल उसकी परम्पराओं का पालन करके और स्वयं सामाजिक अवस्थाओं की अनुकूल करके, समूह के क्रियाशील सदस्य के रूप में विकसित होता है।” इस तरह समाजीकरण एक सतत् व विस्तृत प्रक्रिया है। राजनीतिक समाजीकरण तो उसका एक विशेष भाग है। इसका प्रचलन द्वितीयश्वियुद्ध के बाद बढ़ा है। राजनीतिक समाजीकरण के बारे में अनेक विद्वानों ने अलग अलग परिभाषाएं दी हैं जो इसके अर्थ व प्रकृतिदोनों को स्पष्ट करती हैं।

राजनीतिक समाजीकरण को एक प्रक्रिया तथा संकल्पना दोनों अर्थों में प्रयोग किया जाता है। राजनीति के बारे में लोगों को अभिवृत्तियों, विचारों और आस्थाओं के निर्माण की प्रक्रिया राजनीतिक समाजीकरण कहलाती है। एक प्रक्रिया के रूप में यह लोगों का राजनीति सम्बन्धी रुझान बनाने की प्रक्रिया है। एक संकल्पना के रूप में यह व्यक्ति के राजनीति सम्बन्धी मूल्यों, विश्वासों, अभिवृत्तियों व विचारों का ताना-बाना है। एक संकल्पना व प्रक्रिया के रूप में विभिन्न विद्वानों ने राजनीतिक समाजीकरण की परिभाषाएं दी हैं :-

- **ऑमण्ड व पॉवेल के अनुसार**—“राजनीतिक समाजीकरण वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा राजनीतिक-संस्कृतियों का अनुक्षण और उनका परिवर्तन किया जाता है तथा लोगों को राजनीति में दीक्षित करने के लिए उनके विचारों का निर्माण किया जाता है।”
- **एलेन आर० बाल के अनुसार**—“राजनीतिक व्यवस्था के बारे में लोगों का दृष्टिकोण और विश्वास की स्थापना तथा विकास राजनीतिक समाजीकरण कहलाता है।”
- **डेनिस कावानाग के अनुसार**—“राजनीतिक समाजीकरण वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा व्यक्ति राजनीति के प्रति आकर्षित होता है और उसे सीखता एवं विकसित करता है।”
- **पीटर एच० मर्कल के अनुसार**—“राजनीतिक समाजीकरण राजनीतिक व्यवस्था के द्वारा व्यवहार प्रतिमान और राजनीतिक अभिवृत्तियां प्राप्त करना है।”
- **ऑस्टीन रेने के अनुसार**—“राजनीतिक समाजीकरण, समाजीकरण का वह भाग है जो आम आदमी का राजनीतिक व्यवस्था के प्रति दृष्टिकोण विकसित करता है।”
- **राबर्ट्स के अनुसार**—“राजनीतिक समाजीकरण वह विधि है जिसके द्वारा व्यक्ति राजनीतिक लक्ष्यों के प्रति अभिवृत्ति सीखता है। समाज विश्वासों और स्तरों को नई पीढ़ी को देता है।”



- **रुश व अल्थॉफ के अनुसार**—“राजनीतिक समाजीकरण वह प्रक्रिया है, जिसके द्वारा व्यक्ति राजनीतिक व्यवस्था के बारे में जानकारी प्राप्त करता है जो राजनीतिक ज्ञान और राजनीतिक घटनाओं के विषय में उसके सम्बन्धों को सुनिश्चित करती है।”
- **रॉबर्ट लेवाइन के अनुसार**—“राजनीतिक समाजीकरण व्यक्ति की राजनीतिक व्यवस्था में राजनीतिक व्यवस्था में सहभागिताके लिए मूल्यों, आदतों और प्रेरणा का साधन है।”
- **एरिक रो के अनुसार**—“राजनीतिक समाजीकरण वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा एक राजनीतिक संस्कृति के मूल्य, विश्वास और भावनाएं आने वाली पीढ़ियों तक पहुंचाए जाते हैं।”

इस प्रकार कहा जा सकता है कि राजनीतिक समाजीकरण वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा राजनीतिक संस्कृतियों को बनाए रखा जाता है और उनमें परिवर्तन भी किया जाता है। यह सीखने की वह प्रक्रिया है जिससे लोगों के राजनीतिक मूल्यों, विश्वासों और भावनाओं का निर्माण होता है। एक संकल्पना के रूप में यह लोगों के राजनीतिक मूल्यों, विश्वासों, अभिवृत्तियों व विचारों का समुच्चय है।

8.4.3 राजनीतिक समाजीकरण की प्रकृति (Nature of Political socialization) – राजनीतिक समाजीकरण राजनीतिक संस्कृति से जुड़ी हुई प्रक्रिया है जो सतत् रूप में चलती रहती है। यह प्रत्येक देश की राजनीतिक व्यवस्था के व्यवहार को प्रभावित करने की क्षमता रखती है। यह राजनीतिकरण, राजनीतिक सहभागिता व राजनीतिकभर्ती से अधिक व्यापक संकल्पना भी है। इसमें व्यक्ति की राजनीतिक अभिवृत्तियों, विश्वासों व मान्यताओं का अभिमुखीकरण शामिल है। इससे ये मान्यताएं मूल्य व विश्वास दूरी पीढ़ी तक भी जाते हैं। इससे व्यक्ति का राजनीतिक समाज के प्रति अनुकूल दृष्टिकोण बनता है और उसका समाज, राष्ट्र और शासक वर्ग के प्रति निष्ठा का भाव भी विकसित होता है। राजनीतिक समाजीकरण की प्रक्रिया सामान्यतया आकस्मिक रूप में कार्य करती है। यह इतने शांत और सौम्य रूप में संचालित होती है कि लोगों को इसकी खबर भी नहीं होती। इसके अन्तर्गत वे औपचारिक एवं अनौपचारिक राजनीतिक प्रशिक्षण भी शामिल होते हैं जो राजनीतिक व्यवहार को प्रभावित करते हैं। राजनीतिक समाजीकरण एक ऐसा विचार भी है जो राजनीतिक स्थायित्व के लक्ष्य को प्राप्त करने की भी अपेक्षा रखता है। इसका उद्देश्य ऐसे व्यक्तियों का प्रशिक्षण और विकास करना है जिससे वे राजनीतिक समाज के अच्छे सदस्य बन सकें। राजनीतिक समाजीकरण व्यक्तियों के मन में मूल्यों, मानकों और अभिविन्यासों का विकास करता है, जिससे उनमें राजनीतिक व्यवस्था के प्रति विश्वास की भावना पैदा हो सके और वे अपने अच्छे कार्यों द्वारा अपने उत्तराधिकारियों पर अमिट छाप छोड़ सकें। राजनीतिक समाजीकरण ही वह कड़ी है जो समाज और राजनीतिक व्यवस्था को जोड़ती है।

राजनीतिक समाजीकरण की प्रक्रिया उस समय से शुरू हो जाती है, जब बच्चा अपने चारों ओर के व्यापक पर्यावरण के बारे में जानने लगता है। इसी अवस्था में ‘बच्चों में’ समाजीकरण का गुण प्रवेश कर जाता है जो आगे चलकर



परिवार, स्कूल, स्वैच्छिकसमूह, मित्र-मण्डली, राजनीतिक संरचनाओं आदि के द्वारा पूर्ण विकसित हो जाता है। इससे समाजीकरण का प्रकट व अप्रकट रूप उभरने लगता है। जब व्यक्ति के राजनीति के प्रति अभिवृत्तियां जागृत की जाती हैं तो प्रकट रूप उभरता है। जैसे राजनीतिक दलोंद्वारा व्यक्ति को अपने चुनावी कार्यक्रमों में आकर्षित करना व अपने कार्यक्रमों की जानकारी दोनों का कार्य दिया जाता है तो यह प्रकट समाजीकरण होता है। लेकिन जब जनसम्पर्क के साधनों, मित्र मंडलियों, स्कूलों आदि से स्वतः ही बनने लगती है और व्यक्तिको इसका पता बाद में लगता है तो यह अप्रकट राजनीतिक समाजीकरण होता है। अप्रकट समाजीकरण से सत्ताधारकों का जन्मलेना कठिन होता है। राजनीतिक समाजीकरण का प्रकट रूप ही सत्ताधारकों का जन्मदाता है। इससे छल-योजन व जोड़-तोड़द्वारा लोगों में राजनीतिक व्यवस्था के प्रति मूल्य, विश्वास व मान्यताएं पैदा की जाती हैं। यह समाजीकरण ही सम्पूर्ण सामाजिकव्यवस्था के पुनःनिर्माण का आधार होता है। प्रकट राजनीतिक समाजीकरण शासन-तन्त्र द्वारा निर्देशित होता है। साम्यवादी देशोंमें इसका बहुत महत्व है। वहां पर सर्वाधिकारवादी राजनीतिक व्यवस्था के प्रति लोगों का विश्वास बनाए रखने के लिए शासकवर्ग कई तरह की जोड़-तोड़ करते रहते हैं। राज्य निर्देशित शिक्षा प्रणाली इसका प्रमुख साधन होती है। संचार व जनसम्पर्क के साधनों का खुलकर प्रयोग किया जाता है। लेनिन ने जार की तानाशाही को उखाड़ने के लिए इसी प्रकार के समाजीकरण का प्रयोग किया था। चीन में माओ की सांस्कृतिक क्रान्ति इसी कारण सफल हुई थी। इसके विपरीत राजनीतिक समाजीकरण का अप्रकटरूप व्यक्ति में स्वतः ही समाजीकरण की प्रक्रिया के माध्यम से प्रवेश कर जाता है। इस दृष्टि से राजनीतिक समाजीकरण जीवनभर चलने वाली शाश्वत् प्रक्रिया होती है। इससे व्यक्ति के राजनीतिक व्यवस्था के प्रति विचार व मूल्य अधिक स्थाई होते हैं। इसमें जोड़-तोड़ या छल-योजन का अभाव रहता है। स्थायित्व की दृष्टि से राजनीतिक समाजीकरण का यह रूप प्रकट रूप से अधिक महत्व का होता है। इस समाजीकरण के तत्व व्यक्ति के जीवन का अभिन्न अंग बन जाते हैं और आजीवन उसका पीछा नहीं छोड़ते। इसके विपरीत प्रकट राजनीतिक समाजीकरण राजनीतिक व्यवस्था के लिए लाभकारी व हानिकारक दोनों हो सकता है।

8.4.4 राजनीतिक समाजीकरण की विशेषताएं (Features of Political socialization)—राजनीतिक समाजीकरण की प्रक्रिया की निम्न विशेषताएं हैं:

1. **निरन्तर क्रम (Continuing):**— राजनीतिक समाजीकरण निरन्तर चलने वाली प्रक्रिया है। सह जीवन पर्यंत चलती रहती है। जन्म से लेकर मृत्यु की गोद तक व्यक्ति प्रत्येक क्षण कुछ न कुछ अव्यय अनुभव करता है तथा सीखता है। ऐलन.आर.बाल के मतानुसार “राजनीतिक समाजीकरण ऐसी विधि नहीं जो प्रभाव स्वीकार करने वाली बचपन की आयु तक सीमित हो, अपितु आयु पर्यंत निरन्तर रूप में जारी रहती है। आर्मेण्ड तथा पॉवेल ने इस बात का समर्थन करते हुए कहा है “ समाजीकरण



की विधि व्यक्ति के संपूर्ण जीवन में निरन्तर रूप में चलती रहती है....जैसे जैसे व्यक्ति सामाजिक अनुभवों में से निकलता है वैसे-वैसे उसके दृष्टिकोण उन अनुभवों के अनुसार बदलते रहते हैं।”

2. राजनीतिक समाजीकरण प्रत्येक समाज में होने वाली प्रक्रिया :- राजनीतिक समाजीकरण की प्रक्रिया प्रत्येक समाज में होती है। अन्य शब्दों में राजनीतिक प्रणाली चाहे प्रजातंत्रात्मक हो अथवा सत्तावादी निरंकुश तंत्र हो, में राजनीतिक समाजीकरण की प्रक्रिया होती है। यह बात अलग है कि सर्वाधिकारवादी व्यवस्थाओं में इसकी प्रक्रिया कुछ मन्द होती है जबकि प्रजातांत्रिक व्यवस्थाओं में इसकी गति तेज होती है।
3. राजनीतिक संस्कृति से सम्बन्धित होना: राजनीतिक समाजीकरण की प्रक्रिया का राजनीतिक संस्कृति से अटूट तथा घनिष्ठ सम्बन्ध है। राजनीतिक संस्कृति के सम्बन्ध में राजनीतिक समाजीकरण के तीन कार्य हैं:
 1. राजनीतिक संस्कृति को बनाए रखने का कार्य
 2. राजनीतिक संस्कृति को बदलने का कार्य
 3. राजनीतिक संस्कृति को उत्पन्न करने का कार्य

आर्मेण्ड तथा पॉवेल के मतानुसार, – “ राजनीतिक समाजीकरण वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा राजनैतिक संस्कृति या स्थिर रखी और बदली जाती है। इस कार्य की पूर्ति द्वारा व्यक्तियों को राजनैतिक संस्कृति के नमूनों में परिवर्तन भी राजनीतिक उद्देश्यों के प्रति उनके दृष्टिकोणों का निर्माण किया जाता है राजनैतिक संस्कृति के नमूनों में परिवर्तन भी राजनीतिक समाजीकरण द्वारा किए जाते हैं।”

4. राजनीतिक मूल्यों के संचारण की प्रक्रिया
5. राजनीतिक समाजीकरण वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा राजनीतिक संस्कृति का एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी की ओर संचारण होता है। राबर्ट्स के मतानुसार “इस विधि के द्वारा एक ओर व्यक्ति राजनीतिक तथ्यों के प्रति अभिवृत्ति सीखता है तथा दूसरी ओर इस विधि के द्वारा समाज राजनीतिक वि”वासों और स्तरों को एक पीढ़ी से आने वाली पीढ़ी को देता है।”
6. स्पष्ट तथा गुप्त रूप में होने वाली प्रक्रिया: आर्मेण्ड तथा कोलमैन के अनुसार राजनीतिक समाजीकरण स्पष्ट तथा अस्पष्ट दोनों रूपों में होने वाली प्रक्रिया है। प्रत्येक राजनीतिक समाजीकरण विशिष्ट राजनीतिक उद्देश्यों की पूर्ति करने के लिए किया जाता है जैसे स्कूल तथा कालिजों के पाठ्यक्रम के द्वारा विद्यार्थियों को कर्तव्य पालन, कानून पालन, आज्ञा पालन इत्यादि सीखना। अप्रत्यक्ष समाजीकरण गैर राजनीतिक उद्देश्यों की पूर्ति के लिए किये गये प्रयत्नों राजनीति पर गुप्त अथवा अप्रत्यक्ष प्रभाव होता है।



7. औपचारिक तथा अनौपचारिक प्रक्रिया : राजनीतिक समाजीकरण औपचारिक तथा अनौपचारिक दोनों प्रकार की प्रक्रिया है। जब नागरिकों के द्वारा राजनीतिक संस्कृति को स्थिर रखने के लिए चेतना पूर्ण प्रयत्न किए जाते हैं तो उसे औपचारिक प्रक्रिया के नाम से पुकारते हैं। शिक्षा संस्थाओं, राजनीतिक दलों, जन प्रसार के साधनों के द्वारा किये गये प्रयत्न औपचारिक होते हैं। राजनीतिक संस्कृति का ज्ञान जो अप्रत्यक्ष रूप से प्राप्त हो उसे औपचारिक कहते हैं। अनौपचारिक राजनीतिक समाजीकरण के साधनों में परिवार, अभिजात समूह, रोजगार के अनुभव, राजनीतिक अनुभव इत्यादि आते हैं। औपचारिक एवं अनौपचारिक ज्ञान, राजनीतिक मूल्यों, विश्वासों, आस्थाओं तथा अभिमुखनों को प्रभावित करता है।
8. राजनीतिक विश्वासों का आन्तरीकरण : राजनीतिक समाजीकरण के बल पर राजनीतिक व्यवस्था के मूल्यों का ज्ञान प्राप्त करना ही नहीं अपितु इनके मूल्यों, विश्वासों तथा दृष्टिकोणों को उचित मानकर अपने मन में बिठाना है। राबर्ट सिगेल के मतानुसार "समाज की व्यवस्थाओं का कार्य उचित ज्ञान प्राप्त करने तक ही सीमित नहीं है, अपितु यह और भी है कि व्यक्ति उन व्यवस्थाओं को अपना बना लें, उनका आन्तरीकरण कर लें, जो उसे उचित, न्यायपूर्ण और नैतिकशील प्रतीत होती है।"
9. राजनीतिक समाजीकरण का राजनीतिक सहभागिता तथा राजनीतिक भर्ती से सम्बन्धित होना : राजनीतिक समाजीकरण का राजनीतिक सहभागिता एवं राजनीतिक भर्ती से अटूट एवं घनियट सम्बन्ध है। प्रत्येक राजनीतिक व्यवस्था में ये तीनों प्रक्रियाएं होती हैं। इन तीनों में पारस्परिकता सावयवी है। ये तीनों एक-दूसरे की पूरक एवं सम्पूरक हैं। एक राजनीतिक व्यवस्था में राजनीतिक सहभागिता एवं राजनीतिक भर्ती मात्रा राजनीतिक समाजीकरण के स्तर पर निर्भर करती है। राजनीतिक समाजीकरण के पश्चात् राजनीतिक सहभागिता एवं राजनीतिक भर्ती के स्तरों का निर्धारण राजनीतिक समाजीकरण की प्रकृति, कार्यकुशलता एवं मात्रा के द्वारा किया जाता है।
10. व्यक्ति एवं समूहों के व्यवहार से सम्बन्धित: राजनीतिक समाजीकरण यह प्रक्रिया है जो व्यक्ति तथा व्यक्तियों के समूहों के व्यवहार से सम्बन्धित है। राजनीतिक समाजीकरण का प्रमुख उद्देश्य व्यक्तियों को प्रशिक्षित करके राजनीतिक समाज के अच्छे कार्यकर्ता बनाना है।
11. राजनीतिक समाजीकरण एवं राजनीतिक परिवर्तन में धनिष्ठ सम्बन्ध होना: राजनीतिक समाजीकरण एक निरन्तर चलने वाला क्रम है। राजनीतिक समाजीकरण क्रांति परिवर्तनों का पक्षधर नहीं है अपितु यह राजनीतिक स्थिरता राजनीतिक परिवर्तन में समन्वय स्थापित करके शनैः शनैः परिवर्तनों का स्रोत तथा माध्दम है।



संक्षेप में राजनीतिक समाजीकरण निरन्तर तथा चलने वाली प्रक्रिया वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा व्यक्ति अपने मन में मूल्यों, मापदंडों और अभिमुखिकरणों को बिठाने का प्रयत्न करते हैं। जिससे उनकी राजनीतिक प्रणाली के प्रति विश्वास की भावना प्रकट होती है तथा इसको एक पीढ़ी द्वारा दूसरी पीढ़ी को प्रदान कर दिया जाता है।

8.4.5 राजनीतिक समाजीकरण के प्रकार (Kinds of Political Socialisation)

आर्मेण्ड तथा पॉवेल के मतानुसार राजनीतिक समाजीकरण निम्न प्रकार है:

1. प्रकट अथवा प्रत्यक्ष राजनीतिक समाजीकरण (Manifest or Direct Political Socialisation): आर्मेण्ड तथा पॉवेल के मतानुसार प्रत्यक्ष अथवा प्रकट राजनीतिक समाजीकरण उस समय होता है जब राजनीतिक उद्देश्य के प्रति सूचनाओं, मूल्यों या भावनाओं का प्रकट रूप में संचरण किया जाता है। जन संचार के माध्यमों— रेडियो, दूरदर्शन, समाचारपत्र, सिनेमा इत्यादि द्वारा जब एक व्यक्ति राजनीतिक मूल्यों व विश्वासों को विकसित तथा ग्रहण करता है, तो उसे प्रत्यक्ष राजनीतिक समाजीकरण कहते हैं।
1. लुप्त या अप्रत्यक्ष राजनीतिक समाजीकरण (Latent or Indirect Political Socialisation): राजनीतिक समाजीकरण जीवनपर्यन्त निरन्तर चलने वाली प्रक्रिया है तथा एक व्यक्ति का लुप्त अथवा अप्रत्यक्ष रूप में राजनीतिक समाजीकरण होता रहता है। उदहारणार्थ परिवार, रोजगार का अनुभव, सामाजिक समूह इत्यादि ऐसे अभिकरण हैं जो अप्रत्यक्ष राजनीतिक निरन्तरता तथा अनिरन्तरता के आधार पर राजनीतिक समाजीकरण के निम्न दो प्रकार और भी हैं:
2. सदृश तथा निरन्तर राजनीतिक समाजीकरण (Homogeneous and Continuous Political Socialisation): इस व्यवस्था में व्यक्तियों में परस्पर विश्वास व सहयोग होता है तथा यह विश्वास राजनीतिक व्यवस्था को सहयोग प्रदान करता है। परिणामस्वरूप राजनीतिक व्यवस्था में स्थायित्व रहता है। परन्तु इसका तात्पर्य यह नहीं कि यह इतना अनुदारवादी है कि यह परिवर्तन का विरोध करता है यथास्थिति को बनाये रखना पसंद करता है। इसमें शांतिमय ढंग से धीरे-धीरे परिवर्तन होता है।
3. असदृश्य तथा सान्तर राजनीतिक समाजीकरण (Heterogeneous and Discontinuous) यह व्यवस्था प्रथम व्यवस्थाके बिल्कुल प्रतिकूल है। इसमें व्यक्तियों व समूहों के पारस्परिक सम्बंध घृणा तथा संदेह पर आधारित होते हैं और वे राजनीतिक व्यवस्था संतुष्ट नहीं होते। परिणामस्वरूप राजनीतिक व्यवस्था को व्यक्तियों और समूहों का समर्थन प्राप्त नहीं होता और एकदम परिवर्तन या क्रांतियां होती हैं जिनमें व्यवस्थाएं कमजोर हो जाती हैं और कई बार समाप्त भी हो जाती है।



4. प्रत्येक राजनीतिक व्यवस्था में सदृश्य तथा निरन्तर राजनीतिक समाजीकरण पर बल दिया जाता है। प्रजातांत्रिक व्यवस्था की सफलता के लिए समाजिक, शैक्षिक व ढांचों में परिवर्तन करना तथा लोकतांत्रिक मूल्यों को पैदा करना अनिवार्य है। लोकतांत्रात्मक समाज में विरोधी दल को सहन किया जाता है और अल्पमत अथवा अल्पसंख्यक वर्गों पर उनकी इच्छा के विरुद्ध विचारधारा नहीं लादी जाती। इसके बिपरीत सर्वाधिकारवादी तानाशाही व्यवस्थाओं में समाज के सभी पहलुओं पर राज्य का नियंत्रण होता है अतः इन राज्यों में राजनीतिक समाजीकरण का विकास नियंत्रण के नहीं होता। इसमें जनता की तानाशाही की विचारधाराओं के बारे में बताया जाता है। तानाशाही व्यवस्था में जन संचार के साधनों पर शासन का कड़ा नियंत्रण होता है तथा इनका प्रयोग वैधार्मिक संस्कृति आरोपित करने के लिए किया जाता है।

8.4.6 राजनीतिक समाजीकरण के सिद्धान्त (Theories of Political Socialisation)

राजनीतिक समाजीकरण की प्रक्रिया निम्न सिद्धान्तों के आधार पर समझी जा सकती है:

1. बृहतर सिद्धान्त (Macro Level Theory): डेविट ईस्टन तथा जैक डेविड ने राजनीतिक समाजीकरण की प्रक्रिया को संपूर्ण राजनीतिक व्यवस्था के रूप में देखा है। बृहतर सिद्धान्त का प्रमुख उद्देश्य राजनीतिक व्यवस्था के क्रियात्मक रूप के आधार पर संपूर्ण राजनीतिक व्यवस्था की उपयोगिता का मूल्यांकन करना है।
2. सूक्ष्मस्तरीय सिद्धान्त (Micro Level Theory): जब राजनीतिक समाजीकरण की प्रक्रिया को संपूर्ण राजनीतिक व्यवस्था की अपेक्षा व्यक्ति की ओर से देखा जाये अर्थात् यह जानने का प्रयत्न किया जाये कि व्यक्ति का राजनीतिक अभिमुखन किस प्रकार विकसित होता है। इस दृष्टिकोण के आधार पर मनोविश्लेषणात्मक सिद्धान्त माना जाता है। इस सिद्धान्त का प्रयोग सर्वप्रथम फ्रॉयड के द्वारा किया गया। इस सिद्धान्त के राजनीतिक समाजीकरण प्रक्रिया में सर्वाधिक महत्वपूर्ण भूमिका परिवार की होती है। बचपन में माता-पिता के द्वारा सत्ता तथा नियंत्रण के प्रति दृष्टिकोण समझने में सहायक है।
3. सीखने का सिद्धान्त (Learning Theory): इस सिद्धान्त के अनुसार बच्चा प्रारम्भ से ही सीखता है। यदि बचपन से ही व्यक्ति वांछनीय मूल्यों का समझने तथा अंगीकृत करने का अवसर प्राप्त कर ले तो इच्छित परिणाम निकलते हैं। बचपन से बच्चे को राष्ट्रीय चिह्नों के माध्यम से राष्ट्र के प्रति निष्ठावान बनाया जा सकता है।
4. बोधयुक्त विकास सिद्धान्त (Cognitive Development Theory): इसके अनुसार के नये मूल्यों तथा नये दृष्टिकोणों को सीखने की तथा स्वीकार करने की प्रक्रिया व्यक्ति बोधगम्यता की क्षमता पर आधारित है। अन्य शब्दों में बच्चों का राजनीतिक व्यवहार उसकी आयु पर काफी मात्रा पर निर्भर



करता है। फलतः यह सिद्धान्त विभिन्न आयु वर्गों के व्यक्तियों के राजनीतिक व्यवहार को समझने में सहायक है। संक्षेप में कहा जा सकता है कि उपर्युक्त सभी सिद्धान्त व्यक्ति के राजनीतिक व्यवहार को समझने में सहायक हैं।

8.4.7 राजनीतिक समाजीकरण के उद्देश्य (Objectives of Political Socialisation)

राजनीतिक समाजीकरण की प्रक्रिया के निम्न उद्देश्य:

1. राजनीतिक समाजीकरण का मुख्य लक्ष्य राजनीतिक समुदाय अथवा राष्ट्र के प्रतिनिष्ठा उत्पन्न करता है।
2. राजनीतिक समाजीकरण का उद्देश्य व्यक्तियों को राजनीतिक समाज के अच्छे क्रियाशील सदस्य बनाना है।
3. इसका उद्देश्य शासन व्यवस्था में आस्था विकसित करना है अर्थात् राजनीतिक व्यवस्था के प्रति आस्था व विश्वास उत्पन्न करना ताकि शासन में अधिकाधिक संलग्नता तथा भागीदारी हो सके।
4. राजनीतिक प्रणालियों एवं संस्कृतियों का बनाये रखना, परिवर्तन करना तथा नई राजनीतिक प्रणालियां तथा संस्कृतियां विकसित करना भी राजनीतिक समाजीकरण का प्रमुख उद्देश्य है।

8.4.8 राजनीतिक समाजीकरण का महत्त्व (Importance of Political Socialisation)

राजनीतिक समाजीकरण एक महत्वपूर्ण अवधारणा है। इसका महत्त्व तथा उपरोगिता का वर्णन करते हुए आर्मेण्ड तथा पॉवेल ने कहा है, “राजनीतिक स्थानीय स्थायित्व और विकास को समझने के लिए राजनीतिक समाजीकरण का अध्ययन एक महत्वपूर्ण दृष्टिकोण है। आधुनिक विश्व में इसका विशेष महत्त्व महान परिवर्तनों के कारण है जो आधुनिक समाजों को प्रभावित कर रहे हैं।”

राबर्ट सिगेल, हर्बर्ट हीमैन इत्यादि विद्वानों के अनुसार राजनीतिक समाजीकरण का महत्त्व एवं उपयोगिता निम्नलिखित है:

1. राजनीतिक समाजीकरण राजनीतिक संस्कृति के संचारण को संभव बनाना (Political Socialisation ensures the Transmission of Political Culture): राजनीतिक समाजीकरण की प्रक्रिया हमारी यह सहायता करती है कि राजनीतिक संस्कृति का विकास कैसे होता है? विभिन्न राष्ट्रों की जनता राजनीतिक के प्रति दृष्टिकोण क्या और क्यों है? इसके माध्यम से राजनीतिक संस्कृति—मूल्यों, विश्वासों, आस्थाओं, अभिमुखनों, दृष्टिकोणों इत्यादि का संचारण एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी से तक पहुंचने में सहायता मिलती है। आर्मेण्ड तथा पॉवेल करते हुए कहा है, “राजनीतिक समाजीकरण वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा राजनीतिक संस्कृतियों को बनाए रखा तथा बदला जाता है।



राजनीतिक उद्देश्यों के प्रति दृष्टिकोण का निर्माण किया जाता है। राजनीतिक संस्कृति के नमून में परिवर्तन राजनीतिक समाजीकरण द्वारा ही किया जाता है।

2. राजनीतिक प्रणाली में स्थायित्व तथा परिवर्तन (Stability and Change in a Political System)
राजनीतिक प्रणाली तथा राजनीतिक समाजीकरण में घनिष्ठ सम्बंध है। इसके द्वारा राजनीतिक व्यवस्था में स्थापना होती है तथा परिवर्तन की प्रक्रिया भी जारी रहती है। क्योंकि समाजीकरण के मूल्यों तथा अभिमुखनों का प्रभाव राजनीतिक प्रणाली पर पड़ता है।
3. सचेत नागरिक उत्पन्न करना:— राजनीतिक समाजीकरण की प्रक्रिया के द्वारा सचेत नागरिक विकसित होते हैं। राबर्ट सिगेल के मतानुसार “राजीतिक समाजीकरण का उद्देश्य व्यक्तियों को ऐसा प्रशिक्षण देना है जिससे वे राजनीतिक समाज के “अच्छे क्रियाशील सदस्य” बन सकें।
4. राजनीतिक व्यवस्था को वैधता प्रदान करना:— राजनीतिक समाजीकरण के द्वारा एक व्यक्ति के मन में उन राजनीतिक मूल्यों, विश्वासों तथा निष्ठाओं को उत्पन्न करना होता है जो वह राजनीतिक व्यवस्था के प्रति रखता है। इससे केवल राजनीतिक संस्कृति विकसित तथा स्थिर ही नहीं रहती अपितु राजनीतिक व्यवस्था की वैधता भी उत्पन्न होती है। इसी वैधता के परिणामस्वरूप राजनीतिक व्यवस्थाएं स्थिर रहती हैं। राजनीतिक समाजीकरण राजनीतिक समाज प्रचलित राजनीतिक मूल्यों के अनुकूल ढालता है अन्यथा राजनीतिक व्यवस्था को कार्य करने तथा स्थिता की स्थापना करने में कठिनाई पेश आयेगी।
5. विभिन्न राजनीतिक प्रणालियों के तुलनात्मक अध्ययन में सहायक:— राजनीतिक समाजीकरण की प्रक्रिया के माध्यम से हम विभिन्न राजनीतिक व्यवस्थाओं का तुलनात्मक अध्ययन करते हैं। अन्य शब्दों में विभिन्न राजनीतिक व्यवस्थाओं के विकास, स्थिरता तथा पतन की जानकारी के लिए राजनीतिक समाजीकरण एक महत्वपूर्ण धारणा है।
6. राजनीतिक भर्ती में सहायक:— राजनीतिक समाजीकरण की प्रक्रिया राजनीतिक भर्ती में सहायक होती है। इसके आधार पर व्यक्ति राजनीतिक व्यवस्था के औपचारिक एवं अनौपचारिक संगठन में भर्ती होने का प्रयास करते हैं। राजनीतिक समाजीकरण की मात्रा राजनेताओं के भर्ती के स्तर निर्धारित करती है।
7. राजनीतिक व्यवस्था के प्रति वफादारी:— राजनीतिक समाजीकरण वह प्रक्रिया है जो नागरिकों में राजनीतिक व्यवस्था के प्रति लगाय एवं वफादारी की भावना का विकास करती है। उचित राजनीतिक समाजीकरण के आधार पर व्यक्ति राजनीतिक व्यवस्था की सुरक्षा हेतु बड़ी से बड़ी कुर्बानी करने के लिए तैयार रहता है।



8.4.9 राजनीतिक समाजीकरण के अभिकरण (Agency of Political Socialisation)

राजनीतिक समाजीकरण की प्रक्रिया प्रत्येक राजनीतिक समाज में चलती रहती है। इसको गतिशील बनाए रखने में अनेक तत्वोंका योगदान होता है। ये तत्व सभी राजनीतिक समाजों में समान प्रकृति के नहीं होते। राजनीतिक समाजीकरण की प्रक्रिया के चलनेका कोई निश्चित समय नहीं होता। एलेन बाल ने कहा है कि “राजनीतिक समाजीकरण ऐसी प्रक्रिया नहीं है जो बाल्यकाल के प्रभावग्रस्त योग्य वर्षों तक सीमित हो, बल्कि यह तो सारे व्यस्क जीवन के दौरान चलती रहती है।” इससे स्पष्ट हो जाता है कि इस लम्बी प्रक्रिया में व्यक्ति पर अनेक कारकों का प्रभाव भी अवश्य पड़ेगा। इसी से व्यक्ति के राजनीतिक समाजीकरण का मार्गप्रशस्त होगा। एस० पी० वर्मा ने लिखा है—“राजनीतिक समाजीकरण की प्रक्रिया में परिवार, स्कूल, चर्च, समान लोगों के समूह, जनसम्पर्क के साधन और जन-सम्बन्धों की अहम् भूमिका होती है।” इससे स्पष्ट हो जाता है कि राजनीतिक समाजीकरण के अनेक अभिकरण या साधन होते हैं। यह जरूरी नहीं है कि इन सभी साधनों का व्यक्ति पर समान प्रभाव पड़ता हो। व्यक्ति की आयु, ज्ञान, पारिवारिक वातावरण, अभिरुचि आदि का भी इस प्रक्रिया से गहरा सम्बन्ध रहता है। इसी कारण व्यक्तियों की राजनीतिक भूमिकाओं में भी अन्तर पाया जाता है। लेकिन यह बात तो निर्विवाद रूप से सत्य है कि राजनीतिक समाजीकरण की प्रक्रिया को प्रभावित करने वाले कुछ अभिकरण अवश्य हैं जो व्यक्ति को राजनीतिक मानव बनाते हैं। ये अभिकरण हैं :—

परिवार

परिवार व्यक्ति की प्रथम पाठशाला है। व्यक्ति परिवार से ही अनेक सामाजिक सद्गुणों के साथ-साथ राजनीतिक विचारधारा भी ग्रहण करता है। परिवार का बाल्यकाल में व्यक्ति पर सर्वाधिक मनोवैज्ञानिक प्रभाव पड़ता है। परिवार ही समाजीकरण व राजनीतिक समाजीकरण का महत्वपूर्ण अभिकरण है। इस अभिकरण की व्यक्ति के राजनीतिक समाजीकरण में भूमिका परिवार विशेष की राजनीतिक व्यवस्था के प्रति लगाव पर निर्भर करती है। आज परिवार की राजनीतिक समाजीकरण में पहले की अपेक्षा भूमिका में वृद्धि हुई है। लेकिन मध्य प्रदेश जैसे राज्यों में कुछ भागों में आज भी गांव राजनीतिक समाजीकरण की प्रक्रिया से पूरी तरह नहीं जुड़ पाए हैं। जहां आर्थिक विकास की समस्या है, वहां भी राजनीतिक समाजीकरण में परिवार या ग्रामीण समाज का कोई महत्वपूर्ण योगदान नहीं रहता। लेकिन आज भारत में बहुत कम ही ऐसे क्षेत्र हैं जहां राजनीतिक समाजीकरण की प्रक्रिया न पहुंची हो। आज प्रत्येक गांव में स्थानीय स्वशासन की इकाइयों ने व्यक्ति को राजनीतिक भूमिका अदा करने पर मजबूर कर दिया है। आज गांवों में ऐसा परिवार मुश्किल से मिलेगा जो राजनीति से दूर हो। आज हर समय खाली वक्त में प्रत्येक परिवार में राजनीतिक बातों पर खुलकर विचार-विमर्श होता है। इसका प्रभाव बच्चे पर भी अवश्य पड़ता है। बच्चा भी धीरे धीरे राजनीतिक बातों में रुचि लेने लगता है। जब गांवों में पंचायतों के चुनाव होते हैं तो प्रत्येक बच्चा भी राजनीतिक क्रियाएं करते हुए देखा जा सकता है। यही हाल शहरी स्वशासन की संस्थाओं के चुनावों में होता है।



परिवार में बढ़ती राजनीतिक चेतना बालक के मानस-पटल पर भी अवश्य प्रभाव डाली है। इससे स्पष्ट हो जाता है कि जो परिवार राजनीतिक दृष्टि से अधिक सामाजिक है, वह अपने बच्चों को भी राजनीतिक मानव बनाने में प्रेरणाके तौर पर कार्य करता है। परिवार में सीखे गए सद्गुण ही व्यक्ति के राजनीतिक जीवन में बहुत काम आते हैं। अतः परिवारराजनीतिक समाजीकरण का प्रमुख व प्रथम अभिकरण है।

शिक्षण संस्थाएं

शिक्षा राजनीतिक व्यवहार का महत्वपूर्ण चर है। बच्चे को राजनीतिक समाजकी आवश्यकताओं के अनुरूप ढालने में स्कूल व कॉलेज स्तर की शिक्षा का भी बहुत महत्वपूर्ण योगदान होता है। बच्चा स्कूली स्तरसे ही अपने देश की राजनीतिक घटनाओं का ज्ञान प्राप्त करने लगता है और कॉलेज स्तर तक पहुंचते-पहुंचते उसका राजनीतिक प्रति लगाव अधिक हो जाता है। इस स्तर पर आकर वह स्वयं ही विद्यार्थी संघ के चुनावों में अभिरुचि लेने लगता है और नेतृत्वकी प्रक्रिया में अहम् भूमिका अदा करने की सोचने लगता है। यह शिक्षण प्रक्रिया ही है जो व्यक्ति को सम्पूर्ण राजनीतिक मानवबना देती है। आज शैक्षिक पाठ्यक्रम में राजनीतिक संरचनाओं, इतिहास, शासन तन्त्र, कानून, संविधान, भौतिक अधिकार वस्वतन्त्रताओं आदि को शामिल किया जाता है ताकि बच्चे का राजनीतिक घटनाओं व व्यवस्थाओं से परिचय हो सके। चीन औररूस में शिक्षण संस्थाएं ही राजनीतिक समाजीकरण का सबसे प्रबल साधन है। राजनीति शास्त्र का विषय आज प्रत्येक देश में पढ़ायाजाता है। इससे नागरिकों में देश व राजनीति के प्रति ज्ञान बढ़ता है जो कई बार प्रकट रूप ले लेता है। छात्र संघ के चुनावराजनीतिक समाजीकरण का प्रकट रूप ही है। अतः शिक्षण संस्थाएं भी राजनीतिक समाजीकरण का महत्वपूर्ण साधन है।

मित्र-मण्डली

प्रत्येक देश में शिक्षण संस्थाओं के दौरान ही बच्चों के हमजोली या लंगोटिए समूह बन जाते हैं जो बाद में खुलकर विचार विमर्श करते हैं व गप्पे हांकते हैं। ये समूह अनौपचारिक होते हैं। इन समूहों में बच्चा विचार-विमर्शकी गई बात को आत्मसात् कर लेता है। अध्यापक द्वारा बताई गई बातों तथा समाचार-पत्रों से प्राप्त राजनीतिक घटनाओं की जानकारी पर ये हमजोली समूह खुलकर चर्चा करते हैं। चुनावों के समय ये हमजोली समूह कुछ-न-कुछ राजनीतिक गतिविधियां अवश्य करते हैं। चुनावी प्रचार में जुटे लोगों की बातें सुनना, पर्चे पढ़ना व नारे लगाना इन्हें बहुत अच्छा लगता है। जब ये व्यस्क हो जाते हैं तो इनका गठजोड़ और अधिक मजबूत हो जाता है। ये इस बात पर निर्णय करने लग जाते हैं कि कौनसी पार्टी ठीक है या कौनसा नेता ठीक है। पढ़े-लिखे बच्चों में अनपढ़ों की अपेक्षा अधिक राजनीतिक चेतना रहती है। ये स्वेच्छिक समूह उम्र के साथ-साथ बनते बिगड़ते रहते हैं, लेकिन इनका अस्तित्व अवश्य रहता है। परिपक्व आयु में बनने वाले स्वेच्छिक समूह व्यक्ति का अधिक राजनीतिक समाजीकरण करते हैं और यह राजनीति समाजीकरण स्थायी प्रकृति का होता है।

दबाव व हित समूह



आज प्रत्येक लोकतन्त्रीय देश में दबाव या हित समूह अवश्य पाए जाते हैं। समाज के विभिन्न वर्गों के प्रतिनिधि होने के कारण इनका राजनीतिक व्यवस्था पर गहरा प्रभाव पड़ता है। ये समूह सामाजिक व धार्मिक संस्थाओं के रूप में भी हो सकते हैं। आज विश्व में कृषकों, मजदूरों, सरकारी कर्मचारियों, व्यापारियों, विद्यार्थियों, स्त्रियों आदि के अनेकों संगठन हैं जो राजनीतिक गतिविधियां करके व्यक्ति का राजनीतिक समाजीकरण करते हैं। राजनीतिक दल के साथलगाकर राजनीतिक व्यवस्था को प्रभावित करने के लिए ये हमेशा जोड़-तोड़ करते रहते हैं। जनमत को अपने पक्ष में करने के लिए ये तरह-तरह के तरीके प्रयोग में लाते हैं। ये अपने क्रिया-कलापों द्वारा राजनीतिक समाजीकरण में अहम् भूमिका निभाते हैं। कई बार तो ये राजनीतिक दलों को आर्थिक सहायता देते हैं और राजनीतिक स्तर पर किए जाने वाले नीति-निर्माण को भी प्रभावित करते हैं। इनकी गतिविधियां ही राजनीतिक समाजीकरण का अभिकरण हैं।

राजनीतिक दल

आज प्रत्येक देश में राजनीतिक दल विद्यमान हैं। चुनावी राजनीति को अमली जामा पहनाने में राजनीतिक दलों की ही महत्वपूर्ण भूमिका है। आज हर व्यक्ति का राजनीतिकरण करने का प्रयास राजनीतिक दल ही करते हैं। केन्द्र से लेकर ग्रामीण इकाई तक राजनीतिक दलों का जो जाल फैला हुआ है, उसने व्यक्ति का राजनीतिकरण कर दिया है। आज ग्रामीण संस्थाओं के चुनाव भी राजनीतिक दलों के गुप्त मार्गदर्शन में सम्पन्न होने लगे हैं। अब कोई भी व्यक्ति राजनीतिक दलों के प्रभाव से बच सकता है। राजनीतिक दल ही सत्ताधारकों के जन्मदाता हैं। राजनीतिक दल अपनी विशेष राजनीतिक विचारधारा रखते हैं जिसको क्रियारूप देकर वे राजनीतिक समाज का समाजीकरण करते हैं। दलों के वार्षिक अधिवेशन, चुनावी घोषणापत्र राजनीतिक समाजीकरण की प्रक्रिया को आगे बढ़ाते हैं। राजनीतिक दल ही जनता को राजनीति की तरफ आकर्षित करते हैं। राजनीतिक दलों द्वारा चलाए जाने वाले सदस्याता अभियान राजनीतिक समाजीकरण का महत्वपूर्ण अंग हैं। राजनीतिक दलों की गतिविधियों के कारण ही आज प्रत्येक व्यक्ति राजनीति के रंग में रंग चुका है। अतः राजनीतिक दल भी राजनीतिक समाजीकरण का प्रबल आधार हैं।

जनसम्पर्क के साधन

आज जनसम्पर्क के साधनों ने भी व्यक्ति का राजनीतिक समाजीकरण कर दिया है। समाचार पत्र, रेडियो, टी0वी0, पत्र-पत्रिकाओं से मिलने वाली राजनीतिक घटनाओं की जानकारी व्यक्ति को काफी प्रभावित करती है। इसी से उसके राजनीतिक विचार बनते व बिगड़ते हैं। आज सभी शासन-व्यवस्थाएं जनसम्पर्क के साधनों का प्रयोग करके अपने नागरिकों का राजनीतिक अभिमुखीकरण करने लगी हैं। आज हम जो कुछ रेडियो पर सुनते हैं, टी0वी0 पर देखते हैं और समाचार-पत्रों में पढ़ते हैं, वह हमारे राजनीतिक जीवन का अभिन्न अंग बन जाता है। साम्यवादी



देशों में तो जनसम्पर्क के साधन ही सरकार के पास राजनीतिक अभिमुखीकरण का प्रबल साधन हैं। आज विकासशील व विकसित देशों में भी जन-सम्पर्क के साधन ही समाजीकरण में अहम् भूमिका निभा रहे हैं।

राजनीतिक व्यवस्था

आज राजनीतिक व्यवस्था की संस्थागत संस्थाएं भी राजनीतिक समाजीकरण का प्रबल साधन बन गई हैं। सरकार द्वारा किए गए कार्यों को नागरिकों की पसंद या ना पसंद से जोड़कर इसका पता लगाया जाता है। साम्यवादी सरकारें जनसम्पर्क के साधनों तथा शिक्षण संस्थाओं का प्रयोग करके शासन-तन्त्र के इच्छित मूल्यों को नागरिकों में संप्रेषित करती हैं और नागरिकों की अभिवृत्तियों, मान्यताओं और आस्थाओं को राजनीतिक समाजीकरण की तरफ मोड़ने के हर प्रयास करती हैं। लोकतन्त्र के अन्तर्गत भी सरकारें अपनी भूमिका निष्पादन के द्वारा लोगों को राजनीतिक सीख देती रहती हैं। राजनीतिक-व्यवस्था का भी राजनीतिक समाजीकरण से गहरा सम्बन्ध होता है। चीन व सोवियत संघ में लोगों को राजनीतिक शिक्षा देने के लिए स्वैच्छिक युवा वर्गों और संगठनों को आर्थिक मदद भी की जाती रही है। कई बार तो धर्म तक को भी आड़ लेकर लोगों को राजनीतिक व्यवस्था से जोड़े रखने के प्रयास किए जाते रहे हैं।

आजीविका के साधन

आज प्रत्येक व्यक्ति आर्थिक क्रियाओं से किसी न किसी रूप में उलझा हुआ है। विभिन्न सरकारी व गैर-सरकारी आर्थिक कार्यों में लगे हुए लोग अपने हितों के लिए संगठन व संघ बनाकर राजनीतिक गतिविधियां संचालित करते रहते हैं। इस सामूहिक सौदेबाजी की प्रक्रिया का सहारा लेकर प्रत्येक संगठन अपने उद्देश्यों को भी प्राप्त कर लेता है और इससे उसके सदस्यों का राजनीतिक समाजीकरण भी हो जाता है। संघ के दौरान रहकर सीखने वाली हड़ताल, बन्ध, तोड़फोड़, प्रदर्शन आदि गतिविधियां व्यक्ति के राजनीतिक स्वभाव का प्रमुख अंग बन जाती हैं जो आगे चलकर राजनीतिक जीवन के किसी न किसी बिन्दु पर अवश्य प्रकट होने लगती हैं। पावेल ने लिखा है—“नौकरी और इसके इर्द-गिर्द औपचारिक व अनौपचारिक संगठन—क्लब, मजदूर संघ आदि राजनीतिक सूचना और विश्वास तथा मूल्यों से स्पष्ट रूप से संचार सम्बन्धी माध्यम हैं जो व्यक्ति का राजनीतिकरण करते हैं।”

राष्ट्रीय प्रतीक

राष्ट्रीय प्रतीक भी राजनीतिक समाजीकरण का प्रमुख साधन होते हैं। गणतन्त्र दिवस, स्वतन्त्रता दिवस, मई दिवस, आम चुनाव, राज्याभिषेक, गाँधी जयन्ती, राष्ट्रीय झण्डा, राष्ट्रीय गान व गीत, मार्क्स व लेनिन की जयन्तियां आदि के कारण भी लोगों में राजनीतिक अभिमुखीकरण होता है। इनका बच्चों से लेकर व्यस्क व्यक्ति तक कुछ-न-कुछ प्रभाव अवश्य पड़ता है। इससे लोगों को देश-विदेश की राजनीतिक बातों का पता लगता है और उनके राजनीतिक विचार विकसित होने लगते हैं जो उनको राजनीतिक समाजीकरण की तरफ ले जाते हैं।



उपरोक्त विवेचन के बाद कहा जा सकता है कि व्यक्ति के राजनीतिक समाजीकरण में परिवार, शिक्षा, मित्र-समूह, जनसम्पर्क केसाधन, दबाव समूह, राजनीतिक दल, साहित्य, विभिन्न समुदाय आदि का महत्वपूर्ण योगदान होता है। साम्यवादी देशों में तो लोगोंका राजनीतिक व्यवस्था के प्रति अभिमुखीकरण करने के लिए स्वयं सरकार द्वारा जनसम्पर्क साधनों व शिक्षण संस्थाओं का खुलकरप्रयोग किया जाता है। इसलिए राजनीतिक समाजीकरण की प्रक्रिया इन देशों में वह लक्ष्य अस्थाई रूप में ही पूरे कर पाती है। इसके विपरीत लोकतन्त्रीय देशों में समाजीकरण की प्रक्रिया सहज व स्वतः होने के कारण अधिक स्थाई परिणाम देने वाली होती है। इस तरह प्रत्येक देश की राजनीतिक व्यवस्था की प्रकृति में पाए जाने वाले अन्तर के कारण वहां पर राजनीतिक समाजीकरणकी प्रक्रिया भी दूसरे देशों से भिन्न हो जाती है। विकासशील देशों में तो धर्म की संस्थाएं भी आज राजनीतिक समाजीकरण कासशक्त माध्यम बनती जा रही हैं।

आज धर्म के नाम पर राजनीतिक अभिमुखीकरण करना एक आम बात हो गई है। आर्थिक साधनोंके अभाव में कई बार राजनीतिक समाजीकरण के साधन संयुक्त रूप से कार्य नहीं कर पाने के कारण अपने लक्ष्य में पिछड़ जाते हैं। विकासशील देशों में यही समस्या है। विकासशील देशों में राजनीतिक समाजीकरण के कुछ साधन या अभिकरण तो कागजोंकी शोभा बनकर रह गये हैं। भारत में स्कूली शिक्षा से सभी बच्चों को 2010 तक जोड़ना इस बात का सूचक है कि आने वालेसमय में भारतीय समाज में राजनीतिक समाजीकरण की प्रक्रिया में अवश्य तेजी आएगी जो राजनीतिक व्यवस्था के लिए एक शुभसंकेत होगी। अतः निष्कर्ष तौर पर कहा जा सकता है कि किसी भी राजनीतिक व्यवस्था की प्रकृति, राजनीतिक समाज के मूल्यव अभिमुखीकरण, जनसम्पर्क के साधनों की व्यवस्था, आर्थिक विकास की प्रकृति, राजनीतिक संस्कृति का स्वरूप आदि नियामकराजनीतिक समाजीकरण का मार्ग प्रशस्त करते हैं। इनका घटता बढ़ता प्रभाव ही राजनीतिक समाजीकरण की मात्रा को निर्धारितकरता है।

8.4.10 राजनीतिक समाजीकरण व राजनीतिक व्यवस्था में सम्बन्ध (Relationship in the social system of political socialization)

राजनीतिक समाजीकरण तथा राजनीतिक व्यवस्था में गहरा सम्बन्ध है। राजनीतिक समाजीकरण ही वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा व्यक्तिका राजनीतिक व्यवहार भी निश्चित होता है और राजनीतिक व्यवस्था का भी। आज राजनीतिक आधुनिकीकरण और विकास का सबसेप्रबल आधार राजनीतिक समाजीकरण ही है। यह राजनीतिक व्यवस्था को स्थिरता व कुशलता प्रदान करने का भी कार्य करता है। यह राजनीतिक व्यवस्था में भर्ती, सहभागिता आदि का नियामक होता है। राजनीतिक समाजीकरण व्यक्तियों के मन में मूल्यों, मानकों औरअभिवृत्तियों का विकास करता है जिससे उनके मन में राजनीतिक व्यवस्था के प्रति गहरा लगाव पैदा होता है। यह सामाजिक औरराजनीतिक व्यवस्थाओं को जोड़ने का महत्वपूर्ण कार्य करता है। इसके अभाव में न तो राजनीतिक व्यवहार में स्थायित्व आ सकता है औरन ही राजनीतिक व्यवस्था में। बाल्यकाल में व्यक्ति को राजनीतिक व्यवहार को जो ज्ञान कराया जाता



है, उसका राजनीतिक समाजीकरणसे ही गहरा रिश्ता होता है। राजनीतिक समाजीकरण के अभिकरणों द्वारा किया गया राजनीतिक अभिमुखीकरण ही राजनीतिक चेतनाका आधार होता है। यही चेतना राजनीतिक व्यवस्था के विकास के लिए रीढ़ की हड्डी का कार्य करती है। राजनीतिक व्यवस्था में उठनेवाली मांगों व दबावों का नियामक भी राजनीतिक समाजीकरण ही होता है। यही राजनीतिक समाज में व्यक्तियों की राजनीतिक सहभागिताया सक्रियता की मात्रा का निर्धारक भी होता है। राजनीतिक सहभागिता राजनीतिक समाजीकरण से सापेक्ष सम्बन्ध रखती है। राजनीतिकव्यवस्था के प्रति जो विश्वास व धारणाएं बनती बिगड़ती हैं, उनके पीछे राजनीतिक समाजीकरण का ही हाथ होता है। राजनीतिकसमाजीकरण ही राजनीतिक व्यवस्था के प्रति मूल्यों और निष्ठा के पनपने का आधार है। यही वह साधन है जो व्यक्ति को राजनीतिकमानव बनाता है। इसी के कारण व्यक्ति अपनीअभिरुचि राजनीतिक समाज के प्रति रखने लगता है और निदेशक की भूमिका निभाने कोभी तत्पर हो जाता है। राजनीतिक व्यवस्था में मांगों की तीव्रता, मात्रा व प्रकृति का निर्धारक भी राजनीतिक समाजीकरण ही करता है। आज व्यक्ति का प्रत्येक कार्य—व्यवहार राजनीति से प्रभावित होने के कारण राजनीतिक समाजीकरण का ऋणी हो गया है। व्यक्ति कोराजनीतिक मानव बनाने के लिए राजनीतिक भर्ती व सहभागिता का नियमन राजनीतिक समाजीकरण ही करता है। राजनीतिक व्यवस्थाके पुनःनिर्माण हेतु राजनीतिक संस्कृति को शक्तियुक्त बनाने का कार्य भी राजनीतिक समाजीकरण ही करता है अर्थात् राजनीतिक संस्कृतिको राजनीतिक व्यवस्था के अनुकूल बनाने का कार्य भी राजनीतिक समाजीकरण ही करता है। राजनीतिक व्यवस्था के पुनः निर्माण मेंराजनीतिक समाजीकरण के अभिकरणों की ही मदद ली जाती है ताकि बिना बाधा के राजनीतिक व्यवस्था गतिशील बनी रहे। जिस तरह राजनीतिक समाजीकरण राजनीतिक व्यवस्था को प्रभावित करता है, उसी तरह राजनीतिक व्यवस्था राजनीतिक समाजीकरणकी प्रक्रिया को भी निश्चित करती है। राजनीतिक व्यवस्था की प्रकृति राजनीतिक समाजीकरण की मात्रा निर्धारित करती है। जोराज—व्यवस्था जितनी स्थायी होगी, उतनी ही राजनीतिक समाजीकरण के मुख्य अभिकर्ताओं को विशिष्ट बना देगी। लोकतन्त्र में खुलापनरहने के कारण राजनीतिक समाजीकरण के अभिकरण उतने ही अधिक स्वतन्त्र ढंग से कार्य करते हैं, जबकि सर्वाधिकारवादी या निरंकुशशासन—व्यवस्थाओं में राजनीतिक व्यवस्था की प्रकृति ही समाजीकरण की नियामक बन जाती है। ऐसी व्यवस्थाओं में राजनीतिकसमाजीकरण के अभिकरणों को राजनीतिक व्यवस्था की अपेक्षाओं के अनुभव ही सक्रिय होना पड़ता है। सर्वाधिकारवादी समाज राजनीतिकसमाजीकरण पर विशेष ढंग से जोर देता है। लेनिन ने लिखा है—“शिक्षण संस्थाओं और युवकों के प्रशिक्षण को क्रांतिकारी ढंग से नए सिरेसे ढालने पर ही हम सुनिश्चित कर पाएंगे कि युवा पीढ़ी के प्रयासों के परिणामस्वरूप समाज की पुनःरचना होगी जो परम्परागत समाजसे भिन्न होगी।” इस प्रकार राजनीतिक समाजीकरण के साधनों को आरोपित करने के प्रयास के कारण ही सर्वसत्ताधिकारी राज—व्यवस्थालोकतन्त्रीय राज—व्यवस्था से भिन्न है। अतः निश्चित रूप से कहा जा सकता है कि राजनीतिक व्यवस्था भी राजनीतिक समाजीकरणकी नियामक होती है।



8.4.11 राजनीतिक समाजीकरण व राजनीतिक संस्कृति में सम्बन्ध (Relationship of political culture to political socialization)

राजनीतिक समाजीकरण व राजनीतिक संस्कृति में घनिष्ठ सम्बन्ध होता है। राजनीतिक समाजीकरण के माध्यम से ही राजनीतिक संस्कृतिबाल्यकाल से युवावस्था तक चलती रहती है। राजनीतिक समाजीकरण ही राजनीतिक संस्कृति को एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक पहुंचता है। इससे राजनीतिक संस्कृति में गतिशीलता के साथ-साथ सजीवता भी बनी रहती है। ऑमण्ड और वर्बा ने लिखा है—“राजनीतिक समाजीकरण ही वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा राजनीतिक संस्कृतियों को बनाए रखा जाता है या परिवर्तन किया जाता है।” राजनीतिक समाजीकरण ही राजनीतिक संस्कृति का नियामक होता है। राजनीतिक समाजीकरण के अभिकरण ही व्यक्ति को राजनीतिक संस्कृति में दीक्षित करते हैं। राजनीतिक समाजीकरण, राजनीतिक संस्कृति को विशेष पहचान देता है। उससे ही राजनीतिक संस्कृति को तत्व और अन्तर्वस्तु प्राप्त होती है और राजनीतिक संस्कृति राजनीतिक व्यवस्था की क्रियात्मकता में निर्णायक भूमिका निभाने में समर्थ हो पाती है। राजनीतिक विकास की तरफ उन्मुख सभी नवोदित राष्ट्र अपने अनुकूल राजनीतिक समाजीकरण की प्रक्रिया पर बहुत जोर देते हैं। वे संकीर्ण राजनीतिक संस्कृति को सहभागी राजनीतिक संस्कृति के विकास में राजनीतिक समाजीकरण ही महत्वपूर्ण भूमिका अदा करता है। यह राष्ट्र के प्रति निष्ठा तथा विशिष्ट मूल्यों को पनपाने में मदद करता है और राजनीतिक व्यवस्था के प्रति लोगों का लगाव भी बढ़ाता है। यह प्रक्रिया जीवन भर चलती रहती है। इस प्रक्रिया को गति देने में राजनीतिक समाजीकरण के अभिकरण—परिवार, शिक्षण संस्थाएं, स्वैच्छिक समूह, सरकार, राजनीतिक दल व जनसम्पर्क के साधन अहम् भूमिका निभाते हैं। इसी तरह राजनीतिक संस्कृति की प्रकृति भी राजनीतिक व्यवस्था को प्रभावित करके राजनीतिक समाजीकरण को कुछ न कुछ प्रभावित करने की चेष्टा करती है। राजनीतिक संस्कृति ही राजनीतिक प्रक्रिया को अर्थ व ढांचा प्रदान करती है। राजनीतिक व्यवस्था का ढांचा ही समाजीकरण की मात्रा को निश्चित करता है। पराधीन संस्कृति वाले समाजों में समाजीकरण की प्रक्रिया अधिक सक्रिय नहीं हो पाती है, जबकि विकसित संस्कृति वाले देशों में समाजीकरण को विशेष महत्व दिया जाता है। इसी कारण राजनीतिक संस्कृति का पराधीन रूप सर्वाधिकारवादी देशों में राजनीतिक समाजीकरण की प्रक्रिया पर नियन्त्रण बनाये रखने में सफल रहता है। राजनीतिक संस्कृति लोगों की राजनीतिक व्यवस्था के प्रति मनोवृत्ति व रुचि का प्रतिमान होने के कारण राजनीतिक समाजीकरण की दिशा निर्धारित भी करती है। प्रत्येक राजनीतिक समाज अपनी राजनीतिक संस्कृति के अनुरूप ही राजनीतिक समाजीकरण का नियमन करता है। राजनीतिक संस्कृति और राजनीतिक समाजीकरण के आपसी सम्बन्ध ही राजनीतिक व्यवस्था को नया अर्थ देते हैं। अड़ियल प्रकार की संस्कृति राजनीतिक समाजीकरण के साथ साथ राजनीतिक व्यवस्था को भी गतिहीन बना देती है।



8.4.12 राजनीतिक समाजीकरण की अवधारणा का मूल्यांकन (Evaluation of the concept of political socialization)

राजनीतिक समाजीकरण की अलोचना निम्न आधारों पर की जा सकती है।

1. प्रारम्भिक राजनीतिक विचार व दृष्टिकोण बचपन या युवावस्था तक ही सीमित रहते हैं।
2. प्रारम्भिक राजनीतिक विचार वास्तविकता से काफी दूर होते हैं।
3. इन विचारों का राजनीतिक व्यवस्था से कोई सम्बन्ध नहीं होता।
4. मार्क्सवादी विचारकों के अनुसार राजनीतिक समाजीकरण एक अनुदारवादी अवधारणा है। वे इसको पूर्णपति व्यवस्था की उपज मानकर अस्वीकार करते हैं।
5. यह अवधारणा यथास्थिति की पक्षधर है और परिवर्तन का विरोध करती है।

उपर्युक्त आलोचनाओं के बावजूद भी आमॅण्ड तथा पॉवेल के अनुसार, “स्थिरता एवं विकास को समझने के लिए राजनीतिक समाजीकरण का अध्ययन आशजनक दृष्टिकोणों में से एक है। राजनीतिक समाजीकरण की प्रक्रिया राजनीति विज्ञान की नई संकल्पना है जो द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद उजागर हुई है। यह राजनीतिक विकास व आधुनिकीकरण को गति देती है और राजनीतिक संस्कृति का अनुरक्षण करती है। व्यक्ति के राजनीतिक व्यवहार को राजनीतिक व्यवस्था की प्रकृति के अनुरूप बनाकर यह राजनीतिक व्यवस्थामें स्थायित्व व कार्यकुशलता का गुण भी पैदा करता है। राजनीतिक भर्ती व सहभागिता को क्रियान्वित करके राजनीतिक समाजीकरण ही राजनीतिक विकास व आधुनिकीकरण के लक्ष्य को पूरा करता है मनुष्य को राजनीतिक मानव बनाने में राजनीतिक समाजीकरण जो भूमिका अदा करता है, वह कार्य अन्य किसी व्यवस्था द्वारा सम्भव नहीं है। एक सतत् प्रक्रिया के रूप में यह राजनीतिक व्यवहार व राजनीतिक व्यवस्था दोनों का नियामक होता है। इसका राजनीतिक संस्कृति, राजनीतिक विकास, राजनीतिक आधुनिकीकरण व राजनीतिक व्यवहार से गहरा सम्बन्ध रहता है। अपने विभिन्न अभिकरणों के माध्यम से यह नियामक बना रहता है। अतः राजनीतिक समाजीकरण की संकल्पना राजनीतिक विज्ञान में काफी महत्व रखती है। इसके आगमन से राजनीति विज्ञान को नई दिशा मिली है।

8.5 अपनी प्रगति जांचें (Check your progress)

1. राजनीतिक संस्कृति का आनुभविक..... सम्भव है।
2. राजनीतिक संस्कृति पर आधारित शोध के ,लोकप्रिय व जनता की ‘ सत्ता स्वतंत्रता ‘ या..... की धारणाओं में एक कालावधि में आने वाले परिवर्तनों को स्पष्ट रूप के इंगित किया जा सकता है।
3. राजनीतिक संस्कृति के संकेतक के..... योग्य होते हैं।



4. राजनीतिक संस्कृति विविध.....को राजनीतिक व्यवस्था की अपनी अवधारणा में एकीकृत करने का अवसर प्रदान करती है ।
5. राजनीतिक संस्कृति को एक पीढ़ी के दूसरी पीढ़ी तक पहुँचाने में का बहुमूल्य..... योगदान होता है ।
6. ही वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा व्यक्तिका राजनीतिक व्यवहार भी निश्चित होता है

8.6 सारांश (Summary)

राजनीतिक संस्कृति राजनीतिक समाज के लोगों की राजनीतिक व्यवस्था के प्रति अभिरुचियों, मूल्यों व विश्वासों पर आधारित है। राजनीतिक संस्कृति में आत्मपरकता का गुण होने के कारण यह व्यक्तिगत अभिविन्यास या अनुकूल का हिस्सा होती है। यह अनुकूलन ज्ञानात्मक, भावनात्मक तथा मूल्यात्मक होता है। ज्ञानात्मक अनुकूलन का सम्बन्ध लोगों की राजनीतिक व्यवस्था के प्रति जानकारी से, भावनात्मक अनुकूलन का सम्बन्ध लोगों का राजनीतिक व्यवस्था के प्रति लगाव से तथा मूल्यांकन अनुकूलन का सम्बन्ध लोगों के द्वारा राजनीतिक व्यवस्था के मूल्यों व निर्णयों से होता है। इस अनुकूलन की दृष्टि से राजनीतिक व्यवस्था के तीन घटक होते हैं— मूल्य, विश्वास और संवेदात्मक अभिवृत्तियाँ। प्रत्येक देश की राजनीतिक संस्कृति का निर्माण इन्हीं घटकों से होता है। इन घटकों की अनुक्रिया ही किसी राजनीतिक व्यवस्था का सामान्य या विशिष्टता की तरह ले जाती है। इसी कारण राजनीतिक संस्कृति को राजनीतिक व्यवस्था का प्रकृति का नियात्मक कहा जाता है। राजनीतिक समाजीकरण की अवधारणा समाजीकरण पर आधारित है। समाजीकरण वह प्रक्रिया है जो मनुष्य को बाल्यकाल से अन्तिमक्षणों तक जीवन के सभी क्षेत्रों का ज्ञान उपलब्ध कराती रहती है। यह एक सतत् प्रक्रिया है। इसका सर्वप्रथम अभिकर्ता परिवार है। मनुष्य जैसे जैसे बड़ा होता जाता है, वैसे-वैसे उसके समाजीकरण का क्षेत्र भी बढ़ता जाता है। संसार में ऐसी कोई औपचारिक संस्था नहीं है, जहाँ समाजीकरण की विशेष शिक्षा दी जाती हो। मनुष्य परिस्थितियों से सीखता है। यमनुष्य का समाज के कार्यों के प्रति रुझान बहुमुखी प्रकृति का होता है, इसी कारण समाजीकरण की प्रक्रिया भी बहुमुखी है। समाजीकरण को परिभाषित करते हुए जॉनसन ने लिखा है—“समाजीकरण एक प्रशिक्षण है जो प्रशिक्षार्थी को समाज में उसकी भूमिका निभाना सिखाता है।” गिलिन और गिलिन ने कहा है—“समाजीकरण वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा व्यक्ति समूह के स्तरों के अनुसार समूह की गतिविधियों के अनुकूल उसकी परम्पराओं का पालन करके और स्वयं सामाजिक अवस्थाओं की अनुकूल करके, समूह के क्रियाशील सदस्य के रूप में विकसित होता है।” इस तरह समाजीकरण एक सतत् व विस्तृत प्रक्रिया है। राजनीतिक समाजीकरण तो उसका एक विशेष भाग है।

8.7 सूचक शब्द (Key Words)

- संस्कृति—परंपरा से चली आ रही आचार-विचार, रहन-सहन एवं जीवन पद्धतिय संस्कार



- **राजनीतिक संस्कृति** —राजनीतिक संस्कृति, राजनीतिक व्यवस्था के प्रति लोगों की अभिवृत्ति व रुचि है जो राजनीतिक विश्वास की भावना पर आधारित है।
- **समाज**— समाज एक से अधिक लोगों के समुदायों से मिलकर बने एक वृहद समूह को कहते हैं जिसमें सभी व्यक्ति मानवीय क्रियाकलाप करते हैं। मानवीय क्रियाकलाप में आचरण, सामाजिक सुरक्षा और निर्वाह आदि की क्रियाएं सम्मिलित होती हैं।
- **समाजीकरण** —समाजीकरण वह प्रक्रिया है, जिसके द्वारा व्यक्ति सामाजिक और सांस्कृतिक क्षेत्र में प्रवेश करता है, समाज के विभिन्न समूहों का सदस्य बनता है। इसी प्रक्रिया के माध्यम से उसे समाज के मूल्यों एवं मानकों को स्वीकारने की प्रेरणा मिलती है।
- **राजनीतिक समाजीकरण**— राजनीतिक समाजीकरण वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा राजनीतिक संस्कृतियों को राजनीतिक मूल्यों, विश्वासों और भावनाओं बनाए रखा जाता है और उनमें परिवर्तनव निर्माण किया जाता है। का निर्माण होता है। तटस्थ —किसी भी पक्ष को समर्थन न देना ।
- **आत्यंतिक निष्कर्ष** —अंतिम निष्कर्ष

8.8 स्वयं मूल्यांकन हेतु प्रश्न (Self- Assessment Questions)

1. राजनीतिक संस्कृति आप क्या समझते हैं ? इसके त्रिस्तरीय मूल्यांकन की व्याख्या कीजिए ।
2. समकालीन राजनीतिक संस्कृतियों की प्रवृत्तियों का विवेचन कीजिए ।
3. राजनीतिक संस्कृति की उपयोगिकता पर प्रकाश डालिए ।
4. राजनीतिक समाजीकरण से आप क्या समझते हैं ?
5. आर्मेण्ड तथा पॉवेल के मतानुसार राजनीतिक समाजीकरण प्रकार की विवेचन कीजिए

8.9 अपनी प्रगति की जांच करने के लिए उत्तर (Answers to check your progress)

1. सत्यापन या जाँच 2 अभियान 3. मापनीयता (Measurability)
4. प्रत्ययों 5. राजनीतिक समाजीकरण 6 राजनीतिक समाजीकरण

8.10 सन्दर्भ ग्रन्थ/निर्देशित पुस्तकें (References / Suggested Readings)

1. तुलनात्मक राजनीति की रूपरेखा— ओम प्रकाश गाबा ,मयूर पेपर बैक्स, नोएडा ।
2. तुलनात्मक शासन एवं राजनीति — डॉ. बीरकेश्वर प्रसाद सिंह, ज्ञानदा प्रकाशन (पी.एण्ड डी.) 24, दरियागंज, अंसारी रोड, दिल्ली ।



3. तुलनात्मक राजनीति एवं राजनीतिक संस्थाएँ – सी.बी. गेना, विकास पब्लिशिंग हाउस प्रा.लि. अंसारी रोड, दिल्ली।
4. तुलनात्मक राजनीति – जे.सी. जौहरी, स्टर्लिंग पब्लिशर्स प्रा.लि., दिल्ली ।



Subject : Political Science(Comparative Constitutions of UK & USA (Optional-I))	
Course Code : POLS-303	Autor : Dr. Parveen Sharma
Lesson No. 9	
राजनीतिक आधुनिकीकरण और राजनीतिक भूमण्डलीकरण Political Modernization and Political Globalization	

अध्ययन की संरचना

- 9.1 अधिगम उद्देश्य (Learning Objectives)
- 9.2 प्रस्तावना (Introduction)
- 9.3 पाठ का मुख्य भाग (Presentation of main Contents)
 - 9.3.1 राजनीतिक आधुनिकीकरण का अर्थ और परिभाषा (Meaning and definitions of Political Modernization)
 - 9.3.2 राजनीतिक आधुनिकीकरण की विशेषताएं (Characteristics of political modernization)
 - 9.3.3 राजनीतिक आधुनिकीकरण को प्रभावित करने वाले तत्व (Elements Influencing Political Modernization)
 - 9.3.4 राजनीतिक आधुनिकीकरण के अभिकरण (Agencies of political modernization)
 - 9.3.5 राजनीतिक आधुनिकीकरण व राजनीतिक विकास में अन्तर (Difference between political modernization and political development)
 - 9.3.6 राजनीतिक आधुनिकीकरण की अवधारणा का महत्त्व (Importance of the concept of political modernization)
 - 9.3.7 राजनीतिक आधुनिकीकरण की अवधारणा की आलोचना (Criticism of the concept of political modernization)
- 9.4 पाठ के आगे का मुख्य भाग (Further main body of the text)



- 9.4.1 राजनीतिक भूमण्डलीकरण (Political Globalization)
- 9.4.2 भूमण्डलीकरण: ऐतिहासिक पृष्ठभूमि (Historical background of globalization)
- 9.4.3 भूमण्डलीकरण या वैश्वीकरण: अभिप्राय (The meaning of globalization)
- 9.4.4 भूमण्डलीकरण: विशेषताएं (Features of globalization)
- 9.4.5 भूमण्डलीकरण के लाभ (Benefits of globalization)
- 9.4.6 भूमण्डलीकरण और विकासशील देश (Globalization and Developing Countries)
- 9.4.7 भूमण्डलीकरण और अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्ध: प्रभाव (Impact on Globalization and International Relations)
- 9.4.8 तुलनात्मक राजनीति और भूमण्डलीकरण (Comparative Politics and Globalization)
- 9.4.9 विकसित और विकासशील समाजों की अनुक्रिया (Responses from Developed and Developing Societies)
- 9.5 अपनी प्रगति जांचें (Check your progress)
- 9.6 सारांश (Summary)
- 9.7 सूचक शब्द (Key Words)
- 9.8 स्वयं मूल्यांकन हेतु प्रश्न (Self- Assessment Questions)
- 9.9 अपनी प्रगति की जांच करने के लिए उत्तर (Answers to check your progress)
- 9.10 सन्दर्भ ग्रन्थ/निर्देशित पुस्तकें (References / Suggested Readings)

9.1 अधिगम उद्देश्य (Learning Objectives)

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् विद्यार्थी योग्य होंगे—

- तुलनात्मक राजनीति और भूमण्डलीकरण के सह-सम्बंधों को विवेचित करने में ।
- तुलनात्मक राजनीति और राजनीतिक आधुनिकीकरण के सह-सम्बंधों को विवेचित करने में ।



- विकसित और विकासशील समाजों अथवा देशों की अनुक्रिया को समझने में ।

9.2 प्रस्तावना (Introduction)

राजनीतिक आधुनिकीकरण राजनीति विज्ञान के क्षेत्र में सर्वथा एक नई अवधारणा है। द्वितीय विश्व युद्ध से पहले इस अवधारणा का कोई अस्तित्व नहीं था। युद्धोत्तर अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों में विश्व की राजनीतिक व्यवस्थाओं का तुलनात्मक अध्ययन करने के लिए अनेक दृष्टिकोणों व अवधारणाओं का जन्म हुआ। उन अवधारणाओं में से एक अवधारणा राजनीतिक आधुनिकीकरण की संकल्पना पर आधारित है और उसका एक भाग है। यह अवधारणा राजनीतिक विकास व पाश्चात्यकरण से बिल्कुल भिन्न है। राजनीति विज्ञान में राजनीतिक आधुनिकीकरण की अपनी विशेष पहचान है। शक्तियों का केन्द्रीयकरण, राज्य का अधिकाधिक समाज में प्रवेश, सत्ता का स्थानान्तरण, बढ़ती जनसहभागिता और नौकरशाही का व्यापक आधार इसकी प्रमुख विशेषताएं हैं तथा अभिजन वर्ग और सरकार राजनीतिक आधुनिकीकरण के प्रमुख अभिकरण हैं।

9.3 पाठ का मुख्य भाग (Presentation of Contents)

9.3.1 राजनीतिक आधुनिकीकरण का अर्थ और परिभाषा (Meaning and definitions of

Political Modernization)

राजनीतिक आधुनिकीकरण की अवधारणा आधुनिकीकरण की अवधारणा पर आधारित है। आधुनिकीकरण की धारणा को समझकर ही राजनीतिक आधुनिकीकरण को समझा जा सकता है। आधुनिकीकरण की धारणा एक बहुत व्यापक और विशाल धारणा है। इसका सम्बन्ध जीवन के हर क्षेत्र में होने वाले परिवर्तनों से है। यह राजनीतिक व्यवस्था, उत्पादन प्रणाली, सामाजिक व धार्मिक क्षेत्र, शैक्षिक तथा सांस्कृतिक क्षेत्र सभी से सम्बन्धित है। विकासशील देशों के सन्दर्भ में यह सामाजिक-आर्थिक परिवर्तन की प्रक्रिया का नाम है। यह प्राचीन से नवीनता की ओर समाज का प्रस्थान है। यह एक बहुमुखी प्रक्रिया है जो आर्थिक, सामाजिक, धार्मिक, सांस्कृतिक, शैक्षिक तथा राजनीतिक सभी क्षेत्रों में दृष्टिगोचर होती है। पर्यावरण एवं प्रकृति पर बढ़ता हुआ नियन्त्रण, तकनीकी विकास, औद्योगिकरण, शहरीकरण, बढ़ती जनसहभागिता, बढ़ती राष्ट्रीय व प्रति व्यक्ति आय, संचार साधनों का विकास, सामाजिक गतिशीलता, समानता के सिद्धान्त का विकास तथा राष्ट्रीय एकता के प्रति निष्ठा आदि आधुनिकीकरण की प्रमुख विशेषताएं हैं।

1. लरनर के अनुसार— विवेकपूर्ण परिवर्तन की प्रक्रिया का नाम ही आधुनिकीकरण है।
2. स्मैलर के अनुसार—किसी राज्य की आर्थिक उन्नति ही आधुनिकीकरण है।



3. **हटिंगटन के अनुसार**—“आधुनिकीकरण एक बहुदलीय प्रक्रिया है जो मानव की गतिविधियों व विचारों के सभी क्षेत्रों में परिवर्तन से सम्बन्धित है।”
4. **कलोडवेल्च के अनुसार**— “आधुनिकीकरण वह प्रक्रिया है जो साधनों के विवेकपूर्ण उपयोग पर आधारित होती है और जिसका उद्देश्य आधुनिक समाज की स्थापना कहा जा सकता है।”
5. **कौलमैन के अनुसार**— “आधुनिकीकरण राजनीतिक पक्ष संक्रान्तिकालीन समाजों की राजव्यवस्था में होने वाले संरचनात्मक तथा सांस्कृतिक परिवर्तनों का समुच्चय है। इस प्रक्रिया में राजव्यवस्था, उसकी उप-व्यवस्थाएं, राजनीतिक संरचनाएं, राजसंस्कृति, उनकी प्रक्रियाएं आदि शामिल होती हैं।”
6. **मोर्स के अनुसार**— यह विकास तथा क्रान्ति के बीच चलने वाली प्रक्रिया है। साधारण रूप में तो समाज में सामाजिक संचालन और आर्थिक विकास के परिणामस्वरूप हुए राजनीतिक परिवर्तनों को राजनीतिक आधुनिकीकरण का नाम दे दिया जाता है।
7. **कार्ल डेंयूश के अनुसार**— राजनीतिक आधुनिकीकरण का अर्थ सहभागिता या गतिशीलता से है।
8. **जेम्स एस0 कोलमैन के अनुसार**—“राजनीतिक आधुनिकीकरण ऐसे संस्थागत ढांचे का विकास है जो पर्याप्त लचीला और इतना शक्तिशाली हो कि उसमें उठने वाली मांगों का मुकाबला किया जा सके।” राजनीतिक दृष्टि से आधुनिक समाज वही हो सकता है जिसमें व्यक्ति का अभिज्ञान राजनीतिक विकास और इसके विभिन्न पक्षों से होने लगता है। अतः राजनीतिक आधुनिकीकरण, राजनीतिक विकास से अधिक व्यापक अवधारणा है और यह पाश्चात्त्यीकरण से अलग अवधारणा है, क्योंकि यह पाश्चात्त्यीकरण के विचरित मूल्य युक्त व उद्देश्य युक्त परिवर्तन पर आधारित है। उपरोक्त विवेचन से यह भी स्पष्ट हो जाता है कि राजनीतिक आधुनिकीकरण, आधुनिकीकरण का एक पक्ष है जिसका सम्बन्ध आधुनिकीकरण के राजनीतिक पक्ष से है।

9.3.2 राजनीतिक आधुनिकीकरण की विशेषताएं(Characteristics of political modernization) :—

राजनीतिक आधुनिकीकरण के अर्थ व परिभाषा से स्पष्ट हो जाता है कि विशेष लक्षणों वाली राजनीतिक व्यवस्था को ही राजनीतिक दृष्टि से आधुनिकीकृत कहा जा सकता है। लुसियन पाई ने राजनीतिक कार्यों का विविधीकरण तथा विशेषीकरण, समानता, राजनीतिक प्रक्रिया का लौकिकीकरण तथा परिवर्तन की क्षमता से युक्त राजनीतिक व्यवस्था को आधुनिक माना है। आइजेन्स्टेड ने भी राजनीतिक आधुनिकीकरण की अलग विशेषताएं बताई हैं। उसकी दृष्टि में राजनीतिक व्यक्ति, कार्यों और संस्थाओं में उच्च मात्रा का विभिन्नीकरण तथा केन्द्रीयकृत एवं एकीकृत शासन व्यवस्था की विकास, केन्द्रीय प्रशासनिक एवं राजनीतिक संगठनों की गतिविधियों का विस्तार तथा उनकी सभी सामाजिक क्षेत्रों में क्रमिक व्याप्ति, समाज की अन्तर्निहित शक्ति का अधिकाधिक समूहों तथा व्यस्क नागरिकों में फैलाव आदि राजनीतिक आधुनिकीकरण की विशेषताएं हो सकती हैं। कार्ल डेंयूश तथा ऑमण्ड-पॉवेल ने भी राज्य



की लौकिक सत्ता की वृद्धि तथा शक्ति का बढ़ता केन्द्रीयकरण, संरचनात्मक विभेदीकरण, बढ़ती जनसहकारिता, नवीन सामाजिक संघटन, कार्यों का विशेषीकरण, अभिजन वर्ग की उपस्थिति, समान सहभागिता, हित समूहों व राजनीतिक दलों के माध्यम से राजनीतिक मांगों का हित स्वरूपण को राजनीतिक आधुनिकीकरण विशेषताएं बताया है। इसी तरह राबर्ट ई0 वार्ड तथा डी0ए0 रस्तोव ने भी अत्यधिक विभेदीकृत शासकीय संगठन, शासकीय संरचनाओं में एकीकरण व सामंजस्य, धर्मनिरपेक्ष प्रक्रिया, व्यक्ति की अति विस्तृत निष्ठा, राजनीति में जनसाधारण की सक्रिय सहभागिता, समानता का सिद्धान्त तथा समता व योग्यताओं के आधार पर भूमिकाओं का वितरण को राजनीतिक आधुनिकीकरण की विशेषताएं माना है। इन सभी विद्वानों की बात को ध्यान में रखकर राजनीतिक आधुनिकीकरण की विशेषताएं हो सकती हैं :-

1. **शक्तियों का केन्द्रीयकरण**— राजनीतिक आधुनिकीकरण की महत्वपूर्ण विशेषता यह है कि इसमें मानव जीवन की गतिविधियों से सम्बन्धित सारी शक्तियां एक राज्य या व्यवस्था में केन्द्रित होने लग जाती हैं। इसका अर्थ यह है कि राजनीतिक व्यवस्था ही अधिकाधिक शक्तियों को नियामक व नियन्त्रक बनने लग जाती हैं। इसका प्रमुख कारण तकनीकी विकास, अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों में बदलाव, संचार साधनों में विकास तथा प्रतिरक्षा की आवश्यकता का बढ़ना है। ऐसी परिस्थितियां आधुनिकीकरण के सर्वथा अनुकूल होती हैं। इसका अर्थ यह नहीं है कि राजनीतिक शक्तियों के विकेन्द्रीयकरण की कोई व्यवस्था नहीं रहती। इसमें तो राजनीतिक विकेन्द्रीयकरण के रहते हुए भी राजनीतिक शक्ति ही महत्वपूर्ण और अन्य समस्त प्रकार की आर्थिक व सामाजिक शक्तियों की नियामक व संचालक बनी रहती है।
2. **समाज में राज्य की अधिकाधिक पहुंच**— आज सरकार व राज्य वहीं कार्य करते हैं जो जनता मांग करती है। आज की सरकारें जन-सरकारें हैं और वे जन-इच्छा की ही प्रतिनिधि मानी जाती हैं। संचार के साधनों के विकास के परिणामस्वरूप सरकार की गतिविधियों के क्षेत्र का विस्तार हुआ है। इसी कारण सरकार व राज्य समाज में अपनी इतनी अधिक पहुंच बनाने में कामयाब हो चुके हैं कि मनुष्य का सम्पूर्ण सामाजिक व आर्थिक जीवन भी राजनीतिक शक्ति व सत्ता द्वारा संचालित होने लगा है। यह आधुनिकीकरण की प्रमुख निशानी है।
3. **केन्द्र और परिसर के बीच बढ़ती हुई अन्तःक्रिया**— राजनीतिक आधुनिकीकरण दो तरफा चलने वाली प्रक्रिया है। यहां पर केन्द्र का अर्थ तो राजनीतिक व्यवस्था से है और परिसर का अर्थ समाज से है। केन्द्र तथा परिसर अथवा राजनीतिक व्यवस्था तथा समाज से है। केन्द्र तथा परिसर अथवा राजनीतिक व्यवस्था तथा समाज में इस अन्तःक्रिया या पारस्परिकता को बढ़ाने के राजनीतिक दलों, हित समूहों तथा नौकरशाही का बहुत अधिक योगदान रहता है। इस बढ़ती हुई पारस्परिकता वाला समाज व राजनीतिक व्यवस्था आधुनिकीकरण की निशानी है।



4. **सत्ता का स्थानान्तरण**— राजनीतिक आधुनिकीकरण की अवस्था में सत्ता के परम्परागत स्रोत निर्बल होने लगते हैं और उनका स्थान नए स्रोत लेने लगते हैं। इसके अन्तर्गत प्राचीन राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक आदि सत्ताओं का स्थान राष्ट्रीय राजनीतिक सत्ता द्वारा ले लिया जाता है। अतः सत्ता का स्थानान्तरण भी आधुनिकीकरण की महत्वपूर्ण विशेषता है।
5. **राजनीतिक संस्थाओं का विभिन्नीकरण तथा विशेषीकरण**—राजनीतिक आधुनिकीकरण की अवस्था में राजनीतिक संस्थाओं का विभिन्नीकरण एवं विशेषीकरण भी होना आवश्यक माना जाता है। आज सरकार का स्वरूप कल्याणकारी होने के कारण सरकारों के कार्यों में आई जटिलता के लिए विभिन्नीकरण तथा विशेषीकरण का होना अपरिहार्य माना जाने लगा है। संस्थाओं के विभेदीकरण व विशेषीकरण के बिना सरकारों द्वारा अपने उत्तरदायित्वों का निर्वहन करना कठिन काम है।
6. **बढ़ती राजनीतिक जनसहभागिता**—राजनीतिक आधुनिकीकरण का पता इस बात से भी लगाया जा सकता है कि जनता को राजनीतिक संस्थाओं में सहभागिता के अवसर कहां तक प्राप्त हैं। सर्वसाधारण की राजनीतिक सहभागिता के बिना आधुनिकीकरण की बात करना निरर्थक है। यदि समाज का बुद्धिजीवी वर्ग राजनीति के प्रति उदासीन रहेगा तो निष्क्रिय जनसहभागिता राजनीतिक व्यवस्था को पतन के गर्त में धकेलने वाली हो सकती है। इसलिए राजनीतिक आधुनिकीकरण लाने व राजनीतिक व्यवस्था को विघटन से बचाने के लिए जनता की राजनीतिक व्यवस्था के प्रति प्रबुद्ध निष्ठा का होना अनिवार्य है। प्रबुद्ध जनसहभागिता के बिना राजनीतिक आधुनिकीकरण सम्भव नहीं है।
7. **जनता का राजनीतिक व्यवस्था से निर्बाध लगाव**—राजनीतिक आधुनिकीकरण के लिए लोगों का राजनीतिक व्यवस्था के प्रति लगाव का होना जरूरी है। जिन देशों में जनता अपने राष्ट्रीय फर्ज के प्रति उदासीन हैं, वहां पर कभी आधुनिकीकरण नहीं आ सकता। राष्ट्रीय अभिज्ञान और राष्ट्रीयता के अभाव में राजनीतिक व्यवस्था का विकास कभी नहीं हो सकता। राजनीतिक व्यवस्था के प्रति अपनापन लाकर ही राजनीतिक व्यवस्था का विकास सम्भव है। इसके लिए व्यक्तियों की सोच को बदलना जरूरी है। इसके बिना व्यक्ति की राजनीतिक व्यवस्था के बिना न तो निष्ठा आ सकती है और न ही राष्ट्रीयता की भावना का विकास हो सकता है। जब राजनीतिक व्यवस्था में सभी वर्गों के लोग राष्ट्रीय अभिज्ञान व राष्ट्रीयता की भावना से ओत-प्रोत होकर चलते हैं तो उससे एक ऐसी बाध्यकारी धारा प्रवाहित होने लगती है कि राजनीतिक व्यवस्था स्वतः ही आधुनिकीकरण की तरफ बढ़ने लगती है।
8. **व्यापक स्तर पर आधारित नौकरशाही**—आधुनिकीकरण के लिए राजनीतिक व्यवस्था में नौकरशाही का व्यापक स्तर होना भी जरूरी है। आज राजनीतिक व्यवस्था में सरकारों के कार्यों में इतनी अधिक वृद्धि होती जा रही है कि सीमित आधार वाली नौकरशाही द्वारा उन्हें पूरा करना असम्भव है।



9.3.3 राजनीतिक आधुनिकीकरण को प्रभावित करने वाले तत्व (Elements Influencing Political Modernization) :—

राजनीतिक आधुनिकीकरण की प्रक्रिया एक जटिल प्रक्रिया है। इसमें अनेक अभिकरणों, माध्यमों व बलों का योगदान निहित है। इन सभी की सूची बनाना कठिन है, क्योंकि से तत्व प्रत्येक राजनीतिक व्यवस्था में अलग-अलग भूमिका अदा करते हैं। इनका सम्बन्ध राजनीतिक व्यवस्था के आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक, आर्थिक और ऐतिहासिक पक्षों से भी होता है। एक जैसी शासन प्रणाली होने के बावजूद भी राजनीतिक व्यवस्था दो अलग-अलग देशों में अलग-अलग दिशा में राजनीतिक आधुनिकीकरण की तरफ भी जा सकती है। इसके लिए राजनीतिक आधुनिकीकरण को प्रभावित करने वाले तत्व ही उत्तरदायी हैं। ये तत्व हैं:—

1. **राजनीतिक संरचनाएँ**—राजनीतिक संरचनाएं भी राजनीतिक आधुनिकीकरण को बहुत अधिक प्रभावित करती हैं। जिन राजनीतिक संरचनाओं का स्वरूप परम्परावादी होता है, वहां राजनीतिक आधुनिकीकरण की गति धीमी रहती है। अमेरिका की राजनीतिक व्यवस्था में इसका अभाव होने के कारण वहां तीव्रता से राजनीतिक आधुनिकीकरण हुआ है।
2. **राजनीतिक संस्कृति**— राजनीतिक संस्कृति भी राजनीतिक आधुनिकीकरण की मात्रा को निर्धारित करती है। पराधीन अड़ियल प्रकार की संस्कृति राजनीतिक व्यवस्था में राजनीतिक समाजीकरण का मार्ग रोककर उसे आधुनिकता की तरफ जाने से रोकती है। राजनीतिक आधुनिकीकरण पर दीर्घकालीन प्रभाव राजनीतिक संस्कृति का ही पड़ता है। परम्परागत संस्कृति वाले देशों में राजनीतिक आधुनिकीकरण का मार्ग अधिक कठिन होता है, क्योंकि जनता परम्परागत नेतृत्व व संरचनाओं से चिपकी रहती है। इसलिए राजनीतिक संस्कृति का स्वरूप भी राजनीतिक आधुनिकीकरण का महत्वपूर्ण नियामक माना जाता है।
3. **ऐतिहासिक काल-नियति**— राजनीतिक आधुनिकीकरण ऐतिहासिक काल-नियति के सन्दर्भ में ही सम्भव हो सकता है। किसी भी राजनीतिक परिवर्तन को इतिहास की काल-नियति से अलग करके देखना असम्भव है। किसी भी कार्य को करने के लिए उचित समय होता है। उस समय के विपरीत किया गया कार्य राजनीतिक-व्यवस्था के पतन का कारण बन जाता है। इसलिए राष्ट्रीय इतिहास और विश्व इतिहास की धाराओं का समय-सन्दर्भ राजनीतिक संस्थाओं को आधुनिक बनाने के प्रयास में बाधक व सहायक दोनों ही हैं। इतिहास की धारा से प्रतिकूल जाकर कोई भी परिवर्तन असम्भव है। साम्राज्यवाद का नष्ट होना उसकी ऐतिहासिक अप्रासांगिकता ही थी। अतः ऐतिहासिक काल-नियति भी राजनीतिक आधुनिकीकरण की निर्धारक हैं।



4. **राजनीतिक नेतृत्व** राजनीतिक नेतृत्व की प्रकृति भी राजनीतिक आधुनिकीकरण को प्रोत्साहित या अवरोधित करने वाली दोनों होती हैं। राजनीतिक आधुनिकीकरण की प्रवृत्ति राजनीतिक नेतृत्व में अभिमुखीकरण पर आधारित है। यदि किसी देश के राजनेता राजनीतिक आधुनिकीकरण के लिए प्रयासरत हैं तो वहां पर राजनीतिक आधुनिकीकरण को आने से रोका नहीं जा सकता।
5. **राजनीतिक व्यवस्था की प्रकृति**—राजनीतिक व्यवस्था की प्रकृति भी राजनीतिक आधुनिकीकरण की निर्धारक होती है। लोकतन्त्रीय शासन व्यवस्था वाली राजनीतिक व्यवस्था हमेशा ही राजनीतिक आधुनिकीकरण की तरफ बढ़ाने के प्रयास करती है। इसके विपरीदत सर्वाधिकारवादी या निरंकुश राजनीतिक व्यवस्था का प्रयास हमेशा ही राजनीतिक आधुनिकीकरण के मार्ग में बाधा पहुंचाना होता है।

9.3.4 राजनीतिक आधुनिकीकरण के अभिकरण (Agencies of political modernization):—

राजनीतिक आधुनिकीकरण एक जटिल प्रक्रिया है। इसमें अनेक अभिकरणों की भूमिका महत्वपूर्ण रहती है। इस प्रक्रिया में ये अभिकरण ही अपना महत्वपूर्ण योगदान देते हैं :—

1. अभिजन वर्ग — किसी भी राजनीतिक व्यवस्था के संचालन में अभिजनों की सक्रिय भूमिका रहती है। समाज की भौतिक परिस्थितियों, परम्परागत मूल्यों तथा मान्यताओं को नए राजनीतिक परिवेश व आकांक्षाओं के सन्दर्भ में समाज का अभिजन वर्ग ही उन्हें राजनीतिक आधुनिकीकरण की दिशा में प्रवृत्त करता है। अभिजन वर्ग समाज की परम्परागत मान्यताओं को आधुनिकता के रंग में रंगने का प्रयास करता है।

जिन देशों में अभिजन वर्ग ने सामाजिक परिवर्तन के प्रति अरुचि दिखाई है, वहां की राजनीतिक व्यवस्थाओं का पतन हुआ है। इसी कारण अभिजन वर्ग को राजनीतिक व्यवस्था की जीवन शक्ति भी कहा जाता है। इस वर्ग की राजनीतिक व्यवस्था में भूमिका नकारात्मक व सकारात्मक दोनों हो सकती हैं। अतः राजनीतिक आधुनिकीकरण को गति देने वाला प्रमुख अभिकरण अभिजन वर्ग ही है।

2. सरकार —सरकारों की भी राजनीतिक आधुनिकता के अभिकरण के रूप में विशेष भूमिका है। राजनीतिक व्यवस्था के सभी कार्यों की शुरुआत सरकारों के द्वारा ही होती है। आधुनिक युग में सरकारों का स्वरूप राजनीतिक आधुनिकीकरण लाने में अधिक सक्षम है, क्योंकि सरकारों के पास बाध्यकारी शक्ति होती है। सरकार की इस शक्ति के कारण राजनीतिक आधुनिकीकरण के सभी कार्य प्राथमिकता प्राप्त कर सकते हैं। सरकारें ही आधुनिकीकरण की प्रवृत्तियों को पहल व प्रश्रय देती हैं और उनका नेतृत्व करती हैं। सरकारें ही आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक व राजनीतिक क्षेत्रों में प्रगति के द्वार खोलकर राजनीतिक आधुनिकीकरण की पृष्ठभूमि तैयार करती हैं। राजनीतिक सहभागिता के नए आयाम सरकारों की इच्छा के ही प्रतिफल हैं। प्रतिनिधि संस्थाओं में जनता की बढ़ती भागीदारी आज राजनीतिक शक्ति की इच्छा का ही परिणाम है। आधुनिक सरकारों ही कल्याणकारी कार्यों को शुरू करके



राजनीतिक आधुनिकीकरण की दिशा निर्धारित करती है। अतः शासन प्रणाली या सरकारें भी राजनीतिक आधुनिकीकरण की प्रमुख अभिकरण हैं।

3.राजनीतिक दल— राजनीतिक आधुनिकीकरण के अभिकरण के रूप में राजनीतिक दलों की भूमिका भी महत्वपूर्ण होती है। राजनीतिक व्यवस्था में राजनीतिक दल ऐसे अनेक कार्य करते हैं जिससे राजनीतिक आधुनिकीकरण को बढ़ावा मिलता है। राष्ट्रीय हित के अनुकूल विचारधारा विकसित करने तथा जनता में राजनीतिक चेतना उत्पन्न करने में राजनीतिक दलों का ही महत्वपूर्ण योगदान रहता है। यही राजनीतिक चेतना जनसहभागिता में वृद्धि करके लोकतन्त्रीय देशों में राजनीतिक आधुनिकीकरण का मार्ग प्रशस्त करती है।

4.विचारधारा —किसी भी राजनीतिक समाज को एकता के सूत्र में बांधने के लिए विचारधारा महत्वपूर्ण कार्य करती है। राष्ट्रीय अभिज्ञान, राष्ट्रीय एकता, राजनीतिक सहभागिता व राष्ट्रीय हित के प्रति निष्ठा उत्पन्न करने में विचारधारा का विशेष योगदान होता है। इस वैचारिक परिवर्तन को बुद्धिजीवी वर्ग ही विशेष दिशा प्रदान करता है और उसे राजनीतिक व्यवस्था में स्थान दिलाता है।

5.संचार साधन— आधुनिक समय में जनसंचार के साधन जनता को राजनीतिक गतिविधियों से परिचित कराके उनको राजनीतिक समाजीकरण की तरफ मोड़ते हैं। राजनीतिक समाजीकरण की अवस्था में पहुंचकर जनता राजनीतिक आधुनिकीकरण की गतिविधियों की आवश्यकता समझने लगती है और राजनीतिक आधुनिकीकरण की प्रक्रिया को गति मिलती है।

6.वैज्ञानिक एवं शैक्षिक विकास— आधुनिक युग में हुई वैज्ञानिक प्रगति व शैक्षिक विकास ने भी राजनीतिक आधुनिकीकरण की प्रक्रिया को तेज किया है। तकनीकी विकास का परिणाम संचार साधन आज राजनीतिक व्यवस्था में रचनात्मक परिवर्तन और नूतन प्रवृत्तियों के वाहक बन गए हैं। इनसे मनुष्य एक दूसरे के काफी निकट आ गया है, जहां राजनीतिक घटनाओं की जानकारी से बच पाना उसके लिए सम्भव नहीं है। इस तकनीकी व शैक्षिक विकास ने व्यक्तियों के चिन्तन को बदलकर राजनीतिक आधुनिकीकरण का मार्ग प्रशस्त कर दिया है।

उपरोक्त विवेचन के आधार पर कहा जा सकता है कि राजनीतिक आधुनिकीकरण में राजनीतिक दलों, विचारधारा, सरकार, अभिजन वर्ग, शैक्षिक संस्थाओं तथा जनसंचार के साधनों का विशेष योगदान है। आज सरकारों का बदलता स्वरूप राजनीतिक आधुनिकीकरण के नए आयाम स्थापित कर रहा है।

9.3.5 राजनीतिक आधुनिकीकरण व राजनीतिक विकास में अन्तर (Difference between political modernization and political development)

कुछ विद्वानों का मानना है कि राजनीतिक विकास की अवधारणा आधुनिकीकरण की अवधारणा की अपेक्षा संकुचित है। उनका मानना है कि राजनीतिक विकास आधुनिकीकरण की प्रक्रिया का ही एक भाग है। उसका क्षेत्र केवल



राजनीतिक है। राजनीतिक विकास एक लक्ष्योन्मुख प्रक्रिया है जिसे अपना गन्तव्य या लक्ष्य ज्ञात है, जबकि आधुनिकीकरण विभिन्न दिशाओं में लाया जाने वाला व्यापक परिवर्तन है तथा एक निरन्तर चलने वाली प्रक्रिया है। लेकिन राजनीतिक आधुनिकीकरण धारणा राजनीतिक विकास के अधिक निकट है। राजनीतिक आधुनिकीकरण की धारणा भी आधुनिकीकरण से निकट का सम्बन्ध रखती है। इसलिए राजनीतिक विकास तथा राजनीतिक आधुनिकीकरण दोनों का सम्बन्ध आधुनिकीकरण की प्रक्रिया से है। आधुनिकीकरण की प्रक्रिया में राजनीतिक विकास एक आश्रित चर बनकर रह जाता है। लेकिन कुछ विद्वानों का यह भी मानना है कि राजनीतिक विकास आधुनिकीकरण की प्रक्रिया का परिणाम है। इसी कारण आधुनिकीकरण को एक समाजशास्त्रीय विचारधारा माना जाता है तथा राजनीतिक विकास को राजनीतिक विचारधारा माना जाता है। आधुनिकीकरण सामाजिक परिवर्तनों की सम्पूर्ण व्यवस्था का विश्लेषण है। राजनीतिक विकास केवल राजनीतिक संरचनाओं एवं प्रक्रियाओं पर पड़ने वाले तीव्र सामाजिक व आर्थिक परिवर्तनों से सम्बन्ध रखता है। वह केवल उन राजनीतिक संरचनाओं और शक्तियों में रुचि रखता है जो विकासात्मक परिवर्तनों का कार्यान्वित करने में अहम् भूमिका अदा करते हैं। राजनीतिक आधुनिकीकरण भी इन्हीं पक्षों में रुचि लेता है, लेकिन सामान्य आधुनिकीकरण का एक भाग बनकर। यद्यपि

राजनीतिक विकास की समाजशास्त्रीय धारणा राजनीतिक आधुनिकीकरण से मिलता है, लेकिन उसकी वैज्ञानिक धारणा उससे काफी भिन्न है। यह राजनीति, राजनेताओं व राजनीतिक संस्थाओं को स्वतन्त्र स्थान प्रदान करती है। तुलनात्मक दृष्टि से राजनीतिक आधुनिकीकरण विकास से अधिक व्यापकतर अवधारणा मानी जाती है। इस दृष्टि से राजनीतिक विकास अधिक प्रगतिशील, गत्यात्मक एवं संकल्पनात्मक धारणा है।

राजनीतिक विकास तथा राजनीतिक आधुनिकीकरण में से किसे व्यापक अवधारणा माना जाए, यह विवाद का विषय है। यद्यपि दोनों अवधारणाएं आपस में कुछ साम्य भी रखती हैं। दोनों ही अवधारणाएं आधुनिकीकरण से सम्बन्ध रखती हैं, लेकिन फिर भी दोनों में निम्नलिखित अन्तर दृष्टिगोचर होते हैं :-

1. राजनीतिक आधुनिकीकरण की अवधारणा एक संकुचित व सीमित अवधारणा है, जबकि राजनीतिक विकास की अवधारणा राजनीतिक आधुनिकीकरण से व्यापक है।
2. राजनीतिक विकास की प्रक्रिया उल्टनीय हो सकती हैं, जबकि राजनीतिक आधुनिकीकरण की प्रक्रिया सदैव सीधी होती है और यह कभी उल्टनीय नहीं हो सकती।
3. राजनीतिक विकास की अवस्थाएं सुनिश्चित होती हैं, जबकि राजनीतिक आधुनिकीकरण में क्रम और प्रतिमान ही होते हैं, सुनिश्चित अवस्थाएं नहीं।
4. राजनीतिक विकास में होने वाले विकास पतन भी हो सकते हैं, लेकिन आधुनिकीकरण तो आधुनिकीकरण ही रहता है।



5. राजनीतिक विकास तो कभी-कभी स्थैतिक भी हो सकता है, लेकिन राजनीतिक आधुनिकीकरण कभी स्थैतिक नहीं होता।
6. राजनीतिक विकास, विकास प्रक्रिया से स्वतन्त्र होता है, जबकि राजनीतिक आधुनिकीकरण की प्रक्रिया से स्वतन्त्र न होकर उसका एक महत्वपूर्ण भाग होता है।
7. राजनीतिक विकास, राजनीतिक प्रक्रियाओं और राजनीति का संस्थापन है, जबकि राजनीतिक आधुनिकीकरण का सम्बन्ध अक्रियाकतर राजनीतिक संरचनाओं से ही रहता है, संस्थाओं से नहीं।

उपरोक्त विवेचन के बाद कहा जा सकता है कि राजनीतिक आधुनिकीकरण बुद्धिसंगतता, विभिन्नीकरण, सहभाग तथा सांस्कृतिक व सामाजिक परिवर्तन से सम्बन्धित है, जबकि राजनीतिक विकास राज व्यवस्था के औपचारिक स्वरूप व क्षमता पर अधिक जोर देता है। राजनीतिक आधुनिकीकरण में मुख्यतः औद्योगिकरण के द्वारा सामाजिक परिवर्तन शामिल किया जाता है, जबकि राजनीतिक विकास का आधार संस्थाकरण ही होता है, जिसके कारण राज-व्यवस्थाएं जनता की मांगों को पूरा करती है, संक्षेप में यह कहा जा सकता है कि राजनीतिक विकास, राजनीतिक आधुनिकीकरण तथा राजनीतिक संस्थापन का योग है। जहां राजनीतिक विकास की धारणा विकसित व व्यापक है, वहीं राजनीतिक आधुनिकीकरण की अवधारणा सीमित है। जहां विकास की प्रक्रिया से राजनीतिक विकास स्वायत्त होता है, वहीं राजनीतिक आधुनिकीकरण, आधुनिकीकरण चिपका रहता है। अतः निःसन्देह ही राजनीतिक विकास राजनीतिक आधुनिकीकरण की अवधारणा से अधिक व्यापक है।

9.3.6 राजनीतिक आधुनिकीकरण की अवधारणा महत्त्व (Importance of the concept of political modernization)

1. **अधिक यथार्थवादी अध्ययन के लिए उपयोगी :** राजनीतिक आधुनिकीकरण राजनीतिक व्यवस्थाओं को सामर्थता प्रभाविकता तथा योग्यता को बढ़ावा है। राजनीतिक आधुनिकीकरण लाने से राजनीतिक व्यवस्थाएं सफल होंगी अथवा असफल होंगी, इसका अध्ययन राजनीतिक आधुनिकीकरण के आधार पर अधिक उपयोगी एवं यथार्थवादी बन जाता है।
2. **राजनीतिक व्यवस्था की क्षमता को मापने के लिए उपयोगी :** राजनीतिक व्यवस्थाओं की क्षमता को मापने के लिए आधुनिकीकरण के अनेक वर्गों का प्रयोग किया जा सकता है। राजनीतिक व्यवस्था पर आधुनिकीकरण के विभिन्न पहलुओं शहरीकरण, उद्योगीकरण, लोकतंत्रीकरण, शैक्षणिकता एवं सहभागिता में आने वाले परिवर्तनों को गहरा प्रभाव पड़ता है। अतः राजनीतिक आधुनिकीकरण के आधार पर राजनीतिक व्यवस्था की क्षमता को समझने के लिए उपयोगी है।



3. **राजनीतिक परिवर्तनों को समझने के लिए सहायक** : आधुनिकीकरण परिवर्तन का दूसरा नाम है। राजनीतिक आधुनिकीकरण के आधार पर राजनीतिक संस्थाओं और राजनीतिक मूल्यों का जो परिवर्तन होता है हम इसको गहराई तक अध्ययन कर सकते हैं ।
4. **राजनीतिक व्यवस्था की समस्याओं को समझना सरल**: राजनीतिक आधुनिकीकरण अनेक समस्याओं राष्ट्रीय अभिज्ञान , सत्ता औचित्यपूर्णता , सहभागिता , एकीकरण , वितरण , संचालन इत्यादि को समझना सरल होता है । अन्य शब्दों में – राजनीतिक आधुनिकीकरण राजनीतिक व्यवस्था की समस्याओं के कारणों , तथ्यों एवं शक्तियों को जानने की सहायता करता है ।
5. **राजनीतिक संस्कृति का ज्ञान**: आधुनिकीकरण राजनीतिक संस्कृति को विकसित करने में सहायक है ।
6. **राजनीतिक सहभागिता में वृद्धि करना**: त्झझ राजनीतिक आधुनिकीकरण की प्रक्रिया राजनीतिक सहभागिता को विकसित करती है ।
7. **कार्यात्मक विशेषीकरण को बढ़ावा**: राजनीतिक आधुनिकीकरण राजनीतिक व्यवस्था में विभेदीकरण सुस्पष्टता तथा राजनीतिक आधुनिकीकरण एवं तुलनात्मक राजनीतिक का आधुनिक दृष्टिकोण कार्यात्मक विशेषीकरण को बढ़ावा देता है ।
8. **विनियामक भूमिका**: राजनीतिक आधुनिकीकरण की प्रक्रिया राजनीतिक व्यवस्था के लिए विनियामक भूमिका निभाती है ।

9.3.7 राजनीतिक आधुनिकीकरण की अवधारणा की आलोचना (Criticism of the concept of political modernization)

- 1 **राजनीति विज्ञान को आधित विषय बनाने का प्रयास (An attempt to make Political Science as Dependent Subject** : राजनीतिक आधुनिकीकरण की अवधारणा राजनीतिक विकास की अवधारणा की भांति राजनीति विज्ञान को अन्य सामाजिक विज्ञानों – समाजशास्त्र , अर्थशास्त्र , मनीविज्ञान इत्यादि पर इतना निर्भर कर देती है कि इसको स्वतंत्र विषय बनाने की अपेक्षा आश्रित विषय बना देती है ।
2. **राजनीतिक व्यवस्था को आश्रित चर बनाना (To Make Political system as Dependent Variable)** : डेविड ईस्टन , डेविड एप्टर , एडवर्ड ए . शिल्स इत्यादि राजवैज्ञानिकों पर टालकॉट पार्सन्स , राबर्ट के मर्टन , ए . लेबी . जैसे समाजशास्त्रियों का इतना अधिक प्रभाव पड़ा कि इन्होंने राजनीतिक व्यवस्था के स्वतंत्र स्तर को आश्रित चर के स्तर में बदल दिया , क्योंकि इन विद्वानों में एक ऐसी प्रवृत्ति का विकास हुआ जिसके कारण इन्होंने इस बात पर बल दिया कि राजनीतिक व्यवस्था



की सीमाओं का निर्धारण सामाजिक , आर्थिक , सांस्कृतिक इत्यादि कारणों द्वारा किया जाता है । राजनीतिक व्यवस्था का मुख्य कार्य सामाजिक , आर्थिक , सांस्कृतिक इत्यादि शक्तियों के प्रभाव के कारण उत्पन्न निवेशों को निर्गतों में रूपांतरित करना है ।

3. **सर्वव्यापी प्रतिमान का अभाव (Absence of Universal Pattem)** : राजनीतिक आधुनिकीकरण का कोई सर्वव्यापी प्रतिमान नहीं है । राजनीतिक व्यवस्था में कौन – सा प्रतिमान पहले आता है , यह निश्चित नहीं है । कुछेक राजनीतिक व्यवस्थाओं में राजनीतिक सहभागिता पहले आती है और कुछ अन्य राजनीतिक व्यवस्थाओं में सत्ता की बुद्धि संगतता पहले है । कुछ विश्वव्यापी प्रतिमान का अभाव है ।
4. **राजनीतिक आधुनिकी के लक्षणों का मूल्यांकन करने में कठिनाई (Difficulty in Evaluation of Characteristics of Political Modernisation)** : राजनीतिक आधुनिकीकरण के लक्षणों राष्ट्रीय अभिज्ञान , सत्ता की बुद्धिसंगतता सहभागिता , संस्थाओं का विशेषीकरण एवं विभिन्नीकरण इत्यादि का मूल्यांकन किस मापदंड के आधार पर किया जाये ? यह एक कठिन समस्या है । यदि राजनीतिक सहभागिता के आधार पर राजनीतिक व्यवस्था की आधुनिकीकरणशीलता का 1 का अनुमान लगाया जाये तो हमारे निष्कर्ष गलत हो सकते हैं । उदाहरणार्थ संयुक्त राज्य अमेरिका में मतदान लगभग 60 : होता है जबकि श्रीलंका में 1977 के आम निर्वाचन में 85.5 : मतदान हुआ था । क्या मतदान के आधार पर हम यह अनुमान लगा सकते हैं कि संयुक्त राज्य अमेरिका ।। की अपेक्षाकृत श्रीलंका अधिक आधुनिकीकरणशील , लोकतंत्र है ।

यद्यपि राजनीतिक आधुनिकीकरण की अवधारणा ने राजनीति को सामाजिक शक्तियों की दासी बना दिया तथा राजनीति विज्ञान को एक स्वतंत्र विषय से आश्रित विषय का स्थान प्रदान किया है । परन्तु इसके बावजूद भी राजनीतिक आधुनिकीकरण राजनीतिक व्यवस्थाओं के विश्लेषण का एक नया वैज्ञानिक दृष्टिकोण है ।

9.4 पाठ के आगे का मुख्य भाग (Further main body of the text)

9.4.1 राजनीतिक भूमण्डलीकरण (Political Globalization)

20वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में अन्तर्राष्ट्रीय राजनीतिक और आर्थिक व्यवस्था में आमूलचूल परिवर्तन का दौर प्रारम्भ हुआ । शीतयुद्ध के अन्त, सोवियत संघ के विघटन, पूर्वी यूरोप से साम्यवाद के अवसान, जर्मनी के एकीकरण और उदीयमान एक ध्रुवीय विश्व व्यवस्था ने विश्व को 'नई विश्व व्यवस्था' की ओर धकेला । 'नई विश्व व्यवस्था' अवधारणा को संबल प्रदान किया विश्व अर्थव्यवस्था में दृश्य-अदृश्य आने वाले बदलावों ने । 'नई अन्तर्राष्ट्रीय आर्थिक व्यवस्था' की मांग की जाने लगी । भूमण्डलीकरण, आर्थिक उदारीकरण, निजीकरण, बाजारोन्मुख अर्थव्यवस्था, निगमीकरण, प्रतिस्पर्धात्मक और खुली अर्थव्यवस्था जैसे नारे गूँजने लगे । अन्तर्राष्ट्रीय स्वरूप की



वित्तीय और व्यापारिक संस्थाओं का महत्व बढ़ने लगा । अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष और विश्व व्यापार संगठन जैसे निकाय अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों के निर्धारण में प्रभावी भूमिका का निर्वाह करने लगे ।

9.4.2 भूमण्डलीकरण: ऐतिहासिक पृष्ठभूमि(Historical background of globalization)

भूमण्डलीकरण का एक दौर आज से एक शतक पहले भी आया था । यह चरण 1870 के आस-पास शुरू होकर 1914 के आते-आते अचानक रुक गया था । तब की विश्व अर्थव्यवस्था कई मायनों में आज की अन्तर्राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था से मिलती है । 19वीं शताब्दी के अन्त में भी अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार के माध्यम से विश्व अर्थव्यवस्था आज की तरह ही संगठित हुई थी । आज ओ.ई.सी.डी. में शामिल 16 प्रमुख औद्योगिक देशों का सकल घरेलू उत्पाद वर्ष 1900 के 18.2 प्रतिशत के मुकाबले 1913 में 21.2 प्रतिशत हो गया था । हालांकि उन दिनों व्यापार कर आज के मुकाबले काफी ऊंचे थे । अन्तर्राष्ट्रीय निवेश की भी यही कहानी थी । 1913 में विश्व उत्पाद का 9 प्रतिशत हिस्सा निवेश में लगा हुआ था । स्थिर कीमतों पर 1914 में यह निवेश 1980 में लगे निवेश का 45 प्रतिशत हिस्सा था । अन्तर्राष्ट्रीय वित्त बाजार की स्थितियां भी एक जैसी थीं । उन दिनों दो देशों के बीच सामान पूंजी और श्रम के आवागमन पर लगभग कोई रोक नहीं थी । भाप के जहाजों, रेलों और तारों के द्वारा यातायात तथा संचार में भारी बदलाव आए थे । उद्योगों में नई-नई प्रबन्ध और उत्पादन तकनीकें अपनाई जा रही थीं । आज के अमेरिकी प्रभुत्व के समान उन दिनों ब्रिटेन का विश्व पर राजनीतिक और आर्थिक वर्चस्व बना हुआ था तथा पाउण्ड स्टर्लिंग अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा की भूमिका निभा रहा था । उन दिनों बड़े पैमाने पर श्रमिकों का अन्तर्राष्ट्रीय प्रवाह हुआ । सन् 1830 से लेकर अगले 50 वर्षों तक 5 करोड़ भारतीय और चीनी अमेरिका, कैरेबियन, दक्षिण अफ्रीका, दक्षिण-पूर्व एशिया और दूर-दराज के देशों में खानों, खेतों और निर्माण कार्यों में इकरारनामों के अन्तर्गत काम करने पहुंचे । इसके बाद 1870 और 1914 के दौरान यूरोप से बड़े पैमाने पर अन्तर्राष्ट्रीय श्रमिकों का अमेरिका, कनाडा, आस्ट्रेलिया, न्यूजीलैण्ड, दक्षिण अफ्रीका, अर्जेंटीना और ब्राजील की ओर प्रवास हुआ । द्वितीय विश्वयुद्धोत्तर अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार की गतिविधियां ब्रेटनवुड्स व्यवस्था से संचालित होने लगीं । जुलाई, 1944 में चालीस देशों के प्रतिनिधि नई अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा प्रणाली के निर्माण के लिए न्यू हैम्पशायर के ब्रेटनवुड्स नामक स्थान पर एकत्र हुए थे । अधिकांश देशों का मत था कि पुरानी मौद्रिक व्यवस्था जो मुख्यतया बाजार की ताकतों पर निर्भर थी, अब अप्रासंगिक साबित हो चुकी है और आगे सभी सरकारों को मिल जुलकर अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा व्यवस्था के प्रबन्धन की जिम्मेदारी लेनी होगी । संयुक्त राज्य अमेरिका, जो उस दौर में प्रमुख आर्थिक एवं सैनिक शक्ति के रूप में अवतरित हुआ था, ने युद्धोत्तर काल में नई मौद्रिक व्यवस्था स्थापित करने की प्राथमिक जिम्मेदारी ली थी । नई मौद्रिक व्यवस्था का उद्देश्य आर्थिक राष्ट्रवाद की रोकथाम तथा बढ़ते हुए अन्तर्राष्ट्रीय मेलजोल के सन्दर्भ में मुक्त व्यापार को प्रोत्साहित करना था ।



यह संकल्पना की गई कि एक उदार आर्थिक प्रणाली, जो अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग पर आधारित होगी, स्थायी एवं टिकाऊ विश्व शान्ति की गारण्टी दे सकती है। संयुक्त राज्य अमेरिका और ग्रेट ब्रिटेन द्वारा प्रवर्तित अन्तर्राष्ट्रीय मौद्रिक प्रबन्धन की नई प्रणाली की योजना विश्व की पहली सामूहिक अन्तर्राष्ट्रीय मौद्रिक प्रणाली बन गई। इससे अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार के संवर्द्धन, आर्थिक विकास और विश्व के विकसित बाजार अर्थव्यवस्थाओं के बीच राजनीतिक सामंजस्य का मार्ग प्रशस्त हुआ। उत्तर-ब्रेटनवुड्स युग में विश्व अर्थव्यवस्था के क्षेत्र में दो महत्वपूर्ण घटनाएं घटीं। क्षेत्रीय आर्थिक उपव्यवस्थाओं का विकास तथा बहुराष्ट्रीय निगमों का विस्तार। क्षेत्रीय आर्थिक क्रियाकलापों की शुरुआत पूंजीवादी औद्योगिक विश्व के केन्द्र अर्थात् पश्चिमी यूरोप के देशों में हुई थी। 1990 के दशक में यूरोपीय अर्थव्यवस्था साझे बाजार से शुरू होकर यूरोपियन संघ के रूप में परिवर्तित हो गई। प्रशान्त क्षेत्र और दक्षिण-पूर्व एशिया में ऐसी ही आर्थिक व्यवस्थाएं प्रकट हुईं। न्यूयार्क, टोक्यो और लन्दन में वित्तीय एवं प्रतिभूति बाजारों का उद्भव क्षेत्रीय एवं अन्तर क्षेत्रीय गठबन्धन के द्वारा भूमण्डलीकरण के लक्षण हैं। बहुराष्ट्रीय निगम भूमण्डलीकरण के कारण और प्रभाव दोनों हैं। विश्व बाजार एवं अन्तर्राष्ट्रीय आर्थिक तन्त्र के उदय ने अन्तर्राष्ट्रीय फर्मों के लिए अनुकूल वातावरण तैयार किया। 27 वर्षों बाद 15 अगस्त, 1971 को अमरीकी राष्ट्रपति निक्सन ने ब्रेटनवुड्स व्यवस्था के अन्त की घोषणा कर दी। साथ ही उन्होंने यह भी कहा कि संयुक्त राज्य अमेरिका अब अन्तर्राष्ट्रीय मौद्रिक व्यवस्था के नियमों एवं प्रक्रियाओं का अनुपालन नहीं करेगा। तेल संकट, बाजार व्यवस्था का बढ़ता असन्तुलन और औद्योगिक देशों की विकास दर में ह्रास वृत्ति ही वे कारण हैं, जिनसे 1990 के दशक में भूमण्डलीकरण की शुरुआत हुई।

9.4.3 भूमण्डलीकरण या वैश्वीकरण का अभिप्राय (The meaning of globalization)

भूमण्डलीकरण शब्द आज अन्तर्राष्ट्रीय बाजार में गुंजायमान है। यह शब्द व्यापार अवसरों की जीवन्तता एवं उनके विस्तार का द्योतक है। भूमण्डलीकरण वस्तुतः व्यापारिक क्रिया-कलापों, विशेषकर विपणन सम्बन्धी क्रियाओं का अन्तर्राष्ट्रीयकरण करना है जिसमें संपूर्ण विश्व बाजार को एक ही क्षेत्र के रूप में देखा जाता है। दूसरे शब्दों में, भूमण्डलीकरण वह प्रक्रिया है जिसमें विश्व बाजारों के मध्य पारस्परिक निर्भरता उत्पन्न होती है और व्यापार देश की सीमाओं में प्रतिबन्धित न रहकर विश्व व्यापार में निहित तुलनात्मक लागत लाभ दशाओं का विदोहन करने की दिशा में अग्रसर होता है। भूमण्डलीकरण का अर्थ पूर्ण रूप से पारस्परिक सम्बद्ध विश्व बाजार न होकर विश्व के विभिन्न देशों में व्यापार के उदारीकरण, पूंजी निवेश तथा सेवाओं की प्रचुरता के कारण बाजारों में सम्बन्ध करना भर होता है। भूमण्डलीकरण के इस अर्थ में इस व्यवस्था को 'मुक्त बाजार पूंजीवाद' का पर्याय मान लिया जाता है। डॉ. बिमल जालान के अनुसार— "भूमण्डलीकरण शब्द का प्रयोग कई तरह से हुआ है। एक अर्थ तो शाब्दिक है कि अब राष्ट्रों के बीच भौगोलिक दूरी बेमानी हो चुकी है। दुनिया काफी छोटी हो चुकी है और कोई भी देश अपना नुकसान करके ही शेष विश्व से खुद को अलग-थलग रख सकता है। भूमण्डलीकरण का दूसरा अर्थ ठीक



उल्टा निकाला जा रहा है । इसके अनुसार यह देशी हितों की जगह दूसरे देशों और बहुराष्ट्रीय निगमों के हितों को ऊपर रखने वाले नीतिगत बदलाव का नाम है ।”

भूमण्डलीकरण (वैश्वीकरण) एकरूपता एवं समरूपता की वह प्रक्रिया है जिसमें संपूर्ण विश्व सिमट कर एक हो जाता है । एक देश की सीमा से बाहर अन्य देशों में वस्तुओं एवं सेवाओं का लेन-देन करने वाले अन्तर्राष्ट्रीय निगमों अथवा बहुराष्ट्रीय निगमों के साथ देश के उद्योगों की सम्बद्धता भूमण्डलीकरण है । कतिपय विद्वानों के अनुसार पूरी दुनिया को एक भूमण्डलीय गांव के रूप में मानने की अवधारणा ही वैश्वीकरण अथवा भूमण्डलीकरण है ।

सामान्यतया इसमें निम्नांकित तत्व सम्मिलित होते हैं:

1. संसार के विभिन्न देशों में बिना किसी अवरोध के विभिन्न वस्तुओं का आदान-प्रदान सम्भव बनाने के लिए व्यापार अवरोधों को कम करना ।
2. आधुनिक प्रौद्योगिकी का निर्बाध प्रवाह सम्भव बनाने हेतु उपयुक्त वातावरण बनाना ।
3. विभिन्न राष्ट्रों में पूंजी का स्वतन्त्र प्रवाह सम्भव बनाने हेतु आवश्यक परिस्थितियां पैदा करना ।
4. संसार के विभिन्न देशों में श्रम का निर्बाध प्रवाह सम्भव बनाना ।

संक्षेप में भूमण्डलीकरण राष्ट्रों की राजनीतिक सीमाओं के आर-पार आर्थिक लेन-देन की प्रक्रियाओं और उनके प्रबन्धन का प्रवाह है । विश्व अर्थव्यवस्था में आया खुलापन, आपसी जुड़ाव और परस्पर निर्भरता के फैलाव को भूमण्डलीकरण कहा जाता है । भूमण्डलीकरण से अभिप्राय है उन्मुक्त बाजार एवं प्रतिस्पर्द्धा राष्ट्रिय अर्थव्यवस्थाओं का विश्व अर्थव्यवस्था के साथ समायोजन राष्ट्रिय बाजारों को अंतर्राष्ट्रीय बाजारों में परिवर्तित करना दूसरे शब्दों में, इसे राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था का वैश्विक अर्थव्यवस्था के साथ एकीकरण की प्रक्रिया कहा जा सकता है । उन्मुक्त व्यापार की इस व्यवस्था के पीछे सोच यह है कि अमरीका कम्प्यूटर जैसे माल उत्पादित करे जो उसके लिए सुलभ है और भारत चावल जैसे माल उत्पादित करे जो उसके लिए सुलभ है । भारत चावल निर्यात करके कम्प्यूटर आयात करेगा जिससे दोनों देशों को लाभ होगा ।

मानव विकास रिपोर्ट, 2000 ने भूमण्डलीकरण को निम्नांकित चार विशेषताओं द्वारा परिभाषित किया है:

नये बाजारः—विदेशी विनिमय और पूंजी बाजार वैश्वीय स्तर पर जुड़े हुए हैं और ये बाजार चौबीसों घण्टे काम करते हैं । इनके लिए भौतिक दूरियां कोई अर्थ नहीं रखतीं ।

नये उपकरणः—आज के विश्व में लोगों के लिए कई नए उपकरण (ज्ववसे) आ गए हैं । इनमें इन्टरनेट लिंक्स, सेल्यूलर फोन्स और मीडिया तन्त्र सम्मिलित हैं ।



नये एक्टर या कर्ता: वैश्वीकरण की प्रक्रिया ऐसी है जिसमें कार्यों का सम्पादन करने के लिए कई कर्ता हैं। इन कर्ताओं में विश्व व्यापार संगठन, गैर सरकारी संगठन, रेडक्रॉस आदि सम्मिलित हैं।

नये नियम:—अब सारे काम संविदा के माध्यम से होते हैं। बहुराष्ट्रीय कम्पनियां विश्व भर के राष्ट्र-राज्यों के साथ सीधा व्यापार समझौता करते हैं। हमारे देश में अमेरिकी बहुराष्ट्रीय एनरोन कम्पनी ने महाराष्ट्र सरकार के साथ बिजली की आपूर्ति के लिए समझौता किया था। इसी तरह के समझौते अन्य देशों के साथ भी होने हैं। ये कतिपय नये नियम हैं, जो वैश्वीकरण के आर्थिक और सांस्कृतिक, कार्यक्रमों को लागू करने में सहायता देते हैं।

मानव विकास की यह रिपोर्ट बताती है कि अपने नये अवतार में वैश्वीकरण अधिक शक्तिशाली बन गया है। इसे अधिक स्पष्ट करते हुए रिपोर्ट कहती है दृ वैश्वीय बाजार, वैश्वीय तकनीकी तन्त्र, वैश्वीय विचार और वैश्वीय सुदृढ़ता, यह आशा की जा सकती है, विश्व भर के लोगों को समृद्धि देंगे। लोगों के बीच की पारस्परिकता और अन्तर्निर्भरता में यह आशा की जाती है कि लोग साझा मूल्यों में विश्वास स्थापित करेंगे और दुनिया भर के लोगों का विकास होगा।

9.4.4 भूमण्डलीकरण: विशेषताएं (Features of globalization)

आज जिस 'भूमण्डलीकरण' की हम चर्चा करते हैं उसका उद्भव लगभग 25 वर्ष पूर्व बहुराष्ट्रीय निगमों के प्रहारों और अनुदारवादी आन्दोलन में मिलता है जिसने पश्चिमी दुनिया को अपने शिकंजे में जकड़ लिया था और जिसके प्रणेता ब्रिटेन की थैचर, जर्मनी के कोहल और अमरीका के रोनाल्ड रीगन थे। बहुराष्ट्रीय निगम और बैंक पूरी दुनिया में अपने चरण बढ़ाने लगे और पूंजी एवं मुद्रा पर लगे नियन्त्रणों को तोड़ते हुए विनिवेश और व्यापार के लिए मुक्त द्वार का नारा बुलन्द करने लगे। उनका तर्क था कि मुक्त बाजार से विकास दर में वृद्धि होगी, विकास से निर्धनता में कमी आएगी और निर्धनता में कमी लोकतन्त्र के विकास एवं सुदृढ़ता में सहायक होगी। उन्होंने 'विश्व व्यापार संगठन' का निर्माण किया और 'बाजारोन्मुख मुक्त अर्थव्यवस्था' को आगे बढ़ाने के लिए अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष एवं विश्व बैंक की भूमिका में इस प्रकार बदलाव की अपेक्षा की ताकि वे 'वाशिंगटन सर्वानुमति' को आगे बढ़ा सकें। भूमण्डलीकरण की कुछ ऐसी विशेषताएं जिससे ऐसा लगता है कि, एक नए प्रकार की अन्तर्राष्ट्रीय राजनीतिक, आर्थिक और सामाजिक व्यवस्था की स्थापना की तरफ हम प्रवृत्त हो रहे हैं। ये विशेषताएं इस प्रकार हैं:—

1. यातायात और संचार साधनों में हुए क्रान्तिकारी विकास के चलते भौगोलिक दूरियां सिमट गई हैं। अब न केवल व्यापार, तकनीकी एवं सेवा क्षेत्र, बल्कि लोगों का भी सीमा पार आवागमन सस्ता एवं सुगम हो गया है। कम्प्यूटर और इण्टरनेट भी तेजी से विश्व को जोड़ रहा है।
2. इलेक्ट्रॉनिक मीडिया की दूर दराज पहुंच ने एक ग्लोबल संस्कृति की स्थापना कर दी है। जीन्स, टीशर्ट, फास्ट-फूड, पाप संगीत, हॉलीवुड फिल्म एवं सैटेलाइट टेलीविजन की संस्कृति आज के हर



नवयुवक की संस्कृति है, चाहे वह दुनिया के किसी भी कोने से हो। उपभोक्तावाद भी आज एक तरह से समूचे विश्व की संस्कृति बन गया है। इतना ही नहीं, भ्रष्टाचार एवं अपराध करने के तरीके भी अब सारे विश्व में एक से हो गए हैं।

3. श्रम बाजार विश्वव्यापी हो गया है। वर्ष 1965 में लगभग 7 करोड़ 50 लाख लोग एक देश से दूसरे देश में रोजगार की दृष्टि से प्रवासित हुए थे जिनकी संख्या वर्ष 1999 तक बढ़कर 12 करोड़ हो गई।
4. श्रम बाजार की मांगों को पूरा करने के कई व्यवस्थित माध्यम तैयार हो गए हैं। श्रम निर्यातक देशों में ऐसे कई ब्रोकर एवं एजेंट सक्रिय हैं, जो वैध एवं अवैध दोनों तरीकों से लोगों को विदेशों में काम दिलवाते हैं। श्रम आयातक देशों में पुराने प्रवासियों के ऐसे नेटवर्क हैं जो नए प्रवासियों का दिशा निर्देश तथा इनकी हर सम्भव सहायता करते हैं।
5. शिक्षा का भूमण्डलीकरण हो गया है। अमरीका जैसे औद्योगिक देशों में उच्च शिक्षा प्राप्त करने जो विदेशी विद्यार्थी जाते हैं, उनमें से अधिकांश वहीं रह जाते हैं। दूसरी तरफ आज अनेक विकासशील देशों के शिक्षा संस्थानों के पाठ्यक्रम भी विश्वस्तरीय हो गए हैं जिससे यहां शिक्षा प्राप्त कर रहे विद्यार्थी विश्व में कहीं भी रोजगार पा सकते हैं।
6. ब्रेनड्रेन से शुरू हुई पेशेवरों की आवाजाही ने काफी जोर पकड़ लिया है। आज वैज्ञानिक, डॉक्टर, इंजीनियर और शिक्षाविद् तो विदेशों की तरफ खिंच ही रहे हैं, साथ ही वकील, वास्तुविद्, एकाउण्टेंट, प्रबन्धक, बैंकर एवं कम्प्यूटर विशेषज्ञ आदि का विदेश आवागमन भी अब पूंजी प्रवाह की तरह लचीला हो गया है।
7. बहुराष्ट्रीय कम्पनियां, जिनके द्वारा पहले उत्पादित वस्तुएं, सेवा, तकनीक, पूंजी आदि की आवाजाही होती थी, आज अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर रोजगार प्रदायक की भूमिका निभा रहे हैं। भिन्न-भिन्न देशों से विशेषज्ञों, प्रबन्धकों, कुशल-अर्द्धकुशल श्रमिकों आदि की नियुक्ति इन निगमों द्वारा की जाती है। इन नियुक्त कर्मचारियों को विश्व भर में फैले निगम की विभिन्न शाखाओं में नियुक्त किया जाता है। इस तरह यह प्रक्रिया भी श्रम प्रवाह को बढ़ावा देती है। यू.एन.डी.पी. की "ह्यूमैन डेवलपमेंट रिपोर्ट" में भूमण्डलीकरण के तीन कर्ताओं का उल्लेख किया गया: प्रथम: 'विश्व व्यापार संगठन' जो सदस्य देशों की राष्ट्रीय सरकारों के ऊपर अपना वर्चस्व एवं प्रभुता रखता है। द्वितीय: बहुराष्ट्रीय कम्पनियां जिनकी आर्थिक क्षमता अनेक राष्ट्र राज्यों की कुल सम्पत्ति से ज्यादा है तथा तृतीय: अन्तर्राष्ट्रीय गैर-सरकारी संगठन, जिनका तानाबाना समूचे विश्व में फैला हुआ है। ये तीनों मिलकर भूमण्डलीकरण को अपनीइच्छित दिशा देते हैं।

9.4.5 भूमण्डलीकरण के लाभ(Benefits of globalization):—



सितम्बर, 2000 में विश्व के नेताओं ने संयुक्त राष्ट्र संघ के मंच से अपनीसहस्राब्दि घोषणा में जोर दिया था कि वैश्वीकरण (भूमण्डलीकरण) को सुनिश्चित करना सबको शक्तिशाली बनाने की दिशा में एक ठोस कदम है। महासचिव कोफी अन्नान ने “हम दुनिया के लोग : 21वीं शताब्दी में संयुक्त राष्ट्र की भूमिका” शीर्षक अपनीसहस्राब्दि रिपोर्ट में कहा था कि, “यदि वैश्वीकरण को सफल होना है तो जनता को यह महसूस होना चाहिए कि वह भी इसमें शामिल है।” महासचिव ने कहा कि वैश्वीकरण के लाभ स्पष्ट हैं— अधिक तेज गति से विकास, रहन—सहन का उच्चतर स्तर, देशों और व्यक्तियों के लिए नए—नए अवसर। अपनीतरफ से संयुक्त राष्ट्र को “यह सुनिश्चित करना होगा कि वैश्वीकरण से केवल कुछ को नहीं, बल्कि सबको लाभ मिले, अवसर कुछ विशेष लोगों को ही नहीं बल्कि प्रत्येक मानव को प्रत्येक जगह मिले।”

अन्नान ने कहा कि बहुराष्ट्रीय कम्पनियों को वैश्विक ‘कारपोरेट नागरिकता’ कि अवधारणा से नियंत्रित होना चाहिए और जहां भी वे कार्यरत हैं वहां उनकी कार्यप्रणाली अच्छी होनी चाहिए। न्यायोचित श्रम मानदण्ड प्रवर्तित किए जाएं मानवाधिकारों के प्रति आदर बरता जाए और पर्यावरण की रक्षा की जाए।

भूमण्डलीकरण की प्रक्रिया के तीव्र विस्तार ने विश्व अर्थव्यवस्था में महत्वपूर्ण बदलाव ला दिए हैं। आज विश्व उत्पादन का एक बड़ा हिस्सा अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में सहयोगी फर्मों के बीच हो रहा है। 1970—90 के दशकों के मध्य तक विश्व सकल घरेलू उत्पाद में विश्व व्यापार का हिस्सा 12 प्रतिशत से बढ़कर 18 प्रतिशत हो गया। अन्तर्राष्ट्रीय निवेश के प्रतिशत में भी बढ़ोतरी हुई। 1980—96 के बीच प्रत्यक्ष विदेशी निवेश 4.8 प्रतिशत से बढ़कर 10.6 प्रतिशत हो गया। इसके अतिरिक्त अन्तर्राष्ट्रीय वित्त क्षेत्र का भी विकास हुआ। व्यापार और निवेश क्षेत्र पर वित्तीय क्षेत्र हावी हो चुका है। विदेशी मुद्रा बाजार का विस्तार भी चौंकाने वाला है। 1996 के आंकड़े बताते हैं कि इस बाजार में प्रतिदिन 1200 अरब डॉलर का लेन—देन होता है, जबकि 1983 में यह आंकड़ा 60 अरब डॉलर था। भूमण्डलीकरण की यह प्रक्रिया अन्तर्राष्ट्रीय आर्थिक लेनदेन पर लगी रोक के हटने से शुरू हुई। विश्व अर्थव्यवस्था में कई तरह की रुकावटें दूर होने से भूमण्डलीकरण की प्रक्रिया के लिए रास्ता साफ हुआ है, व्यापार के क्षेत्र में खुलापन आया है और विदेशी निवेश के प्रति उदारता बढ़ी है। साथ ही वित्तीय क्षेत्र में भी उदार नीतियां अपनाई जा रही हैं। जेट विमान, कम्प्यूटर, उपग्रह, इण्टरनेट सूचना तकनीक की बजह से देशकाल की सीमाएं खत्म हो गई हैं। औद्योगिक संगठनों में नई प्रबन्ध व्यवस्थाओं के विकास ने भी भूमण्डलीकरण की प्रक्रिया को गति प्रदान की है। इसके अतिरिक्त संयुक्त राज्य अमेरिका की राजनीतिक प्रभुता (वर्चस्व) ने भी भूमण्डलीकरण को बल प्रदान किया है, क्योंकि भूमण्डलीकरण की प्रक्रिया के लिए एक महाशक्ति का प्रभुत्व जरूरी है जिसकी मुद्रा से अन्तर्राष्ट्रीय बाजार का संचालन होता है। यह भूमिका अमरीकी डॉलर निभा रहा है। “राष्ट्रीय सम्प्रभुताएं एक तरह से सीमाविहीन होने लगी हैं। विभिन्न देशों की सीमाओं का अब सिर्फ भौगोलिक महत्व रह गया है। जब दुनिया ही सिकुड़ कर एक गांव बन गई हो तो आप यह उम्मीद कैसे कर सकते हैं कि गांव के किसी एक घर में



आग लगे तो दूसरे घर उससे चिन्तित नहीं होंगे । जैसे दुनिया सिकुड़ी है वैसे ही सम्प्रभुता, स्वायत्तता और स्वतन्त्रता की परिभाषाएं भी सिकुड़ी हैं । संचार क्रान्ति और भूमण्डलीकरण ने विभिन्न जातीयताओं, नस्लों और अस्मिताओं को एक नए तरह की गतिशीलता और सतर्कता प्रदान की है।”

9.4.6 भूमण्डलीकरण और विकासशील देश (Globalization and Developing Countries)

संयुक्त राष्ट्र महासचिव कोफी अन्नान ने संयुक्त राष्ट्र सहस्राब्दि रिपोर्ट (सितम्बर, 2000) में स्पष्ट कहा है कि वैश्वीकरण के प्रतिकूल प्रतिक्रियाएं शुरू हो गई हैं, क्योंकि ये लाभ बहुत असमान रूप से वितरित हैं क्योंकि वैश्विक बाजार को अभी तक सहभागी सामाजिक लक्ष्यों पर आधारित नियमों के अधीन नहीं किया गया है । यह सर्वविदित है कि जहां पिछले 25 वर्षों में भूमण्डलीकरण की प्रक्रिया तेज हुई है वहीं अन्तर्राष्ट्रीय श्रम प्रवास में स्पष्ट कमी आई है । भूमण्डलीकरण का संस्थागत ढांचा भेदभाव से भरा है । एक तरफ तो यह प्रावधान है कि राष्ट्रों की सीमाएं व्यापार या पूंजी प्रवाह में बाधक न बनें, दूसरी ओर तकनीक या श्रम प्रवाह की राह में अड़चनें डाली जा रही हैं । यह उम्मीद की जाती है कि विकासशील देश अपने बाजार अमीर देशों के लिए खोल दें तथा पूंजी का निवेश अपने यहां होने दें, लेकिन बदले में विकसित देशों से तकनीक तथा निर्विघ्न श्रम प्रवाह की मांग न करें । आज भी विकसित देशों में प्रवासियों के प्रति नकारात्मक रवैया वहां की राजनीतिक और सामाजिक सोच में गहरे बैठा है । ऐसा माना जाता है कि प्रवासी वहां के मूल निवासियों के राजनीतिक वर्चस्व में संघर्ष लगा देंगे या फिर सामाजिक और सांस्कृतिक एकता पर हमला कर देंगे । कुछ ऐसी मान्यताएं भी हैं जिनका ठोस आधार नहीं है, लेकिन नस्लवाद की राजनीति करने वालों को वे एक हथियार पकड़ा देती हैं, जैसे कि प्रवासी मूल निवासियों से रोजगार के अवसर छीन लेंगे या फिर कल्याण योजनाओं में उनको भी हिस्सेदारी देनी पड़ेगी, आदि । इसके अलावा प्रवास सम्बन्धी कानून भी प्रतिबन्धों से भरे पड़े हैं । दूतावास भी प्रवास पर कई तरह की रोक लगाते हैं । भूमण्डलीकरण का प्रसार अगर विकसित देशों और विकासशील देशों के बीच आय की खाई को पाटने का काम करे तो निश्चित तौर पर प्रवास का दबाव कम रहेगा । दूसरी ओर, यदि यह प्रक्रिया आय की असमानता को बढ़ाएगी तो प्रवास का दबाव भी बढ़ जाएगा । यह भूमण्डलीकरण विकासशील देशों में गरीबी कम करने, रोजगार बढ़ाने और लोगों का जीवन स्तर उठाने में मदद करता है तो भी प्रवास का दबाव कम रहेगा । इसके विपरीत यदि परिणाम गरीबी, बेरोजगारी, असमानता और निम्न जीवन स्तर रहा तो यह दबाव अधिक रहेगा ।

इस बात के पर्याप्त सबूत हैं कि पिछले 25 वर्षों में भूमण्डलीकरण के चलते राष्ट्रों और लोगों के आय स्तरों के बीच की खाई गहराती गई है । आय वितरण की असमानताएं भी बढ़ी हैं । लैटिन अमेरिका, अफ्रीका और पूर्व समाजवादी देशों में गरीबी बढ़ी है । संगठित क्षेत्रों में रोजगार के अवसर कम हुए हैं इसलिए ज्यादातर श्रमिक असंगठित क्षेत्रों में काम करने पर मजबूर हैं जहां उत्पादकता और मजदूरी स्तर निम्न है । श्रम और उत्पादन की किस्म भी घटिया है । संयुक्त राष्ट्र के 193 देशों में से यह भूमण्डलीकरण कोई दो-ढाई देशों को छोड़कर बाकी



सबको निर्धन से निर्धनतम बनाता जा रहा है । आज से 40 वर्ष पहले विश्व के समृद्धतम 20 देशों की प्रति व्यक्ति आमदनी विश्व के विपन्नतम 20 देशों की आमदनी से 20 गुना ज्यादा थी । अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग, आर्थिक तकनीकी और वित्तीय सहायता के चार दशकों बाद इन विपन्नतम देशों की प्रति व्यक्ति आय 37 गुना कम हो गई है । जाहिर है आर्थिक सहायता और उसके साथ-साथ लुभावनी बनायी गई नीतियां, विकास की दिशा इन गरीब देशों को रास नहीं आयी । इन गरीब देशों के निर्धनतम 20 प्रतिशत की हालत तो अपने देश के सबसे धनाढ्य 20 प्रतिशत लोगों के मुकाबले भी काफी बिगड़ी है । गैट समझौते के चौथे अध्याय में विकासशील देशों के लिए विशेष प्रावधान किए गए थे । तीसरी दुनिया के सन् 1970 तक की बढ़त इन प्रयासों के द्वारा देखकर धनी देश चौंक पड़े । अब गैट के 23 देशों की जगह विश्व व्यापार संगठन में 150 देश स्वेच्छा से सम्मिलित हुए हैं और इनमें से 80 प्रतिशत यानी 115 देश गरीब देश हैं । परन्तु इसमें चौथे अध्याय जैसे किसी प्रावधान का समावेश नहीं है । 'सहायता' के बदले व्यापार के द्वारा तीव्र विकास यात्रा का सपना विश्व व्यापार संगठन की गैट बराबरी पूर्ण व्यवस्था ने चकनाचूर कर दिया है । अब तो इस संगठन की लाठी के द्वारा तीसरी दुनिया का बाजार धनी देशों की कम्पनियों की गिरफ्त में आ गया है और मुकदमेबाजी के द्वारा असमान शर्तें थोपी जा रही हैं । भूमण्डलीकरण ने कुछ ही लोगों, प्रान्तों और राष्ट्रों के लिए लाभ के ऐसे अवसर खोले हैं जिनकी तीन दशक पहले कल्पना नहीं की जा सकती थी । इस दौड़ में अमीर एवं विकसित देशों की जीत हुई है । जिस वर्ग को लाभ पहुंचा है वह सम्पत्तिशाली, उच्च शिक्षित पेशेवर, प्रबन्धन तकनीक का ज्ञाता और मुनाफे के लिए जगह-जगह पहुंचने में सक्षम है । दूसरी तरफ छोटे-मोटे काम करने वाले, जोखिम न उठाने वाले और किराए की तकनीक अपनाने वाले नुकसान में रहे हैं । भूमण्डलीकरण के इस दौर में जीतने वाले राष्ट्रों में संयुक्त राज्य अमेरिका, पश्चिमी यूरोप, जापान, पूर्व एशिया और दक्षिण-पूर्व एशिया का नाम आता है और पिछड़ने वाले देशों में लैटिन अमेरिका, अफ्रीका, पश्चिमी एशिया, पूर्व एशिया और दक्षिण एशिया क्षेत्र के देश हैं । भूमण्डलीकरण के दौर में विश्व व्यापार संगठन जैसे निकायों के दायरे में वे मामले भी आ गए जो आर्थिक गतिविधियों और सामाजिक सम्बन्धों को भी प्रभावित करते हैं और पूरी तरह संप्रभु राष्ट्रों के अधिकार क्षेत्र में ही आते हैं । इसे भूमण्डलीकरण की प्रक्रिया का नाम दिया गया जिसका उद्देश्य सदस्य राष्ट्रों की सम्प्रभुता का हनन करना, उनके अधिकारों को सीमित करना है । भूमण्डलीकरण की व्यवस्था में स्वतन्त्र व्यापारिक उद्यमों का तो गला घोंटा जा रहा है । विकासशील देशों की तो बात छोड़े स्वयं विकसित देशों में स्थानीय व्यापारिक हितों के समक्ष भी जबर्दस्त संकट पैदा हो गया है और उनके पास बहुराष्ट्रीय निगमों के महत्वहीन पिछलग्गू के रूप में काम करने के सिवाय कोई विकल्प ही नहीं बचा है । पूर्वी एशियाई देशों में वित्तीय उथल-पुथल के बाद तो भूमण्डलीकरण की प्रक्रिया के भयावह परिणाम सभी विकासशील देशों की समझ में अच्छी तरह आ गए हैं । इस उथल-पुथल का कारण राष्ट्रपारीय निगमों का सट्टेबाजी से भरा कारोबार है । और तो और, दक्षिण कोरिया भी जिसे तीसरी दुनिया के समक्ष विकास और स्थिरता का आदर्श उदाहरण बताकर प्रचारित किया जा रहा था और जिसे हाल ही विकसित देशों की जमात में शामिल कर लिया गया था, बुरी तरह



प्रभावित हुआ है। पूर्वी एशिया के देश तो नव-औपनिवेशिक दासता की स्थिति में वापस धकेले जाने का खतरा महसूस करने लगे। पूर्वी एशियाई देशों को मौजूदा संकट से उबारने के लिए दी जाने वाली सहायता के साथ विश्व बैंक, अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष और विश्व व्यापार संगठन ने आपस में मिल-जुलकर ऐसी कड़ी शर्तें थोपीं कि उनसे जन असन्तोष भड़क गया। इसी बात पर रिजर्व बैंक के गवर्नर बिमल जालान ने अपनीहाल में प्रकाशित पुस्तक 'इण्डियाज इकॉनोमी इन द न्यू मिलेनियम' में जोर दिया है। वे कहते हैं कि— 'विश्व के पूंजी बाजार के एकीकरण से बाजार में कुशलता आई है परन्तु साथ-साथ इससे विकासशील देशों के समक्ष अधिक खतरा एवं अरक्षा भी उत्पन्न हो गई है।' वे बताते हैं कि पूर्वी एशिया की बैंकिंग व्यवस्था लगभग विश्व स्तर की ही थी परन्तु फिर भी वे संकटग्रस्त हो गए चूंकि वे विश्व अर्थव्यवस्था से गहराई से जुड़े हुए थे। उन्होंने इस जुड़ाव के खतरे से बचाव की पर्याप्त सावधानी नहीं बरती थी। विश्व पूंजी बाजार में हल्की-सी उथल-पुथल से उनकी अर्थव्यवस्थाएं हिल गईं। पूर्वी एशिया की तुलना में भारत एशियाई संकट से बहुत कम प्रभावित हुआ, क्योंकि हमारा अन्तर्राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था से जुड़ाव कम था। इसी क्रम में वे कहते हैं कि देश के बैंकों का पूर्ण निजीकरण नहीं होना चाहिए। इससे सरकार का बैंकों पर नियन्त्रण कम होगा। संकट के समय उनके व्यवहार पर नियन्त्रण रखना कठिन हो जाएगा। जालान की दृष्टि में बैंकों के निजीकरण से लाभ कम और खतरा ज्यादा होता है। सितम्बर 2008 से लगातार तेज हो रहे आर्थिक मन्दी के थपेड़ों से अपनीढहती अर्थव्यवस्थाओं को बचाने के लिए विकसित देशों ने जो कदम उठाए, उन्होंने दुनिया को गैर-वैश्वीकरण के दौर में ढकेल दिया है। 26 फरवरी, 2009 को बजट भाषण के दौरान अमरीका के राष्ट्रपति बराक ओबामा ने विदेशों से आउटसोर्सिंग करने वाली कम्पनियों को टैक्स रियायतों का लाभ नहीं देने का ऐलान किया। अमरीकी अर्थव्यवस्था में गति पैदा करने के लिए ओबामा सरकार के 900 अरब डॉलर के राहत पैकेज ने वैश्वीकरण के समक्ष चिंताएं पैदा कर दी हैं। इस राहत पैकेज में बाइ अमरीकन यानी अमरीकी वस्तुओं को खरीदने पर बल देने की नीति से दुनियाभर में खुली अर्थव्यवस्था के समक्ष चुनौतियां उत्पन्न हो गई हैं। कहा जा रहा है कि ओबामा के पहले बजट में भारी सब्सिडियों के कारण लगभग 1.75 खरब डॉलर का घाटा होगा, जो द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद का सबसे बड़ा घाटा होगा। यूरोपीय समुदाय से जुड़े 27 देशों ने भी वैश्विक मन्दी से निपटने के लिए संरक्षणवाद को हवा दे दी है। अमरीका और ब्रिटेन जैसे कई देशों में भारतीय युवाओं की नौकरियों के लिए गतिरोध तैयार किए जा रहे हैं। अमरीका में वित्त वर्ष 2009 में जिन एक लाख 63 हजार गैर आब्रजक कुशल कामगारों ने एच 1 बी बीजा के लिए आवेदन किया, उनमें से एक लाख भारतीय थे। अमरीकी ने एच 1 बी बीजा देने की सीमा 65 हजार वार्षिक तय कर दी है। इसी तरह ब्रिटेन ने भी भारत तथा दूसरे गैर यूरोपीय देशों के पेशेवरों पर बीजा सम्बन्धी और कड़ी शर्तें लगाने की योजना बनाई है ताकि नौकरियों में स्थानीय लोगों के अवसर बढ़ सकें। विभिन्न वस्तुओं के स्वतन्त्र आवागमन तथा श्रमबल को रोकने के लिए जिस तरह से प्रतिबन्ध लगाए जा रहे हैं, उसके कारण भारत सहित विकासशील देशों को काफी नुकसान हो रहा है। अक्टूबर, 2008 से फरवरी, 2009 तक विदेशों में काम कर



रहे लगभग 20 हजार भारतीय नौकरी गंवाने के बाद स्वदेश लौट आए हैं । स्थिति यह है कि अब तक डब्ल्यूटीओ का एजेण्डा एवं उसके परिणाम दोनों ही विकासशील देशों के अनुकूल नहीं हैं ।

अमरीका, यूरोपीय संघ और जापान जैसे विकसित देश अपने यहां कृषि को दी जा रही भारी क्षतिपूर्ति में परिवर्तन किए बिना कृषि व्यापार समझौते को मूर्तरूप देने का दुराग्रह करते रहे हंर । दुनिया के विकासशील देश गैट और फिर डब्ल्यूटीओ जैसे वैश्विक संगठनों की ओर आशा भरी निगाहों से देख रहे थे कि इन वैश्विक संगठनों से उनके विकास को नई दिशाएं मिलेगी, लेकिन अब विकासशील देश अपने को ठगा हुआ अनुभव कर रहे हैं । ये देश देख रहे हैं कि वैश्विक नियमों के पालन के मद्देनजर उन्होंने जिन विकसित देशों के लिए अपने बाजारों को खोल दिया, वे ही विकसित देश संरक्षणकारी नीतियों के अन्तर्गत विकासशील देशों के लिए अपने बाजारों को बन्द कर रहे हैं । दुनिया में स्वतन्त्रापूर्वक कारोबार की सम्भावना घट गई है । दुनिया में पूंजी का प्रवाह सीमित हो गया है । ढहते हुए वैश्वीकरण की चुनौतियों के बीच भारत सहित विकासशील देशों को डब्ल्यूटीओ के अन्तर्गत यह जोरदार आवाज उठानी होगी कि विकसित देशों का अपने उद्योग- कारोबार को नियमों के विपरीत भारी क्षतिपूर्ति देना और आउटसोर्सिंग जैसी सेवाओं की राह में अड़चनें पैदा करना उचित नहीं है ।

9.4.7 भूमण्डलीकरण और अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्ध: प्रभाव (Impact on Globalization and International Relations)

अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों, अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार और अन्तर्राष्ट्रीय वित्त व्यवस्था के परिप्रेक्ष्य में भूमण्डलीकरण के निम्नांकित प्रभावों (परिणामों) की चर्चा की जाती है:

1. संयुक्त राष्ट्र संघ और उससे सम्बन्धित अन्तर्राष्ट्रीय वित्तीय और व्यापारिक संस्थाओं की भूमिका और महत्व में वृद्धि हुई है ।
2. 'विश्व व्यापार संगठन' जैसे ऐसे अन्तर्राष्ट्रीय संगठन की स्थापना हुई जो विश्व व्यापार के क्षेत्र में पुलिसमैन की भूमिका का निर्वाह करने लगा है । कहने के लिए तो विश्व व्यापार संगठन की स्थापना बहुपक्षीय सिद्धान्त के आधार पर अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार को प्रोत्साहित करने के लिए की गई है, लेकिन हकीकत यह है कि यह संगठन सामूहिक और अलग-अलग तौर पर विकासशील देशों के अर्थतन्त्र, समाज और राजनीति पर प्रभुत्व जमाने का माध्यम है ।
3. भूमण्डलीकरण से बहुराष्ट्रीय निगमों को खुली छूट मिल गई है और बहुराष्ट्रीय निगम निर्धन राष्ट्रों पर धनी राष्ट्रों के नव उपनिवेशीय नियन्त्रण के वाहक हैं ।
4. अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार और अन्तर्राष्ट्रीय पूंजी निवेश के लिए देश के दरवाजे खोलने का मतलब गरीब देशों और अमीर देशों को बकरी और बाघ की तरह एक ही घाट का पानी पीने की व्यवस्था करना है । और ऐसी दोस्ती में अमीर देश गरीब देशों से मुनाफा लेंगे ही । राजनीतिक अर्थ में विश्व व्यापार में



भागीदारी बढ़ाने का मतलब अमीर देशों पर निर्भरता बढ़ाना है, जो अन्ततः राजनीतिक निर्भरता और सामाजिक-राजनीतिक कीमत चुकाने तक जाता है ।

5. भूमण्डलीकरण प्रक्रिया के फलस्वरूप जिन संस्थाओं का उदय हुआ है, वे सभी राष्ट्र-राज्य की शक्ति और सत्ता से बाहर हैं । यहां तक कि भूमण्डलीकृत होते अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों में, राष्ट्र-राज्य एकमात्र अभिकर्ता (।बजवते) नहीं रह गए हैं, अब अनेक अभिकर्ता भी हैं जो नई उभरती व्यवस्था में प्रमुख भूमिका निभाते हैं । गैर सरकारी संगठन, पर्यावरण सम्बन्धी आन्दोलन, बहुराष्ट्रीय निगम, जातीय राष्ट्रीयताएं तथा बहुराज्यीय अथवा क्षेत्रीय संगठन शामिल हैं ।
6. भूमण्डलीकृत विश्व में नए अभिकर्ताओं की भूमिका निरंतर बढ़ी है, शायद इसलिए कि आर्थिक, राजनीतिक और संचार अवसंरचनाओं की संख्या में बहुत वृद्धि हुई है । इन संरचनाओं या जालों (छमजूवतों) ने राष्ट्र-राज्यों की सीमाओं को खुला कर दिया है तथा उनके आर-पार लोगों, वस्तुओं, सेवाओं, विचारों तथा सूचनाओं का आवागमन अत्यन्त सरल हो गया है ।
7. भूमण्डलीकरण की प्रक्रिया ने न केवल अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों को विस्तृत बना दिया है, बल्कि वे अधिक सघन भी हो गई हैं, क्योंकि अब न केवल अभिकर्ताओं की संख्या बढ़ी है तथा विस्तृत व्यवस्था (जाल) एक-दूसरे को प्रभावित कर रहे हैं बल्कि अधिक महत्वपूर्ण यह है कि इनमें से प्रत्येक जो दूसरों पर प्रभाव डालता है वह गुणवत्ता में पहले से कहीं अधिक श्रेष्ठ है ।
8. विश्वव्यापी संचार व्यवस्था, बहुराष्ट्रीय निगमों के उत्पाद तथा बड़ी संख्या में लोगों का संसार के एक भाग से दूसरे में आवागमन, इन सबने विश्वस्तर पर लोगों के सामाजिक एवं सांस्कृतिक रुझानों को भी प्रभावित किया है ।
9. बढ़ते हुए आर्थिक भूमण्डलीकरण ने घरेलू अर्थव्यवस्थाओं को न केवल एक-दूसरे पर निर्भर बना दिया है, परन्तु वे काफी हद तक बहुराष्ट्रीय निगमों द्वारा किए जाने वाले पूंजी निवेश पर भी निर्भर हो गई हैं ।
10. राष्ट्र-राज्य की सम्प्रभुता के लिए भूमण्डलीकरण को इसलिए खतरा माना जाता है, क्योंकि राष्ट्रों की सरकारों पर अन्तर्राष्ट्रीय संधियों तथा समझौतों को लागू करने के लिए दबाव डाला जाता है जिसमें अन्तर्राष्ट्रीय समुदाय को प्रसन्नता होती है । इसके कारण राष्ट्रीय सरकारों को बहुराष्ट्रीय संधियों द्वारा विभिन्न मुद्दों पर निर्धारित मानदण्डों तथा उनकी मांगों के सामने झुकना पड़ता है ।

“भूमण्डलीकरण संप्रभुता की पारम्परिक परिधियों पर मौलिक आघात है। यह, संप्रभुता के राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय दोनों रूपों में परिवर्तन का कारण है। इसने समक्षता के दो तत्त्वों ‘सत्ता’ एवं ‘स्वायत्तता’ में नया समीकरण बनाया है।”



“सम्प्रभु राज्य अब आंतरिक एवं अन्तर्राष्ट्रीय दोनों क्षेत्रों में नया रूप ग्रहण कर रहा है । ऐसा वह अपनी कुछ पारम्परिक क्षमताओं में कमी करके कर रहा है। आज का सम्प्रभु राज्य कुछ क्षमताओं को त्यागकर, कुछ नई क्षमताओं (सामर्थ्य) को प्राप्त कर रहा है । जहां यह अपने कुछ कर्तव्यों को अन्तर्राष्ट्रीय और पारराष्ट्रीय संस्थाओं को हस्तान्तरित कर रहा है, वहीं दूसरी ओर यह इन संस्थाओं के प्रभावी क्रियान्वयन पर निगरानी की नई सत्ता या नए अधिकार प्राप्त कर रहा है ।”

9.4.8 तुलनात्मक राजनीति और भूमण्डलीकरण (Comparative Politics and Globalization)

शासन और राजनीति के तुलनात्मक अध्ययन की उपयोगिता तथा महत्त्व का अध्ययन निम्नलिखित शीर्षकों के अन्तर्गत किया जा सकता है :

1. राजनीतिक व्यवहार को समझना (Understand Political Behaviour) : शासन और राजनीति के तुलनात्मक अध्ययन की उपयोगिता यह है कि इससे राजनीति व्यवहार को समझने में सहायता मिलती है। तुलनात्मक अध्ययन द्वारा हम राष्ट्रीय ,अन्य राष्ट्रों तथा अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति एवं राजनीतिक व्यवहार को अच्छी तरह समझ सकते हैं । तुलनात्मक अध्ययन के द्वारा ही हमें यह पता चलता है कि विभिन्न समाजों के लोगों का राजनीति व्यवहार परस्पर भिन्न क्यों होता है
2. राजनीतिक व्यवस्थाओं की समानताओं और विभिन्नताओं को समझना (To understand the Similarities and Differences between Political System) : व्यवहार में राजनीतिक संस्थाओं के नाम एक जैसे होने के बावजूद भी कार्य एक जैसे नहीं होते । उदाहरणस्वरूप अमरीका , फ्रांस और भारत में कार्यपालिका के अध्यक्ष को राष्ट्रपति कहते हैं परन्तु इन तीनों देशों में न तो राष्ट्रपति के कार्य एक जैसे हैं और न ही इन देशों की शासन प्रणालियाँ एक जैसी हैं परन्तु राजनीतिक संस्थाओं के इस व्यावहारिक रूप को समझने के लिए शासन और राजनीति का तुलनात्मक अध्ययन करना बहुत आवश्यक है ।
3. किसी भी राजनीतिक व्यवस्था के संदर्भ का ज्ञान (Knowledge Regarding Constitutional Elements of any System) : शासन और राजनीति का तुलनात्मक अध्ययन किसी भी राजनीतिक व्यवस्था के संदर्भ को समझने में सहायक सिद्ध होता है । तुलनात्मक अध्ययन के आधार पर ही हम कह सकते हैं कि क्यों संसदीय शासन प्रणाली इंग्लैंड में सरकार में स्थायित्व ला सकी परन्तु फ्रांस में सरकारों की अस्थिरता का कारण बनी ? ब्रिटेन , अमरीका, आस्ट्रेलिया इत्यादि देशों में दो दलीय प्रणाली क्यों है जबकि भारत और फ्रांस इत्यादि देशों में बहु-दलीय प्रणाली है ।
4. राजनीतिक प्रणालियों के गुणों तथा दोषों का पता चलता है (Merits and Demerits of Political System are Revealed) : शासन और राजनीति के तुलनात्मक अध्ययन से हमें विभिन्न राजनीतिक



प्रणालियों के गुणों तथा दोषों का पता चलता है । तुलनात्मक अध्ययन से ही यह ज्ञान प्राप्त किया जा सकता है कि संसदीय तथा अध्यक्षीय पद्धतियों को सफल बनाने के लिए किन शर्तों का होना आवश्यक है ।

5. राजनीति को वैज्ञानिक अध्ययन बनाना (Making Politics aScientific Study) :—तुलनात्मक राजनीति के अध्ययन को एक वैज्ञानिक अध्ययन बनाता है । आरम्भ से ही राजनीति शास्त्र के विद्वान् एवं विचारक राजनीति को विज्ञान बनाने के लिए प्रयत्नशील रहे हैं । राजनीति शास्त्र को विज्ञान बनाने के लिए वैज्ञानिक पद्धतियों का होना भी आवश्यक है ।
6. प्रचलित राजनीतिक सिद्धान्तों की पुनः प्रमाणिकता(Re -validation of Existing Political Theories) : तुलनात्मक राजनीति की महत्वपूर्ण उपयोगिता यह है कि इसकी सहायता से प्रचलित राजनीतिक सिद्धान्तों का , चाहे वे आदर्शवादी सिद्धान्त हों या आनुभविक सिद्धान्त , पुनः परीक्षण किया जाता है और उनकी प्रमाणिकता जाँची जाती है । हम तुलनात्मक राजनीतिक अध्ययन से यह निष्कर्ष निकाल सकते हैं कि पुराने स्थापित राजनीतिक सिद्धान्त वर्तमान की परिवर्तित परिस्थितियों में भी मान्य हैं या नहीं और यदि मान्य हैं तो कितने उचित और कितने अनुचित हैं
7. राष्ट्रों के घनिष्ठ सम्बन्धों के कारण तुलना अनिवार्य (Close Relations Between Countries Led to Comparison) : आज संसार के सभी देश एक दूसरे के समीप आ गए हैं । विज्ञान की उन्नति , संचार तथा यातायात के साधनों के विकास ने देशों की दूरी को बहुत कम कर दिया है । दूरी कम होने से राष्ट्रों में घनिष्ठता बढ़ी है और परस्पर घनिष्ठता बढ़ने से एक दूसरे की शासन पद्धति , रहन – सहन , सम्बन्धों , योजनाओं की सफलता तथा तकनीकी आदान – प्रदान में भी रुचि बढ़ जाती है । अतः तुलनात्मक अध्ययन अनिवार्य हो जाता है ।
8. राजनीतिक वास्तविकता के अध्ययन के लिए (For theStudyof Political Reality) : राजनीतिक वास्तविकता को जानने के लिए तुलनात्मक राजनीति का बड़ा महत्त्व है तुलनात्मक अध्ययन का संबंध ऐसे तरीके से नई तकनीकों से और उपागमों के माध्यम से राजनीतिक वास्तविकता के अध्ययन के निरूपण से है , जिससे राजनीति का समस्त क्षेत्र इसके अन्तर्गत आ जाए ।
9. राजनीति में सिद्धान्त निर्माण (Theory & building in Politic) : तुलनात्मक राजनीति का महत्त्व राजनीति में ' सिद्धान्त निर्माण ' की दृष्टि से भी है । तुलनात्मक अध्ययन से ही किसी शास्त्र के सिद्धान्तों का निर्माण व नियमों का निरूपण सम्भव होता है ।

9.4.9 विकसित और विकासशील समाजों की अनुक्रिया (Responses from Developed and Developing Societies)



विकासशील देशों में राजनीतिक प्रक्रिया की प्रकृति को समझने के लिए इनके राजनीति पर्यावरण, राजनीतिक संरचनाओं और राजनीतिक व्यवहार की जानकारी आवश्यक है। इन तत्त्वों के विस्तृत अध्ययन के लिए इनकी राजनीतिक संस्कृति, हित समूहों, राजनीतिक दलों, जनसंपर्क के साधनों, अधिकारीतंत्र, चुनाव – प्रक्रिया और राजनीतिक सहभागिता पर ध्यान केंद्रित करना चाहिए।

राजनीतिक संस्कृति : राजनीतिक संस्कृति का अर्थ है, किसी समाज की संस्कृति के वे पक्ष जो उसकी राजनीति को प्रभावित करते हैं। वैसे संस्कृति की संकल्पना बहुत विस्तृत है जिसके अंतर्गत किसी समुदाय में प्रचलित मूल्यों और मान्यताओं के अलावा कला – विधाएं, प्रतीक – चिह्न, उत्सव – पूर्व, पूजा – पाठ और रहन – सहन का ढंग भी आ जाता है, परन्तु राजनीतिक संस्कृति का अध्ययन करते समय इन्हें हम मूल्यों और मान्यताओं की अभिव्यक्ति मानकर उन्हीं पर अपना ध्यान केंद्रित करते हैं। राजनीतिक संस्कृति में मुख्यतः ऐसे मूल्य, मान्यताएं और मानक आ जाते हैं जो शासक – वर्ग, शासन – प्रणाली और शासन प्रक्रिया को वैधता प्रदान करते हैं, और उनके संदर्भ में व्यक्ति की स्थिति को निर्धारित करते हैं। विकासशील देशों की राजनीतिक संस्कृति के बारे में कोई सामान्य धारणा नहीं बनाई जा सकती। हम केवल ऐसी मुख्य – मुख्य प्रवृत्तियों की चर्चा कर सकते हैं जिनसे इनकी राजनीतिक संस्कृति का सामान्य परिचय मिल सकता है। तीसरी दुनिया के देश साधारणतः विशाल आकार के हैं, और उनमें विविध संस्कृतियों, भाषाओं, धर्मों, जातियों, इत्यादि से जुड़े हुए लोग रहते हैं। इन देशों में राज्य की स्थिति बहुत सुदृढ़ नहीं है। अतः वह समाज पर बहुत गहरा प्रभाव डालने की स्थिति में नहीं है। राज्य की स्थिति को सुदृढ़ करने के लिए इन देशों में राष्ट्र निर्माण का सहारा लिया जाता है। राष्ट्र निर्माण के माध्यम से पूरे राष्ट्र के लोगों के लिए निष्ठा का एक ही केंद्र विकसित करने का प्रयत्न किया जाता है ताकि वे अपनी निष्ठा को अपने – अपने संकीर्ण समूहों तक समिति न रहने दें बल्कि संपूर्ण राष्ट्र को अपनी निष्ठा का केंद्र बना लें। फिर राज्य निर्माण के माध्यम से शक्ति का ऐसा केंद्र विकसित करने का प्रयत्न किया जाता है जो संपूर्ण राज्य में शांति और व्यवस्था कायम कर सके, और राज्य की सुरक्षात्मक एवं कल्याणकारी सेवाओं को देश के कोने – कोने तक पहुँचा सके। विघटनकारी शक्तियों, भौगोलिक दूरियों, परिवहन और संचार के अपर्याप्त साधनों के कारण तीसरी दुनिया के देशों में यह काम प्रायः बहुत मुश्किल से होता है। इन देशों में प्राथमिक शिक्षा के कार्यक्रम इस ढंग से बनाए जाते हैं कि लोग अपने संजातीय समूह से आगे बढ़कर संपूर्ण राष्ट्र के प्रति निष्ठा से प्रेरित हों। जनसंपर्क के साधनों की सहायता से लोगों को स्वाधीनता संग्राम की वीर गाथाओं की याद दिलाई जाती है ताकि उनके मन में भावना का संचार हो। परन्तु उत्तर – औपनिवेशिक राज्य में लोगों की नई मांगों और आशाओं के कारण जो नए द्वंद्व पैदा हो गए हैं, उन्हें शांत करने के लिए पुरानी यादों का सहारा पर्याप्त सिद्ध नहीं होता।



उत्तर-औपनिवेशिक राज्य : ऐसा राज्य जो उपनिवेशवाद के शिकंजे से नया – नया मुक्त हुआ हो । साधारणतः तीसरी दुनिया के देशों या विकासशील देशों को इस श्रेणी में रखा जाता है । कई सिद्धांतकार यह मानते हैं कि उत्तर – औपनिवेशिक राज्य में विदेशी हितों का प्रभुत्व समाप्त हो जाता है अतः उसे जनसाधारण की आशाओं और आकांक्षाओं की पूर्ति का साधन बनाया जा सकता है परंतु यथार्थ अनुभव से इस बात की पुष्टि नहीं होती । ऐसे राज्य का सैन्य संगठन और अधिकारीतंत्र उपनिवेशवादी परंपरा के सांचे में ढले होते हैं जो जनसाधारण के दमन में अभ्यस्त होते हैं । उनके मन में जनसाधारण के प्रति सेवा या सहानुभूति की भावना रातों रात पैदा नहीं की जा सकती । वैसे ये दोनों गुट राजनीतिक नेतृत्व के सेवक के रूप में कार्य करते हैं , परंतु उत्तर औपनिवेशिक राज्य में साधारणतः राजनीतिक नेतृत्व का चरित्र भी बहुत ऊंचा नहीं रह जाता । जो राजनीतिज्ञ स्वाधीनता आंदोलन के दौरान कंधे से कंधा मिलाकर विदेशी ताकत से लड़े थे , अब वे और उनके उत्तराधिकारी सत्ता की प्रतिस्पर्धा में नए पूंजीपति वर्ग की सहायता पर इन देशों में जाति , जनजाति और धर्म इत्यादि के आधार पर परंपरागत नेतृत्व को जा मान्यता दी जाती है , उसे देखते हुए राष्ट्रीय स्तर पर स्थानीय नेतृत्व के साथ समझौता जरूरी हो जाता है । बहुसांस्कृतिक समाज में इस तरह का समझौता कभी – कभी राष्ट्रीय स्तर पर सरकार चलाने में सहायक सिद्ध होता है । भारत में राष्ट्रीय स्तर पर जो मिली – जुली सरकारें चलाई गई हैं , वे प्रबंध का उपयुक्त उदाहरण प्रस्तुत करती हैं । नाइजीरिया में भी राष्ट्रीय नेताओं ने स्थानीय अमीरों – अर्थात् स्थानीय धार्मिक शासकों के साथ समझौता करके सरकार चलाने में बहुत सारी अड़चनों को दूर कर दिया है ।

तीसरी दुनिया में बंधुत्व के आधार पर लोगों के मन में जो भावनाएं घर कर चुकी हैं , वे कभी – कभी आधुनिक संस्थाओं को ठीक तरह काम नहीं करने देती । यहां राजनीतिज्ञ और प्रशासनिक अधिकारी नियमों के निष्पक्ष प्रयोग में यथेष्ट तत्परता नहीं दिखाते बल्कि अपनी शक्ति का प्रयोग करते समय अपने रिश्तेदारों , अपने गाँव या कबीले के लोगों , अपने मित्रों और समर्थकों को फायदा पहुंचाने को तैयार रहते हैं । कुछ लोग इस भाई – भतीजावाद और भ्रष्टाचार को सामाजिक दायित्व के निर्वाह की संज्ञा देते हैं । कई बाद परंपरागत भावनाएं आर्थिक विकास में सहायक भी सिद्ध होती हैं । उदाहरण के लिए , प्राचीन प्राच्य विचारक कन्फ्यूशियस ने यह शिक्षा दी थी कि बड़ों को अपना उत्तरदायित्व संभालना चाहिए , और छोटों को केवल आज्ञापालन करना चाहिए । इन शिक्षाओं की प्रेरणा से चीन , ताइवान , सिंगापुर और दक्षिणी कोरिया में आर्थिक विकास से जुड़ी हुई गतिविधियों में तेजी आ गई । कई बार व्यक्तिवादी दृष्टिकोण की तुलना में परंपरावादी दृष्टिकोण राजनीति गतिशील और आर्थिक सहयोग के लिए अधिक उपयुक्त सिद्ध होता है । विकासशील देश इस क्षेत्र में अपनी राजनीतिक संस्कृति से यथेष्ट लाभ उठा सकते हैं ।

हित समूह : विकासशील देश मुख्यतः परंपरागत समाज रहे हैं जहां हित स्पष्टीकरण और हित समूहन के विकास की गुंजाइश बहुत कम थी । लोग अपनी – अपनी जाति , जनजाति , धर्म , भाषा , संस्कृति , इत्यादि के



प्रति इतनी गहरी निष्ठा रखते थे कि यहां व्यक्तिगत हितों के आधार पर नए समूहों के निर्माण की संभावनाएं नगण्य थीं। ऐसे समूह जो अपने सदस्यों के किसी समान हित को ध्यान में रखकर संगठित किए जाते हैं, और उस हित की सिद्धि के लिए वे नियमित रूप से या समय – समय पर सार्वजनिक नीति को प्रभावित करने का प्रयत्न करते हैं। आधुनिक समाज में कामगारों, व्यापारियों, उपभोक्ताओं, इत्यादि के बहुत सारे हित समूह पाए जाते हैं। जन भिन्न – भिन्न व्यक्ति अपने समान हित को पहचान कर हित समूह के रूप में संगठित होते हैं तो इस प्रक्रिया का हित समूहन कहा जाता है। जब कोई हित समूह अपने सदस्यों की भावनाओं को ध्यान रखकर उन्हें निश्चित मांगों के रूप में व्यक्त करता है तो इस प्रक्रिया को हित स्पष्टीकरण कहा जाता है। स्वाधीनता के बाद इन देशों में आधुनिकीकरण की जो प्रक्रिया शुरू हुई, उसने परंपरागत जीवन – शैली की जगह औद्योगीकरण, शहरीकरण, मुद्रा विनिमय, औपचारिक शिक्षा और जनसंपर्क के साधनों के विस्तृत प्रयोग को बढ़ावा दिया। जब लोगों की अभिरूचियों और हितों में विविधता पैदा होती है तो समाज तरह – तरह के संगठन – जैसे कि किसान संघ, मजदूर संघ, वाणिज्यमंडल और व्यवसायिक साहचर्य उभरकर सामने आते हैं। जब परस्पर – विरोधी संगठनों में शक्तिशाली वर्गों को – जैसे कि जमींदारों और व्यापारियों को अपने हितों पर आंच आती दिखाई देती है तो वे किसानों और कामगारों के आंदोलनों को समाज – विरोधी गतिविधियों की संज्ञा देकर पुलिस की सहायता से उनके दमन का प्रयत्न करते हैं। भारत में – विशेषतः बिहार प्रांत में ऐसी घटनाओं के कई उदाहरण मिलते हैं। कई विकासशील देशों में कमजोर वर्गों को अपने हित समूह बनाने से हतोत्साह किया जाता है। अधिकांश लेटिन अमरीकी देशों में यह व्यवस्था की गई है कि औपचारिक समूहों के लिए कानूनी मान्यता प्राप्त करना अनिवार्य होगा। कुछ देशों में तो औपचारिक समूहों को सरकार के नियंत्रण में ही रखा जाता है। मैक्सिको का सत्तारूढ़ दल अपने आपको किसानों, मजदूरों और जनसाधारण का गठबंधन मानता है। अतः वह इन सब क्षेत्रों के औपचारिक समूहों पर अपने वर्चस्व का दावा करता है। कभी – कभी हित समूह इतने शक्तिशाली हो जाते हैं कि सरकार भी उन्हें रूष्ट करने का जोखिम नहीं उठा सकती, अन्यथा सरकार स्वयं अस्थिर हो जाती है। ईरान के शाह का पलायन (1979), दक्षिण कोरिया में राष्ट्रपति पार्क की हत्या (1979), और मिस्र में राष्ट्रपति सादात की हत्या (1981) ऐसी स्थितियों के उदाहरण प्रस्तुत करते हैं।

राजनीतिक दल : 1980 और 1990 के दशकों से पहले तीसरी दुनिया के देशों में दलीय प्रणालियां साधारणतः बहुत कमजोर रही हैं। देखा जाए तो सऊदी अरब, कतर, जॉर्डन, बहरीन, कुवैत, और भूटान जैसे राजतंत्रीय देशों में तो कोई दलीय प्रणाली रही ही नहीं, और वहां की राजनीति पर शासक परिवारों का प्रभुत्व रहा है। जहाँ जहाँ सैनिक शासन स्थापित होता है, वहां प्रचलित राजनीति दलों पर कानूनी प्रतिबंध लगा दिया जाता जैसा कि पाकिस्तान में कई बार हुआ। परंतु जब वहां असैनिक शासन की मांग जोर पकड़ने लगती है, तब राजनीतिक दल फिर से उभरकर सामने आ जाते हैं। कुछ देशों में एकदलीय प्रणाली को इसलिए बढ़ावा दिया जाता है ताकि वह राष्ट्रीय नेता के लिए यथेष्ट समर्थन जुटा सके, और उसके कृपापात्रों में पद – पुरस्कार के वितरण का साधन



बन सके । लाइबेरिया में राष्ट्रपति दोइ ने अपनीस्थिति को सुदृढ़ करने के लिए ' नेशनल डेमोक्रेटिक पार्टी ' का सृजन किया , हालांकि वह इससे अपना उद्देश्य पूरा नहीं कर पाया । बांग्लादेश में जनरल इरशाद ने ' जातीय पार्टी ' का सृजन किया ताकि वह इसकी मदद से सैनिक शास का चोला उतारकर असैनिक पदजमतमेज (तजपबनसंजपवद) क शासक का चोला पहन सके । जैरे में राष्ट्रपति मोबूतू ने अपना निर्विवाद नेतृत्व स्थापित करने के ध्येय से प्रत्येक नागरिक को अपनीपार्टी ' रिवोल्यूशन पॉपुलर मूवमेंट ' का सदस्य बना लिया । अनेक विकासशील देशों में स्वाधीनता से पहले राष्ट्रवादी आंदोलनों ने ऐसे प्रभावशाली दलों को जन्म दिया जो स्वाधीनता के बाद भी बने रहे । परंतु ऐसे दल देर – सवेर कमजोर पड़ गए , क्योंकि वे लोगों की नई – नई आशाओं की पूर्ति नहीं कर पाए । घाना में क्वामें नक्रमा के पतन के साथ उसकी ' कन्वेंशन पीपल्स पार्टी ' भी लुप्त हो गई । कई देशों में राष्ट्रवादी आंदोलन के दौरान जो प्रभावशाली दल उभरकर सामने आए थे , वे स्वाधीनता के बाद इसलिए कमजोर पड़ गए क्योंकि वे पुरानी प्रतिभाओं के जोड़ की नई प्रतिभाएं नहीं ढूंढ पाए । भारत में कुछ हद तक ' इंडियन नेशनल काँग्रेस ' का यही हाल हुआ है । कुछ देशों में यह सोचा जाता है कि देश के आधुनिकीकरण के लिए एक ही दल का अस्तित्व सबसे उपयुक्त होगा । तंजानिया के राष्ट्रपति न्येरेरे ने ऐसे एक ही दल का समर्थन किया , परंतु अब वहां अनेक दल अस्तित्व में आ चुके हैं । कई देशों में एकदल – प्रधान प्रणाली के विलय के बाद बहुदलीय प्रणाली का आविर्भाव हुआ है , जैसा कि भारत में देखा जा सकता है । इन देशों की सरकारें ऐसे सुविधाजनक गठबंधन सिद्ध हुई हैं जिनका ध्येय सत्ता को हथियाना था— किसी तरह की विचारधारात्मक एकता का परिचय देना नहीं था । इक्कीसवीं शताब्दी के आरंभ में अनेक लेटिन अमरीकी देशों में राजनीतिक दलों की प्रतिस्पर्धा सत्तारूढ़ विशिष्ट वर्गों के भीतर उदारवादी और अनुदारवादी गुटों की परस्पर प्रतिस्पर्धा का संकेत देती थी य सर्वसाधारण को इस प्रतिस्पर्धा से बाहर रखा गया था । वेनेजुएला एक – मात्र ऐसा देश है जहां 1950 के दशक के बाद सही अर्थ में दलीय प्रतिस्पर्धा का वातावरण रहा क्योंकि वहां की शासन – प्रणाली और अर्थ – व्यवस्था तेल की आय के सहारे टिकी रही है । मैक्सिको में सत्तारूढ़ दल लोक – मत को अपने वश में रखने के लिए समाचार – पत्रों तथा जनसंपर्क के अन्य साधनों पर प्रतिबंध लगाता रहा है । जब इससे काम नहीं चलता , तब वह सीधे ही मतपत्रों में धांधली पर उतर आता है ।

जनसंपर्क के साधनों की भूमिका : जनसंपर्क के साधन – समाचार – पत्र , पत्रिकाएं , रेडियो , टेलीविजन , इत्यादि आधुनिकीकरण के महत्वपूर्ण उपकरण हैं । तीसरी दुनिया के देशों में ये साधन भी बहुत विकसित नहीं हैं । समाचार पत्र साधारणतः विशिष्टवर्गों के उपभोग की वस्तु हैं , और इनका वितरण अधिकांशतः शहरों तक सीमित है । इनके संपादकों को साधारणतः कठोर अभिवेचन का सामना तो नहीं करना पड़ता , परंतु फिर भी वे सर्वथा निडर नहीं रह पाते । यदि प्रभावशाली वर्ग उनसे रुष्ट हो जाएं तो उन्हें अपने पद से हटाया जा सकता है । 1970 के दशक में अर्जेंटीना और चिली में अनेक पत्रकारों को यंत्रणा दी गई , कारावास दिया गया , या उनकी जीवन – लीला ही समाप्त कर दी गई । विकासशील देशों के समाचार पत्रों में मुख्यतः शहरों के ही समाचार छापे जाते हैं



य गाँवों की दशा पर विशेष ध्यान नहीं दिया जाता । तंजानिया में 1980 के दशक में गाँव – गाँव में मलेरिया फैल गया था , परंतु वहां के समाचार – पत्रों ने इस घटना को समाचार का विषय बनाने योग्य नहीं समझा । कुछ भी हो , भारत में गाँवों की इतनी उपेक्षा नहीं की जाती । यहां गाँवों में होने वाली घटनाओं – विशेषतः दुर्घटनाओं और प्राकृतिक आपदाओं के समाचारों को जनसंपर्क के साधनों में यथेष्ट स्थान दिया जाता है , और सामाजिक अन्याय की घटनाओं को तो खोज – खोज कर और खोद – खोद कर प्रकाश में लाया जाता है ।

अफ्रीका महाद्वीप में 1600 भाषाएं और बोलियां प्रचलित हैं । इनमें ज्यादातर बोलियां ही हैं जो बोली जाती हैं , लिखकर नहीं भेजी जाती । अतः दूर – दराज के क्षेत्रों में वहां रेडियो से समाचार पहुँचाना सुविधाजनक रहता है । साधारणतः सारी सूचना बड़े – बड़े शहरों से गाँवों की ओर प्रवाहित होती है । गाँवों से शहरों की ओर कोई सूचना प्रवाहित नहीं होती । अब विकासशील देशों में टेलीविजन का रिवाज भी बढ़ चला है । इससे गाँव के लोगों को शहरी जीवन की तड़क – भड़क के दृश्य देखने को मिलते हैं जिससे उनके मन भी रहन – सहन के ऊँचे स्तर की आकांक्षा जाग जाती है । अतः सरकार के पास नित्य नई मांगें भेजने लगते हैं । इससे सरकार का काम ज्यादा मुश्किल हो जाता है । लेटिन अमरीका और अन्य विकासशील देशों में टेलीविजन पर शुरू – शुरू में ऐसे लोकप्रिय कार्यक्रम दिखाए जाने लगे जो अमरीका में तैयार किए जाते थे । अब केवल टेलीविजन के विस्तार के कारण अमरीका और यूरोप के उन्नत देशों के कार्यक्रम और समाचार सीधे ही तीसरी दुनिया के देशों के टेलीविजन पर देखे जाते हैं । इससे सूचना के भूमंडलीकरण को बढ़ावा मिला है । साथ ही विज्ञापन का व्यवसाय भी उन्नत हो गया है । उपभोक्ता वस्तुओं की मांग बढ़ी है य मनोरंजन के एक – जैसे ढंग और एक – जैसी जीवन शैली का विस्तार हुआ है । इस प्रवृत्ति ने कुछ हद तक पश्चिम के सांस्कृतिक साम्राज्यवाद को भी बढ़ावा दिया है ।

सांस्कृतिक साम्राज्यवाद : वह स्थिति जिसमें कोई शक्तिशाली राष्ट्र सांस्कृतिक उपकरणों (जैसे कि विचारों , जीवन – शैली , साहित्य , कलाकृतियों और दूरदर्शन कार्यक्रमों) की सहायता से दूसरे देशों के लोगों के मन पर अपने सांस्कृतिक वर्चस्व की छाप छोड़ता है । यह दूसरे देशों पर प्रभुत्व स्थापित करने का ऐसा गूढ़ तरीका है जिसमें सैनिक , आर्थिक या राजनीतिक शक्ति का प्रयोग नहीं किया जाता । सूचना के प्रसार के साथ – साथ इन साधनों के माध्यम से सामाजिक जीवन की जटिल समस्याओं को जनसाधारण के ध्यान में लाया जा रहा है जिससे उसमें नई तरह की सजगता आ गई है । अतः वे राजनीति में अधिक सक्रिय हो गए हैं य और सरकार पर ज्यादा दबाव डालने लगे हैं । उनकी नई – नई मांगों को पूरा करने में सरकार को अपने सीमित संसाधनों के कारण बहुत मुश्किल का सामना करना पड़ता है । अतः यह जरूरी हो जाता है कि विकास के कार्यक्रमों में लोगों की सहभागिता बढ़ाई जाए । ऐसे हाल में सरकार जन – शिक्षा को बढ़ावा देने के लिए जनसंपर्क के साधनों का विस्तृत प्रयोग करती है । इस तरह परिवार नियोजन , स्वच्छता , साक्षरता , रोगों की रोकथाम और सामाजिक



कुरीतियों के उन्मूलन से जुड़े हुए संदेश जन – जन तक पहुँचाए जाते हैं । भारत का पल्स पोलियो अभियान ऐसी गतिविधियों का ज्वलंत उदाहरण है ।

अधिकारीतंत्र की अभिवृत्ति : संरक्षक अधिकारीतंत्र ऐसा अधिकारीतंत्र जो अपने – आपको राज्य की स्थिरता और अखंडता के मुख्य संरक्षक के रूप में देखता है । चुनाव की राजनीति के कारण जब बार – बार सरकारें बदलती हैं , यहां तक कि कई बार स्थिर सरकार बनने में अड़चन आ जाती है , तब संरक्षक अधिकारीतंत्र शासन का सारा उत्तरदायित्व स्वयं संभाल लेता है , और ऐसे सब कार्य करने लगता है जो निर्वाचित सरकार को करने चाहिए । राजनीतिक उथल – पुथल के समय जब कहीं सरकार धराशायी हो जाती है , वहां संरक्षक अधिकारीतंत्र अराजकता नहीं फैलने देता बल्कि नई सरकार स्थापित होने तक सरकार के सारे काम – काज चलता है । ऐसी स्थिति बहुधा तीसरी दुनिया के देशों में पाई जाती है । तीसरी दुनिया के देश वैसे तो परंपरागत समाज हैं , परंतु उपनिवेशवादी दौर में ऐसे बहुत सारे देशों के शासकों ने वहां आधुनिक अधिकारीतंत्रीय संरचनाएँ स्थापित कर दी थी । अतः : इन देशों को स्वाधीनता के समय जो प्रशासनिक व्यवस्था विरासत में मिली , वह इनके लिए बहुत उपयोगी सिद्ध हुई । यहां तक कि राजनीतिक अस्थिरता के दौर में ये अधिकारीतंत्र शासन का सारा काम संभाल लेते हैं । ऐसे अधिकारीतंत्र को संरक्षक अधिकारीतंत्र कहा जाता है । उदाहरण के लिए पाकिस्तान में कई बार राजनीतिक उथल – पुथल के दौर में वहां का अधिकारीतंत्र सरकार का सारा काम संभालता रहा है । भारतीय प्रशासनिक सेवा का ढांचा भी उपनिवेशवादी दौर की देन रहा है । यह सेवा ' इंडियन सिविल सर्विस ' की उत्तराधिकारी है जिसे ब्रिटिश राज में स्थापित किया गया था । उन दिनों इसे ' फौलादी ढांचा ' कहा जाता था । अतः : ' भारतीय प्रशासनिक सेवा ' आज भी पर्याप्त सुदृढ़ है , और इसने कई बार ' संरक्षक अधिकारीतंत्र ' की भूमिका निभाई है । यहां अधिकारीतंत्र साधारणतः : राजनीतिक दृष्टि से तटस्थ रहा है । अतः : बार – बार के राजनीतिक परिवर्तनों के बावजूद इसने अपनी यह पहचान कायम रखी है , और नई सामाजिक नीतियों को कार्यान्वित करने में बराबर कार्य – कुशलता का परिचय दिया है । कोरिया में 1910 से 1945 तक वहां के जापानी शासकों ने राजनीतिक और प्रशासनिक प्रणाली का संपूर्ण नियंत्रण अपने हाथ में रखा था , और उसमें कोरिया के मूल निवासियों की भूमिका को नगण्य बना दिया था । दूसरे विश्व युद्ध (1939–45) में जब जापानियों की पराजय हुई , और वे कोरिया से विदा हो गए तो वहां के राजनीतिक और प्रशासनिक जीवन में शून्य पैदा हो गया । इधर कुछ मामलों में तीसरी दुनिया का अधिकारीतंत्र आधुनिक मानकों के अनुरूप नहीं ढल पाया । इन देशों के परंपरागत समाज बंधुत्व के बंधनों से बँधे थे । ये बंधन अधिकारीतंत्र पर भी हावी रहे । अफ्रीका में राजनीतिज्ञों , प्रशासनिक अधिकारियों तथा सैनिक अधिकारियों से यह आशा की जाती है कि वे अपनी सत्ता का प्रयोग करते समय अपने परिवारों को फायदा पहुंचाएंगे । इसका परिणाम यह हुआ है कि वहां के समाज में भाई – भतीजावाद और प्रशासनिक भ्रष्टाचार का बोलबाला है । नाइजीरिया में प्रत्येक राज्य – क्रांति के बाद बहुत बड़े पैमाने पर पुराने अधिकारियों को हटाया गया है । चीन के प्रशासन – तंत्र में भी इसी तरह का विस्तृत भ्रष्टाचार



फैला हुआ इतना ही नहीं, तीसरी दुनिया में प्रशासनिक अधिकारियों को अपने – अपने क्षेत्र, जाति और जनजाति का स्वाभाविक प्रतिनिधि माना जाता है। अतः वे यह अनुभव करते हैं कि अपने – अपने समूह को सहायता और लाभ पहुँचाना उनका दायित्व है। इस दृष्टिकोण ने 'प्रतिनिधि अधिकारीतंत्र' के विचार को बढ़ावा दिया है।

प्रतिनिधि अधिकारीतंत्र : यह विचार कि तीसरी दुनिया के देशों में अधिकारीतंत्र के सदस्य इसके अंतर्गत अपने – अपने क्षेत्र जाति, जनजाति, भाषा अपने उन नशाकशित का स्वाभाविक प्रतिनिधि माना जाता है। अतः वे यह अनुभव करते हैं कि अपने – अपने समूह को सहायता और लाभ पहुँचाना उनका दायित्व है। इस दृष्टिकोण ने 'प्रतिनिधि अधिकारीतंत्र' के विचार को बढ़ावा दिया है। प्रतिनिधि अधिकारीतंत्र : यह विचार कि तीसरी दुनिया के देशों में अधिकारीतंत्र के सदस्य इसके अंतर्गत अपने – अपने क्षेत्र जाति, जनजाति, भाषा या धर्म के लोगों का प्रतिनिधित्व करते हैं। अतः इन समूहों के लोग अपने इन तथाकथित प्रतिनिधियों से यह आशा करते हैं कि वे उनकी समस्याओं पर विशेष ध्यान देंगे और उनकी सहायता करेंगे। इन आशाओं को पूरा करना एक तरह से अधिकारीतंत्र के सदस्यों का कर्तव्य हो जाता है। देखा जाए तो प्रतिनिधि अधिकारीतंत्र का विचार औपचारिक दृष्टि से किसी तरह के अधिकार या कर्तव्य का सृजन नहीं करता। परंतु तीसरी दुनिया के देशों में जहाँ की विशाल जनसंख्या तरह – तरह के समूहों में बँटी है और अधिकारीतंत्र के सदस्य भी भावात्मक स्तर पर अपने मूल समूह से जुड़े रहते हैं, जहाँ संसाधनों और अवसरों का नितांत अभाव है, वहाँ यह विचार जनसाधारण को कुछ सांत्वना देता है। अधिकारीतंत्र के बारे में यह विचार इसके प्रसिद्ध सिद्धांतकार मैक्स वेबर (1864–1920) की संकल्पना से मेल नहीं खाता। इसके अलावा, तीसरी दुनिया के देशों की विशाल जनसंख्या और व्यापक निर्धनता के कारण वहाँ सरकारी क्षेत्र में रोजगार के अवसर बढ़ाने की मांग लगातार उठाई जाती है। उसे पूरा करने के लिए निम्न स्तरों पर आवश्यकता से अधिक कर्मचारी रख लिए जाते हैं, और उनकी योग्यता पर भी विशेष बल नहीं दिया जाता है और प्रशासन में 'लालफीताशाही' का बोलबाला हो जाता है। तीसरी दुनिया के प्रशासनिक व्यवहार की ये विशेषताएँ अधिकारीतंत्र के कानूनी – तर्कसंगत प्रतिरूप से बहुत दूर जा पड़ती हैं जिसकी संकल्पना मैक्स वेबर (1864–1920) ने प्रस्तुत की थी। फिर, विकासशील देशों के प्रशासनिक अधिकारी ज्यादातर नियमों और प्रक्रियाओं का प्रयोग अपने उत्तदायित्व से बचने के लिए करते हैं, लोक प्रशासन के लक्ष्यों की पूर्ति के लिए नहीं। यह अभिवृत्ति सामाजिक और आर्थिक विकास की आवश्यकताओं के विपरीत सिद्ध होती है। इन सब त्रुटियों को दूर करने के लिए इन देशों में विधानमंडल और न्यायपालिका से जुड़े हुए सचेत विशिष्ट वर्गों को अधिक सक्रिय भूमिका निभानी होगी, और पत्रकारों तथा सामाजिक आंदोलनों के कार्यकर्ताओं को निरंतर सजग रहना होगा।



चुनाव – प्रक्रिया : तीसरी दुनिया के देशों में लोकतंत्र को बहुत सराहा जाता है । परंतु वहां उदार लोकतंत्र की संस्थाएं विस्तृत रूप में विकसित नहीं हो पाई हैं । केवल भारत में स्वाधीनता के बाद लगातार नियमित रूप से चुनाव होते रहे हैं । अन्य देशों में ये संस्थाएं थोड़े – थोड़े समय तक ही प्रचलित रह पाई हैं । उदाहरण के लिए पाकिस्तान में 1984 के चुनाव जनरल जिया उल हक के अधिनायतंत्र की पुष्टि के लिए कराए गए , और 2002 में राष्ट्रपति पद के लिए जनरल परवेज मुशर्रफ की वैधता स्थापित करने के लिए चुनाव कराए गए । म्यांमार (बर्मा) में तो सैनिक शासन ने चुनाव को मजाक ही बना दिया । वहां लंबे सैनिक शासन के बाद 1990 में आम चुनाव कराए गए जिनमें ' नेशनल लीग फॉर डेमोक्रेसी ' को भारी बहुमत से विजयी मिली , परंतु सैनिक शासन ने उसे सत्ता सौंपने से इनकार कर दिया । मैक्सिको में साधारणतः एक ही दल के शासन को कायम रखने के लिए चुनाव कराए गए हैं , और इनमें बार – बार रिश्वत और बल – प्रयोग का सहारा लिया गया है । केन्या में एकदलीय शासन को सुदृढ़ करने के लिए चुनाव के समय एक ही दल के उम्मीदवारों में प्रतिस्पर्धा की अनुमति दी गई है । केवल 1980 और 1990 के दशकों में लेटिन अमरीका और अफ्रीका के कुछ हिस्सों में वस्तुतः प्रतिस्पर्धात्मक चुनाव कराए गए हैं । फिर , जहां – जहां प्रतिस्पर्धात्मक चुनाव कराए गए , वहां भी प्रतिस्पर्धा का उद्देश्य कुछ विशेष व्यक्तियों , संजातीय समूहों और समुदायों को लाभ पहुँचाना रहा है , किसी विचारधारा को बढ़ावा देना नहीं रहा । कुछ देशों में पैसे देकर ढेर सारे वोट बटोर लिए गए हैं , जैसे कि 1985 में फिलिपीन्स में राष्ट्रपति शासन काल में हुआ । 1986 में उन्हें भ्रष्टाचार के आरोप में अपने पद से हटा दिया गया । इन सब त्रुटियों के बावजूद तीसरी दुनिया में चुनाव केंद्रीय सरकार और स्थानीय शासन के बीच संपर्क की कड़ी की भूमिका निभाते हैं , और जनसंख्या में राजनीति सजगता को बढ़ावा देते हैं । अंततः ये चुनाव विशिष्टवर्गों के शासन को पश्चिमी जगत् और अंतर्राष्ट्र अभिकरणों की दृष्टि में वैध ठहराने का काम करते हैं जो कि विकासशील देशों के विकास में आर्थिक सहायता प्रदान करते हैं ।

9.5 अपनी प्रगति जांचें (Check your progress)

1. विकासशील देशों में राज्य की स्थिति को सुदृढ़ करने के लिए इन देशों में..... का सहारा लिया जाता है ।
2. तीसरी दुनिया में..... के आधार पर लोगों के मन में कुछ विशिष्ट धारणाएँ घर कर चुकी होती हैं जो आधुनिक संस्थाओं के काम में बाधा उत्पन्न करती हैं ।
2. विकासशील देशों में कई..... बार आर्थिक विकास में सहायक भी सिद्ध होती हैं ।
3. तीसरी दुनिया में..... केन्द्रीय सरकार और स्थानीय शासन के बीच संपर्क की कड़ी की भूमिका निभाते हैं ।



4. तीसरी दुनिया के कुछ साम्यवादी देशों ने जनगतिशीलता के माध्यम..... से प्राप्त करने का प्रयत्न किया ।

9.6 सारांश (Summary)

राजनीतिक आधुनिकीकरण की अवधारणा आधुनिकीकरण की अवधारणा पर आधारित है। आधुनिकीकरण की धारणा एक बहुत व्यापक और विशाल धारणा है। इसका सम्बन्ध जीवन के हर क्षेत्र में होने वाले परिवर्तनों से है। यह राजनीतिक व्यवस्था, उत्पादन प्रणाली, सामाजिक व धार्मिक क्षेत्र, शैक्षिक तथा सांस्कृतिक क्षेत्र सभी से सम्बन्धित है। विकासशील देशों के सन्दर्भ में यह सामाजिक-आर्थिक परिवर्तन की प्रक्रिया का नाम है। यह प्राचीन से नवीनता की ओर समाज का प्रस्थान है। यह एक बहुमुखी प्रक्रिया है जो आर्थिक, सामाजिक, धार्मिक, सांस्कृतिक, शैक्षिक तथा राजनीतिक सभी क्षेत्रों में दृष्टिगोचर होती है। पर्यावरण एवं प्रकृति पर बढ़ता हुआ नियन्त्रण, तकनीकी विकास, औद्योगिकरण, शहरीकरण, बढ़ती जनसहभागिता, बढ़ती राष्ट्रीय व प्रति व्यक्ति आय, संचार साधनों का विकास, सामाजिक गतिशीलता, समानता के सिद्धान्त का विकास तथा राष्ट्रीय एकता के प्रति निष्ठा आदि आधुनिकीकरण की प्रमुख विशेषताएँ हैं। संक्षेप में भूमण्डलीकरण राष्ट्रों की राजनीतिक सीमाओं के आर-पार आर्थिक लेन-देन की प्रक्रियाओं और उनके प्रबन्धन का प्रवाह है। विश्व अर्थव्यवस्था में आया खुलापन, आपसी जुड़ाव और परस्पर निर्भरता के फैलाव को भूमण्डलीकरण कहा जाता है। भूमण्डलीकरण से अभिप्राय है उन्मुक्त बाजार एवं प्रतिस्पर्धा राष्ट्रिय अर्थव्यवस्थाओं का विश्व अर्थव्यवस्था के साथ समायोजन राष्ट्रिय बाजारों को अंतर्राष्ट्रीय बाजारों में परिवर्तित करना दूसरे शब्दों में, इसे राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था का वैश्विक अर्थव्यवस्था के साथ एकीकरण की प्रक्रिया कहा जा सकता है।

9.7 सूचक शब्द (Key Words)

- **वैश्वीकरण** –वैश्वीकरण का शाब्दिक अर्थ स्थानीय या क्षेत्रीय वस्तुओं या घटनाओं के विश्व स्तर पर रूपांतरण की प्रक्रिया है।
- **आधुनिक**— जो इधर थ समय से ही चला निकला या अस्तित्व में आया हो जिस पर वर्तमानकाल की बातों या विशेषताओं की पूरी छाप पड़ी हो।
- **अभिवृत्ति** –वह मानसिक एवं भावनात्मक वस्तु है जो किसी व्यक्ति की विशेषताएँ या अभिलाक्षणिक निर्धारित करती है।
- **अभिजन वर्ग**— एक ऐसा वर्ग होता है जो प्रत्येक शासन व्यवस्था में अपना वर्चस्व कायम रखता है।
- **अभिकरण**— किसी की ओर से उसके अभिकर्ता या एजेंट के रूप में कार्य करने की क्रिया।



9.8 स्वयं मूल्यांकन हेतु प्रश्न (Self Assessment Questions)

1. भू-मण्डलीकरण और तुलनात्मक राजनीति के अंत : सम्बंधों पर प्रकाश डालिए ।
2. विकसित और विकासशील समाजों में भू – मण्डलीकरण की अनुक्रिया का विश्लेषण कीजिए ।
3. विकसित और विकासशील देशों में राजनीतिक सार्वभौमिकरण पर टिप्पणी लिखिए ।
4. राजनतिक आधुनिकीकरण का अर्थ और परिभाषा की विवेचन कीजिए
5. राजनीतिक आधुनिकीकरण के अभिकरण का विश्लेषण कीजिए

9.9 अपनी प्रगति की जांच करने के लिए उत्तर (Answer- check your progress)

1. राष्ट्र निर्माण और राज्य निर्माण
2. बंधुत्व
3. परंपरागत भावनाएँ
4. चुनाव
5. आर्थिक संवृद्धि

9.10 सन्दर्भ ग्रन्थ/निर्देशित पुस्तकें (References / Suggested Readings)

1. तुलनात्मक राजनीति की रूपरेखा— ओम प्रकाश गाबा, मयूर पेपर बैक्स , नोएडा ।
2. तुलनात्मक शासन एवं राजनीति – डॉ. बीरकेश्वर प्रसाद सिंह, ज्ञानदा प्रकाशन (पी.एण्ड डी.) 24, दरियागंज, अंसारी रोड, दिल्ली ।
3. तुलनात्मक राजनीति एवं राजनीतिक संस्थाएँ – सी.बी. गेना, विकास पब्लिशिंग हाउस प्रा.लि. अंसारी रोड, दिल्ली ।
4. तुलनात्मक राजनीति – जे.सी. जौहरी, स्टर्लिंग पब्लिशर्स प्रा.लि., दिल्ली ।



Subject : Political Science(Comparative Constitutions of UK & USA (Optional-I))	
Course Code : POLS-303	Autor : Dr. Parveen Sharma
Lesson No. 10	
राजनीतिक संचार Political Communication	

अध्ययन की संरचना

10.1 अधिगम उद्देश्य (Learning Objectives)

10.2 प्रस्तावना (Introduction)

10.3 पाठ का मुख्य भाग (Main contents of the Text)

10.3.1 राजनीतिक संचार का अर्थ व परिभाषा (Meaning and Definition of Political Communication)

10.3.2 राजनीतिक संचार के अभिकरण व संरचनाएं (Agencies and Structure of Political Communication)

10.3.3 राजनीतिक निवेशों की संरचनाएं (Political Input Structures)

10.3.4 राजनीतिक निर्गतों की संरचनाएं (Political Output Structures)

10.3.5 परम्परागत सामाजिक संरचनाएं (Traditional Social Institutions)

10.3.6 जनसंचार के साधन (Mass Communication Tools)

10.3.7 अनौपचारिक व प्रत्यक्ष व्यक्तिगत सम्बन्ध (Informal and Direct Personal Relations)

10.4 पाठ के आगे का मुख्य भाग (Further main body of the text)

10.4.1 राजनीतिक व्यवस्था में राजनीतिक संचार की भूमिका (Role of Political Communication in Political System)

10.4.2 राजनीतिक संचार की राजनीतिक प्रक्रिया के संचालन में भूमिका (Role of political communication in the operation of political process)



- 10.5 अपनी प्रगति जांचें (Check your progress)
- 10.6 सारांश (Summary)
- 10.7 सूचक शब्द (Key Words)
- 10.8 स्वयं मूल्यांकन हेतु प्रश्न (Self Assessment Questions)
- 10.9 अपनी प्रगति की जांच करने के लिए उत्तर (Answer- check your progress)
- 10.10 सन्दर्भ ग्रन्थ/निर्देशित पुस्तकें (References / Suggested Readings)

10.1 अधिगम उद्देश्य (Learning Objectives)

इस अध्याय को पढ़ने के बाद हम निम्नलिखित विषयों को समझ पाएंगे :-

- (1). राजनीतिक संचार का अर्थ व परिभाषा के बारे में समझ सकेंगे ।
- (2). राजनीतिक संचार के अभिकरण व संरचनाएं बारे में समझ सकेंगे ।
- (3). राजनीतिक व्यवस्था में राजनीतिक संचार की भूमिका बारे में जान सकेंगे ।

10.2 प्रस्तावना (Introduction)

संचार साधनों के विकास ने मनुष्य को न केवल सामाजिक बल्कि राजनीतिक मानव भी बना दिया है। संचार साधनों की आवश्यकता को ध्यान में रखकर ही राजनीति विज्ञान में राजनीतिक संचार की संकल्पना का विकास किया गया है। आज राजनीतिक संचार राजनीति विज्ञान की वह महत्वपूर्ण अवधारणा बन चुका है जिसके बिना किसी राजनीतिक व्यवस्था के सम्पूर्ण ताने-बाने को समझना कठिन है। व्यक्ति का राजनीतिकरण केवल राजनीतिक संचार की व्यवस्था द्वारा ही किया जा सकता है। इस बात को ध्यान में रखते हुए राजनीतिक व्यवस्था में इस अवधारणा का महत्व अधिक हो गया है। राजनीतिक संचार ने राजनीतिक व्यवस्था को नई दिशा दी है। व्यक्ति की बढ़ती राजनीतिक सहभागिता व सक्रियता राजनीतिक संचार के महत्व को प्रतिपादित करती है। राजनीतिक व्यवस्था के निवेशों और निर्गतों को जोड़ने वाली कड़ी राजनीतिक संचार ही है। आज राजनीतिक संचार के बिना कोई भी संगठन तथा राजनीतिक व्यवस्था अपने उद्देश्यों तथा लक्ष्यों में सफल नहीं हो सकती। लोकतन्त्रीय शासन प्रणालियों में राजनीतिक संचार का जो महत्व है, वह सर्वाधिकारवादी राजनीतिक व्यवस्थाओं में भी है। राजनीतिक संचार राजनीतिक व्यवस्था के एक भाग से दूसरे भाग को जोड़कर राजनीतिक व्यवस्था को गतिशील बनाता है। इसी कारण आज राजनीतिक संचार को राजनीतिक व्यवस्था की रक्तधारा कहा जाने लगा है।



10.3.1 राजनीतिक संचार का अर्थ व परिभाषा (Meaning and Definition of Political Communication)

राजनीतिक संचार की अवधारणा 'संचार' की अवधारणा पर आधारित है। संचार को समझे बिना राजनीतिक संचार को समझना कठिन है। संचार को परिभाषित करने का व्यवस्थित प्रयास सर्वप्रथम नोबर्ट वीनर ने किया है। उसके अनुसार—"संचार एक मस्तिष्क से दूसरे मस्तिष्क तक सूचनाओं का आदान-प्रदान है।" उसने आगे कहा है—"कि जीवन में पर्यावरण से जानकारी को ग्रहण करना, उस जानकारी का पर्यावरण के साथ तालमेल बैठाने में प्रयोग करना और बाहरी पर्यावरणों के साथ प्रभावी ढंग से रहने की प्रक्रिया ही संचार है।" संचार शब्द की उत्पत्ति ग्रीक शब्द 'Kubernetes' से हुई है जिसका अंग्रेजी में अर्थ 'संचालक' Steersman है। वीनर ने इसे अंग्रेजी में इसके लिए Cybernetics शब्द का प्रयोग किया है। उसकी राजनीतिक संचार की संकल्पना को राजनीतिक साइबरनेटिक्स भी कहा जाता है। 'साइबरनेटिक्स' सूचनाओं के आदान प्रदान को ही इंगित करता है। वीनर की बात से अन्य राजनीतिक विज्ञान भी सहमत है। राजनीति विज्ञान में प्रयुक्त संचार शब्द का अर्थ उस अर्थ से अलग है जिसका सम्बन्ध समाचारपत्रों, रेडियो और दूरदर्शन जैसे संचार साधनों से लिया जाता है। राजनीतिक संचार तो राजनीतिक व्यवस्था के एक भाग से दूसरे भाग तक मांगों और नियमों (निर्गतों) का गत्यात्मक संचरण है। यह राजनीतिक व्यवस्था के विभिन्न भागों को आपस में जोड़ता है। इसलिए राजनीतिक संचार का सम्बन्ध राजनीतिक व्यवस्था के अध्ययन से

ही सम्बन्धित है।"

1. **जीन ब्लौण्डेल ने लिखा है**—"राजनीतिक सम्प्रेषण राजनीतिक व्यवस्था के एक भाग से दूसरे भाग तक मांगों और निर्णयों का गतिशील आंदोलन है, क्योंकि राजनीतिक व्यवस्था की कोई भी संक्रिया तब तक नहीं हो सकती जब तक कि व्यवस्था के विभिन्न भाग एक दूसरे से सम्प्रेषण न कर सकें।"
2. **ल्यूशियन पाई ने अपनी पुस्तक में लिखा है**—"राजनीतिक सांचार राजनीतिक व्यवस्था का ताना-बाना है।" पाई की दृष्टि में राजनीतिक संचार राजनीतिक व्यवस्था में गतिशीलता व सक्रियता का ऐसा माध्यम है जिनसे राजनीतिक व्यवस्था के विभिन्न भाग अन्तःक्रियाशील बनते हैं। यह राजनीतिक संचार का सीमित अर्थ है। ल्यूशियन पाई की परिभाषा भी जीन ब्लौण्डेल से मिलती-जुलती है।
3. **कार्ल डयूश के अनुसार**—"राजनीतिक संचार सूचनाओं और जानकारी का राजनीतिक व्यवस्था के आर-पार सम्प्रेषण है।" इस तरह सीमित अर्थ में राजनीतिक संचार राजनीतिक व्यवस्था में मांगों व निर्णयों का एक भाग से दूसरे भाग में गत्यात्मक संचलन है।"
4. **मिलेट के अनुसार**—"राजनीतिक संचार राजनीतिक व्यवस्था व प्रशासकीय संगठन की रक्तधारा है।"



5. जार्ज ए0 मिलर के अनुसार—“राजनीतिक संचार राजनीतिक व्यवस्था में आगत—निर्गत सहसम्बन्धों का माप है।”

10.3.2 राजनीतिक संचार के अभिकरण व संरचनाएं (Agencies and Structure of Political Communication)

विभिन्न राजनीतिक व्यवस्थाओं का अध्ययन करने से यह तथ्य उजागर होता है कि प्रत्येक देश की राजनीतिक व्यवस्था में राजनीतिक संचार की कुछ औपचारिक व अनौपचारिक संरचनाएं या अभिकरण हैं जो राजनीतिक संचार के कार्य करती हैं। औपचारिक संरचनाओं में विधायिका, कार्यपालिका, न्यायपालिका, राजनीतिक दल, व हित समूह शामिल हैं, जबकि अनौपचारिक संरचनाओं में परिवार, रक्त सम्बन्ध, वंश परम्पराएं, निकटस्थ समूह, पड़ोसी, समुदाय, ग्राम, जातीय और भाषायी समूह आदि हैं। लेकिन इनके साथ-साथ प्रत्येक राजनीतिक व्यवस्था में जनसम्पर्क के साधन भी हैं जो उपरोक्त संरचनाओं को व्यावहारिक रूप प्रदान करते हैं। ऑमण्ड तथा पावेल ने इन संरचनाओं को पांच भागों में बांटा है। उसके अनुसार राजनीतिक संचार की प्रमुख संरचनाएं हैं :-

- (1). राजनीतिक निदेशों की संरचनाएं (Political Input Structures)
- (2). राजनीतिक निर्गतों की संरचनाएं (Political Output Structures)
- (3). परम्परागत सामाजिक संस्थाएं (Traditional Social Institutions)
- (4). जनसंचार के साधन (Mass Communication Tools)
- (5). अनौपचारिक व प्रत्यक्ष व्यक्तिगत सम्बन्ध (Informal and Direct Personal Relations)

10.3.3 राजनीतिक निवेशों की संरचनाएं (Political Input Structures)

प्रत्येक राजनीतिक व्यवस्था में निवेश प्रक्रिया को गति देने के लिए कुछ संरचनाएं होती हैं जो मांगों और समर्थनों के रूप में निवेशों की राजनीतिक व्यवस्था में प्रवेश कराती हैं। ये संरचनाएं प्रत्येक राजनीतिक व्यवस्था में पाई जाती हैं, लेकिन प्रजातन्त्रीय देशों में इनका प्रभाव अधिक रहता है। राजनीतिक दल, हित समूह तथा दबाव समूह ऐसी ही औपचारिक संरचनाएं हैं जो जनता की मांगों को राजनीतिक नेताओं तक पहुंचाते हैं। बलों व समूहों तक जनता की पहुंच होने के कारण ये मांगें आसानी से राजनीतिक व्यवस्था में प्रवेश कर जाती हैं। सरकारी नियन्त्रण से मुक्त होने के कारण ये समूह राजनीतिक दलों के माध्यम से अपने व्यक्तिगत सम्पर्कों के कारण अपना यह कार्य आसानी से कर लेते हैं। इसी कारण हित समूहों की निवेश प्रक्रिया के वाहक कहा जाता है। जिस तरह निवेश संरचनाएं जनता की मांगें राजनीतिक नेतृत्व तक पहुंचाती हैं, उसी तरह वे सरकार की बातें भी जनता तक पहुंचाती हैं। अब राजनीतिक निवेशों की संरचनाएं राजनीतिक संचार के महत्वपूर्ण अभिकरण हैं।



10.3.4 राजनीतिक निर्गतों की संरचनाएं (Political Output Structures)

जिस तरह निवेशों की संरचनाएं होती हैं, उसी तरह प्रत्येक राजनीतिक व्यवस्था में निर्गतों की भी औपचारिक राजनीतिक संरचनाएं होती हैं। इन संरचनाओं में सरकारी व प्रशासकीय मशीनरी आती है। विधायिका, कार्यपालिका, न्यायपालिका तथा नौकरशाही ऐसी ही संरचनाएं हैं। इनका राजनीतिक प्रक्रिया में महत्वपूर्ण हाथ होता है। सूचनाओं को राजनीतिक व्यवस्था के एक भाग से दूसरे भाग तक पहुंचाने में ये महत्वपूर्ण भूमिका अदा करती हैं। इन्हीं के कारण राजनीतिक व्यवस्था गतिशील बनी रहती है और सम्पूर्ण शासनतन्त्र एक ढांचे में बंधा रहता है। ये संस्थाएं जनता व नेताओं को जोड़ती हैं और जनता को राजनीतिक व्यवस्था के घेरे में जानकारी देती हैं। इन्हीं संरचनाओं के माध्यम से निर्गतों के रूप में निर्णयों को समाज में लागू किया जाता है। सरकारी तन्त्र की सभी सूचनाओं या निर्णयों को ये संरचनाएं ही समाज में वितरित करती हैं। इस तरह निर्गत-संरचनाएं भी राजनीतिक संचार की प्रक्रिया में अहम भूमिका अदा करने वाले अभिकरण हैं।

10.3.5 परम्परागत सामाजिक संरचनाएं (Traditional Social Institutions)

इन संरचनाओं के अन्तर्गत परिवार, जाति, मत, रक्त सम्बन्ध, वंश परम्पराएं, निरुक्त समूह, पड़ोसी, समुदाय, ग्राम आदि आते हैं। इन सामाजिक व आर्थिक संस्थाओं का भी राजनीतिक संचार में महत्वपूर्ण योगदान रहता है। कबीलों तथा जनजातियों के सरदार अपने विशेष प्रभाव के कारण अपने समाज पर राजनीतिक प्रभाव डालने में सफल रहते हैं। राजनीतिक समाज की समस्त जानकारी रखने वाले व उसका प्रवाह करने वाले यही एकमात्र आधार होते हैं। आजकल धार्मिक नेताओं द्वारा भी राजनीतिक प्रश्नों तथा विवादों की व्याख्या की जाने लगी है। श्रीलंका तथा वियतनाम में धार्मिक नेता ही विशिष्ट वर्गों तथा साधारण जनता में राजनीतिक सम्प्रेषण का कार्य करते हैं। परिवार व जातीय समूह भी राजनीतिक सूचनाओं के आदान-प्रदान में पीछे नहीं हैं। वास्तव में सभी परम्परागत सामाजिक संरचनाएं ही राजनीतिक ज्ञान की सूचनाओं का आदान-प्रदान करने वाले अभिकरण हैं।

10.3.6 जनसंचार के साधन (Mass Communication Tools)

इन्हें जनसम्पर्क के साधन भी कहा जाता है। इनमें पत्र-पत्रिकाएं, रेडियो, दूरदर्शन, समाचार-पत्र, पुस्तकें, इन्टरनेट आदि व्यवस्थाएं शामिल हैं। इन साधनों का प्रयोग सभी राजनीतिक दल, दबाव समूह तथा निवेश व निर्गत राजनीतिक संरचनाएं खुलकर करती हैं। लोकतन्त्रीय देशों में इन साधनों को सरकारी नियन्त्रण से मुक्त रखकर सम्प्रेषण कार्य कराया जाता है, जबकि सर्वाधिकारवादी देशों में ये सरकारी नियन्त्रण में रहकर ही संचार कार्य करती हैं। ये साधन विशेषीकृत व विभेदीकृत होने के कारण राजनीतिक संचार के सर्वाधिक प्रभावशाली साधन माने जाते हैं। ये साधन जन मान्यताओं और अभिरुचियों को राजनीतिक व्यवस्था के अनुकूल बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करते हैं। इसलिए जनसंचार के साधन राजनीतिक संचार के सबसे अच्छे व प्रभावी अभिकरण हैं।



10.3.7 अनौपचारिक व प्रत्यक्ष व्यक्तिगत सम्बन्ध (Informal and Direct Personal Relations)

राजनीतिक संचार की प्रक्रिया में व्यक्ति का व्यक्ति से अनौपचारिक व प्रत्यक्ष सम्पर्क भी राजनीतिक संचार का अभिकरण है। यह अभिकरण प्रत्येक प्रकार के नियन्त्रण से मुक्त रहता है। राजनीतिक संचार के जनसंचार के अभिकरण भी इतने प्रभावशाली नहीं हरे, जितना यह अभिकरण। राजनीतिक घटनाओं की जानकारी रखने वाले व्यक्ति राजनीतिक संचार में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करते हैं। उनके सम्पर्क में आने वाले व्यक्ति अवश्य ही राजनीतिक बातों का ज्ञान प्राप्त करेंगे। राजनीतिक घटनाओं की जानकारी रखने वाले व्यक्ति कभी-कभार राजनीतिक नेतृत्व को भी प्राप्त कर लेते हैं। उस स्थिति में उनकी राजनीतिक संचार के अभिकरण के रूप में भूमिका और अधिक महत्वपूर्ण हो जाती है। इस प्रकार कहा जा सकता है कि राजनीतिक संचार को गति देने वाली अनेक सरकारी व गैर-सरकारी संस्थाओं या अभिकरण हैं। सभी अभिकरण राजनीतिक व्यवस्था में एक स्थान से दूसरे स्थान तक एक भाग से दूसरे भाग तक राजनीतिक सूचनाओं का आदान प्रदान करते हैं। ये अभिकरण ही राजनीतिक व्यवस्था की गतिशीलता का आधार होते हैं और राजनीतिक व्यवस्था में रक्त संचार की तरह कार्य करते हैं। राजनीतिक व्यवस्था के जीवन का आधार यही अभिकरण होते हैं। इसी कारण इन्हें राजनीतिक व्यवस्था की प्राणवायु कहा जाता है।

10.4 पाठ के आगे का मुख्य भाग (Further main body of the text)

10.4.1 राजनीतिक व्यवस्था में राजनीतिक संचार की भूमिका (Role of Political Communication in Political System)

प्रत्येक राजनीतिक व्यवस्था में राजनीतिक संचार की महत्वपूर्ण भूमिका रहती है। राजनीतिक संचार ही वह साधन है जो व्यवस्था के पक्ष में स्वस्थ जनमत तैयार करता है और राजनीतिक समाजीकरण की प्रक्रिया को आगे बढ़ाता है। राजनीतिक जागरूकता लाकर राजनीतिक विकास को गति देने में संचार साधनों की भूमिका ही महत्वपूर्ण रहती है। लोकतन्त्रीय व्यवस्था में तो राजनीतिक संचार के अभिकरण ही व्यवस्था को गतिशील बनाए रखते हैं। राजनीतिक व्यवस्था के आधार पर उद्योगों को भी संचार के साधन ही सहारा प्रदान करते हैं। राजनीतिक व्यवस्था के लिए विशेष राष्ट्रीय व अन्तर्राष्ट्रीय वातावरण तैयार करने में राजनीतिक संचार के अभिकरणों की ही महत्वपूर्ण भूमिका रहती है। राजनीतिक संचार द्वारा राजनीतिक व्यवस्था के लिए किए गए कार्य ही उसकी भूमिका को स्पष्ट करते हैं। प्रत्येक राजनीतिक व्यवस्था में राजनीतिक संचार की भूमिका हो सकती है :-

1. राजनीतिक संचार राजनीतिक समाजीकरण की प्रक्रिया को गति प्रदान करता है।
2. राजनीतिक संचार राजनीतिक व्यवस्था व उसकी संरचनाओं के लिए स्वस्थ जनमत का निर्माण करता है।



3. राजनीतिक संचार राजनीतिक विकास को गति देता है।
4. राजनीतिक संचार जनता में राजनीतिक चेतना व जामरुकता का स्तर ऊँचा करता है।
5. राजनीतिक संचार के अभिकरण औद्योगिक विकास में भी अहम् भूमिका निभाते हैं।
6. राजनीतिक संचार राजनीतिक व्यवस्था के लिए विशेष व अनुकूल वातावरण का निर्माण करता है।
7. राजनीतिक संचार अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर देश का सम्मान बढ़ाता है तथा अन्तर्राष्ट्रीय सम्पर्क में वृद्धि करता है।

10.4.2 राजनीतिक संचार की राजनीतिक प्रक्रिया के संचालन में भूमिका (Role of political in the communication operation of political process):— प्रत्येक राजनीतिक व्यवस्था कुछ न कुछ प्रकार्यों का निष्पादन करती है। इन प्रकार्यों के निष्पादन के लिए बहुप्रकार्यात्मक राजनीतिक संरचनाएं होती हैं। इन संरचनाओं की प्रकार्यात्मक व्यवस्था को राजनीतिक प्रक्रिया कहा जाता है। यह राजनीतिक प्रक्रिया राजनीतिक व्यवस्था के निवेश व निर्गत सम्बन्धी कार्यों को निष्पादित करने वाली व्यवस्था है। इसमें राजनीतिक संचार की संरचनाओं का महत्वपूर्ण योगदान रहता है। राजनीतिक संचार ही राजनीतिक प्रक्रिया को गतिशील बनाकर राजनीतिक व्यवस्था को स्थायित्व प्रदान करता है। कार्ल ड्यूश ने राजनीतिक व्यवस्था में प्रक्रियात्मक संरचनाओं के संचालन के लिए एक नया सिद्धान्त पेश किया है, जिसे राजनीतिक संचार का सिद्धान्त कहा जाता है। कार्ल ड्यूश का कहना है कि अपने क्रियात्मक रूप को व्यवहारिक व गतिशील बनाए रखने के लिए प्रत्येक राजनीतिक व्यवस्था को सूचना-प्रवाहों की आवश्यकता पड़ती है। उसका कहना है कि राजनीति और सरकार निर्दिष्ट लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए मानव प्रयासों का संचालन और समन्वय करने की प्रक्रियाएं हैं। इन प्रक्रियाओं का गत्यात्मक अध्ययन ही राजनीतिक प्रक्रिया का अध्ययन है। इस प्रक्रियात्मक अध्ययन के लिए संकल्पनाएं विकसित की गई हैं :-

1. परिचालन संरचनाओं से सम्बन्धित संकल्पनाएं।
2. प्रवाहों और संक्रियाओं से सम्बन्धित संकल्पनाएं।
3. परिणामों से सम्बन्धित संकल्पनाएं।
4. विशिष्ट संकल्पनाएं।

इन संकल्पनाओं के आधार पर कार्ल ड्यूश ने अपना संचार सिद्धान्त खड़ा किया है और राजनीतिक व्यवस्था की क्रियात्मकता पर संचार के प्रभाव को इंगित किया है। कार्ल ड्यूश का कहना है कि प्रत्येक राजनीतिक व्यवस्था का प्रक्रियात्मक ढांचा घरेलू और विदेशी व्यवस्थाओं से सूचना प्राप्त करता है। उसके बाद सूचना की जांच पड़ताल और कांट-छांट होती है। प्रत्येक राजनीतिक व्यवस्था में सूचनाओं के स्वागत व जांच-पड़ताल के लिए स्वागतकर्ता तथा स्वागत व्यवस्थाएं होती हैं। इसमें स्मृति का प्रतिनिधित्व करने वाले संरचनाएं सूचना को तुरन्त ही प्रक्रियाओं और परिणामों से सम्बन्ध रखने वाली अतीत के अनुभवों को अधिमान्यताओं से जोड़ देती है। मूल्यों को निर्धारित



करने वाली सूचनाएं सम्भावनाओं को अधिमान्यताओं से जोड़ देती है और इसके बाद ही राजनीतिक व्यवस्था निर्णय-निर्माण की तरफ आगे बढ़ती है। संचालक संरचनाओं से और भी संरचनाएं होती हैं जो व्यवस्था द्वारा लिए गए निर्णयों को लागू करती हैं। ये संरचनाएं व्यवस्था द्वारा लागू किए गए निर्णयों के ऊपर लोगों की प्रतिक्रिया के सम्बन्ध में सूचना को फिर से राजनीतिक व्यवस्था में प्रवाहित कर देती हैं। उनके निर्णय निर्माण तक वही प्रक्रिया दोहराई जाती है जो पहले दोहराई गई थी। इस प्रकार राजनीतिक व्यवस्था की समस्त प्रक्रिया सूचनाओं के प्रवाह-प्रतिमान के रूप में चलती रहती है। सूचना-प्रवाहों और संक्रियात्मक संकल्पनाओं का सम्बन्ध सूत्रों, भरणों व भार-क्षमता से होता है। सूचना प्रवाहों का प्रतिमानित सेट वास्तव में संचार का ताना-बाना होता है। भार का तात्पर्य सूचना की भेजी जाने वाली मात्रा से है। भार क्षमता इस बात पर निर्भर है कि सूचना के आदान-प्रदान के लिए कितने सूत्र व्यवस्था में उपलब्ध हैं। भार-क्षमता का सम्बन्ध ग्रहणशीलता, विश्वस्तता और विकृति से भी जोड़ा जाता है। यह सब राजनीतिक व्यवस्था में सूचना के संसाधन का कार्य करते हैं। यदि कोई अभिकरण व्यवस्था में आने वाली सूचना से कुशलता से निपट लेता है तो यह इसकी अनुक्रियात्मकता है। यदि ऐसा नहीं होता है तो अवश्य सूचना के प्रवाह के रास्ते में कोई बाधा है। परिणामों से सम्बन्धित संकल्पना में प्रतिसम्भरण या पुनर्निवेश की संकल्पना शामिल है। कार्ल डयूश ने नाबर्ट वीनर से अवधारणा ग्रहण की है। उसने अपनी इस संकल्पना पर ही संचार-सिद्धान्त खड़ा करते हुए कहा है कि व्यवस्था की प्रतिसम्भरण की प्रक्रिया ही उसे लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए प्रभावकारी अधिकार देती है। कार्ल डयूश ने प्रतिसम्भरण की व्यवस्था को सकारात्मक तथा नकारात्मक दो भागों में बांटा है। उसने व्यवस्था के व्यवहार को घोषित दिशा में ले जाने वाली शक्ति को सकारात्मक प्रतिसम्भरण कहा है। उसका कहना है कि नकारात्मक प्रतिसम्भरण वह प्रक्रिया है जो निर्णयों और उनको लागू करने से उत्पन्न होने वाले परिणामों को स्वतः ही ऐसी दिशा में मोड़ देता है जो व्यवस्था को अपने लक्ष्यों की प्राप्ति के पास ले जाते हैं। कार्ल डयूश का मानना है कि नकारात्मक प्रतिसम्भरण की व्यवस्था ही व्यवस्था का आंतरिक संतुलन कम करके उसे गतिशील बनाए रखती है। इसी कारण कुछ विद्वानों ने नकारात्मक प्रतिसम्भरण को संचार सिद्धान्त की आत्मा कहा है। इस नकारात्मक प्रतिसम्भरण द्वारा ही कोई व्यवस्था अपने निर्णयों या निर्गतों को नियमित करके वांछित लक्ष्यों की तरफ ले जाती है। इसलिए इसका राजनीतिक व्यवस्था में होना बहुत आवश्यक है। विशिष्ट संकल्पनाएं नकारात्मक प्रतिसम्भरण (Feedback) की प्रक्रियाओं के परिचालन की व्याख्या से सम्बन्धित हैं। इस भार विलम्ब, लाभ तथा अग्रता शामिल हैं। भार का अभिप्राय परिवर्तनों की उस व्यापकता और गति से है जो व्यवस्था को अपने लक्ष्यों की तरफ ले जाती है। विलम्ब परिणामों और कार्यों के परिणामों के बारे में सूचना पर रिपोर्ट और कार्य करने में देरी का माप है। लाभ इस सूचना की प्राप्ति के बारे में व्यवस्था की अनुक्रियाओं से सम्बन्धित विस्तार को दिखाता है। अग्रता भारी परिणामों के पूर्वानुमानों की अनुक्रियाओं में कार्य करने की क्षमता है।

इस प्रकार राजनीतिक संचार के सिद्धान्त के माध्यम से कार्ल डयूश ने राजनीतिक व्यवस्था के प्रक्रियात्मक पहलु पर जोर देकर राजनीतिक व्यवस्था को व्यवस्थित व गतिशील बनाए रखने पर जोर दिया है। उसका कहना है कि



राजनीतिक व्यवस्था के सभी कार्य राजनीतिक संचार के माध्यम से ही किए जाते हैं। सभी राजनीतिक संरचनाएं मांगों या निवेशों की प्रक्रिया से लेकर नियम-निर्माण व निर्णयों के निर्गतों के रूप में कार्य करने तक राजनीतिक प्रक्रिया के अंग बनी रहती है। राजनीतिक संचार ही राजनीतिक व्यवस्था के सभी अंगों की सूचना प्रवाह से जोड़कर उसकी क्रियात्मकता में वृद्धि करता है। अतः निष्कर्ष तौर पर यह कहा जा सकता है कि राजनीतिक संचार राजनीतिक प्रक्रिया के संचालन में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करता है।

10.5 अपनी प्रगति जाँचें (Check your progress)

1. राजनीतिक संचार की अवधारणा की अवधारणा पर आधारित है।
2. संचार को परिभाषित करने का व्यवस्थित प्रयास सर्वप्रथम ने किया है।
3. राजनीतिक संचार जनता में का स्तर ऊँचा करता है।
4. ने इन संरचनाओं को पांच भागों में बांटा है।
5. इन्हें जनसम्पर्क के साधन भी कहा जाता है। इनमें पत्र-पत्रिकाएं, रेडियो, दूरदर्शन, समाचार-पत्र, पुस्तकें, इंटरनेट आदि..... साधन हैं।

10.6 सारांश (Summary)

संचार क्या है? यह एक प्रकार का सामाजिक संपर्क है, व्यक्तियों और व्यक्तियों के बीच मौखिक और गैर मौखिक साधनों के माध्यम से संचार। राजनीतिक संचार मानव-समाज का सुनियोजित तंत्र है। राजनीतिक संचार प्रणाली का ढांचा अपने सुपरिभाषित माध्यम के साथ मानव समाज के आवरण की तरह है। राजनीतिक संचार का प्रवाह गतिशील सामाजिक तथा राजनीतिक विकास की दिशा एवं गति को निर्धारित करता है। कोई भी व्यक्ति, किसी देश में प्रचलित राजनीतिक संचार गतिविधियों की संरचना, अंश एवं प्रवाह के संबंध में उस देश की सामाजिक एवं राजनीतिक प्रक्रियाका विश्लेषण कर सकता है।

राजनीतिक संचार एक ऐसी प्रक्रिया है जिसके द्वारा किसी राष्ट्र का नेतृत्व, मीडिया तथा नागरिक-वर्ग उन संदेशों का आदान-प्रदान करता है और उसे अर्थ देता है जो सार्वजनिक नीति के संचालन से संबंधित होता है।

राजनीतिक संचार की विशिष्ट विशेषता यह है कि संदेश व्यापक रूप में शासन से या सार्वजनिक नीति के संचालन से संबंधित होते हैं, सामान्यतः यह माना जाता है कि राजनीतिक संचार केवल चुनावों से संबंधित होता है, किंतु ऐसा नहीं है। राजनीति मोटे तौर पर उस प्रक्रिया को निर्धारित करती है और उससे संबंधित होती है, जिसके द्वारा समाज नीतिगत मामलों पर सर्वसम्मति पर पहुंचता है।

10.7 सूचक शब्द (Key Words)



- **संचार** –संचार का तात्पर्य भाव,विचार,जानकारी अथवा सूचना को दूसरों तक पहुँचाना या स्थानांतरित करना है।
- **अभिकरण**– किसी की ओर से उसके अभिकर्ता या एजेंट के रूप में कार्य करने की क्रिया।
- **सामाजिक संरचना**– वह व्यवस्था जो समाज से संबंधित हो।
- **अनौपचारिक**–जो औपचारिक न होय सहजय जो बनावटी न होय जो बद्ध नियमों से शासित न हो

10.8 स्वयं मूल्यांकन हेतु प्रश्न (Self -Assessment Questions)

1. राजनीतिक संचार का अर्थ व परिभाषा की विवेचन कीजिए ।
2. राजनीतिक संचार के अभिकरण व संरचनाएं पर प्रकाश डालिए ।
3. राजनीतिक व्यवस्था में राजनीतिक संचार की भूमिका का विश्लेषण कीजिए ।

10.9 अपनी प्रगति की जांच करने के लिए उत्तर (Answers to check your progress)

1. 'संचार'
2. नोबर्ट वीनर
3. राजनीतिक चेतना व जागरूकता
4. ऑमण्ड तथा पावेल
5. जनसंचार के साधन

10.10 सन्दर्भ ग्रन्थ/निर्देशित पुस्तकें (References / Suggested Readings)

1. तुलनात्मक राजनीति की रूपरेखा– ओम प्रकाश गाबा, मयूर पेपर बैक्स, नोएडा।
2. तुलनात्मक शासन एवं राजनीति – डॉ. बीरकेश्वर प्रसाद सिंह, ज्ञानदा प्रकाशन (पी.एण्ड डी.) 24, दरियागंज, अंसारी रोड, दिल्ली।
3. तुलनात्मक राजनीति एवं राजनीतिक संस्थाएँ – सी.बी. गेना, विकास पब्लिशिंग हाउस प्रा.लि. अंसारी रोड, दिल्ली।
4. तुलनात्मक राजनीति – जे.सी. जौहरी, स्टर्लिंग पब्लिशर्स प्रा.लि., दिल्ली।



Subject : Comparative Constitutions of UK & USA (Optional-I)	
Course Code : POLS 303	Author : Dr. Parveen sharma
Lesson No. : 11	Vetter :
चुनाव प्रक्रिया-यू.के. और यू.एस.ए. (Electoral process - UK and USA)	

अध्याय की संरचना

11.1-अधिगम उद्देश्य (Learning Objectives)

11.2-परिचय (Introduction)

11.3.अध्याय के मुख्य बिन्दु (Main Points of the Text)

11.3.1.यू.के. में चुनावी प्रक्रिया (The Electoral Process in the UK)

11.3.1.1.चुनावी प्रणालियाँ (Electoral systems)

11.3.1.2.बहुलता मतदान और पार्टी प्रतिनिधित्व (Plurality voting and party representation)

11.4 पाठ का आगे का मुख्य भाग (Further Main Body of the Text)

11.4.1.संयुक्त राज्य अमेरिका में चुनावी प्रक्रिया (Electoral process in the United States)

11.4.1.6.नामांकन प्रक्रिया (Enrollment Process)

11.4.1.5.राष्ट्रपति पद के लिए नामांकन (Nomination for the presidency)

11.4.1.1.पात्रता (Eligibility)

11.4.1.2.राष्ट्रपति चुनाव (President Elections)

11.4.1.3.इतिहास (History)

11.4.1.4.निर्वाचक मंडल (Electoral College)

**11.4.1.6.नामांकन प्रक्रिया (Enrollment Process)****11.4.1.5.राष्ट्रपति पद के लिए नामांकन (Nomination for the presidency)****11.5.स्वयं प्रगति जाँच (Check your progress)****11.6.सारांश (Summary)****11.7.सूचक शब्द (Key Words)****11.8.स्वयं समीक्षा हेतु प्रश्न (Self-Assessment Questions)****11.9.उत्तर-स्वयं प्रगति जाँच (Answers to check your progress)****11.10.सन्दर्भ ग्रन्थ/ निर्देशित पुस्तकें (References / Suggested Readings)****11.1.अधिगम उद्देश्य (Learning Objectives)**

इस अध्याय का अध्ययन करने के बाद, विद्यार्थी -

- चुनाव प्रक्रिया की अवधारणा के बारे में जान सकेंगे;
- ब्रिटेन में चुनाव प्रक्रिया की प्रकृति के बारे में जान सकेंगे;
- अमेरिका में चुनाव प्रक्रिया की स्थिति के बारे में जान सकेंगे;
- अमेरिका और ब्रिटेन में चुनाव प्रक्रिया की अवधारणा की तुलना कर सकेंगे;

11.2-परिचय (Introduction)

चुनावी प्रक्रिया (Electoral Process) एक लोकतांत्रिक व्यवस्था का महत्वपूर्ण हिस्सा है, जिसके माध्यम से नागरिक अपने प्रतिनिधियों का चयन करते हैं। यह प्रक्रिया सुनिश्चित करती है कि सरकार लोगों की इच्छाओं और अपेक्षाओं का प्रतिनिधित्व करे। भारत जैसे लोकतांत्रिक देश में चुनावी प्रक्रिया काफी विस्तृत और चरणबद्ध है। चुनावी प्रक्रिया की शुरुआत चुनाव आयोग द्वारा की जाती है। यह एक स्वतंत्र और स्वायत्त संस्था है जो निष्पक्ष और पारदर्शी चुनाव सुनिश्चित करने के लिए जिम्मेदार है। चुनाव आयोग चुनाव की तारीख और समय घोषित करता है। इसके साथ ही नामांकन प्रक्रिया, मतदान की अवधि, और परिणाम घोषित करने की तारीख तय की जाती है। पूरे देश को अलग-अलग निर्वाचन क्षेत्रों में बाँटा जाता है। प्रत्येक निर्वाचन क्षेत्र से एक प्रतिनिधि चुना जाता



है। इच्छुक उम्मीदवार चुनाव लड़ने के लिए अपना नामांकन पत्र दाखिल करते हैं। इसमें उनके व्यक्तिगत और वित्तीय विवरण शामिल होते हैं। इसके बाद नामांकन पत्रों की जांच की जाती है। उम्मीदवार और राजनीतिक दल जनता को अपनी नीतियों और विचारधाराओं से अवगत कराने के लिए प्रचार करते हैं। यह चरण प्रचार रैलियों, भाषणों, और मीडिया अभियानों के माध्यम से किया जाता है। चुनावी प्रक्रिया लोकतंत्र को मजबूत करती है। नागरिकों को अपने अधिकार और कर्तव्यों का एहसास कराती है। भ्रष्टाचार और पक्षपात से बचाने के लिए निष्पक्षता सुनिश्चित करती है। देश की स्थिरता और विकास को बढ़ावा देती है। चुनावी प्रक्रिया लोकतांत्रिक व्यवस्था का आधार है। इसमें नागरिकों की सक्रिय भागीदारी यह सुनिश्चित करती है कि उनकी आवाज सरकार तक पहुँचे और शासन में उनकी भागीदारी बनी रहे।

11.3. अध्याय के मुख्य बिन्दु (Main Points of the Text)

11.3.1. यू.के. में चुनावी प्रक्रिया (The Electoral Process in the UK)

सरकार की संसदीय प्रणाली ग्रेट ब्रिटेन से ली गई है, जहाँ यह धीरे-धीरे एक गैर-कोडित संविधान के रूप में विकसित हुई। यह संविधान कई कानूनों, अदालतों के फैसलों और कई विविध और अलिखित सम्मेलनों से बना है। वर्तमान में, हाउस ऑफ कॉमन्स में बहुमत वाली पार्टी का नेता प्रधानमंत्री के रूप में सरकार का प्रतिनिधित्व करता है। स्वाभाविक रूप से, पीएम के मंत्रिमंडल के सदस्य सत्ता में रहने वाली पार्टी से चुने जाते हैं। प्रधानमंत्री भी हाउस ऑफ कॉमन्स के सदस्य हैं और इसलिए कैबिनेट के अधिकांश सदस्य भी हैं। सत्ता में बने रहने के लिए, सरकार को हाउस ऑफ कॉमन्स में बहुमत की आवश्यकता होती है। यदि सरकार हाउस ऑफ कॉमन्स में विश्वास मत खो देती है, तो उसे अपने कागजात जमा करने या संसद का प्रस्ताव लेने की आवश्यकता होती है। यू.के. संसद के ऊपरी सदन का प्रतिनिधित्व हाउस ऑफ लॉर्ड्स द्वारा किया जाता है, जो क्राउन, यानी सम्राट से बना होता है। यह सदन निचले सदन या हाउस ऑफ कॉमन्स की तुलना में नियुक्ति योग्य है। हालाँकि, यह निचला सदन ही है जो ऊपरी सदन पर शासन करता है। अतीत में, हाउस ऑफ लॉर्ड्स की शक्तियाँ हाउस ऑफ कॉमन्स के बराबर थीं, लेकिन 1911 और 1949 में गैर-मौद्रिक (गैर-राजकोषीय) विधेयकों में देरी के बाद इन्हें काफी कम कर दिया गया था। 1999 में, देश के वंशानुगत साथियों को हाउस ऑफ लॉर्ड्स की सदस्यता से बाहर करने का निर्णय लिया गया था। सम्राट पहले संसद का एक दुर्जेय हिस्सा था। हालाँकि, वर्ष 1952 से, सम्राट लगभग औपचारिक भूमिका निभाता है। क्राउन राष्ट्र की एकता का प्रतिनिधि है और पार्टी की राजनीति से ऊपर है। सम्राट संसद द्वारा अनुमोदित कानून पर वीटो के किसी भी शाही अधिकार का प्रयोग नहीं करता है। आम चुनावों के लिए, यूके में 650 निर्वाचन क्षेत्र हैं। प्रत्येक निर्वाचन क्षेत्र का प्रतिनिधित्व हाउस ऑफ कॉमन्स में एक संसद सदस्य (MP)



करता है। एक सांसद का कार्यकाल अधिकतम पाँच वर्षों का होता है। मोटे तौर पर, ब्रिटेन में छह प्रकार के चुनाव होते हैं:

- यू.के. के आम चुनाव
- संसदों और विधानसभाओं के लिए चुनाव
- यूरोपीय संसद के लिए चुनाव
- स्थानीय चुनाव
- मेयर चुनाव
- पुलिस और अपराध आयुक्त चुनाव

मतदान चुनाव के दिन होते हैं जो परंपरागत रूप से गुरुवार होता है। आम चुनाव भी तय तिथियों पर होते हैं। संसद के खुलने के पाँच साल के भीतर उन्हें बुलाना एक नियम है, जो पिछले चुनावों के बाद होता है। अन्य चुनाव भी तय तिथियों पर होते हैं। विधानसभाओं और संसदों के मामले में, कुछ स्थितियों में समय से पहले चुनाव हो सकते हैं।

11.3.1.1. चुनावी प्रणालियाँ (Electoral systems)

वर्तमान में, यू.के. में छह चुनावी प्रणालियाँ लागू हैं:

- एकल सदस्य बहुलता प्रणाली (फर्स्ट-पास्ट-द-पोस्ट)
- बहु-सदस्य बहुलता प्रणाली
- पार्टी सूची
- एकल हस्तांतरणीय वोट
- अतिरिक्त सदस्य प्रणाली
- पूरक वोट

- **फर्स्ट-पास्ट-द-पोस्ट (first-past-the-post)**

इस प्रणाली का उपयोग हाउस ऑफ कॉमन्स के सदस्यों के चुनाव में और इंग्लैंड और वेल्स में अन्य स्थानीय चुनावों के दौरान किया जाता है। इस प्रणाली के तहत, देश या स्थानीय अधिकारियों को कई मतदान क्षेत्रों में विभाजित किया जाता है, जिन्हें निर्वाचन क्षेत्र या वार्ड भी कहा जाता है। आम मतदान के दौरान, मतदाता मतपत्र



पर अपने पसंदीदा उम्मीदवार के नाम के सामने क्रॉस का निशान लगाते हैं। अंत में मतपत्रों की गिनती की जाती है और इस तरीके से अधिकतम वोट पाने वाले उम्मीदवारों को उनके निर्वाचन क्षेत्र या वार्ड का प्रतिनिधित्व करने के लिए चुना जाता है।

- **पूरक वोट (Supplementary vote)**

इस प्रणाली का उपयोग लंदन के मेयर और इंग्लैंड व वेल्स में अन्य लोगों को चुनने के लिए किया जाता है। इस प्रणाली की प्रक्रिया वैकल्पिक वोट प्रणाली के समान है। हालाँकि, इसके तहत मतदाता केवल पहली और दूसरी प्राथमिकता का वोट ही डाल सकते हैं। इस प्रकार, एक मतदाता एक कॉलम में पहली प्राथमिकता (preference) और दूसरे में दूसरी प्राथमिकता के लिए निशान लगाता है। दूसरी प्राथमिकता अनिवार्य नहीं है। गिनती के दौरान, यदि किसी उम्मीदवार को पहली गिनती के दौरान पहली वरीयता के 50 प्रतिशत से अधिक वोट मिलते हैं, तो उसका चयन किया जाता है। यदि यह आंकड़ा नहीं पहुँचता है, तो सबसे अधिक वोट पाने वाले उम्मीदवारों को बरकरार रखा जाता है और बाकी उम्मीदवारों को बाहर कर दिया जाता है। इसके बाद, बाहर किए गए उम्मीदवारों में से दूसरी वरीयता की गणना की जाती है और पहले दो उम्मीदवारों के पक्ष में मिले वोट उनके नाम पर स्थानांतरित कर दिए जाते हैं। इस प्रक्रिया में सबसे अधिक वोट पाने वाले उम्मीदवार को विजेता घोषित किया जाता है।

- **वैकल्पिक वोट (Alternative vote)**

इस प्रणाली का उपयोग हाउस ऑफ कॉमन्स में अधिकांश समितियों (committees) के साथ-साथ लॉर्ड स्पीकर के चुनाव के लिए और वंशानुगत साधियों के लिए उपचुनाव के दौरान किया जाता है। इस प्रणाली के तहत, मतदाता रैंकिंग के तरीके से 'मतदान' करते हैं। उम्मीदवारों को मतपत्र पर 1, 2 या 3 और इसी तरह के रूप में रैंक किया जाता है। एक मतदाता जितने उम्मीदवारों को चाहे उतने या सिर्फ एक को रैंक कर सकता है। इन वरीयताओं (preferences) के उपयोग से अंतिम गणना की जाती है। यदि किसी उम्मीदवार को पहली वरीयता के 50 प्रतिशत से अधिक वोट मिलते हैं, तो उसे चुना जाता है। यदि कोई भी उम्मीदवार 50 प्रतिशत के इस निशान तक नहीं पहुँच पाता है, तो सबसे कम पहली वरीयता वाले वोट वाले उम्मीदवार बाहर हो जाते हैं। उनके वोट अगली पंक्ति में यानी दूसरी वरीयता वाले उम्मीदवारों को दिए जाते हैं। यदि एक चरण तक पहुँच जाता है जहाँ किसी उम्मीदवार को सभी अन्य उम्मीदवारों के कुल वोटों से अधिक वोट मिलते हैं, तो उसे चुना जाता है। यदि ऐसा नहीं होता है, तो उम्मीदवारों को प्रक्रिया से हटा दिया जाता है और वरीयता वोटों का पुनः



आवंटन(reallocation) तब तक दोहराया जाता है जब तक कि सबसे अधिक वोट पाने वाले उम्मीदवार का चयन नहीं हो जाता।

- **एकल हस्तांतरणीय मत (single transferable vote)**

इस प्रणाली का उपयोग हाउस ऑफ कॉमन्स में उप-अध्यक्षों के चुनाव के लिए किया जाता है। इस प्रणाली का इस्तेमाल स्कॉटलैंड और उत्तरी आयरलैंड के स्थानीय चुनावों में किया जाता है। इसके अलावा, उत्तरी आयरलैंड में विधानसभा के चुनाव और यूरोपीय संसद के चुनावों में भी इसका उपयोग होता है। इस प्रणाली का पालन करने में सक्षम होने के लिए, बहु-सदस्यीय निर्वाचन क्षेत्रों की आवश्यकता होती है, अर्थात्, वे निर्वाचन क्षेत्र जो बड़े होते हैं और कई प्रतिनिधियों का चुनाव करते हैं। इस प्रणाली के तहत, मतदाता उम्मीदवारों को मतपत्र पर 1, 2, 3 और इसी तरह की श्रृंखला में रैंक करते हैं। एक मतदाता को जितने उम्मीदवारों को रैंक करना है या सिर्फ एक को रैंक करने का अधिकार है। उम्मीदवारों को चुने जाने के लिए न्यूनतम वोटों की आवश्यकता होती है। उनकी संख्या उपलब्ध सीटों और डाले गए वोटों की संख्या के अनुसार गणना की जाती है। इसे कोटा कहा जाता है। उम्मीदवारों को मतदाताओं द्वारा चिह्नित वरीयता के अनुसार रैंक किया जाता है और इस कोटा को प्राप्त करने वाले उम्मीदवार को निर्वाचित घोषित किया जाता है। यदि किसी उम्मीदवार को कोटा में जगह बनाने के लिए आवश्यक वोटों से अधिक वोट मिले हैं, तो उसके अधिशेष वोट अन्य उम्मीदवारों को हस्तांतरित कर दिए जाते हैं। इस प्रकार, विजेता के वोट वरीयता सूची में दूसरे स्थान पर मौजूद व्यक्ति को जाते हैं। यदि कोटा पूरा नहीं होता है, तो न्यूनतम प्रथम वरीयता वाले वोट वाले उम्मीदवार को दौड़ से बाहर घोषित कर दिया जाता है और वोट अन्य उम्मीदवारों को हस्तांतरित कर दिए जाते हैं। यह प्रक्रिया तब तक दोहराई जाती है जब तक कि सभी सीटें भर नहीं जातीं।

- **अतिरिक्त सदस्य प्रणाली (Additional member system)**

इस तरह की प्रणाली का उपयोग स्कॉटिश संसद यानी वेल्स की राष्ट्रीय विधानसभा और लंदन विधानसभा के चुनाव के लिए किया जाता है। इस प्रणाली के तहत, मतदाताओं को दो वोट दिए जाते हैं: एक व्यक्ति के लिए और दूसरा चुनाव लड़ने वाली पार्टी के लिए। पहली श्रेणी में, एकल-सदस्यीय निर्वाचन क्षेत्रों के लिए उम्मीदवारों का चयन किया जाता है और फ़र्स्ट-पास्ट-द-पोस्ट या सेकंड बैलट या वैकल्पिक वोट की पद्धति का उपयोग किया जाता है। पार्टी वोट में, अनुपात के अनुसार बड़े क्षेत्र के लिए अतिरिक्त सदस्यों का चयन किया जाता है। इस श्रेणी में, प्रत्येक पार्टी द्वारा डाले गए वोटों के प्रतिशत का उपयोग प्रत्येक क्षेत्र में प्रतिनिधियों की कुल संख्या स्थापित



करने के लिए किया जाता है। इसमें एकल सदस्य निर्वाचन क्षेत्रों के वे सदस्य शामिल हैं जिनके लिए वोट डाले जाते हैं।

• बंद पार्टी सूची (Closed party list)

ऐसी प्रणाली का उपयोग यूरोपीय संसद के सदस्यों को चुनने के लिए किया जाता है। उत्तरी आयरलैंड के मामले में अपवाद (exception) बनाया गया है जहाँ एकल हस्तांतरणीय वोट की प्रणाली का उपयोग किया जाता है। इस प्रणाली के अनुसार, मतदाता को मतपत्र पर उस पार्टी के सामने (क्रॉस के रूप में) चिह्न लगाना होता है, जिसका वह समर्थन करना चाहता है। सभी मतपत्रों की गिनती हो जाने के बाद, प्रत्येक पार्टी को प्रत्येक निर्वाचन क्षेत्र में प्राप्त मतों के अनुपात में सीटें दी जाती हैं। ऐसी सूची के लिए, बहु-सदस्यीय निर्वाचन क्षेत्रों की आवश्यकता होती है। ये वे निर्वाचन क्षेत्र हैं जो बड़े हैं और कई प्रतिनिधियों का चुनाव करते हैं। ऐसी प्रणाली में, स्थानीय स्तर पर मतदान होता है। मतदान प्रक्रिया की देखभाल रिटर्निंग अधिकारी द्वारा की जाती है और सभी निचले स्तर के स्थानीय प्राधिकरणों में चुनावी रजिस्टर चुनावी पंजीकरण अधिकारी द्वारा बनाया जाता है। उत्तरी आयरलैंड के मामले में अपवाद किया जाता है, जहाँ देश का चुनावी कार्यालय दोनों ज़िम्मेदारियाँ रखता है। चुनाव निकाय (election body) सिद्धांत निर्धारित करता है और रिटर्निंग अधिकारियों और सभी चुनावी पंजीकरण अधिकारियों को दिशा-निर्देश जारी करता है, भले ही वह पूरे देश में मतदान प्रक्रिया का इन्चार्ज हो। उदाहरण के लिए, चुनाव आयोग राजनीतिक दलों को भी पंजीकृत करता है और राष्ट्रीय जनमत संग्रह का संचालन करता है।

पंजीकरण का अधिकार (Right to registration)

कोई भी व्यक्ति जो 18 वर्ष से अधिक आयु का है और यू.के., आयरलैंड गणराज्य, राष्ट्रमंडल देश (फिजी, जिम्बाब्वे और संपूर्ण साइप्रस सहित) या यूरोपीय संघ के सदस्य राज्य का नागरिक है, यू.के. के उस जिले के निर्वाचन पंजीकरण अधिकारी के पास अपना नाम पंजीकृत करा सकता है, जहाँ वह रहता है। ऐसे व्यक्तियों को क्षेत्र के निर्वाचन रजिस्टर में 'काफी हद तक स्थायी' होने का भी उल्लेख करना होगा। लोग अपना पता देकर भी पंजीकरण करा सकते हैं, भले ही वे मतदान के समय दूर हों। इस प्रावधान का उपयोग काम के लिए बाहर जाने, छुट्टी पर जाने, छात्र आवास में रहने या अस्पताल में भर्ती होने की स्थिति में किया जा सकता है। दो घरों वाला व्यक्ति, उदाहरण के लिए, छात्रावास में रहने वाला छात्र और उसका स्थायी आवासीय पता, पते के अंतर्गत आने वाले किसी भी बूथ में मतदान करने के लिए पंजीकरण करा सकता है, बशर्ते वे एक ही क्षेत्र में न हों। इसके अतिरिक्त, चुनावी रजिस्टर में नाम दर्ज कराने के लिए, जो लोग राष्ट्रमंडल नागरिक भी हैं, उन्हें इस उद्देश्य के लिए या तो यू.के. में प्रवेश करना होगा या वहाँ रहना होगा। आवेदक को जेल या मानसिक अस्पताल में सजा पाए हुए



व्यक्ति के रूप में पंजीकृत नहीं किया जा सकता, या यदि वह भ्रष्टाचार या अवैध गतिविधियों में लिप्त पाया जाता है, तो उसे पंजीकरण की अनुमति नहीं दी जाएगी।

• चुनावी रजिस्टर (Electoral register)

प्रत्येक जिला परिषद द्वारा एक चुनावी रजिस्टर बनाए रखा जाता है; यह सभी पंजीकृत मतदाताओं का संकलन है। इसमें प्रत्येक मतदाता का नाम, पता और चुनावी संख्या शामिल है; किसी विशेष श्रेणी के तहत पंजीकृत मतदाता, उदाहरण के लिए सेवा मतदाता; साथ ही प्रत्येक अनाम मतदाता की चुनावी संख्या। पंजीकरण के समय 18 वर्ष की आयु तक नहीं पहुंचने वाले मतदाता की जन्म तिथि भी चुनावी रजिस्टर में दर्ज होती है। प्रत्येक जिले के चुनावी रजिस्टर को सभी मतदान जिलों के लिए अलग-अलग रजिस्ट्रों में विभाजित किया गया है। अलग-अलग मतदाताओं के बीच, उनके मताधिकार अलग-अलग हो सकते हैं। इस प्रकार, चुनावी सूची के सामने, मतदाता के नाम के आगे कई मार्कर बनाए जाते हैं ताकि यह पहचाना जा सके कि वह किस चुनाव में मतदान कर सकता है। उदाहरण के लिए, यूरोपीय संघ के नागरिक जो राष्ट्रमंडल या आयरिश नागरिक नहीं हैं, उनके नाम के सामने या तो G अंकित होता है, जिसका अर्थ है कि वे केवल सरकारी चुनावों में मतदान करने के हकदार हैं, या K, जो यूरोपीय संसदीय और स्थानीय सरकार के चुनावों में मतदान करने की उनकी पात्रता को दर्शाता है। विदेश में रहने वाले मतदाताओं के नाम के आगे F अंकित होता है, जो यूरोपीय और यू.के. संसदीय चुनावों में मतदान करने की उनकी पात्रता को दर्शाता है। यू.के. में रहने वाले हाउस ऑफ लॉर्ड्स के सदस्यों के नाम के आगे L अक्षर लगा होता है, जो दर्शाता है कि वे केवल यूरोपीय संसदीय और स्थानीय सरकार के चुनावों में मतदान कर सकते हैं। विदेश में रहने वाले सदस्यों के नाम के आगे E अक्षर अंकित होता है, जिसका अर्थ है कि वे केवल यूरोपीय संसदीय चुनावों में ही मतदान कर सकते हैं। चुनावी रजिस्टर प्रत्येक वर्ष 1 दिसंबर को 'वार्षिक प्रचार' अवधि के बाद मुद्रित किया जाता है। अपवाद तब होता है जब मतदान 1 जुलाई से 1 दिसंबर के बीच आयोजित किया जाता है। इस मामले में, रजिस्टर अगले वर्ष 1 फरवरी को प्रकाशित किया जाता है। वर्ष 2012 में, 15 नवंबर को पुलिस और अपराध आयुक्त के चुनाव निर्धारित होने के कारण, इंग्लैंड और वेल्स में वार्षिक प्रचार जुलाई और अक्टूबर के बीच आयोजित किया गया था और चुनावी रजिस्टर 16 अक्टूबर को प्रकाशित किया गया था। पंजीकरण अवधि जनवरी और सितंबर के बीच है। रजिस्टर में नाम बदलने की सूचना प्रत्येक महीने के पहले कार्य दिवस पर प्रकाशित की जाती है, जिसमें मतदाता अपने नाम जोड़, हटा या संशोधित कर सकते हैं। ऐसी सूचना वर्ष के किसी भी समय चुनाव से पांच कार्य दिवस पहले या मतदान बंद होने से ठीक पहले किसी त्रुटि को ठीक करने के लिए या सरकार द्वारा ऐसा आदेश दिए जाने की स्थिति में भी दी जाती है। जिस व्यक्ति की मृत्यु हो चुकी है और जो रजिस्टर से



स्वतः हटा दिया गया है, उसे छोड़कर, रजिस्टर में शामिल या हटाए गए प्रत्येक व्यक्ति को मुख्य निर्वाचन पंजीकरण अधिकारी द्वारा सूचित किया जाना चाहिए।

चुनावी रजिस्टर के दो संस्करण मौजूद हैं। एक पूर्ण रजिस्टर होता है और दूसरा संशोधित रजिस्टर। पूर्ण रजिस्टर की जांच चुनावी पंजीकरण अधिकारी की देखरेख में की जानी चाहिए। जिले के रिटर्निंग ऑफिसर को रजिस्टर निःशुल्क उपलब्ध कराना होगा, साथ ही ब्रिटिश लाइब्रेरी, चुनाव आयोग, राष्ट्रीय सांख्यिकी कार्यालय (केवल अंग्रेजी और वेल्श रजिस्टर), स्कॉटलैंड के लिए सामान्य रजिस्टर कार्यालय (केवल स्कॉटिश रजिस्टर), वेल्स की राष्ट्रीय लाइब्रेरी (केवल अंग्रेजी और वेल्श रजिस्टर), स्कॉटलैंड की राष्ट्रीय लाइब्रेरी (केवल अंग्रेजी और स्कॉटिश रजिस्टर) और संबंधित सीमा आयोग को भी रजिस्टर उपलब्ध कराना होगा। दूसरी ओर, संपादित रजिस्टर चुनावी पंजीकरण अधिकारियों के पास बिक्री के लिए उपलब्ध है और इसका इस्तेमाल निजी उद्देश्य के लिए किया जा सकता है। लोग अपने स्थानीय चुनावी पंजीकरण अधिकारी को सूचित करने के बाद इस रजिस्टर से अपना नाम हटवाना भी चुन सकते हैं।

11.3.1.2. बहुलता मतदान और पार्टी प्रतिनिधित्व (Plurality voting and party representation)

यू.के. में मतदान प्रणाली की एक महत्वपूर्ण विशेषता किसी राजनीतिक दल द्वारा प्राप्त मतों की संख्या नहीं है, बल्कि वह संख्या है जिसके साथ वह चुनावी दौड़ में अन्य दलों को हराता है। यह सीमांत निर्वाचन क्षेत्रों में विशेष रूप से सच है, जहाँ बहुमत के आधार पर सीटें 10 प्रतिशत से कम वोटों से जीती जाती हैं। विडंबना यह है कि चुनावों का अंतिम परिणाम इन सीटों पर निर्भर करता है, और अधिकांश पार्टियाँ अपने मार्जिन को सुरक्षित करने और फिर अपने विरोधियों द्वारा प्राप्त सीटों पर कब्जा करने पर ध्यान केंद्रित करती हैं।

• वोट डालने के तरीके (Methods of casting vote)

यू.के. संविधान योग्य मतदाताओं को इन विभिन्न तरीकों से अपना मत डालने की अनुमति देता है:

(i) व्यक्तिगत रूप से (Individually)

मतदान के दिन, बूथ सुबह 7 बजे से रात 10 बजे तक खुले रहते हैं। प्रत्येक स्थानीय प्राधिकरण का रिटर्निंग अधिकारी मतदाताओं को उनका मतदान कार्ड देता है जिसमें उन्हें आवंटित मतदान स्थलों का विवरण होता है। मतदान करने में सक्षम होने के लिए मतदाताओं को मतदान केंद्र पर अपना मतदाता कार्ड या कोई अन्य पहचान दस्तावेज दिखाने की आवश्यकता नहीं होती है। उत्तरी आयरलैंड में, मतदान केंद्र पर एक पहचान दस्तावेज की आवश्यकता होती है जो या तो एनआई इलेक्टोरल आइडेंटिटी कार्ड (NI Electoral Identity Card), एक



फोटोग्राफिक एनआई या जीबी ड्राइविंग लाइसेंस (A photographic NI or GB driving licence) यूके या अन्य ईयू पासपोर्ट, ट्रांसलिक 60+ स्मार्टपास, ट्रांसलिक सीनियर स्मार्टपास, ट्रांसलिक ब्लाइंड पर्सन स्मार्टपास या ट्रांसलिक वॉर डिसेबल्ड स्मार्टपास हो सकता है। सत्यापित होने और मतदाता सूची में चिह्नित होने पर, प्रत्येक बूथ पर पीठासीन अधिकारी या मतदान क्लर्क प्रत्येक मतदाता को मतपत्र जारी करता है। मतदाता को एक मतदाता संख्या और मतदान जिले का संदर्भ दिया जाता है, जब तक कि वह एक अनाम मतदाता न हो। मतपत्रों पर आधिकारिक चिह्न होता है, जो वॉटरमार्क या छिद्र हो सकता है, और इसमें एक अनूठी पहचान संख्या भी होती है। इन दोनों के बिना जारी किए गए कागजात को अमान्य घोषित कर दिया जाता है और अंतिम गणना के दौरान उनकी गिनती नहीं की जाती है। एक अलग सूची भी होती है, जिसे संगत संख्या सूची कहा जाता है, जहाँ मतदान की अध्यक्षता करने वाला अधिकारी मतपत्र की विशिष्ट पहचान संख्या के आगे मतदाता की मतदाता संख्या लिखता है। मतपत्र की गोपनीयता बनाए रखने के लिए, इस कागज को सील कर दिया जाता है और चुनाव परिणाम को चुनौती दिए जाने पर ही इसे खोला जाता है। मतपत्र को मतदान केंद्र के एक निजी कोने में चिह्नित किया जाता है। यदि कागज खराब हो जाता है, तो अधिकारी मतदाता को एक नया जारी कर सकता है और पुराने को रद्द कर सकता है। मतपेटी में चिह्नित कागज जमा करने से पहले, मतदाता को प्रमुख अधिकारी को मतपत्र के पीछे दिए गए आधिकारिक चिह्न या विशिष्ट पहचान संख्या को दिखाना आवश्यक है। कानून में टेंडर बैलेट का भी प्रावधान है। उदाहरण के लिए, इस सेवा का उपयोग तब किया जा सकता है, जब कोई मतदाता मतपत्र मांगता है, भले ही उसका नाम मतदाता सूची में अंकित हो। हालांकि इसका मतलब यह होगा कि मतदाता ने अपना वोट पहले ही डाल दिया है, भले ही उसने ऐसा न किया हो और वह प्रतिरूपण का शिकार हो, उसे टेंडर बैलेट डालने की अनुमति है। यह प्रावधान उस स्थिति में भी अनुमत है, जब कोई मतदाता डाक मतपत्र के लिए आवेदन करके मतदान केंद्र पर आता है। ऐसे मामलों में, मतपत्र पर निशान लगाने के बाद, मतदाता इसे मतपेटी के अंदर नहीं डाल सकता है, बल्कि उसे प्रमुख अधिकारी को लौटाना होता है, जो उस पर मतदाता का नाम, मतदाता संख्या और मतदान जिले का संदर्भ अंकित करता है। फिर इसे एक विशेष लिफाफे में रखा जाता है। फिर मतदाता का विवरण 'प्रस्तुत मतों की सूची' में दर्ज किया जाता है। प्रस्तुत मतपत्रों को अंतिम मतों की गिनती में नहीं गिना जाता है, लेकिन वे उस रिकॉर्ड का हिस्सा होते हैं जिसमें मतदाता ने कोशिश की और वोट नहीं डाल पाया। यह इस बात का भी सबूत है कि मतदाता मतदान को लेकर चिंतित है। यदि कोई मतदाता शिकायत करना चाहता है, तो उसे पहले प्रस्तुत मतपत्र पर निशान लगाना होगा।



मतदान समाप्त होने के बाद, मतदान की अध्यक्षता करने वाले अधिकारी द्वारा मतपेटी के ऊपरी हिस्से को सील कर दिया जाता है और उसे केंद्रीय मतगणना स्थल पर ले जाया जाता है, जहाँ अंतिम गणना की जाती है।

(ii) डाक द्वारा (By post)

कानून के अनुसार, पात्र व्यक्ति बिना कोई कारण बताए एक चुनाव या आजीवन सभी चुनावों के लिए डाक द्वारा मतपत्र प्राप्त कर सकते हैं। हालांकि, उत्तरी आयरलैंड में, मतदाताओं से यह सेवा प्राप्त करने के लिए अपनी अनुपस्थिति का कारण बताने की अपेक्षा की जाती है। इस सेवा के लिए आवेदन आधिकारिक मतदान दिवस से 11 कार्य दिवस पहले शाम 5 बजे से पहले करना आवश्यक है। यह वह समय भी है जब डाक मतपत्र भेजे जा सकते हैं। ऐसे मतपत्र देश के बाहर भी भेजे जा सकते हैं। यदि उन्हें मतदाता द्वारा पंजीकृत पते पर नहीं भेजा जाना है, तो चुनाव आयोग को कारण बताना होगा कि उन्हें वैकल्पिक पते पर क्यों भेजा जाना चाहिए। मतदाताओं को अपनी जन्मतिथि सहित सभी आवश्यक विवरण भरने और अपने आधिकारिक हस्ताक्षर करने के बाद अपने डाक मतपत्र वापस करने होंगे। फिर, इसे मतदान के दिन या निर्वाचन क्षेत्र/वार्ड में स्थित बूथ पर हाथ से या डाक से रिटर्निंग अधिकारी को भेजा जाता है। निर्वाचन क्षेत्र/वार्ड का पता मतदाता को भेजे गए रिटर्न लिफाफे पर मुद्रित होता है। डाक मतपत्र को वोट के रूप में गिने जाने के लिए, इसे मतदान समाप्त होने से पहले मतदान केंद्र पर प्रभारी व्यक्ति द्वारा प्राप्त किया जाना चाहिए, जो आमतौर पर दिन के 10 बजे होता है।

(iii) प्रॉक्सी द्वारा (By proxy)

यू.के. मतदान पैटर्न की एक अनूठी विशेषता प्रॉक्सी मतदान है। इसका मतलब है कि कोई भी व्यक्ति जो मतदान करने के योग्य है, लेकिन ऐसा नहीं कर सकता है, वह अपने लिए मतदान करने के लिए किसी अन्य व्यक्ति को नियुक्त कर सकता है। हालांकि, प्रॉक्सी नियुक्त करने के लिए, एक आवेदन भरकर स्थानीय निर्वाचन पंजीकरण अधिकारी को भेजना होगा और इसे मतदान से छह दिन पहले चुनाव आयोग को प्राप्त होना चाहिए। दूसरी ओर, प्रॉक्सी व्यक्ति व्यक्तिगत रूप से मतदान कर सकता है या डाक प्रॉक्सी वोट के लिए आवेदन कर सकता है। डाक प्रॉक्सी वोट आवेदन मतदान से 11 दिन पहले चुनाव आयोग को प्राप्त होना चाहिए। उदाहरण के लिए, यदि कोई मतदाता किसी आपात स्थिति में मतदान नहीं कर सकता है, तो वह मतदान के दिन शाम 5 बजे से पहले किसी भी समय स्थानीय चुनाव आयोग में आपातकालीन याचिका दायर कर सकता है। परिवार के किसी सदस्य को छोड़कर, कोई व्यक्ति अपने निर्वाचन क्षेत्र में प्रत्येक चुनाव में केवल दो मतदाताओं के लिए प्रॉक्सी के रूप में मतदान करने का हकदार है। यदि कोई व्यक्ति एक से अधिक चुनावों के लिए प्रॉक्सी के लिए आवेदन करता है, तो उसे एक सत्यापित प्रति संलग्न करनी होगी और इनमें से किसी एक आधार पर अपने मामले को उचित ठहराना



होगा: अंधापन, विकलांगता, रोजगार, शिक्षा पाठ्यक्रम के लिए देश से बाहर, सेवा के रूप में पंजीकृत, विदेश में या अनाम मतदाता। हालांकि, यदि प्रॉक्सी केवल एक मतदान के लिए आवेदन किया जा रहा है, तो व्यक्ति को यह कारण बताना होगा कि वह व्यक्तिगत रूप से क्यों नहीं आ सकता है। इस मामले में सत्यापन की आवश्यकता नहीं है। यदि मतदान केंद्र तक केवल हवाई या समुद्री मार्ग से पहुंचा जा सकता है, तो मतदाता बिना सत्यापन के भी स्थायी प्रॉक्सी के लिए आवेदन करने के लिए पात्र है।

लेकिन अन्य क्षेत्रों के लोगों के लिए यह कानून अलग है। उदाहरण के लिए, उत्तरी आयरलैंड में, यदि मतदाता किसी अन्य व्यक्ति को प्रॉक्सी के रूप में नियुक्त करना चाहते हैं, तो उन्हें मतदान केंद्र से अपनी अनुपस्थिति के बारे में स्पष्टीकरण देना होगा।

- **सुलभता (Accessibility)**

कानून के अनुसार, सभी मतदान केंद्रों को शारीरिक रूप से अक्षम लोगों के लिए सुलभ बनाया जाना चाहिए और पीडी-अनुकूल उपकरणों से सुसज्जित किया जाना चाहिए। दृष्टिबाधित लोगों के लिए एक बड़ा प्रिंट डिस्प्ले भी रखा जाना चाहिए। इसका उपयोग संदर्भ के लिए किया जा सकता है। मतदान में सहायता के लिए पीठासीन अधिकारी (presiding officer) के रूप में पीडी और वीआई को सेवा भी प्रदान की जाती है या वे मदद के लिए अपने परिवार के किसी सदस्य को भी साथ ला सकते हैं। यदि कोई व्यक्ति विकलांगता के कारण मतदान केंद्र में प्रवेश नहीं कर सकता है, तो पीठासीन अधिकारी को मतदाता के लिए मतपत्र निकालना आवश्यक है। निर्वाचन आयोग द्वारा विदेशी भाषाओं में चुनावी पंजीकरण फॉर्म उपलब्ध कराए जाते हैं, लेकिन कानून के अनुसार, वेल्स में मतपत्र जैसी सभी मतदान सामग्री केवल अंग्रेजी और वेल्श में ही मुद्रित की जाती है।

- **चुनाव के बाद की प्रक्रिया (Post-election process)**

मतदान आम तौर पर रात 10 बजे समाप्त होता है। अधिकांश निर्वाचन क्षेत्रों में, वोटों की गिनती तुरंत की जाती है। सबसे पहले, नतीजे शाम को 11 बजे एक घंटे के भीतर घोषित किए जाते हैं। रात को 3 या 4 बजे भी नतीजे घोषित किए गए हैं। कुछ निर्वाचन क्षेत्रों में अगले दिन नतीजे घोषित किए जाते हैं। जब घोषणा होती है और किसी एक पार्टी को हाउस ऑफ कॉमन्स में पूर्ण बहुमत प्राप्त होता है, तो निवर्तमान प्रधानमंत्री द्वारा एक सार्वजनिक बयान दिया जाता है। यदि बहुमत उसी पार्टी को प्राप्त होता है जो पहले सत्ता में थी, तो वे पुनर्पुष्टि या पुनर्नियुक्ति किए बिना पद पर बने रहते हैं। उनके कार्यकाल की शुरुआत चिह्नित नहीं की जाती है। यदि कोई नई पार्टी बहुमत प्राप्त करती है, तो निवर्तमान प्रधानमंत्री सम्राट को इस्तीफा सौंप देता है। फिर सम्राट बहुमत प्राप्त करने वाली



पार्टी के नेता को सरकार बनाने के लिए बुलाता है। संविधान प्रधानमंत्री को सत्ता में बने रहने का विकल्प देता है, भले ही उसकी पार्टी की सीटें खो गई हों। इसके बाद रानी का भाषण होता है, जिसमें अगले विधायी (legislative) कार्यक्रम का विवरण प्रस्तुत किया जाता है। यह प्रक्रिया हाउस ऑफ कॉमन्स को रानी के भाषण को स्वीकार या अस्वीकार करके विश्वास या अविश्वास प्रस्ताव देने का मौका देती है।

रानी के पास वर्तमान प्रधानमंत्री को बर्खास्त करने और प्रतिस्थापन की मांग करने का अधिकार है क्योंकि इस मामले पर कोई संवैधानिक दिशा-निर्देश नहीं हैं, हालांकि उदाहरण उपलब्ध हैं। इस तरह की आखिरी घटना 1834 में लॉर्ड मेलबर्न की बर्खास्तगी थी। यह संकट को जन्म दे सकता है जैसा कि 1975 में हुआ था और ऑस्ट्रेलियाई संवैधानिक संकट का कारण बना था। हाल के प्रधानमंत्रियों ने बहुमत हासिल न करने के बावजूद इस्तीफा नहीं देने का फैसला किया है, वे हैं 1974 में एडवर्ड हीथ और 2010 में गॉर्डन ब्राउन। 1974 में लिबरल पार्टी के साथ बातचीत विफल होने के बाद, हीथ ने अपने कागजात सौंप दिए जिसके बाद रानी द्वितीय ने लेबर नेता हेरोल्ड विल्सन को सरकार बनाने के लिए कहा। इसलिए, वर्तमान प्रधान मंत्री पर चुनाव परिणामों पर प्रतिक्रिया करने का दायित्व है, या तो इस्तीफा देने या जारी रखने का फैसला करके। इस बिंदु तक सम्राट की कोई भूमिका नहीं होती है। प्रधानमंत्री के इस्तीफा देने का फैसला करने के बाद ही सम्राट दूसरी पार्टी के नेता से सरकार बनाने के लिए कहता है। उदाहरण के लिए, 1979-1990 तक प्रधानमंत्री रहने के बावजूद मार्गरेट थैचर को सरकार बनाने के लिए सिर्फ एक बार कहा गया था। टोनी ब्लेयर को भी 1997 में एक बार सरकार बनाने के लिए कहा गया था। प्रधानमंत्री किसी भी समय मंत्रियों के फेरबदल का आदेश दे सकते हैं, लेकिन हर चुनाव के बाद भी प्रधानमंत्री मंत्रियों के बड़े या छोटे फेरबदल में शामिल हो सकते हैं। सरकार संभालने के बाद, सबसे बड़ी पार्टी जो बहुमत हासिल नहीं कर पाती, विपक्षी पार्टी बन जाती है। इसे महामहिम का वफादार विपक्ष भी कहा जाता है। अन्य सभी छोटी पार्टियाँ जो सरकार नहीं बना पातीं, उन्हें सिर्फ 'विपक्ष' कहा जाता है।

सदन में सदस्यों की मृत्यु, त्यागपत्र के कारण रिक्तियां उपचुनाव के माध्यम से भरी जाती हैं। उपचुनाव के लिए कोई निश्चित समय-सीमा नहीं है और रिक्तियां बनने के महीनों बाद भी उन्हें भरा जा सकता है। यदि आम चुनाव निकट भविष्य में होने हैं तो उन्हें बिल्कुल भी नहीं भरा जा सकता। संसद के विघटन का अर्थ है कि सभी सीटें रिक्त हैं और चुनाव कराने होंगे। आम चुनाव कितनी बार होते हैं? जैसा कि पहले उल्लेख किया गया है, इस अधिनियम के तहत, हर पांच साल में मई महीने के पहले गुरुवार को चुनाव होते हैं। निम्नलिखित दो प्रावधानों के तहत, उक्त पांच वर्षों के अलावा अन्य अवसरों पर भी चुनाव कराए जा सकते हैं:



- जब महामहिम की सरकार में साधारण बहुमत से अविश्वास प्रस्ताव पारित हो जाता है और सदन द्वारा किसी नई सरकार में विश्वास प्रस्ताव पारित किए बिना 14 दिन बीत जाते हैं।
- जब आम चुनाव के लिए प्रस्ताव हाउस ऑफ कॉमन्स की कुल सीटों की संख्या के दो-तिहाई से सहमत हो जाता है। इसमें रिक्त सीटें भी शामिल हैं, जो वर्तमान में 650 में से 434 हैं।

इस अधिनियम के लागू होने से पहले, संसद का कार्यकाल पांच वर्षों का निर्धारित था, हालांकि इस अवधि से पहले कई बार संसद भंग की जा चुकी थी। ऐसा हमेशा प्रधानमंत्री द्वारा सम्राट से अनुरोध करने पर किया जाता था।

11.4. पाठ का आगे का मुख्य भाग (Further Main Body of the Text)

11.4.1. संयुक्त राज्य अमेरिका में चुनावी प्रक्रिया (Electoral process in the United States)

दो पार्टियों ने लंबे समय तक अमेरिकी राजनीतिक परिदृश्य पर अपना दबदबा बनाए रखा है - रिपब्लिकन या डेमोक्रेट। 1852 से अमेरिका में चुने गए हर राष्ट्रपति का संबंध इन दोनों में से किसी एक पार्टी से रहा है। अमेरिकी प्रणाली के अनुसार, देश में 'एकल-सदस्यीय जिला प्रणाली' लागू होती है। जिस उम्मीदवार को अपने राज्य में सबसे ज़्यादा वोट मिलते हैं, उसे राष्ट्रपति चुना जाता है। इस प्रकार, मतदाता अपने राज्य में मतदाताओं के लिए मतदान करते हैं। इस प्रकार देश के नेता का चुनाव अप्रत्यक्ष रूप से होता है। कुल मिलाकर, इलेक्टोरल कॉलेज में 538 इलेक्टर होते हैं। राष्ट्रपति चुनाव जीतने के लिए, सबसे ज़्यादा आबादी वाले राज्यों में जीतना ज़रूरी है। देश भर में डाले गए सभी इलेक्टोरल वोटों में से, उम्मीदवार को 538 में से कम से कम 270 वोटों से पूर्ण बहुमत हासिल करना होता है। अमेरिका में एक संघीय सरकार है और सदस्य राष्ट्रीय, राज्य और स्थानीय स्तर पर चुने जाते हैं। संघीय या राष्ट्रीय स्तर पर, राष्ट्रपति शुरुआत का मुखिया होता है और जैसा कि ऊपर बताया गया है, अप्रत्यक्ष रूप से निर्वाचक मंडल के माध्यम से चुना जाता है। वर्तमान समय में, नागरिक अपने राज्यों में डाले जाने वाले वोटों के साथ लगभग मतदान करते हैं। संघीय विधायिका को कांग्रेस भी कहा जाता है और इसके सभी सदस्य सीधे चुने जाते हैं। राज्य स्तर पर, कई निर्वाचित कार्यालय मौजूद हैं और कई राज्यों में एक निर्वाचित राज्यपाल और विधायिका है। इसी तरह, स्थानीय स्तर और काउंटियों में, कई निर्वाचित कार्यालय हैं। एक अनुमान के अनुसार, अमेरिका में हर चुनावी चक्र में लगभग दस लाख कार्यालय भरे जाते हैं। चुनाव राज्य के कानूनों के माध्यम से विनियमित होते हैं जो अक्सर कई संवैधानिक परिभाषाओं से परे होते हैं। राज्य के कानून मतदाताओं की पात्रता, प्रत्येक राज्य के निर्वाचक मंडल को चलाने के तरीके और स्थानीय और राज्य चुनावों जैसे मुद्दों पर निर्णय लेते हैं। अमेरिकी संविधान के अनुच्छेद I, II और कई संशोधन संघीय चुनावों से संबंधित हैं। अपनी ओर से,



संघीय सरकार राष्ट्रीय मतदाता पंजीकरण अधिनियम, 1993 जैसे उपायों के माध्यम से मतदाताओं को मतदान के लिए प्रोत्साहित करने का प्रयास कर रही है।

चुनावों के वित्तपोषण (the financing of the elections) से जुड़े मुद्दे हमेशा विवादों में घिरे रहे हैं, क्योंकि निजी क्षेत्र द्वारा विशेष रूप से संघीय चुनावों के लिए बहुत अधिक धनराशि प्रदान की जाती है। राष्ट्रपति पद के प्राथमिक चुनावों और चुनावों के लिए वर्ष 1974 में उम्मीदवारों के अभियान के लिए स्वयंसेवकों से सार्वजनिक धन की सीमा तय की गई थी। वर्ष 1975 में संघीय चुनाव अभियान अधिनियम में संशोधन के माध्यम से संघीय चुनाव आयोग का गठन किया गया था। इस निकाय की जिम्मेदारी है कि वह अभियानों के वित्तपोषण के बारे में सभी जानकारी जारी करे ताकि राष्ट्रपति चुनावों के लिए योगदान और सार्वजनिक वित्तपोषण पर सीमा और निषेध जैसे कानूनी प्रावधानों का पालन किया जा सके।

11.4.1.1. पात्रता (Eligibility)

जैसा कि ऊपर उल्लेख किया गया है, मतदान करने के लिए किसी व्यक्ति की पात्रता संविधान में उल्लिखित है और राज्यों द्वारा भी तय की जाती है। संविधान के अनुसार, लिंग, जाति या रंग के आधार पर मतदान के अधिकार से इनकार नहीं किया जा सकता है और 18 वर्ष से अधिक आयु का कोई भी व्यक्ति मतदान कर सकता है। इनके अलावा अन्य मुद्दों पर राज्य विधानसभाओं द्वारा निर्णय लिया जाता है। उदाहरण के लिए, राज्य दोषी अपराधियों, विशेष रूप से अपराधियों को एक निश्चित अवधि या हमेशा के लिए मतदान करने से रोक सकते हैं। कुछ राज्य 'पागल' या 'मूर्ख' व्यक्तियों को भी मतदान करने से रोकते हैं। इन शब्दों को आम तौर पर अपमानजनक माना जाता है और अमेरिका में इन शब्दों की समीक्षा करने या उन्हें हटाने के लिए कदम उठाए जा रहे हैं।

11.4.1.2. राष्ट्रपति चुनाव (President Elections)

अमेरिका के राष्ट्रपति और उपराष्ट्रपति अप्रत्यक्ष रूप से चुने जाते हैं; नागरिक अमेरिकी निर्वाचन मंडल बनाने के लिए कई सदस्यों के लिए अपना वोट डालते हैं। कॉलेज फिर सीधे राष्ट्रपति और उपराष्ट्रपति का चुनाव करता है। राष्ट्रपति के लिए चुनाव हर चार साल में होते हैं, जो वर्ष 1792 से शुरू होते हैं। मतदान चुनाव के दिन होता है, जो परंपरागत रूप से 2 से 8 नवंबर के बीच मंगलवार होता है। विभिन्न राज्यों और स्थानीय काउंटियों में एक साथ मतदान होता है। पिछला चुनाव 2016 में 8 नवंबर को हुआ था। अगला चुनाव 3 नवंबर, 2020 को होने वाला है। चुनाव संघीय और राज्य दोनों कानूनों द्वारा विनियमित होते हैं। प्रत्येक राज्य को अमेरिकी कांग्रेस में सीनेटर्स और प्रतिनिधियों की संख्या के बराबर इलेक्टोरल कॉलेज इलेक्टर्स की संख्या दी जाती है। वाशिंगटन डी.सी. को भी सबसे छोटे राज्य के बराबर इलेक्टर्स दिए गए हैं। इलेक्टोरल कॉलेज में अमेरिकी क्षेत्रों का कोई प्रतिनिधित्व नहीं है। अमेरिकी संविधान प्रत्येक राज्य को यह तय करने का अधिकार देता



है कि वह अपने इलेक्टर्स को कैसे चुनेगा। इसलिए, चुनाव के दिन, लोकप्रिय वोट विभिन्न राज्यों द्वारा आयोजित किया जाता है, न कि केंद्र में सरकार द्वारा। इलेक्टर्स चुने जाने के बाद स्वतंत्र रूप से वोट कर सकते हैं; ऐसे अपवाद भी रहे हैं जैसे कि अप्रतिबद्ध या विश्वासघाती इलेक्टर्स जो अपने उम्मीदवारों को वोट देते हैं। उनके वोटों की पुष्टि कांग्रेस द्वारा की जाती है, जो वोटिंग के दो महीने बाद इलेक्टर्स का अंतिम न्यायाधीश होता है। संघीय चुनावों सहित नामांकन की प्रक्रिया संविधान में निर्दिष्ट नहीं की गई है और इसे विभिन्न राज्यों और राजनीतिक दलों द्वारा विकसित किया जाता है। यह भी एक अप्रत्यक्ष प्रक्रिया है और मतदाता अपने राज्यों के पार्टी सम्मेलनों में प्रतिनिधित्व करने के लिए चुने गए कई प्रतिनिधियों के लिए अपना मत डालते हैं। प्रतिनिधि तब राष्ट्रपति पद के लिए एक उम्मीदवार के पक्ष में अपना वोट डालते हैं।

11.4.1.3. इतिहास (History)

अमेरिकी संविधान के अनुच्छेद ॥ में राष्ट्रपति चुनाव की विधि का विस्तृत विवरण दिया गया है। इसमें निर्वाचक मंडल का चयन शामिल है। अनुच्छेद ॥ और इसकी विषय-वस्तु संविधान निर्माताओं के एक वर्ग के बीच विचार-विमर्श और समझौतों का परिणाम है, जो राष्ट्रपति के चुनाव के लिए कांग्रेस के पास शक्ति रखना चाहते थे, जबकि दूसरा वर्ग राष्ट्रीय मतदान का पक्षधर था। बाद में, प्रत्येक राज्य को कांग्रेस के दोनों सदनों में उसके सदस्यों के आकार के बराबर निर्वाचकों की संख्या दी गई। निर्वाचकों को चुनने की प्रक्रिया प्रत्येक राज्य द्वारा अपने विधानमंडल के माध्यम से तय की जाती है। 1789 में, जब पहले राष्ट्रपति चुनाव हुए थे, तब तत्कालीन 13 राज्यों में से केवल छह ने मतदान के माध्यम से निर्वाचकों को चुना था। हालांकि, बाद में, अधिकांश राज्य लोकप्रिय मतदान की विधि का पालन करते हुए अपने निर्वाचकों का चयन करते हैं। इसका परिणाम आज की तरह एक राष्ट्रव्यापी अप्रत्यक्ष मतदान प्रणाली के रूप में सामने आया।

जैसा कि मूल रूप से अनुच्छेद ॥ के तहत स्थापित किया गया था, निर्वाचकों को दो अलग-अलग राष्ट्रपति पद के उम्मीदवारों के लिए दो वोट देने की अनुमति थी। सबसे अधिक वोट पाने वाले उम्मीदवार को राष्ट्रपति चुना जाता था और दूसरे स्थान पर आने वाले उम्मीदवार को उप-राष्ट्रपति नियुक्त किया जाता था। हालाँकि, इस प्रणाली की अपनी समस्याएँ थीं। उदाहरण के लिए, 1800 के राष्ट्रपति चुनावों में, आरोन बूर को थॉमस जेफरसन के बराबर वोट मिले थे। जेफरसन को कथित तौर पर प्रतिनिधि सभा में अलेक्जेंडर हैमिल्टन के प्रभाव में शीर्ष पद के लिए चुना गया था। बूर ने जेफरसन के चयन को चुनौती दी और इससे दोनों के बीच गहरी प्रतिद्वंद्विता हुई, जिसके परिणामस्वरूप 1804 में उनका प्रसिद्ध द्वंद्व हुआ। 1800 में मतदान के जवाब में अमेरिकी संविधान में 12वां संशोधन पारित किया गया था। इसके लिए मतदाताओं को दो अलग-अलग वोट डालने की आवश्यकता थी, एक राष्ट्रपति के लिए और दूसरा उपराष्ट्रपति के लिए। संशोधन ने उन नियमों को भी प्रदान किया, यदि कोई उम्मीदवार



इलेक्टोरल कॉलेज में बहुमत नहीं जीतता। 1824 के राष्ट्रपति चुनाव के बाद, एंड्रयू जैक्सन ने बहुमत नहीं बल्कि बहुलता दर्ज की। फिर, प्रतिनिधि सभा को मतदान का प्रभार दिया गया और जॉन क्रिसी एडम्स को राष्ट्रपति के रूप में चुना गया। फिर, इससे जैक्सन और सदन के तत्कालीन अध्यक्ष हेनरी क्ले के बीच गहरी प्रतिद्वंद्विता हुई, जो मतदान में उम्मीदवारों में से एक थे।

11.4.1.4. निर्वाचक मंडल (Electoral College)

एक संस्था के रूप में, अमेरिकी इलेक्टोरल कॉलेज हर चार साल में आधिकारिक रूप से राष्ट्रपति और उपराष्ट्रपति का चुनाव करने का प्रभारी होता है। जैसा कि पहले उल्लेख किया गया है, लोग प्रत्येक राज्य में लोकप्रिय वोट के माध्यम से अप्रत्यक्ष रूप से उनका चुनाव करते हैं। सभी राज्यों के अपने इलेक्टर भी होते हैं जो कांग्रेस में उनके सदस्यों की संख्या के बराबर होते हैं। 23वें संशोधन ने कोलंबिया जिले को तीन इलेक्टर दिए। वर्तमान में, अमेरिका में 538 इलेक्टर हैं। इनमें से 435 प्रतिनिधि और 100 सीनेटर हैं, जिनमें कोलंबिया जिले के तीन इलेक्टर शामिल हैं। मेन और नेब्रास्का राज्यों को छोड़कर, अन्य सभी में इलेक्टर 'विजेता-सभी-ले-जाओ' के आधार पर चुने जाते हैं। राष्ट्रपति पद के लिए सबसे ज्यादा वोट पाने वाले उम्मीदवार का समर्थन करने वाले इलेक्टर उसके लिए इलेक्टर बन जाते हैं। मेन और नेब्रास्का राज्य 'कांग्रेसी जिला पद्धति' का उपयोग करते हैं, जिसमें एक इलेक्टर को लोकप्रिय वोट से चुना जाता है और बाकी दो को राष्ट्रव्यापी मतदान के ज़रिए चुना जाता है। संघीय कानून यह नहीं चाहता कि कोई इलेक्टर किसी प्रतिज्ञा का सम्मान करे, लेकिन ऐसे कई उदाहरण हैं जहाँ इलेक्टर ने अपनी प्रतिज्ञा के विरुद्ध मतदान किया। 12वें संशोधन के अनुसार, प्रत्येक इलेक्टर को दो वोट डालने होते हैं, एक राष्ट्रपति के लिए और दूसरा उपराष्ट्रपति के लिए। राष्ट्रपति या उपराष्ट्रपति दोनों ही पदों के लिए सबसे ज्यादा वोट पाने वाला उम्मीदवार - वर्तमान बहुमत 270 है - उस पद के लिए चुना जाता है। 12वें संशोधन में यह भी बताया गया है कि अगर इलेक्टोरल कॉलेज राष्ट्रपति या उपराष्ट्रपति का चयन करने में विफल रहता है, तो क्या उपाय किए जाएंगे। अगर राष्ट्रपति पद के लिए किसी भी उम्मीदवार को बहुमत नहीं मिलता है, तो प्रतिनिधि सभा एक उम्मीदवार का चयन करती है, जिसमें प्रत्येक राज्य के पास एक-एक वोट होता है। यदि किसी भी उम्मीदवार को उपराष्ट्रपति पद के लिए बहुमत नहीं मिलता है, तो सीनेट उसका चयन करती है, जिसमें प्रत्येक सीनेटर के पास एक वोट होता है।

इस प्रणाली के आलोचकों का तर्क है कि इलेक्टोरल कॉलेज की प्रणाली स्वाभाविक रूप से अलोकतांत्रिक है और राज्यों को देश के प्रमुखों को चुनने में अनुचित प्रभाव देती है। ऐसा इसलिए है क्योंकि इलेक्टोरल कॉलेज छोटे राज्यों को राष्ट्रपति चुनाव में संख्यात्मक बहुमत प्रदान करता है क्योंकि ऐसे राज्यों से न्यूनतम निर्वाचक तीन हैं।



दूसरी ओर, मतदान की विजेता-सभी-ले-जाओ पद्धति बड़े राज्यों के पक्ष में है। कई संवैधानिक संशोधनों ने इलेक्टोरल कॉलेज में संशोधन और इसे लोकप्रिय वोट से बदलने की मांग की है।

11.4.1.5. राष्ट्रपति पद के लिए नामांकन (Nomination for the presidency)

सम्मेलन देश में हर चार साल में राष्ट्रपति पद के लिए नामांकन सम्मेलन होता है। यह उन पार्टियों द्वारा आयोजित किया जाता है जो राष्ट्रपति चुनाव में अपने उम्मीदवारों को मैदान में उतारना चाहते हैं। प्रत्येक ऐसे सम्मेलन का उद्देश्य राष्ट्रपति पद के लिए पार्टी के उम्मीदवार को चुनना है। यह पार्टी के सिद्धांतों और लक्ष्यों के एक बयान को अपनाने का भी प्रयास करता है जिसे मंच के रूप में जाना जाता है और पार्टी की गतिविधियों के लिए नियम निर्धारित करता है, जिसमें अगले चुनावों के लिए राष्ट्रपति पद के उम्मीदवार को चुनने की प्रक्रिया भी शामिल है। मतदान कानूनों और अभियान चलाने की प्रक्रिया में बदलाव के कारण, 20वीं सदी के उत्तरार्ध से ऐसे सम्मेलनों ने अपने मूल लक्ष्यों को लगभग त्याग दिया है और वर्तमान में केवल औपचारिक मामले हैं। आज, ऐसे सम्मेलन दो प्रमुख दलों की चतुर्भुज घटनाओं को संदर्भित करते हैं, और उन्हें डेमोक्रेटिक नेशनल कन्वेंशन और रिपब्लिकन नेशनल कन्वेंशन कहा जाता है। अन्य छोटी पार्टियाँ भी ऐसे सम्मेलन आयोजित करती हैं। कुछ उदाहरण ग्रीन पार्टी, सोशलिस्ट पार्टी, लिबरटेरियन पार्टी, संविधान पार्टी और रिफॉर्म पार्टी हैं।

11.4.1.6. नामांकन प्रक्रिया (Enrollment Process)

वर्तमान समय में किसी उम्मीदवार को नामांकित करने की प्रक्रिया को दो भागों में विभाजित किया गया है: राज्यवार राष्ट्रपति प्राथमिक चुनाव और कॉकस और प्रत्येक राजनीतिक दल द्वारा आयोजित नामांकन सम्मेलन। इस प्रक्रिया का अमेरिकी संविधान में कोई उल्लेख नहीं है और इसमें भाग लेने वाले राजनीतिक दलों द्वारा समय के साथ विकास हुआ है। प्राथमिक चुनाव राज्य और स्थानीय सरकार द्वारा आयोजित किए जाते हैं। कॉकस राजनीतिक दलों द्वारा सीधे आयोजित किए जाते हैं। जबकि कुछ राज्य केवल प्राथमिक चुनाव आयोजित करते हैं, कुछ कॉकस आयोजित करते हैं जबकि अन्य दोनों प्रक्रियाएं आयोजित करते हैं। ये प्रक्रियाएँ आम तौर पर संघीय चुनावों से पहले जनवरी और जून के बीच आयोजित की जाती हैं। परंपरागत रूप से, आयोवा और न्यू हैम्पशायर राज्य पहले राज्य कॉकस और प्राथमिक चुनाव आयोजित करते हैं। राष्ट्रपति पद के कॉकस या प्राइमरी आम चुनावों की तरह अप्रत्यक्ष चुनाव होते हैं। यह उनके संबंधित नामांकन सम्मेलनों में होता है जहाँ प्रमुख राजनीतिक दल राष्ट्रपति पद के उम्मीदवार के लिए मतदान करते हैं। ये आमतौर पर संघीय चुनावों से पहले गर्मियों में आयोजित किए जाते हैं। प्रत्येक राज्य या राजनीतिक दल का एक अलग नियम होता है जिसमें मतदाता राष्ट्रपति पद के कॉकस या प्राथमिक चुनाव के लिए मतदान करते हैं। इस तरह की प्रक्रिया में, मतदाता ऐसे प्रतिनिधियों को



पुरस्कृत करने के लिए मतदान कर सकते हैं जो राष्ट्रपति पद के नामांकन सम्मेलनों में किसी विशेष उम्मीदवार के लिए मतदान करेंगे या मतदाता केवल अपनी राय व्यक्त कर सकते हैं जिसका पालन करने के लिए कोई पार्टी राष्ट्रीय सम्मेलन में बाध्य नहीं है। क्षेत्रों के मतदाताओं को राष्ट्रीय सम्मेलनों के लिए प्रतिनिधियों को चुनने का अधिकार भी है। इनके साथ ही, राजनीतिक दलों में 'अप्रतिबद्ध' प्रतिनिधि भी शामिल होते हैं जो अपनी इच्छानुसार किसी को भी वोट दे सकते हैं। रिपब्लिकन के लिए, शीर्ष पार्टी अधिकारी इस सूची में शामिल होते हैं जबकि डेमोक्रेट के लिए, ये आमतौर पर पार्टी के नेता और निर्वाचित अधिकारी होते हैं। प्रत्येक पार्टी के लिए राष्ट्रपति पद का उम्मीदवार एक उप-राष्ट्रपति पद का उम्मीदवार भी चुनता है जो उसके साथ उसी टिकट पर चुनाव लड़ता है। उनकी पसंद को हमेशा सम्मेलन द्वारा अनुमोदित किया जाता है।

11.5. स्वयं प्रगति जाँच (Check your progress)

- (अ). सरकार की संसदीय प्रणाली किस देश से से ली गई है
- (आ). अमेरिकी संविधान के किस अनुच्छेद में राष्ट्रपति चुनाव की विधि का विस्तृत विवरण दिया गया है।
- (इ). संघीय चुनाव आयोग गया था गठन किया गया था।
- (ई). यू.के. संसद के ऊपरी सदन व निचले सदन को क्या कहते हैं ?
- (उ). प्रॉक्सी मतदान किस देश की विशेषता है ?

11.6. सारांश (Summary)

ब्रिटेन एक संसदीय लोकतंत्र है, जिसमें संवैधानिक राजतंत्र की व्यवस्था है। यहाँ पर प्रधानमंत्री सरकार का प्रमुख होता है, और वह वेस्टमिंस्टर प्रणाली के अनुसार संसद से चुनकर आता है। संवैधानिक राजतंत्र में सम्राट/सम्राज्ञी (राजा/रानी) राज्य का प्रतीक होते हैं, लेकिन उनका राजनीतिक कार्यों में कोई सीधा हस्तक्षेप नहीं यू.एस. एक संघीय गणराज्य है, जिसमें राष्ट्रपति का चयन सीधा चुनाव के द्वारा होता है। इसमें एक राष्ट्रपति होता है, जो कार्यकारी प्रमुख के रूप में कार्य करता है। यू.एस. में 50 राज्य होते हैं, और हर राज्य का चुनाव प्रक्रिया में विशेष स्थान होता है। संसदीय चुनाव: यू.के. में संसद दो सदनों में बाँटी जाती है - हाउस ऑफ कॉमन्स और हाउस ऑफ लॉर्ड्स। हाउस ऑफ कॉमन्स में सदस्य सीधे चुनावों द्वारा चुने जाते हैं, जबकि हाउस ऑफ लॉर्ड्स में सदस्य नियुक्त किए जाते हैं। हाउस ऑफ कॉमन्स के सदस्य फर्स्ट पास्ट द पोस्ट प्रणाली के तहत चुने जाते हैं। यह प्रणाली एकल सदस्य निर्वाचन क्षेत्रों में काम करती है, जहाँ चुनाव में सबसे अधिक वोट पाने वाला उम्मीदवार जीतता है। प्रधानमंत्री सामान्यतः चुनाव में सबसे बड़ी पार्टी के नेता के रूप में बनता है, और उसे संसद में विश्वास



प्राप्त होता है। यू.एस. में राष्ट्रपति का चुनाव हर चार साल में होता है। इसमें एक इलेक्टोरल कॉलेज प्रणाली होती है, जिसमें प्रत्येक राज्य के पास एक निश्चित संख्या में वोट होते हैं। इन वोटों के आधार पर राष्ट्रपति चुना जाता है। यू.एस. में कांग्रेस का चुनाव भी होता है, जिसमें सीनेट और हाउस ऑफ रिप्रेजेंटेटिव्स के सदस्य चुने जाते हैं। सीनेट के सदस्य छह साल के लिए चुने जाते हैं, और हाउस ऑफ रिप्रेजेंटेटिव्स के सदस्य दो साल के लिए चुने जाते हैं। राष्ट्रपति पद के लिए प्रमुख दलों में प्राथमिक चुनाव (प्राइमरी) और कॉकस होते हैं, जिसमें पार्टी सदस्य अपने राष्ट्रपति पद के उम्मीदवार का चयन करते हैं। मुख्य दलों में कंज़र्वेटिव पार्टी और लेबर पार्टी शामिल हैं। इसके अलावा लिबरल डेमोक्रेट्स और अन्य छोटे दल भी सक्रिय होते हैं। यू.एस.ए में मुख्य दल डेमोक्रेटिक पार्टी और रिपब्लिकन पार्टी हैं, जो राष्ट्रपति चुनाव और कांग्रेस चुनावों में प्रमुख भूमिका निभाते हैं। सामान्य चुनाव हर पाँच साल में होते हैं। हालांकि, समय से पहले चुनाव भी हो सकते हैं यदि सरकार को विश्वास मत नहीं मिलता। राष्ट्रपति चुनाव हर चार साल में होते हैं, और कांग्रेस चुनाव भी हर दो साल में होते हैं। यू.के में वोट देने का अधिकार 18 वर्ष और उससे अधिक आयु के ब्रिटिश नागरिकों को होता है। चुनाव के दिन मतदान केंद्रों पर जाकर मतदाता वोट देते हैं। यू.एस.ए. में वोट देने का अधिकार 18 वर्ष और उससे अधिक आयु के नागरिकों को होता है, और वोटिंग आमतौर पर निर्वाचन केंद्रों या मेल द्वारा होती है। इन चुनाव प्रक्रियाओं में अंतर के बावजूद, दोनों देशों में लोकतांत्रिक चुनाव प्रणाली है, जो नागरिकों को अपने प्रतिनिधि चुनने का अधिकार देती है।

11.7. सूचक शब्द (Key Words)

- **चुनाव** - चुनाव या निर्वाचन, लोकतंत्र का एक महत्वपूर्ण प्रक्रिया है जिसके द्वारा जनता (लोग) अपने प्रतिनिधियों को चुनती है
- **वीटो** - वीटो का मतलब है किसी निर्णय या प्रस्ताव को अस्वीकार करना। वीटो शब्द का इस्तेमाल किसी चीज़ को रोकने या मना करने के लिए किया जाता है।
- **हाउस ऑफ कॉमन्स** - हाउस ऑफ कॉमन्स ब्रिटेन की संसद का निचला सदन है। इसकी बैठकें वेस्टमिंस्टर, लंदन में होती है। हाउस ऑफ कॉमन्स, संसद का निम्नसदन है, कॉमन्स एक निर्वाचित निकाय है जिसमें 650 सदस्य होते हैं जिन्हें संसद के सदस्य (सांसद) के रूप में जाना जाता है। सदस्यों को फर्स्ट-पास्ट-दी-पोस्ट की व्यवस्था द्वारा विभिन्न निर्वाचन क्षेत्रों का प्रतिनिधित्व करने के लिए चुना जाता है और संसद भंग होने तक अपनी सीट पर बने रहते हैं।
- **मतदान** - मतदान निर्णय लेने या अपना विचार प्रकट करने की एक विधि है जिसके द्वारा कोई समूह विचार-विनिमय तथा बहस के बाद कोई निर्णय ले पाते हैं। मतदान की व्यवस्था के द्वारा किसी वर्ग या समाज का



सदस्य राज्य की संसद या विधानसभा में अपना प्रतिनिधि चुनने या किसी अधिकारी के निर्वाचन में अपनी इच्छा या किसी प्रस्ताव पर अपना निर्णय प्रकट करता है।

- **डेमोक्रेटिक पार्टी** -डेमोक्रेटिक पार्टी अमेरिका के प्रमुख दो राजनितिक दलो में से एक हैं। यह दल आमतौर पर बड़ी सरकार, समाज को नियन्त्रित करने में, समाज के भीतर और मुख्य रूप से निम्न वर्गों के लोगों को लाभ और सेवाएँ मुहैया कराने के लिए सरकार की बड़ी भूमिका के पक्ष में हैं

11.8.स्वयं समीक्षा हेतु प्रश्न (Self-Assessment Questions)

- चुनाव प्रक्रिया की अवधारणा का वर्णन करें।
- ब्रिटेन में चुनाव प्रक्रिया की प्रकृति का वर्णन करें।
- अमेरिका में चुनाव प्रक्रिया के बारे में विस्तार से बताएं।
- अमेरिका और ब्रिटेन में चुनाव प्रक्रिया के बारे में विस्तार से बताएं।

11.9.उत्तर-स्वयं प्रगति जाँच (Answers to check your progress)

(अ). ग्रेट ब्रिटेन

(आ).संविधान के अनुच्छेद ॥

(इ). वर्ष **1975** में संघीय चुनाव अभियान अधिनियम में संशोधन के माध्यम से

(ई). हाउस ऑफ लॉर्ड्स व हाउस ऑफ कॉमन्स

(उ). यू.के.

11.10.सन्दर्भ ग्रन्थ/ निर्देशित पुस्तकें (References / Suggested Readings)

- भगवान विष्णु, विद्या भूषण, वर्ल्ड कान्स्टीट्यूसन, ए कम्परेटिव स्टडी, स्रस्टलिंग पब्लिसर्स प्रा०लि०दिल्ली.
- पार्थसारथी, जी०, (1987): आधुनिक संविधान, मीनाक्षी प्रकाशन, मेरठ.
- शर्मा, प्रभुदत्त, (1998): प्रमुख राजनीतिक व्यवस्थाएँ, कालेज बुक डिपों, जयपुर.
- खन्ना, वी०एन० एवं आनन्द, उमा (2009): शासन एवं राजनीति का तुलनात्मक अध्ययन, आर. चन्द्र एण्ड कम्पनी, नई दिल्ली.
- तायल, वी०वी० (1983): शासन और राजनीति: तुलनात्मक अध्ययन, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली.



- पालेकर, एस0ए0 (2009): कम्पैरेटिव पॉलिटिक्स एण्ड गवर्मेन्ट, प्रेंटिस हॉल ऑफ इंडिया, नई दिल्ली.
- डब्ल्यू. बेजहोट, द इंग्लिश कॉन्स्टिट्यूशन, लंदन, फोंटाना, 1963.
- ए.एच. बिर्च, ब्रिटिश सिस्टम ऑफ गवर्नमेंट, 4था संस्करण, लंदन, जॉर्ज एलेन और अनविन, 1980.
- जे. ब्लॉडेल, तुलनात्मक सरकार का परिचय, लंदन, वीडेनफेल्ड और निकोलसन, 1969.
- जे. ब्लॉडेल, तुलनात्मक विधानमंडल, एंगलवुड क्लिफ्स एनजे, प्रेंटिस हॉल, 1973.
- जे. ब्रायस, आधुनिक लोकतंत्र, खंड। 2, न्यूयॉर्क, मैकमिलन, 1921.
- एच. फाइनर, आधुनिक सरकार का सिद्धांत और अभ्यास, लंदन, मेथ्यून, 1969.



Subject : Comparative Constitutions of UK & USA (Optional-I)	
Course Code : POLS 303	Author : Dr. Parveen sharma
Lesson No. : 12	Vetter :
ब्रिटेन और अमेरिका में नौकरशाही (Bureaucracy in UK and USA)	

अध्याय की संरचना

12.1-अधिगम उद्देश्य (Learning Objectives)

12.2-परिचय (Introduction)

12.3.अध्याय के मुख्य बिन्दु (Main Points of the Text)

12.3.1.नौकरशाही का अर्थ और परिभाषा (Meaning & Definition of Bureaucracy)

12.3.2.नौकरशाही की मुख्य विशेषताएं (Characteristics of Bureaucracy)

12.3.3. ब्रिटिश नौकरशाही संगठन और भूमिका(British bureaucratic organization and role)

12.3.4.सिविल सेवकों की नियुक्ति और संगठन(Appointment and organization of Civil Servants)

12.3.4.1.संगठन (Organization)

12.3.5.इंग्लैण्ड में नौकरशाही के कार्य या भूमिका (Functions/Role of Bureaucracy in England)-

12.4 पाठ का आगे का मुख्य भाग (Further Main Body of the Text)

12.4.1 अमेरिका में नौकरशाही (Bureaucracy in America)

12.4.2.अमेरिकन नौकरशाही के कार्य/भूमिका (Functions/Role of American Bureaucracy)

12.4.3.ब्रिटिश एवं अमेरिकन नौकरशाही की तुलना (Comparison between British and American bureaucracy)

**12.5.स्वयं प्रगति जाँच (Check your progress)****12.6.सारांश (Summary)****12.7.सूचक शब्द (Key Words)****12.8.स्वयं समीक्षा हेतु प्रश्न (Self-Assessment Questions)****12.9.उत्तर-स्वयं प्रगति जाँच (Answers to check your progress)****12.10.सन्दर्भ ग्रन्थ/ निर्देशित पुस्तकें (References / Suggested Readings)****12.1.अधिगम उद्देश्य (Learning Objectives)**

इस अध्याय का अध्ययन करने के बाद, विद्यार्थी-

- नौकरशाही की अवधारणा के बारे में जान सकेंगे;
- ब्रिटेन में नौकरशाही के स्वरूप के बारे में जान पायेंगे ;
- अमेरिका में नौकरशाही की स्थिति के बारे में जान पायेंगे ;
- ब्रिटेन अमेरिका नौकरशाही के स्वरूप के बारे में जान पायेंगे ;
- अमेरिका व ब्रिटेन में नौकरशाही की अवधारणा का तुलना कर पायेंगे ;

12.2.परिचय (Introduction)

नौकरशाही, जिसे कर्मचारीतन्त्र या अधिकारीतन्त्र या लालफीताशाही भी कहते हैं, कोई नई व्यवस्था नहीं है। वास्तव में, इसका जन्म तो उसी समय हो गया था जब प्राचीन न में विशाल साम्राज्यों की स्थापना हुई थी। विशाल साम्राज्य को बनाए रखने के लिए और प्रशासन की सभी क्षेत्रों पर पकड़ रखने के लिए अधिकारियों की औपचारिक नियुक्तियों, उनके पदों में संस्तरण, उनके दायित्वों और अधिकारों के स्पष्ट: विभाजन आदि के निर्धारण की संगठित पद्धति का विकास हुआ। जगत प्रसिद्ध कौटिल्य के 'अर्थशास्त्र' में नौकरशाही का स्पष्ट विवरण है, परन्तु जिस रूप में नौकरशाही को आज हम देखते हैं उसका विकास औद्योगीकरण के साथ-साथ हुआ है। प्राचीन मिस्र और रोम में भी नौकरशाही की विद्यमानता के प्रमाण मिलते हैं, परन्तु यह प्राचीन नौकरशाही पैतृक प्रशासन (**Patrimonial administration**) था जहां प्रशासक के व्यक्तिगत विचार, भावनाएं व मिजाज पर शासन होता था। आधुनिक नौकरशाही पूर्णतः अवैयक्तिक व्यवस्था है। पूँजीवाद और प्रजातन्त्र के विस्तार ने



आधुनिक नौकरशाही को संगठन का अपरिहार्य रूप बना दिया है। मैक्स वेबर ने आधुनिक नौकरशाही को अपने अध्ययन का विषय बनाया, उसकी सैद्धान्तिक अवधारणा का विकास किया उसके तत्त्व व लक्षण बताए तथा उसके गुण और दोषों का विश्लेषण किया। मैक्स वेबर द्वारा प्रतिपादित नौकरशाही का विवेचन समाजशास्त्रीय चिन्तन के इतिहास में शास्त्रीय उपलब्धि के रूप में मजाता है।

12.3. अध्याय के मुख्य बिन्दु (Main Points of the Text)

12.3.1. नौकरशाही का अर्थ और परिभाषा (MEANING & DEFINITION OF BUREAUCRACY)

'नौकरशाही' हिन्दी भाषा का शब्द है तथा यह शब्द अंग्रेजी भाषा के शब्द 'ब्यूरोक्रेसी' (Bureaucracy) का हिन्दी अनुवाद है। अंग्रेजी भाषा का शब्द 'ब्यूरोक्रेसी' (Bureaucracy) फ्रांसीसी भाषा के शब्द ब्यूरो (Bureau) और यूनानी भाषा के शब्द 'क्रेसी' (cracy) को मिलाकर बना है। फ्रांसीसी भाषा के शब्द 'ब्यूरो' (Bureau) का अर्थ लिखने वाला "डैस्क" तथा यूनानी भाषा के शब्द क्रेसी (cracy) का अर्थ 'शासन' होता है। इस प्रकार नौकरशाही (Bureaucracy) का साधारण अर्थ डैस्क पर बैठ कर काम करने वालों का शासन माना जाता है। अन्य शब्दों में, नौकरशाही का अर्थ असैनिक अथवा प्रशासकीय अधिकारियों का शासन है। नौकरशाही उन असैनिक अथवा प्रशासकीय अधिकारियों का सामूहिक रूप है जो प्रशासन के कार्यों में कुशल तथा विशेषज्ञ होते हैं, जिनको नियुक्ति योग्यता के आधार पर की जाती है तथा जिनका कार्यकाल स्थायी व राजनीति से स्वतन्त्र होता है। नौकरशाही तथा असैनिक अधिकारियों में कोई व्यावहारिक अन्तर नहीं है। नौकरशाही की विभिन्न विद्वानों परिभाषित किया है -

- **विलोबी (Willoughby) के कथनानुसार**, "विस्तृत रूप में नौकरशाही से अभिप्राय कर्मचारी वर्ग का ऐसी प्रणाली से है जिसके अधीन कर्मचारियों को प्रशासकीय व्यवस्था में सौपानिक खण्डों, विभागों, कार्यालयों इत्यादि में विभाजित किया जाता है सीमित रूप में नौकरशाही का अभिप्राय सार्वजनिक सेवाओं के उस समूह से है जो सौपानिक रूप में प्रभावशाली सार्वजनिक नियन्त्रण के क्षेत्र से बाह्य है।"
- **एप्पलबाई (Appleby) के विचारानुसार**, "यह तकनीकी पक्ष में शिक्षित उन व्यक्तियों की एक व्यावसायिक श्रेणी है जो व्यक्ति सौपानिक रूप में संगठित हैं तथा निष्पक्ष रूप से राज्य की सेवा करते हैं।"
- **हरमन फाइनर (Herman Finer) के विचारानुसार**, "असैनिक सेवा स्थायी वैतनिक तथा प्रशिक्षित अथवा कुशल अधिकारियों के व्यवसाय समूह का नाम है।"
- **फ़िफ़नर और प्रेस्थस (Pfiffner and Presthus) के शब्दों में**, "नौकरशाही कार्यों और व्यक्तियों का रा नियोजित समूह है जो कि सामूहिक प्रयत्नों से उद्देश्यों को बहुत प्रभावशाली ढंग से प्राप्त कर सकता है।"



- **ग्लैडन (Gladden) के शब्दों में**, "नौकरशाही एक नियंत्रित प्रशासनिक व्यवस्था है जो अन्तर्सम्बन्धी पदों के क्रम के रूप में संगठित होती है। "
- **जेम्स विलफ्रेड गार्नर (James Wilford Garner) के अनुसार**, "व्यापक अर्थ में नौकरशाही कोई भी ऐसा शासन है जिसमें प्रशासनिक अधिकारी सार्वजनिक सेवा के लिए पेशेवर होते हैं और जिनके कार्यकाल में अधिकांशतया स्थायित्व होता है, जिन्हें सेवा में पदोन्नति काफ़ी सीमा तक वरिष्ठता और कुछ सीमा तक अनुभव द्वारा दी जाती है।"
- **ड्यूबिन के अनुसार**-नौकरशाही तब अस्तित्व में आती है जबकि निर्देशन के लिए बहुत सारे लोग होते हैं। ज्यों-ज्यों संगठन का आकार बढ़ता है त्यों-त्यों यह जरूरी बन जाता है कि निर्देश के कुछ कार्य हस्तान्तरित कर दिये जाये। यह नौकरशाही के उदय के लिए पहली शर्त है।
- **प्रोफेसर हेराल्ड लास्की** ने नौकरशाही एक ऐसी प्रशासनिक व्यवस्था को माना है जिसमें मेजवत कार्य के लिए उत्कण्ठा, नियमों के लिए लोचशीलता का बलिदान, निर्णय लेने में देरी और नवीन प्रयोगों का अवरोध, रूढ़ीवादी दृष्टिकोण आदि बातें प्रभावशाली रहती है।
- **अमेरिकन एनसाइक्लोपीडिया के अनुसार**- 'नौकरशाही' संगठन का वह रूप है जिसके द्वारा सरकार ब्यूरो के माध्यम से संचालित होती है। प्रत्येक ब्यूरो कार्य की एक विशेष शाखा का प्रबन्ध करता है।
- **मैक्स वेबर** ने नौकरशाही को प्रशासन की एक ऐसी व्यवस्था माना है जिसकी विशेषता है , विशेषज्ञता, निष्पक्षता और मानवता का अभाव।

उपर्युक्त परिभाषाओं से यह स्पष्ट होता है कि नौकरशाही से अभिप्राय सरकारी अधिकारियों के ऐसे वर्ग से है जो तकनीकी पक्ष से शिक्षित होते हैं, जो अपने कार्य में विशेषज्ञ तथा कुशल होते हैं, जिनका कार्यकाल स्थायी तथा राजनीति से स्वतन्त्र होता है, जिन्हें सौपानिक रूप में संगठित किया जाता है। जिन्हें कार्य के रूप में निश्चित वेतन तथा भत्ते मिलते हैं तथा जो निष्पक्ष रूप में राज्य तथा राज्य के लोगों की सेवा करने का कार्य निभाते हैं। यहां पर यह वर्णनीय है कि न्यायाधीशों, सैनिकों तथा मन्त्रियों को नौकरशाही में सम्मिलित नहीं किया जाता।

12.3.2. नौकरशाही की मुख्य विशेषताएं (MAIN CHARACTERISTICS OF BUREAUCRACY)

नौकरशाही की विशेषताओं का वर्णन हम निम्नलिखित शीर्षकों के अन्तर्गत कर सकते हैं-

- **पेशेवर अधिकारी (Professional Officers)**- नौकरशाही की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि यह व्यावसायिक अधिकारियों का समूह है। जिस प्रकार अन्य लोग आजीविका चलाने के लिए भिन्न-भिन्न प्रकार के कार्य करते हैं, उसी प्रकार शासन का संचालन करना अधिकारियों का व्यवसाय है। इस उद्देश्य के लिए उन्हें



आवश्यक प्रशिक्षण दिया जाता है तथा पूर्णतया प्रशिक्षित होने के कारण वे अपने व्यावसायिक कार्यों को पूर्ण योग्यता सहित निभाते हैं। इन समस्त व्यावसायिक अधिकारियों का उद्देश्य सरकार की नीतियों को लागू करना होता है। मन्त्री विभागों के राजनीतिक मुखिया होते हैं, परन्तु उन्हें हम व्यावसायिक मुखिया नहीं कह सकते।

- **पदसोपानात्मक संगठन (Hierarchical Organization)**- नौकरशाही सेवा की एक अन्य विशेषता है कि यह पूर्णतया पदसोपानिक आधार पर संगठित होती है। सौपानिक संगठन से तात्पर्य यह है कि प्रत्येक अधिकारी अपने से ऊपर किसी अधिकारी के अधीन होता है तथा भिन्न-भिन्न स्तरों के अधिकारी अपने अधीन अधिकारियों के कार्यों की निगरानी करते हैं। इस सौपानिक संगठन में प्रत्येक को निश्चित स्थान प्राप्त है तथा उस स्थान से सम्बन्धित यह समस्त कार्यों को पूर्ण करता है। ऐसा करना उसका वैधानिक कर्तव्य होता है। ऐसे निम्न स्तर का अधिकारी अपने कार्यों के विषय में उच्च स्तर के अधिकारी को उत्तरदायी होता है तथा प्रत्येक अधिक से बड़े अधिकारी के आदेशों का पालन करता है।
- **नियुक्ति का आधार योग्यता (Appointment based on merit)**-नौकरशाही में अधिकारियों की नियुक्ति योग्यता के आधार पर करनी अनिवार्य होती है। योग्यता के आधार पर नियुक्त किए गए व्यक्ति ही निष्पक्षता अथवा कुशलता सहित शासन प्रबन्ध करने के योग्य हो सकते हैं। असैनिक अधिकारियों की नियुक्ति राजनीतिक आधारों पर नहीं की जाती क्योंकि राजनीति से निष्पक्ष रहना असैनिक सेवाओं की एक महत्वपूर्ण विशेषता है। नौकरशाही में अधिकारियों का चुनाव प्रायः प्रतियोगिता की परीक्षा द्वारा योग्यता के आधार पर किया जाता है तथा इस विधि द्वारा नियुक्त किए गए व्यक्तियों के चुनाव का राजनीतिक अधिकारों से कोई सम्बन्ध नहीं होता।
- **पदोन्नति के लिए अवसरों की व्यवस्था (Provision of opportunities for promotion)**- नौकरशाही में अधिकारी को जीवन पर्यन्त किसी एक पद पर आसीन नहीं रहना चाहिए। ऐसी अवस्था में व्यक्ति में कार्य करने का प्रोत्साहन समाप्त हो सकता है, इसलिए यह अनिवार्य है कि विभिन्न पदों पर नियुक्त किये गये असैनिक अधिकारियों के लिए पदोन्नति के उचित अवसरों की व्यवस्था की जाए। पदोन्नति प्रदान करने का आधार सम्बन्धित व्यक्ति की योग्यता भी हो सकता है तथा वरिष्ठता (Seniority) भी। पदोन्नति के उद्देश्य के लिए विभागीय परीक्षाएं भी निश्चित की जा सकती हैं तथा ऐसी परीक्षाएं पारित करने के पश्चात् ही सम्बन्धित व्यक्ति को उस उच्च पद के लिए पदोन्नति दी जा सकती है।
- **निष्पक्षता (Impartiality)**-निष्पक्षता नौकरशाही की प्रमुख विशेषता है। अधिकारियों का कार्य किसी प्रकार के भेदभाव के बिना सरकारी नीतियों को लागू करना है। नौकरशाही में अधिकारियों का राजनीति से मुक्त



होना अत्यावश्यक है क्योंकि इसके बिना उनमें निष्पक्षता की भावना विकसित नहीं हो सकती। किसी भी राजनैतिक दल की सरकार हो, अधिकारियों का यह वैधानिक कर्तव्य है कि वे निष्पक्षता सहित सरकार की नीतियों को लागू करें।

- **अनामिकता (Anonymity)**-अनामिकता नौकरशाही की सेवा की एक महत्वपूर्ण विशेषता है। अनामिका में अभिप्राय है कि असैनिक अधिकारी जब प्रशासकीय कार्य करते हैं, तो वे ऐसे कार्यों को अपने नाम पर नहीं अपितु विभागीय मुखिया के नाम पर करते हैं। उनके द्वारा किए कार्यों की प्रशंसा अथवा बुराई सम्बन्धित मन्त्री को ही दी जाती है, क्योंकि अधिकारी मुख्य रूप से मन्त्रियों की नीतियों को ही वास्तविक रूप देते हैं। प्रत्येक प्रकार की नीति का निर्माण मन्त्रियों द्वारा किया जाता है और प्रशासकीय अधिकारी नीतियों के प्रति उत्तरदायी नहीं होते। शासन के कार्यों के प्रति प्रशासकीय अधिकारियों की व्यक्तिगत रूप में चर्चा नहीं होती, बल्कि वे तो गुमनाम ही रहते हैं और प्रशासन की जिम्मेदारी सम्बन्धित मन्त्री की ही होती है।
- **स्थायी कार्यकाल (Permanent Tenure)**-नौकरशाही के सदस्यों का कार्यकाल स्थायी होता है। स्थायी कार्यकाल से तात्पर्य यह है कि साधारण चुनाव के परिणामों के कारण सरकार के परिवर्तन होने से उनके कार्यकाल पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता। लोकतन्त्रीय देशों में सरकारें परिवर्तित होती रहती हैं। लेकिन नौकरशाही के सदस्य अपने पदों पर स्थिर रहते हैं। नौकरशाही के सदस्य निश्चित नियमानुसार निश्चित आयु पर पहुँचने के पश्चात् ही सेवा-मुक्त होते हैं। नौकरशाही के सदस्य के स्थायी कार्यकाल के कारण ही इन सेवाओं को स्थायी कार्यपालिका (Permanent Executive) भी कहा जाता है।
- **वेतन और भत्ते (Salaries and Allowances)** - नौकरशाही के सदस्यों को उनके कार्य के लिए सरकापी कोष में से निश्चित वेतन व भत्ते दिए जाते हैं। निश्चित नियमानुसार उन्हें पदोन्नतिको उनके कार्य है तथा वेतन के अतिरिक्त अन्य प्रकार की कई सुविधाएं भी प्रदान की जाती हैं। असैनिक अधिकारियों को सेवा मुक्त होने के पश्चात् जीवन पर्यन्त पेंशन भी मिलती रहती है।

नौकरशाही एक स्थायी, वेतनभोगी और निपुण अधिकारियों का निकाय है। यह सरकार की योजनाएं बनाने और उन्हें आगे ले जाने के लिए सरकार को सहायता और सलाह देती है। नौकरशाही की भूमिका बदल चुकी है। यह केवल नियंत्रण का कार्य नहीं करता बल्कि विकास और कल्याण के कामों में सक्रिय रूप से जुड़ा रहता है। विश्व के सभी देशों में नौकरशाही की विशेषताएं एक समान नहीं हो सकतीं। प्रत्येक देश को राजनीतिक, आर्थिक, सामाजिक आदि परिस्थितियां वहां की शासन प्रणाली के रूप को सम्मुख रखकर नौकरशाही सेवाओं के लिए भिन्न-भिन्न प्रकार की व्यवस्थाएं की जा सकती हैं।



12.3.3. ब्रिटिश नौकरशाही संगठन और भूमिका (British bureaucratic organization and role)

इंग्लैण्ड में राजा नाममात्र का मुखिया है जबकि मन्त्रिमण्डल वास्तविक कार्यपालिका है। समस्त शासन मन्त्रिमण्डल के द्वारा चलाया जाता है। प्रशासन में प्रत्येक विभाग किसी-न-किसी मन्त्री के अधीन होता है। परन्तु मन्त्री शासन को स्वयं नहीं चलाता। वह तो केवल यह देखता है कि शासन मन्त्रिमण्डल की नीति के अनुसार चल रहा है या नहीं। मन्त्री का मुख्य कार्य यह देखना होता है कि उसके विभाग का प्रशासन अच्छे ढंग से चलना चाहिए। शासन को चलाने का कार्य नौकरशाही द्वारा किया जाता है। नौकरशाही में वे सरकारी कर्मचारी शामिल हैं जो मन्त्रियों को अपना कार्य चलाने में सहायता देते हैं और जिन्हें संसद् द्वारा स्वीकृत धनराशि में पूर्णतः और प्रत्यक्षतः भुगतान किया जाता है। शासन का ठीक प्रकार से चलाना असैनिक सेवकों की योग्यता, निष्पक्षता, कार्यकुशलता और ईमानदारी पर ही निर्भर करता है। आधुनिक राज्य में लोकसेवा के महत्व को ऑग (Ogg) ने संक्षेप में इस प्रकार बताया है, "सरकार का कार्य केवल राज्य सचिव के तथा विभागों के अन्य प्रधानों, मण्डलों के सभापति, संसदीय अवर सचिवों (Parliamentary Under Secretaries), कनिष्ठ अधिपति (Junior lords), तथा निष्ठ अधिपति दूसरे शब्दों में मन्त्रिगण द्वारा ही पूर्ण नहीं किया जा सकता। इन "लोगों से यह आशा कभी नहीं की जा सकती कि वे कर एकत्र करेंगे, लेखा परीक्षण, कारखाने का निरीक्षण, जनगणना आदि कार्य करेंगे। हिसाब रखने, डाक के वितरण और समाचार ले जाने की बात तो दूर है। ऐसे बहुमुखी कार्य तो उन अधिकारियों तथा कर्मचारियों द्वारा किए जाते हैं जिन्हें स्थायी लोक सेवक कहा जाता है। स्त्री-पुरुषों का यह विशाल समूह ही देश के लिए एक छोर से दूसरे छोर तक विधि का पालन कराता है और जनसाधारण को राष्ट्र के शासन के नित्य सम्पर्क में जाता है। जनता की दृष्टि में इन निकाय का महत्त्व भले ही कम हो किन्तु मन्त्रालयों के लिए काम करने वालों की यह सेना सरकार के उन उद्देश्यों को, जिनके लिए सरकार विद्यमान है, पूर्ण करने के लिए कम आवश्यक नहीं है।"

12.3.4. सिविल सेवकों की नियुक्ति और संगठन (Appointment and organization of Civil Servants)

- **लोक-सेवकों की नियुक्ति (Appointment of the Civil Servants)**- वर्तमान समय में लोक-सेवकों की नियुक्ति क्राउन (Crown) द्वारा लोक सेवा आयोग (Civil Service Commission) की सिफारिशों पर की जाती है। लोक सेवा आयोग खुली प्रतियोगिता परीक्षाएं (Open Competitive Examinations) करवाता है इन परीक्षाओं में बैठने के लिए निश्चित आयु होती है। वही व्यक्ति इन परीक्षाओं में बैठ सकते हैं जिनके पास निश्चित योग्यताएं हों। जो व्यक्ति परीक्षा में उत्तीर्ण हो जाते हैं उनका इन्टरव्यू (Interview) होता है। इन्टरव्यू के बाद परिणाम निकाला जाता है और लोक सेवा आयोग योग्यता के आधार पर क्राउन को उन व्यक्तियों की



नियुक्ति के लिए सिफारिश करता है। इस प्रकार आजकल योग्यता के आधार पर नियुक्ति की जाती है। इन सिविल सर्विस कर्मचारियों का कार्यकाल तब तक होता है जब तक ये अच्छे व्यवहार' की शर्त पूरी करते हैं और प्रायः इन्हें 60 वर्ष की आयु में रिटायर कर दिया जाता है। परन्तु कुछ कर्मचारियों को 60 वर्ष की आयु के बाद भी अपने पद पर रहने दिया जाता है और उन्हें 65 वर्ष की आयु में अवश्य रिटायर होना पड़ता है। रिटायर होने के बाद इन्हें पेन्शन भी दी जाती है।

- **पदोन्नति (Promotions)**- लोक सेवकों के उच्च कर्मचारियों की पदोन्नति सम्बन्धित विभागों के उच्चतम अधिकारियों द्वारा सेवा काल और कार्य करने के पिछले रिकार्ड के आधार पर की जाती है। पिछले कर्मचारियों को तरक्कियां विभागों के द्वारा ली जाने वाली परीक्षाओं के आधार पर की जाती हैं।
- **काम की शर्तें (Conditions of Service)**- लोक सेवकों के काम की शर्तों के सम्बन्ध में समझौते की बात करने के लिए नेशनल वाइटले कौंसिल (National Whitley Council) नाम की संस्था है। इस संस्था में उन्नत अधिकारियों के प्रतिनिधि तथा निचले कर्मचारियों के प्रतिनिधि शामिल किए जाते हैं। प्रत्येक कर्मचारी को अपने ग्रेड से अधिक-से-अधिक वार्षिक वृद्धि की जाती है। प्रत्येक कर्मचारी को सप्ताह में 45 घण्टे के लगभग काम करना पड़ता है। निचले कर्मचारियों को अधिक घण्टे काम करने की दशा में अधिक वेतन दिया जाता है परन्तु उच्च अधिकारियों को अधिक काम करने के लिए अधिक वेतन नहीं दिया जाता। प्रत्येक कर्मचारी को वर्ष में 36 दिन का अवकाश मिलता है। इसके अतिरिक्त वह वर्ष में 6 महीने रुग्णावकाश भी प्राप्त कर सकता है। लोक-सेवकों को राजनीति में भाग लेने का अधिकार नहीं है। वे किसी पार्टी के सदस्य नहीं बन सकते। संसद् में चुनाव नहीं लड़ सकते। वे तभी चुनाव लड़ सकते हैं जब उन्होंने पद से त्याग-पत्र दे दिया हो। इस प्रकार सरकारी कर्मचारी निर्दलीय होकर अपना कार्य करते रहते हैं। सरकारी कर्मचारियों को निर्दलीय होना अति आवश्यक है। इसका कारण यह है कि मन्त्री अपने पद पर स्थायी रूप से नहीं रहते। ये आते-जाते रहते हैं और उनका सम्बन्ध बहुमत दल से होता है। मन्त्री का कार्य नीति निर्माण करना है और उस नीति को लागू करना कर्मचारियों का काम है। यदि मन्त्री एक पार्टी से और लोक सेवक दूसरी पार्टी से सम्बन्ध रखता हो तो इससे दोनों में मन मुटाव रहत है और सहयोग त होने के कारण शासन कुशलता से नहीं चलाया जाता। लोक सेवक का निर्दलीय होने का यह लाभ है कि मन्त्री किसी भी पार्टी से सम्बन्ध क्यों न रखता हो इसका लोक सेवक पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता और नपूर्वक कार्य करता रहता है। परन्तु इसका अर्थ यह नहीं है कि लोक सेवक को राजनीति से कोई मतलब नहीं है। लोक-सेवक को दूसरे नागरिकों की तरह वोट का अधिकार है और वह अपनी वोट का प्रयोग स्वतन्त्रतापूर्वक कर सकता है।



12.3.4.1. संगठन (Organization)-आरम्भ में लोक सेवाओं के सदस्यों को निश्चित वर्गों में विभाजित करने के लिए कोई प्रयत्न नहीं किया गया। सन् 1870 ई० के सुधार के बाद इन कर्मचारियों को दो भागों में विभाजित किया जाता था-उच्चतर पद और निम्नतर पद। सन् 1920 में पुनर्गठन समिति (Re-organization Committee), राष्ट्रीय परिषद् की एक समिति (A committee of the National Council) की सिफारिशों के फलस्वरूप सिविल सर्विस का पुनर्गठन किया गया तथा वर्तमान समय में लोक सेवाओं के कर्मचारियों को निम्नलिखित समूहों में विभाजित किया जाता है-

- **प्रशासकीय श्रेणी (Administrative Class)**- प्रशासकीय श्रेणी 'सेवा का मस्तिष्क' (Brain of the Service) कहलाती है। इस श्रेणी में स्थायी सैक्रेटरी (Permanent Secretary), डिप्टी सैक्रेटरी (Deputy Secretary), अण्डर सैक्रेटरी (Under Secretary), असिस्टेंट सैक्रेटरी (Assistant Secretary) इत्यादि आते हैं। इनकी संख्या लगभग 6000 है। मन्त्रियों का कार्य नीति निर्माण करना है और नीति का निर्माण करते समय मन्त्री इस श्रेणी की सलाह लेते हैं। इस प्रकार इस श्रेणी का मुख्य कार्य मन्त्रियों को सलाह देना है। वे हर प्रकार को प्रशासनिक कठिनाइयों के लिए, जो प्रतिदिन के विभागीय काम-काज में आती हैं हल ढूँढ़ निकालते हैं। नये कापूने तथा प्रस्तावों के सम्भावित परिणामों को बनाना भी इन्हीं का काम है। संसद् के सदस्यों को मन्त्रियों से प्रश्न पूछने का अधिकार है परन्तु इन प्रश्नों के उत्तर इस श्रेणी के कर्मचारियों द्वारा तैयार जाते हैं।
- **कार्यकारी श्रेणी (The Executive Class)**-लोक सेवा के अंतर्गत कार्यकारी श्रेणी श्रेणीके लिए भर्ती 18-19 वर्ष की आयु में पुरुष और स्त्रियों में से प्रतियोगिता परीक्षाओं के आधार पर की जाती है। लिपिक वर्ग (Clerical Class) के कर्मचारियों में कोई कर्मचारी चातुर्य, आरम्भिक गुण तथा कार्यकुशलता के गुण परखता हो तो उसे भी इस श्रेणी में शामिल किया जा सकता है। कार्यकारी श्रेणी का कर्तव्य स्थापित नीति के ढाँचे के अन्दर, दिन प्रतिदिन के सरकारी कार्य को चलाना है। इस श्रेणी के व्यक्तियों का कार्य प्रशासकीय अफसरों के निर्णयों को व्यवहार में लाना है। कार्यकारी क्षेत्रों से लगभग 75,000 कर्मचारी हैं।
- **लिपिक श्रेणी (The Clerical Class)**- यह श्रेणी सबसे बड़ी है और इसमें लगभग 190,000 कर्मचारी हैं। इसमें प्रायः 16 और 17 वर्ष के युवक और युवतियाँ प्रवेश करते हैं। इन कर्मचारियों को माध्यमिक पाठशाला पाठ्यक्रम के स्तर को प्रतियोगिता परीक्षाओं के पास करने के बाद नियुक्त किया जाता है। इसमें बहुत से कर्मचारियों को नीचे से तरक्की देकर भी लाया जाता है। इन कर्मचारियों का कार्य हिसाब तथा लेखा तैयार करना, सरकारी रिकार्ड रखना और बड़े अफसरों की सहायता के लिए दस्तावेजों (Documents) के नोट तैयार करना है।



- **लिपिक सहायक श्रेणी (The Clerical Assistant Class)**- इस श्रेणी के अन्तर्गत आने वाले कर्मचारियों की संख्या लगभग 100,000 है और इसमें शार्ट हैंड, टाइपिस्ट, कापी टाइपिस्ट और टाइप सीखने वाले टाइपिस्ट शामिल हैं। इस श्रेणी में अधिकतर महिलाओं को लिया जाता है। वे सभी महिलाएं तथा पुरुष जिनकी आयु 16-17 वर्ष के बीच हो और जिन्होंने उच्चतर प्राथमिक शिक्षा प्राप्त की हो वे इस प्रतियोगिता में भाग लेने के पात्र होते हैं। इस श्रेणी के कर्मचारी केवल आवेदन-पत्र भरने व पत्रों पर पते लिखने, पत्रों की पहुंच की सूचना के पत्र लिखने तथा कार्ड अनुक्रमणिकाएं (Card Indices) रखने इत्यादि का काम करते हैं।
- **संदेशवाहक तथा निम्न वर्ग (Messengerial and Minor Classes)** - इस प्रकार के कर्मचारियों की संख्या लगभग 40,000 है। इस श्रेणी में वे कर्मचारी शामिल किए जाते हैं जिनका कार्य एक अफसर का दूसरे अफसर तक संदेश पहुंचाना है, कार्यालय की सफाई करते हैं तथा और दूसरे छोटे-छोटे कार्य करते हैं।
- **व्यावसायिक, औद्योगिक तथा वैज्ञानिक कार्यकर्ता (Professional, Technical and Scientific Personnel)**- प्रशासकीय वर्ग के अतिरिक्त शासन को बहुत से व्यवसायी, औद्योगिकों तथा वैज्ञानिकों की आवश्यकता होती है। इसमें बैरिस्टर, सोलिसिटर, डॉक्टर, इंजीनियर, वैज्ञानिक, प्रोफेसर इत्यादि शामिल किए जाते हैं। इसकी महानता का कोई वर्णन नहीं किया जा सकता। इसकी संख्या लगभग 150,000 है। इस प्रकार के कर्मचारियों के लिए प्रतियोगिता की परीक्षाओं की आवश्यकता नहीं है। इसके लिए एक निश्चित योग्यता की आवश्यकता होती है। रिक्त स्थानों का विज्ञापन पत्रों में समाचार दिया जाता है इण्टरव्यू तथा चुनाव द्वारा कर लिया जाता है।

7.3.5. इंग्लैण्ड में नौकरशाही के कार्य या भूमिका (Functions/Role of Bureaucracy in England)-

इंग्लैण्ड में नौकरशाही के कार्य या भूमिका का वर्णन निम्नलिखित शीर्षकों के अधीन किया जा सकता है-

- **प्रशासकीय कार्य (Administrative Functions or Role)** - प्रशासकीय कार्य लोक सेवाओं का महत्वपूर्ण कार्य है। मन्त्री का कार्य नीति बनाना है और नीति को लागू करने की जिम्मेदारी लोक सेवाओं की है। एक अच्छी नीति भी बेकार साबित हो जाती है, यदि उसे प्रभावशाली ढंग से लागू न किया जाए और ये कार्य लोक सेवाओं का है। नीति निर्माण के लिए मन्त्रियों को आंकड़ों की आवश्यकता होती है। सभी तरह के तथ्य तथा आंकड़े (Facts and Figures) कर्मचारियों के पास होते हैं और इसलिए मन्त्री अपनी इच्छा का प्रयोग नहीं कर पाता। इसके अतिरिक्त कर्मचारी मन्त्रियों द्वारा प्रस्तुत की गई नीति को लागू करते समय नीति को नया मोड़ दे देते हैं।



- सलाहकारी कार्य (Advisory Functions or Role)**- लोक-सेवकों का सबसे महत्वपूर्ण कार्य मन्त्रियों को सलाह देना होता है। मन्त्री नीतियों को निर्धारित करते समय काफी हद तक लोक-सेवकों के परामर्श पर निर्भर करते हैं क्योंकि जनता के सम्बन्ध में कर्मचारियों को काफी अनुभव होता है। सर जोसुआ स्टेक्य ने कहा है, अपने मस्तिष्क में बिलकुल स्पष्ट हूँ कि पदाधिकारी को नवीन समाज का मूल स्रोत होना चाहिए और उसे प्राचीन आपतन गरि सलाह, उन्नति की बात करती चाहिए।" रैम्सै प्यूर (Ramsay Muir) ने मन्त्री को संलाह देने के इस कार्य के सम्बन्ध में लिखा है- किसी भी व्यक्ति को मन्त्री का पद उसकी राजनीतिक उपलब्धियों के फलस्वरूप मिलता है। बहुत से अतिक अधिकतर मामले इतने जटिल होते हैं कि विभाग के विशाल कार्य के सम्बन्ध में कोई विशेष ज्ञान नहीं होता। उसे उन अधिकारियों से काम लेना पड़ता है जो वर्षों से शान्त वातावरण में विभाग की समस्याओं का गम्भीर अध्ययन कर रहे होते हैं-यह स्मरणीय है कि मन्त्री महोदय उस समय अपने लिए क्षेत्र तैयार करने में घूम-घूम कर भाषण देने में सलग्न थे-ये अधिकारी उनके सामने अनेक समस्याएं प्रस्तुत करते हैं जिनके सम्बन्ध में उन्हें कोई ज्ञान नहीं होता है। वे अपने सुझाव इस प्रकार रखते हैं मानो जो कुछ वे कह रहे हैं, वही सत्य और वांछनीय है। स्पष्टरूप मन्त्री महोदय यदि मूर्ख, महत्वाकांक्षी या असाधारण सफल, शक्ति तथा साहस सम्पन्न व्यक्ति न हुए तो 100 में से 99 मौकों पर वे अधिकारी की सलाह मान लेंगे और निर्दिष्ट स्थान पर हस्ताक्षर कर देंगे...। इस प्रकार लगभग सदैव कार्यालय की नीति ही विजयी होती है। इसकी शान्त दृढ़ता व शान्त व्यवसाय अथवा रुकावट की शक्ति तथा तथ्यों की पूरी जानकारी इसके ऐसे सबल अस्त्र हैं जिन पर एक असाधारण योग्यता का व्यक्ति ही विजय ए सकता है।"
- वैधानिक कार्य (Legislative Functions or Role)** - लोक सेवक कानून निर्माण में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। संसद् में अधिकांश बिल सरकारी बिल ही प्रस्तुत होते हैं। दूसरे शब्दों में संसद् में पेश होने वाले बिलों में से अधिकांश बिल मन्त्रियों द्वारा ही प्रस्तुत किए जाते हैं। मन्त्रियों द्वारा प्रस्तुत किये जाने वाले बिलों को रूप-रेखा लोक सेवकों द्वारा ही तैयार की जाती है। सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक समस्याओं का हल करने के लिए किस प्रकार के नए कानूनों की आवश्यकता है, इसका सुझाव भी लोक सेवकों द्वारा दिया जाता है। आजकल संसद् बहुत ही व्यस्त है और इसके पास इतना समय नहीं होता कि प्रत्येक कानून को विस्तारपूर्वक पास किया जा सके। अतः संसद् कानून का ढांचा तैयार कर देती है और कानून का विस्तार करने के लिए लोक सेवकों को नियम तथा उप-नियम बनाने की शक्ति प्रदान कर देती है। नियम व उप-नियम बनने को प्रदत्त व्यवस्थापन (Delegated Legislation) कहा जाता है। मन्त्रियों को संसद् के सदस्यों द्वारा पूछे गए प्रश्नों का उत्तर देना होता है, परन्तु इन प्रश्नों के उत्तर लोक सेवकों द्वारा तैयार किए जाते हैं। लोक सेवक अधिकारी



संसद में पूछे जा सकने वाले पूरक प्रश्नों (Supplementary Questions) का पूर्वानुमान करके उनके उत्तर भी तैयार करके मन्त्री को देते हैं।

- **वित्तीय कार्य (Financial Functions or Role)**- शासन के वित्तीय क्षेत्र में भी लोक सेवक बहुत महत्वपूर्ण कार्य करते हैं। संसद प्रति वर्ष बजट पास करती है और बजट वित्त मन्त्री द्वारा कामन सदन में पेश किया जाता है। यद्यपि बजट तैयार करने के सम्बन्ध में सर्वपक्षीय नीति मन्त्रिमण्डल द्वारा बनाई जाती है, परन्तु बजट रूप रेखा तैयार करना और सरकार की आर्थिक स्थिति का विवरण पेश करना लोक सेवकों का कार्य है। कर्षकों को इकट्ठा करना, बजट के अनुसार खर्च करना, इन सबका लेखा परीक्षण (Audit) आदि करना भी इन्हीं सेवाओं में है।
- **न्यायिक कार्य (Judicial Functions or Role)**- आधुनिक युग में न्याय सम्बन्धी कार्य न्यायपालिका के द्वारा नहीं किए जाते बल्कि कुछ महत्वपूर्ण कार्य प्रशासकीय न्यायाधिकरणों (Administrative Tribunals) के द्वारा भी किए जाते हैं। इसका कारण यह है कि वर्तमान समय में प्रशासकीय कानून तथा प्रशासकीय अधिनियम (Administrative Laws and Administrative Adjudications) की संख्या काफी बढ़ गई है। अतः प्रशासक न केवल शासन करते हैं बल्कि न्याय भी करते हैं।
- **जनसंपर्क कार्य या भूमिका-(Public Relations Functions or Role)**- लोकसेवक अपनी नीतियों के लिए जनता से सहयोग प्राप्त करने हेतु वर्तमान युग में कई तरीकों से लोक सम्बन्ध बनाए रखते हैं। लोक सेवकों के कार्यों के सम्बन्ध में जेनिंग्स (Jennings) ने ठीक ही लिखा है, "लोक सेवक का कार्य है के सलाह दे चेतावनी दे स्मृति-पत्र लिखे तथा भाषण तैयार करे जिसमें सरकार की नीति निर्देशित हो। नीति के फलस्वरूप निर्णय करें. साथ ही कठिनाइयों की और ध्यान आकर्षित करे जो निर्धारित नीति पर चलने में आ सकती है. साधारणतः लोक सेवक का कर्तव्य हो जाता है की वह शासन का कार्य उसी प्रकार चलाये जिस प्रकार से मंत्री द्वारा नीति निर्धारित की गयी है। प्रकार से मन्त्री द्वारा नीति निर्धारित की गई है।"

लोक सेवाओं के बढ़ रहे कार्यों या भूमिका को देखकर कई लेखकों ने इन्हें प्रास्ताविक शासक और मन्त्रियों को इनके हाथों में खिलौना कहा है। एक कथन है, "मन्त्री सरकार चलाते हैं और लोक सेवक मन्त्रियों को चलाते हैं।" जार्ज बरनार्ड शा (G. B. Shaw) कहते हैं, "हमारी राजनीतिक प्रणाली में कठपुतली के निकटतम वाली चीज कैबिनेट का मन्त्री है जोकि एक महान् सार्वजनिक विभाग का मुखिया है। म्यूर (Ramsay Muir) का कहना है कि, "मन्त्रियों के उत्तरदायित्व के पर्दे में नौकरशाही फलती फूलती है। सेवाएं विस्तृत शक्तियों का प्रयोग करती हैं परन्तु संसद के प्रति उत्तरदायी नहीं हैं। इस पक्ष को सामने रखते हुए लॉर्ड हेवर्ट (Lord Hewart) ने असैनिक



सेवाओं के बढ़ रहे महत्त्व को एक नई तानाशाही (New Despotism) के नाम से पुकारा है। निःसंदेह आधुनिक युग में लोक सेवकों का बहुत अधिक महत्त्व है परन्तु यह कहना है कि मन्त्री उनके हाथों में कठपुलती है, उचित नहीं। बहुत से मन्त्री भिन्न-भिन्न क्षेत्र के निपुण और अनुभवी राजनीतिज्ञ होते हैं। उनकी अपनी नीतियां और अपनी विचारधारा होती है। इंग्लैण्ड की राजनीति में योग्य मन्त्रियों की कमी नहीं रही है। स्थायी कर्मचारी इस तथ्य के प्रति सतर्क हैं कि मन्त्री हर प्रकार के प्रशासकीय कार्य के लिए संसद् और अन्ततः जनता के प्रति उत्तरदायी हैं। इस सतर्कता के कारण वे अपनी शक्तियों का उतना ही प्रयोग करते हैं जितना कि उचित है। लॉस्की (Laski) के शब्दों में, "यदि यह (असैनिक सेवाएं) परिणाम सूचित करते हैं, अपने आदेश नहीं हँसते। अन्तिम निर्णय मन्त्रियों का होता है। इन (असैनिक सेवाओं) का काम उस साम्रगी को उपलब्ध कराना है जिसके आधार पर सर्वोत्तम निर्णय किया जा सके। (जहां तक लोक सेवकों की तानाशाही का सम्बन्ध है, मुनरो (Munro) के शब्द स्मरणीय हैं- "दोनों (मन्त्री और कर्मचारी) ही आवश्यक हैं क्योंकि एक सरकार को लोकप्रिय बनाता है और दूसरा उसे कार्यकुशल। प्रजातन्त्र और कार्यकुशलता का अत्यावश्यक मिश्रण ही अच्छी सरकार की कसौटी है।"

12.4 पाठ का आगे का मुख्य भाग (Further Main Body of the Text)

12.4.1 अमेरिका में नौकरशाही (BUREAUCRACY IN AMERICA)

अमेरिकन राजनीतिक एवं सामाजिक व्यवस्था में नौकरशाही का महत्त्व बहुत अधिक है। अमेरिका में नौकरशाही का स्वरूप, संगठन एवं कार्य प्रक्रिया वहां के वातावरण से प्रभावित होती है। इस वातावरण की रचना में वहां की राजनीतिक संस्थाओं, आर्थिक समस्याओं, सामाजिक एवं सांस्कृतिक मूल्यों और धार्मिक विश्वासों एवं अवस्थाओं का प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष प्रभाव पड़ता है। अमेरिकन नौकरशाही के पर्यावरण के उल्लेखनीय प्रभावक तत्त्व हैं, जिन्हें अमेरिकी नौकरशाही की विशेषताएं भी कहा जाता है, जिनका वर्णन इस प्रकार है-

- **राजनीतिक नेतृत्व** - अमेरिकन नौकरशाही की एक महत्त्वपूर्ण विशेषता यह है कि राज्य की निर्वाचित या नियुक्त कार्यपालिका नौकरशाही को नेतृत्व प्रदान करती है। अमेरिकन नौकरशाही का महत्त्वपूर्ण समय वह होता है, जब राष्ट्रपति चुनावों के पश्चात् नया राष्ट्रपति चुन कर आता है, तथा राजनीतिक नेतृत्व में परिवर्तन होता है। प्रो० स्टाल के अनुसार एक अच्छी नौकरशाही की व्यवस्था यह है, कि वह नए राजनीतिक नेतृत्व को आसानी से संक्रमण प्रदान करें। नौकरशाही एवं राजनीतिक नेतृत्व में उचित सन्तुलन स्थापित करके ही नौकरशाही में स्थायित्व प्रदान किया जा सकता है।
- **नौकरशाही का व्यापक रूप** - अमेरिका में नौकरशाही का रूप बहुत व्यापक है। लोक कल्याणकारी राज्य की धारणा एवं औद्योगीकरण के कारण सरकार के कार्यों में बहुत अधिक वृद्धि हुई है। सरकार के कार्यों को



पूर्ण करने के लिए नौकरशाही को व्यापक रूप में संगठित किया गया है। राज्य का कार्यक्षेत्र तथा वर्तमान जीवन में राज्य से की जाने वाली अपेक्षाओं के बढ़ने से नौकरशाही का आकार बहुत बढ़ गया है। नार्मन पावेल के अनुसार अमेरिका की नौकरशाही शक्तिशाली, विशाल एवं खर्चीली है।

- **अमेरिका में योग्य** व्यक्तियों के चयन एवं जरूरतमंद लोगों के लिए रोजगार की आवश्यकता के मध्य तालमेल स्थापित किया जाता है। नौकरशाही में भर्ती के लिए यदि केवल राजनीतिक दल के प्रति निष्ठा, विशेष हित समूहों की प्राथमिकता क्षेत्रीयता या व्यक्ति के लिए रोजगार की प्राथमिकता को ही ध्यान में रखा जायेगा तो सरकारी सेवाओं में योग्य एवं कुशल व्यक्ति नहीं आ पायेंगे। इसीलिए अमेरिका में कई प्रकार की व्यवस्थाएं की गई हैं। उदाहरण के लिए सरकारी सेवा में आने वाले एक परिवार के सदस्यों की संख्या सीमित की गई है, कोई अधिकारी एक से अधिक पदों पर कार्य नहीं कर सकता। युद्ध पीड़ितों एवं उनके परिवारों को प्राथमिकाष्णु दी जाती है। यह एक धारणा है, कि यदि सभी लोगों को कोई-न-कोई रोजगार मिल जायेगा, तो समाज में से अपराध स्वयं ही समाप्त हो जायेंगे। इसी भावना वश अमेरिका में गरीबों, विकलांगों, अधेड़ महिलाओं तथा युद्ध से लौटे लोगों को कोई-न-कोई रोजगार दिया जाता है, परन्तु कई लोग इसकी आलोचना भी करते हैं। प्रो० स्टॉल के अनुसार "इस प्रकार की प्रवृत्ति का प्रत्यक्ष अवगुण केवल प्रशासनिक कार्यकुशलता में गिरावट ही नहीं है, बल्कि, इससे लोक सेवाओं का स्तर गिरता है। यह माना जाता है, कि सरकारी पद केवल पुरस्कार के लिए होते हैं। ये केवल जरूरतमंद लोगों की आय का प्रवन्ध करने के लिए विद्यमान है। इसी कारण जनता में लोक सेवाओं की प्रतिष्ठा गिर जाती है।
- **अन्तः सरकारी सम्बन्ध-** अमेरिकी संघ सरकार संविधान लागू होने के पश्चात् धीर-धीरे अधिक शक्तिशाली होती चली गई। परिणामस्वरूप राज्य सरकारें कमजोर होती चली गईं। अमेरिका के सभी 50 राज्यों को सन् 1940 से कल्याण, रोजगार, सुरक्षा, व्यावसायिक पुनर्वास, जनस्वास्थ्य तथा नागरिक सुरक्षा के लिए अनुदान प्राप्त हो रहा है। इसके कारण सरकारी क्षेत्राधिकारी की अन्तः निर्भरता बढ़ी है।
- **नौकरशाही पर तकनीकी प्रभाव-** अमेरिकन नौकरशाही पर नई-नई खोजों एवं अनुसंधान के कारण तकनीकी प्रभाव बढ़ा है। इसके कारण सेवाकालीन प्रशिक्षण का महत्त्व भी बढ़ा है। तकनीकी प्रभाव के कारण व्यावसायिक कार्यकर्ता विशेषकर वैज्ञानिक अपने आपको एक विशिष्ट जाति का समझने लगे हैं। परन्तु लोक सेवकों को यह समझना चाहिए, कि वे केवल मात्र वैज्ञानिक नहीं हैं। उनमें वैज्ञानिक कार्यक्रम, संगठन एवं लक्ष्यों के प्रति समर्पण होना चाहिए।
- **विशेष हित समूह एवं दबाव समूह-** अमेरिकन नौकरशाही में विशेष हित समूह एवं दबाव समूह पाए जाते हैं। लेकिन ये हित समूह या दबाव समूह स्वयं इतने सक्षम या कार्यकुशल नहीं होते, कि प्रशासन के हितों के



समर्थन के लिए कोई संयुक्त संगठन या मोर्चा बना सके। अतः इनकी गतिविधियां अपने हितों की पूर्ति करने तक ही सीमित रहती है।

- **लाइन एवं स्टॉफ़**-लाइन एवं स्टॉफ़ भी अमेरिकी नौकरशाही के महत्वपूर्ण तत्व हैं। लाइन प्रमुख संचालक है, तथा स्टॉफ़ द्वारा उनकी मदद की जानी चाहिए। व्यवहारतः लाइन एवं स्टॉफ़ का अन्तर काफी हद तक आलोचनापूर्ण है। यद्यपि वर्तमान समय में यह अन्तर महत्वहीन एवं अप्राकृतिक माने जाने लगे हैं। प्रो० स्टॉल के अनुसार, "एक बुद्धिमान मुख्य कार्यपालिका इन दोनों के कृत्रिम अन्तरों के सम्बन्ध में विशेष चिन्तित नहीं होती, यहां तक कि वह दो शब्दों का प्रयोग नहीं करती बल्कि एक ही शब्द 'सेवीवर्ग प्रशासन' का ही उल्लेख करती है।"
- **लोक सेवा आयोग**-अमेरिका में सन् 1883 के कानून द्वारा लोक सेवा आयोग की स्थापना की गई। नौकरशाही के प्रशासन में लोक सेवा आयोग की महत्वपूर्ण भूमिका है। यह लोक सेवा आयोग सेवाओं में भर्ती जैसा महत्वपूर्ण कार्य करता है।
- **लूट प्रणाली** -अमेरिकन नौकरशाही की एक महत्वपूर्ण विशेषता लूट प्रणाली रही है। लूट प्रणाली लोक सेवाओं को नियुक्ति एवं चुनाव से सम्बन्धित एक पद्धति है। लूट प्रणाली के अन्तर्गत चुनाव में जिस राजनीतिक दल को बहुमत प्राप्त होता था वह पहले दल द्वारा नियुक्त किये गए लोकसेवकों को अपने पद से हटाकर अपने दाल के समर्थकों को लोक सेवक नियुक्त कर देता था। इस प्रणाली के अनुसार एक व्यापक स्तर पर लोक सेवकों को अपने पद से हटाया जाता था और व्यापक स्तर पर ही नए लोक सेवकों की नियुक्ति की जाती थी। इस प्रणाली के अंतर्गत नियुक्त किये गए लोक सेवक अपने दल के हितों के अनुकूल ही काम करते थे। वे अपने दल के हितों को प्रोत्साहित करने का प्रयत्न करते थे। 19वीं शताब्दी तक अमेरिका में इस प्रणाली के अंतर्गत लोकसेवकों को हटा कर अपने दल के सहयोगियों को लोकसेवक नियुक्त कर देते थे। परन्तु इस प्रणाली को अपनाने के कारन प्रशासन में कार्य कुशलता समाप्त हो जाती थी।
- **योग्यता प्रणाली का आरम्भ** - अमेरिका में काफी समय तक लूट प्रणाली पाई जाती रही। परन्तु इससे नौकरशाही की कार्यकुशलता एवं क्षमता में कमी आती जा रही थी। इसीलिए अमेरिकन लोगों ने इस कुप्रथा को समाप्त करने की मांग आरम्भ कर दी। परिणामस्वरूप 1883 के पेण्डलटन कानून के अन्तर्गत इस दिशा में गम्भीर प्रयास किये गये। इस कानून के पास होने पर लूट प्रणाली को समाप्त करके भर्ती की योग्यता प्रणाली को अपनाया।
- अमेरिका में नौकरशाही की प्रतिष्ठा एवं गरिमा कम मानी जाती है। इसीलिए उच्च योग्यता प्राप्त युवक लोक सेवाओं में नहीं आना चाहते। अमेरिकन व्यावसायिक एवं शैक्षणिक संस्थान भी युवकों को लोक सेवाओं में



जाने के लिए कम प्रेरित करते हैं। अमेरिका में किये गए एक अध्ययन के अनुसार अधिकांश लोग सरकारी सेवाओं में इसलिए बने रहते हैं क्योंकि वे इसे मनोरंजक मानते हैं। सरकारी सेवाओं की अपेक्षा गैर-सरकारी सेवाओं की आय एवं अन्य सुविधाएं अधिक हैं, इसलिए अधिकांश युवा गैर-सरकारी सेवाओं की ओर भागते हैं। सरकारी पदों की लोचहीनता तथा पदोन्नति के सीमित अवसर योग्य युवकों के इनमें प्रवेश के मार्ग को रोकते हैं।

12.4.2. अमेरिकन नौकरशाही के कार्य/भूमिका (FUNCTIONS/ROLE OF AMERICAN BUREAUCRACY) अमेरिकन नौकरशाही के कार्यों/भूमिका का वर्णन इस प्रकार है-

- अमेरिकन व्यवस्था में अपनी योग्यता के कारण नौकरशाही का नीति-निर्माण में महत्वपूर्ण योगदान होता है। नीति-निर्माण के लिए मन्त्रियों को आंकड़ों की आवश्यकता पड़ती है, जोकि नौकरशाही ही प्रदान करती है।
- अमेरिकन नौकरशाही प्रशासकीय कार्यों में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। नीतियों एवं योजनाओं को नौकरशाही द्वारा ही लागू किया जाता है।
- अमेरिकन नौकरशाही राजनीतिक कार्यपालिका को सलाह देने की महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। मंत्रियों को अपने विभाग का प्रशासन चलाने के लिए नौकरशाही पर ही निर्भर रहना पड़ता है।
- अमेरिकन नौकरशाही देश के विकास के लिए नियोजन एवं कार्यक्रम बनाने में भी अपना योगदान देती है।
- अमेरिकन नौकरशाही कानून निर्माण में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। अमेरिकन नौकरशाही मंत्रियों को कानून के निर्माण आवश्यकतानुसार मदद करती है।
- अमेरिकन नौकरशाही का एक मुख्य कार्य जन सेवा भी है और उत्पादन उसी का एक महत्वपूर्ण भाग है। एवं गुणवत्ता से नौकरशाही की कार्यकुशलता का भी अंदाजा लगाया जा सकता है।
- अमेरिकन नौकरशाही लोगों की समस्याओं को सुनकर उन्हें दूर करने का प्रयास करती है।
- अमेरिकन नौकरशाही अपनी नीतियों की सफलता के लिए जनता से सहयोग प्राप्त करने का करती है।
- विभिन्न विभागों के बीच तथा सरकारी कर्मचारियों के बीच समन्वय स्थापित करना प्रशासनिक अधि का कार्य है।
- अमेरिकन नौकरशाही शासन के वित्तीय क्षेत्र में भी महत्वपूर्ण कार्य करती है।

12.4.3. ब्रिटिश एवं अमेरिकन नौकरशाही की तुलना (COMPARISON BETWEEN BRITISH AND AMERICAN BUREAUCRACY)

ब्रिटिश एवं अमेरिकन नौकरशाही का तुलनात्मक अध्ययन इस प्रकार है-



- **वर्गीकरण के आधार पर तुलना (Comparison on the Basis of Classification)**- ब्रिटिश नौकरशाही रैंक आधारित वर्गीकरण पर आधारित है, जबकि अमेरिकन नौकरशाही स्थिति (Position Classification) वर्गीकरण पर आधारित है। रैंक आधारित वर्गीकरण में कर्मचारी को किसी भी पद पर लगाया जाए, उसने उन बरिष्ठता एवं वेतन सम्बन्धी सेवा शर्तें यथावत बनी रहती हैं, जबकि स्थिति (Position) वर्गीकरण में पद के सा के अनुसार वेतन एवं स्थिति बदलती रहती है।
- **लूट प्रणाली के आधार पर तुलना (Comparison on the Basis of Spoil System)**- अमेरिका के लूट प्रणाली पाई जाती है, जबकि ब्रिटिश नौकरशाही इससे बची हुई है। अमेरिका ने यद्यपि 1883 के पेन्ड कानून के अनुसार लूट प्रणाली को नियन्त्रित करने का प्रयास किया है, परंतु फिर भी यहां पर कुछ पदों पर अमेरिका राष्ट्रपति की इच्छानुसार ही नियुक्ति होती है।
- **आयु के आधार पर तुलना (Comparison on the Basis of Age)**- ब्रिटिश एवं अमेरिका नौका में आयु के आधार पर भी अन्तर पाया जाता है। ब्रिटेन में निम्न पदों पर 17 से 21 वर्ष की आयु होनी चाहिए त पर 21 से 28 वर्ष की आयु होनी चाहिए, जबकि अमेरिका में सामान्यतया 18 से 45 वर्ष की आयु ते। व्यक्ति लोक सेवा में प्रवेश पाते हैं, हालांकि 70 वर्ष की आयु तक भी प्रवेश पाया जा सकता है।
- **सामान्यवादी बनाम विशेषज्ञ (Generalist Vs Specialist)** - ब्रिटिश एवं अमेरिकन नौकाओं सामान्यवादी एवं विशेषज्ञ आधार पर भी अन्तर पाया जाता है। जहां इंग्लैण्ड की नौकरशाही में सामान्यवादियों वर्चस्व है, वहीं पर अमेरिकन नौकरशाही में विशेषज्ञों का वर्चस्व है।
- **योग्यता के आधार पर तुलना (Comparison on the Basis of qualification)** - ब्रिटेन में अधि पदों पर भर्ती के लिए उम्मीदवार का 'ऑनर्स स्नातक' होना आवश्यक है, जबकि अमेरिकन नौकरशाही में था के लिए ऐसा नहीं है।
- **धरने-प्रदर्शन के आधार पर तुलना (Comparison on the Basis of Agitation)** - ब्रिटिश संकट में धरने-प्रदर्शन एवं हड़ताल पर प्रतिबन्ध नहीं हैं। वे अपनी मांगों के लिए हड़ताल का सहारा लेते हैं, क्य अमेरिका में हड़ताल पर पूर्णतः प्रतिबन्ध लगाया गया है।
- **सामाजिक समानता के आधार पर तुलना (Comparison on the Basis of Social Equality)** ब्रिटेन में अधिकांशतः उच्च वर्ग एवं घरानों के बच्चे ही लोक सेवा प्रवेश पाते हैं जबकि अमेरिका में प्रत्येक वर्ग का लोक सेवा में प्रतिनिधित्व पाया जाता है। इसीलिए अमेरिका में सामाजिक समानता अधिक पायी जाती हैं।



- **राजनीतिक अधिकारों के आधार पर तुलना (Comparison on the Basis of Political Right)** ब्रिटिश नौकरशाही को राजनीतिक अधिकार प्राप्त है। जबकि अमेरिका में नौकरशाही को राजनीतिक अधिकार प्राप्त नहीं है।
- **संख्या के आधार पर तुलना (Comparison on the Basis of Number)** - ब्रिटेन में जहां की संख्या में कमी आ रही है वहीं अमेरिका में नौकरशाही की संख्या बढ़ती जा रही है।
- **प्रशिक्षण के आधार पर तुलना (Comparison on the Basis of Training)**- ब्रिटेन में नौकरशाही में प्रशिक्षण आधुनिक विधियों द्वारा लोक सेवा महाविद्यालय द्वारा दिया जाता है, जबकि अमेरिका में यह कार्य आफिस ऑफ पर्सोनल मैनेजमेन्ट द्वारा किया जाता है।
- **व्यवसाय बनाम मनोरंजन (Profession Vs Entertainment)**- ब्रिटेन में लोक सेवक लोक सेवा को व्यवसाय के रूप में चुनते हैं, जबकि अमेरिकन लोक सेवा को व्यवसाय के रूप में कम एवं मनोरंजन के रूप में अधिक लेते हैं।
- **पदोन्नति के आधार पर तुलना (Comparison on the Basis of Promotion)** - ब्रिटेन में लोक सेवक क्योंकि लोक सेवा को एक व्यवसाय के रूप में चुनते हैं, अतः वे पदोन्नति की आशा रखते हैं, जबकि अमेरिका में लोक सेवक पदोन्नति की अधिक आशा नहीं रखते।
- **सम्मान एवं प्रतिष्ठा के आधार पर तुलना (Comparison on the Basis of Honour and Prestige)**- ब्रिटिश नौकरशाही को अमेरिकन नौकरशाही की अपेक्षा अधिक सम्मान एवं प्रतिष्ठा प्राप्त है।

12.5.स्वयं प्रगति जाँच (Check your progress)

- (अ).अमेरिका में किस कानून द्वारा लोक सेवा आयोग की स्थापना की गई?
- (आ).किस रिपोर्ट" के बाद सिविल सेवा में सुधार लाया गया, और अब भर्ती में पारदर्शिता सुनिश्चित की जाती है।
- (इ).इंग्लैण्ड में वास्तविक कार्यपालिका कौन है ?
- (ई).ब्रिटिश नौकरशाही को किस नाम से जाना जाता है ?
- (उ). अमेरिका में कानून व्यवस्था और सुरक्षा कौन सी संस्था देखती है ?

12.6.सारांश (Summary)

ब्रिटेन में नौकरशाही (**Bureaucracy**) को एक स्थिर, पारदर्शी, और कुशल प्रशासनिक प्रणाली के रूप में जाना जाता है। यह प्रणाली संवैधानिक राजतंत्र और संसदीय लोकतंत्र के अंतर्गत कार्य करती है। ब्रिटिश नौकरशाही को



"सिविल सेवा" कहा जाता है, जो राजनीति से तटस्थ और लंबे समय तक प्रशासन में स्थिरता बनाए रखने वाली प्रणाली है। ब्रिटेन की नौकरशाही संवैधानिक राजतंत्र के अंतर्गत कार्य करती है, जहाँ राजा या रानी नाममात्र के प्रमुख होते हैं और वास्तविक शक्ति संसद और प्रधानमंत्री के पास होती है। नौकरशाही संसद और मंत्रियों की नीतियों को लागू करने का कार्य करती है। ब्रिटेन में सिविल सेवक "स्थायी कर्मचारी" होते हैं। वे सरकार बदलने पर भी अपने पद पर बने रहते हैं। यह स्थायित्व नीतियों के कार्यान्वयन में निरंतरता बनाए रखता है। ब्रिटेन में सिविल सेवकों का चयन पूरी तरह से योग्यता और परीक्षा के आधार पर होता है। 1854 के "नॉर्थकॉट-ट्रेवेलियन रिपोर्ट" के बाद सिविल सेवा में सुधार लाया गया, और अब भर्ती में पारदर्शिता सुनिश्चित की जाती है। नौकरशाही राजनीति से तटस्थ मानी जाती है। सिविल सेवक किसी भी राजनीतिक दल के प्रति पक्षपाती नहीं होते और अपने कर्तव्यों का पालन पेशेवर तरीके से करते हैं। ब्रिटेन की नौकरशाही सीधे जनता के प्रति जवाबदेह नहीं होती। सिविल सेवक मंत्रियों के प्रति जवाबदेह होते हैं, जो संसद के प्रति उत्तरदायी होते हैं। इसका मतलब है कि अगर कोई गलती होती है, तो मंत्री उसकी जिम्मेदारी लेते हैं, न कि सिविल सेवक। ब्रिटिश सिविल सेवक नीति निर्माण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। वे विशेषज्ञता के आधार पर मंत्रियों को सलाह देते हैं और नीतियों को लागू करते हैं। ब्रिटिश नौकरशाही में गोपनीयता का पालन एक महत्वपूर्ण विशेषता है। सिविल सेवक अपने काम और नीतियों के संबंध में किसी भी जानकारी को सार्वजनिक नहीं करते। सिविल सेवा को कई विभागों में विभाजित किया गया है, जैसे गृह विभाग (**Home Office**), वित्त विभाग (**Treasury**), विदेश और राष्ट्रमंडल कार्यालय (**Foreign and Commonwealth Office**), आदि। प्रत्येक विभाग का नेतृत्व एक मंत्री करता है, जिसे एक वरिष्ठ सिविल सेवक सहायता प्रदान करता है। ब्रिटिश सिविल सेवा को तीन मुख्य स्तरों में बाँटा गया है: उच्च सिविल सेवा (**Senior Civil Service**) उच्च अधिकारी जो नीति निर्माण और निर्णय लेने में सहायता करते हैं। कार्यकारी स्तर (**Executive Level**) अधिकारी जो नीतियों को लागू करने का काम करते हैं। सहायक स्तर (**Support Staff**) प्रशासनिक और तकनीकी कार्यों में सहयोग करते हैं। ब्रिटेन में सरकार बदलने के बावजूद नौकरशाही अपनी स्थिरता बनाए रखती है। सिविल सेवक नीतियों के निर्माण और कार्यान्वयन में विशेषज्ञता प्रदान करते हैं। प्रशासनिक निर्णयों की गोपनीयता सुनिश्चित होती है। राजनीति से दूर रहकर सिविल सेवक निष्पक्षता से कार्य करते हैं। भर्ती प्रक्रिया पूरी तरह से योग्यता पर आधारित है, जिससे निष्पक्षता बनी रहती है। ब्रिटेन की नौकरशाही को अत्यधिक केंद्रीकृत माना जाता है, जो स्थानीय प्रशासन की स्वतंत्रता को सीमित कर सकती है। नियमों और प्रक्रियाओं के कारण निर्णय प्रक्रिया धीमी हो जाती है। गोपनीयता की अधिकता के कारण प्रशासनिक पारदर्शिता पर सवाल उठते हैं। हाल के वर्षों में नौकरशाही पर राजनीतिक दबाव और हस्तक्षेप बढ़ा है। इस प्रकार ब्रिटेन की नौकरशाही एक सुव्यवस्थित, पेशेवर, और स्थिर प्रशासनिक प्रणाली का उदाहरण है। इसका महत्व इसकी



राजनीतिक तटस्थता, विशेषज्ञता, और स्थिरता में निहित है। हालाँकि इसे कुछ चुनौतियों का सामना करना पड़ रहा है, फिर भी यह ब्रिटिश लोकतंत्र और शासन प्रणाली का एक अभिन्न अंग है। उचित सुधारों के साथ, यह भविष्य में और अधिक प्रभावी साबित हो सकती है। अमेरिका में नौकरशाही (**Bureaucracy**) संघीय प्रणाली के तहत संचालित होती है, जिसमें केंद्र सरकार, राज्य सरकार, और स्थानीय सरकारों की अलग-अलग भूमिकाएँ होती हैं। यह प्रणाली अपने विकेंद्रीकरण, स्वतंत्रता, और पारदर्शिता के लिए जानी जाती है। अमेरिकी नौकरशाही का मुख्य उद्देश्य सरकारी नीतियों और कार्यक्रमों को लागू करना है। अमेरिका की नौकरशाही संघीय ढाँचे के अंतर्गत काम करती है। संघीय सरकार के साथ-साथ राज्य और स्थानीय स्तर पर भी नौकरशाही का ढाँचा होता है। संघीय स्तर पर यह तीन शाखाओं – कार्यकारी, विधायी और न्यायपालिका – के साथ काम करती है। अमेरिकी नौकरशाही में संघीय एजेंसियाँ (**Federal Agencies**) प्रमुख भूमिका निभाती हैं। ये एजेंसियाँ विशिष्ट कार्यों के लिए जिम्मेदार होती हैं, जैसे: एफबीआई (**FBI**): कानून व्यवस्था और सुरक्षा। एफडीए (**FDA**): खाद्य और औषधि संबंधी नियम। सीआईए (**CIA**): खुफिया और सुरक्षा। ये एजेंसियाँ स्वतंत्र रूप से निर्णय लेने और नीतियाँ लागू करने का कार्य करती हैं। अमेरिका की नौकरशाही विकेंद्रीकृत है, जहाँ हर एजेंसी और विभाग के पास अपने निर्णय लेने की स्वतंत्रता होती है। राज्यों और स्थानीय स्तर की सरकारों को भी प्रशासनिक कार्यों में स्वायत्तता प्राप्त है। राष्ट्रपति द्वारा कई शीर्ष पदों पर राजनीतिक नियुक्तियाँ की जाती हैं, जैसे मंत्रियों, एंबेसडरों और प्रमुख अधिकारियों की नियुक्ति। राष्ट्रपति के प्रशासन के बदलाव के साथ इन अधिकारियों का कार्यकाल भी समाप्त हो जाता है। 19वीं सदी में "स्पोइल सिस्टम" प्रचलित था, जिसमें राजनीतिक आधार पर नियुक्तियाँ होती थीं। 1883 के पेंडलटन सिविल सर्विस एक्ट के बाद मेरिट सिस्टम को अपनाया गया, जिसके तहत भर्ती प्रक्रिया योग्यता पर आधारित हो गई। अमेरिकी नौकरशाही में कई नियामक एजेंसियाँ (**Regulatory Agencies**) स्वतंत्र रूप से कार्य करती हैं। ये एजेंसियाँ कानूनों के अनुसार काम करती हैं और राजनीतिक दबाव से काफी हद तक मुक्त रहती हैं। अमेरिकी नौकरशाही जनता और कांग्रेस के प्रति जवाबदेह होती है। सूचना की स्वतंत्रता अधिनियम (**Freedom of Information Act – FOIA**) के तहत जनता सरकारी कार्यों की जानकारी मांग सकती है। कांग्रेस संघीय एजेंसियों पर निगरानी रखती है। अमेरिकी नौकरशाही एक प्रभावी और विस्तृत प्रशासनिक प्रणाली है, जो संघीय ढाँचे के अंतर्गत कार्य करती है। यह अपने विकेंद्रीकरण, स्वतंत्रता, और पारदर्शिता के कारण जानी जाती है। हालाँकि इसे राजनीतिक हस्तक्षेप और जटिल संरचना जैसी चुनौतियों का सामना करना पड़ता है, फिर भी यह अमेरिकी शासन व्यवस्था का एक महत्वपूर्ण हिस्सा है।



12.7. सूचक शब्द (Key Words)

- **नौकरशाही-** नौकरशाही या ब्यूरोक्रेसी (bureaucracy) का मतलब है, किसी बड़ी संस्था या सरकार के परिचालन के लिए बनाई गई संरचना और नियम. नौकरशाही में कई अधिकारी होते हैं, जो नियमों का पालन करते हैं।
- **पदसोपान-** पदसोपान का मतलब है, संगठन में छोटेबड़े पदों को क्रम से व्यवस्थित करना और सत्ता की - श्रेणियों को निम्नतम से उच्चतम तक व्यवस्थित करना. पदसोपान को अंग्रेज़ी में हायरार्की (Hierarchy) कहते हैं।
- **वैधानिक कार्य-**वैधानिक कार्य का मतलब है, विधान के मुताबिक या विधि के अनुकूल काम करना।
- **नियामक एजेंसियां-**नियामक एजेंसियां, सरकारी प्राधिकरण होते हैं जो किसी क्षेत्र में लाइसेंसिंग और विनियमन का काम करती हैं. ये एजेंसियां, बाज़ार में होने वाली विफलताओं से निपटने के लिए व्यावसायिक गतिविधियों की निगरानी करती हैं. इनका मकसद, जनता के स्वास्थ्य, सुरक्षा, संपत्ति, और समग्र हितों की रक्षा करना होता है।

12.8. स्वयं समीक्षा हेतु प्रश्न (Self-Assessment Questions)

- नौकरशाही की अवधारणा का विस्तार से वर्णन करें।
- ब्रिटेन में नौकरशाही की प्रकृति का विस्तार से वर्णन करें।
- अमेरिका में नौकरशाही की स्थिति का वर्णन करें।
- अमेरिका और ब्रिटेन में नौकरशाही की अवधारणा की विस्तार से तुलना करें।

12.9. उत्तर-स्वयं प्रगति जाँच (Answers to check your progress)

(अ). अमेरिका में सन् 1883 के कानून द्वारा लोक सेवा आयोग की स्थापना की गई।

(आ). 1854 के "नॉर्थकॉट-ट्रेवेलियन रिपोर्ट" के बाद

(इ). इंग्लैण्ड में राजा नाममात्र का मुखिया है जबकि मन्त्रिमण्डल वास्तविक कार्यपालिका है।

(ई). ब्रिटिश नौकरशाही को "सिविल सेवा" कहा जाता है।

(उ). एफबीआई (FBI)

12.10. सन्दर्भ ग्रन्थ/ निर्देशित पुस्तकें (References / Suggested Readings)



- भगवान विष्णु, विद्या भूषण, वर्ल्ड कान्स्टीट्यूशन, ए कम्परेटिव स्टडी, स्त्रुलिंग पब्लिसर्श प्रा०लि०दिल्ली.
- पार्थसारथी, जी०, (1987): आधुनिक संविधान, मीनाक्षी प्रकाशन, मेरठ.
- शर्मा, प्रभुदत्त, (1998): प्रमुख राजनीतिक व्यवस्थाए, कालेज बुक डिपों, जयपुर.
- खन्ना, वी०एन० एवं आनन्द, उमा (2009): शासन एवं राजनीति का तुलनात्मक अध्ययन, आर. चन्द्र एण्ड कम्पनी, नई दिल्ली.
- तायल, वी०वी० (1983): शासन और राजनीति: तुलनात्मक अध्ययन, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली.
- पालेकर, एस०ए० (2009): कम्पैरेटिव पॉलिटिक्स एण्ड गवर्मेन्ट, प्रेंटिस हॉल ऑफ इंडिया, नई दिल्ली.
- डब्ल्यू. बेजहोट, द इंग्लिश कॉन्स्टिट्यूशन, लंदन, फोंटाना, 1963.
- ए.एच. बिर्च, ब्रिटिश सिस्टम ऑफ गवर्नमेंट, 4था संस्करण, लंदन, जॉर्ज एलेन और अनविन, 1980.
- जे. ब्लॉडेल, तुलनात्मक सरकार का परिचय, लंदन, वीडेनफेल्ड और निकोलसन, 1969.
- जे. ब्लॉडेल, तुलनात्मक विधानमंडल, एंगलवुड क्लिफ्स एनजे, प्रेंटिस हॉल, 1973.
- जे. ब्रायस, आधुनिक लोकतंत्र, खंड 1, 2, न्यूयॉर्क, मैकमिलन, 1921.
- एच. फाइनर, आधुनिक सरकार का सिद्धांत और अभ्यास, लंदन, मेथ्यू, 1969.



नोट

[illegible]



नोट

This image shows a full page of white paper with horizontal dashed lines, typical of primary-ruled notebook paper. The lines are evenly spaced and run across the width of the page. There are no margins, text, or other markings on the paper.



नोट

[illegible]



नोट

This image shows a full page of a document template designed for handwriting practice or general writing. It features a series of evenly spaced, horizontal grey lines that run across the entire width of the page. The lines are thin and light in color, providing a guide for letter height and placement without being distracting. There are no margins, text, or other markings present on the page.



नोट

[illegible]



नोट

[illegible]



नोट

[illegible]